Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

a Samaj Foundation Chenna

BRIJ BHASHA SUAR KOSH

Domain, Gurukul Kangri Col

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रजभाषा सूर-कोश

(आठवाँ खंड)

निर्देशक

डा० दीनदयाल गुप्त, एम० ए०, एल-एल० बी, डी लिट्०,
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष हिन्दी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

संपादक

डा० प्रेमनारायण टंडन, पी-एच० डी
सहायक प्रोफेसर, हिंदी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

1.3
4(8)

प्रकाशक
लखनऊ विश्वविद्यालय

आठवें खंड की शब्द-संख्या—६५०२
आठों खंडों की शब्द संख्या—४६३८५

मूल्य—चार रुपया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तकालय

विषय संख्या ९.३

पुस्तक संख्या [illegible] २४ VIII

आगत पञ्जिका संख्या ३८२९९

पुस्तक पर सर्व प्रकार की निशानियां लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९५।५।६९

Stock Verification-2024

1.3/24 VIII

36216

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

CHECKED 1973

Stock Verification-2024

१२७४-१२८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं० वै२५४ VIII
आगत सं० २६७१६
दिनांक १५।५।६७
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी.

१.३
२४ VIII

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुरदा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] मरा हुआ प्राणी, मृतक।
वि.–(१) मरा हुआ, निर्जीव। (२) जिसमें दम न हो, बहुत ही दुबला-पतला, मृतकप्राय। (३) सूखा या कुम्हलाया हुआ।

मुरधर—संज्ञा पुं. [सं. मरु + धरा] मारवाड़ (प्राचीन नाम)।

मुरना, मुरनो—क्रि. अ. [हिं. मुड़ना] (१) लचना, झुकना। (२) टेढ़ा हो जाना। (३) घूम जाना। (४) लौटना, पलटना।

मुरपरैना—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़ = सिर + पारना = रखना] फेरी लगाने वालों का, सिर पर रखकर सौदा बेचने का बकुचा या बोझ। उ.—तहीं दीजै मुरपरैना नफो तुम कछु खाहु—३००३।

मुरब्बा—संज्ञा पुं. [अ. मुरब्बः] शकर की चाशनी में पकाकर रखा गया फल या मेवे का पाक।

मुरमर्दक, मुरमर्दन—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु, श्रीकृष्ण।

मुरमुरा—संज्ञा पुं. [अनु.] भुना हुआ पोला चावल, लावा।

मुरमुराना, मुरमुरानो—क्रि. अ. [अनु. मुरमुर] (१) चूर-चूर हो जाना। (२) कड़ी चीज के टूटने का शब्द होना।

मुररिपु—संज्ञा पुं. [सं.] मुरारि, विष्णु, श्रीकृष्ण। उ.—सूर मुररिपु (मुरारिपु) रँग रँगे सखि सहित गोपाल–२२९०।

मुररिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुर्री] ऐंठन, मरोड़।

मुरल—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन बाजा।

मुरलिका, मुरलिया—संज्ञा स्त्री. [सं. मुरलिका] मुरली, बाँसुरी। उ.—(क) स्याम, तुम्हारी मदन-मुरलिका नैंसुक सी जग मोह्यौ—६५६। (ख) हाथ मुरलिका राजै। (ग) अधर मुरलिका बाजै। (घ) मुरलिया मोकौं लागत प्यारी—२३३७।

मुरली—संज्ञा स्त्री. [सं.] बाँसुरी, वंशी। उ.—(क) हरषि मुरली-नाद स्याम कीन्हौ—ना. १०६३। (ख) मुरली स्याम अधर नहिं टारत—१२३०।

मुरलीधर—संज्ञा पुं. [सं.] मुरलीधारी श्रीकृष्ण। उ.—गिरिधर, व्रजधर, मुरलीधर, धरनीधर माधौ पीतांबर-धर—५७२।

मुरली-मनोहर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

मुरवा—संज्ञा पुं. [देश.] एँड़ी या पैर का गट्टा।
संज्ञा पुं. [हिं. मोर] मोर, मयूर। उ.—हमारे माई, मुरवा (मोरवा) बैर परे—ना. ३९४७।

मुरवी - संज्ञा स्त्री. [सं. मौर्वी] धनुष की डोरी।
संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर] मोरनी।

मुरवैरी—संज्ञा पुं. [सं. मुरवैरिन्] श्रीकृष्ण।

मुरसुत—संज्ञा पुं. [सं.] मुर दैत्य का पुत्र वत्सासुर।

मुरहा - संज्ञा पुं. [सं.] मुरारि, श्रीकृष्ण।
वि. [सं. मूल (नक्षत्र) + हा] नटखट, उपद्रवी।

मुरहारी—संज्ञा पुं. [सं.] मुरारि, श्रीकृष्ण।

मुराड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] जलती हुई लकड़ी, लुआठा।

मुराद - संज्ञा पुं. [अ.] (१) इच्छा। (२) आशय।

मुराना, मुरानो—क्रि. स. [अनु. मुरमुर] चबा कर मुलायम या नरम करना, चुभलाना।
क्रि. स. [हिं. मोड़ना] लौटाना, फेरना।

मुरार—संज्ञा पुं. [सं. मृणाल] कमल की जड़ या नाल।
संज्ञा पुं. [सं. मुरारि] श्रीकृष्ण। उ. तुमहीं आदि - अखंड-अनूपम असरन - सरन - मुरार—सारा. १२९।

मुरारिपु—संज्ञा पुं. [सं.] मुरारि, श्रीकृष्ण। उ.—सूर मुरारिपु रंग रँगे सखी सहित गोपाल—२२९०।

मुरारि, मुरारी—संज्ञा पुं. [सं. मुरारि] श्रीकृष्ण। उ.—(क) सूरदास प्रभु सब गुन-सागर दीनानाथ मुकुंद मुरारी—१-२२। (ख) स्याम सुंदर चतुरभुज मुरारी—४-६। (ग) ह्वैहैं जज्ञ अब देव मुरारी–७-२।

मुरारे—संज्ञा पुं. [सं.] हे मुरारि या श्रीकृष्ण (संबोधन)। उ.—(क) मम गृह तजे मुरारे—१-२४२। (ख) केस पकरि ल्यायौ दुस्सासन राखी लाज मुरारे—१-२५७।

मुरासा—संज्ञा पुं. [अ० मुरस्सअ] कर्णफूल, तरकी।
संज्ञा पुं. [हिं. मुँड़ासा] साफा, पगड़।

मुरि—क्रि. अ. [हिं. मुड़ना] मुड़कर, मुँह फेरकर, एक ओर को कुछ हटकर। उ.—(क) स्याम सखा कौं गेंद चलाई। श्रीदामा मुरि अंग बचायौ, गेंद परी कालीदह जाई—५३५। (ख) सूर स्याम मुरि मुसकानि छबी री अँखियन मैं रही—८३८।

मुरीद—संज्ञा पुं. [अ.] शिष्य, चेला, अनुयायी।

मुरुंज—संज्ञा पुं. [सं. मुरज] एक बाजा। उ.—बजता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताल मृदंग झांझ डफ रुंज मुरुंज बांसुरी ध्वनि थोरी —२४४५।

मुरु—संज्ञा पुं. [सं. मुर] 'मुर' नामक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

मुरुआ—संज्ञा पुं. [देश.] पं या एँड़ी का गट्टा।

मुरुख—वि. [सं. मूर्ख] मूर्ख।

मुरुछना, मुरछनो—क्रि. अ. [हिं.मूरछा] बेसुध होना।

मुरुझना, मुरझनो—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] (१) कुम्हलाना, सूखना। (२) उदास होता। (३) अचेत होना।

मुरेठा—संज्ञा पुं. [हिं. मूड़+ऐंठ] साफा, पग्गड़।

मुरेर—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँडेर] मुँड़ेर।

मुरेरना, मुरेरनो—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] मरोड़ना।

मुरैठा—संज्ञा पुं. [हिं. मुरेठा] साफा, पग्गड़।

मुरौअत, मुरौवत—संज्ञा स्त्री. [अ. मुरव्वत] (१) शील, संकोच। (२) भलमनसाहत।

मुर्छन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अचेत करने की क्रिया या भाव। (२) मूर्छित करने का मंत्र या प्रयोग। उ.—मोहन मुर्छन बसीकरन पढ़ि अगमति देह बढ़ाऊँ—१०-४९।

मुर्दनी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मुर्दन=मरना] (१) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रकट या प्रत्यक्ष होना।

मुहा०—चेहरे पर मुर्दनी छाना (फिरना)—(१) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रत्यक्ष होना। (२) बहुत निराश या उदास होना।

(२) शव की अंतेष्टि के लिए साथ जाना।

मुर्मुर—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव, मदन।

मुर्रा—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुड़ना] एक तरह की भैंस।

मुर्री संज्ञा स्त्री. [हिं. मरोड़] डोरी की ऐंठन।

मुर्वा—संज्ञा पुं. [हिं. मुरवा] मोर, मयूर।

मुर्वी—संज्ञा स्त्री. [सं.] धनुष की डोरी।

मुल—अव्य. [देश.] (१) लेकिन। (२) तात्पर्य यह कि।

मुलक—संज्ञा पुं. [अ. मुल्क] (१) देश। (२) प्रदेश।

मुलकना, मुलकनो—क्रि. अ. [हिं. पुलकना] (१) मुसकराना। (२) प्रसन्न होना।

मुलकित—वि. [सं. पुलकित] (१) मुस्कराता हुआ। (२) प्रसन्न, हर्षित।

मुलकी—वि. [अ. मुल्क] देश-सम्बन्धी, देश का।

मुलजिम—वि. [अ. मुलज़िम] अभियुक्त।

मुलतवी—वि. [अ. मुलतवी] स्थगित।

मुलतानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुलतान (नगर)] (१) एक रागिनी। (२) एक तरह की चिकनी मिट्टी।

मुलना—संज्ञा पुं. [अ. मौलाना] मुल्ला, मौलवी।

मुलमची—संज्ञा पुं. [हिं. मुलम्मा] मुलम्मा करनेवाला।

मुलम्मा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) किसी चीज पर चढ़ायी गयी सोने या चांदी की बहुत पतली परत। (२) ऊपरी तड़क-भड़क।

मुलहा—वि. [सं. मूल (नक्षत्र) + हा] (१) जो मूल नक्षत्र में जन्मा हो। (१) उपद्रवी, नटखट।

मुलाँ—संज्ञा पुं. [अ. मुल्ला] मुल्ला, मौलवी।

मुलाकात—संज्ञा स्त्री. [अ. मुलाक़ात] (१) भेंट, मिलन। (२) हेल-मेल, मेल-मिलाप, परिचय।

मुलाजिम—संज्ञा पुं. [अ. मुलाज़िम] सेवक, नौकर।

मुलायम—वि. [अ.] (१) जो सख्त न हो। (२) धीमा, मंद। (३) सुकुमार। (४) शांत।

यौ०—मुलायम चारा (१) जो सहज ही अपनी बातों में लाया या फुसलाया जा सके। (२) जो सहज ही पाया जा सके।

मुलायमियत—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुलायम] नरमी।

मुलाहजा—संज्ञा पुं. [अ. मुलाहज़ा] (१) निरीक्षण, देखभाल। (२) संकोच। (३) रियायत।

मुलुक—संज्ञा पुं. [हिं. मुलक] (१) देश। (२) प्रदेश।

मुलेठी—संज्ञा स्त्री. [सं. मूलयष्टि, प्रा० मूलयट्ठी] 'घुंघुची' या 'गुंजा' नामक लता की जड़।

मुल्क—संज्ञा पुं. [अ.] (१) देश। (२) प्रान्त।

मुल्ला—संज्ञा पुं. [अ.] मुसलमानों का पुरोहित, मौलवी।

मुवना, मुवनो—क्रि. अ. [सं.मृत, प्रा. मुअ+ना] मरना।

मुवाइ—क्रि. स. [हिं. मुवाना] मार कर, हत्या करके।

मुवाना, मुवानो—क्रि. स. [हिं. मुवना] मार डालना।

मुवौ—क्रि. अ. [हिं. मुवना] मरा, मृत्यु को प्राप्त हुआ। उ.—कहा जानै कैवां मुवौ (रे) ऐसैं कुमति, कुमीच —१-३२५।

मुशल—संज्ञा पुं. [सं.] धान कूटने का मूसल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वि.—मूर्ख, लंठ।
मुशली—संज्ञा पुं. [सं.] मूसलधारी बलराम।
मुश्क—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) कस्तूरी। (२) गंध।
संज्ञा स्त्री. [देश.] भुजा, बाँह।
मुश्कनाभ, मुश्कनाभि—संज्ञा पुं. [फ़ा. मुश्क+सं. नाभि] मृग जिसकी नाभि में कस्तूरी होती है।
मुश्किल—वि. [अ.] कठिन, दुस्साध्य।
संज्ञा स्त्री.—(१) कठिनता। (२) संकट, विपत्ति।
मुश्की—वि. [फ़ा.] (१) कस्तूरी के रंग का, काला। (२) जिसमें कस्तूरी मिली हो।
मुश्त—संज्ञा पुं. [फ़ा.] मुट्ठी।
यौ०—एक मुश्त - एक ही बार में।
मुषर—वि. [सं. मुखर] बहुत बोलनेवाला।
मुषल—संज्ञा पुं. [सं.] धान कूटने का मूसल।
मुषाना, मुषानो—क्रि. स. [हिं. मुसाना] लूटने या चोरी करने को प्रवृत्त करना।
मुषायो, मुषायौ—क्रि. स. [हिं. मुसाना] लुटवा दिया। उ.—मदन चोर सों जानि मुषायो—१९६३।
मुषुर—संज्ञा स्त्री. [सं. मुखर] गुंजार।
मुष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मुट्ठी। (२) मुक्का।
मुष्टि, मुष्टिक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कंस का दरबारी एक मल्ल जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ.—(क) कह्यौ चाणूर मुष्टि सब मिलिकै जानत हौ सब जी के। (ख) संखचूड़ मुष्टिक प्रलंब अरु तृनावर्त संहारे—१-२७। (२) मुक्का, घूँसा। उ.—हिरनकसिप क्रोधहिं मन धारचो। जाइ खंभ कौं मुष्टिक मारचो—७-२। (३) मुट्ठी।
मुष्टिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मुट्ठी। (२) मुक्का, घूँसा। उ.—(क) बृक्ष पाषाण को जब उहाँ नाश भयौ मुष्टिका युद्ध दोऊ प्रचारी—१०उ०-४५। (ख) एक ही मुष्टिका प्रान ताके लए—२४८४।
मुष्टियुद्ध—संज्ञा पुं. [सं.] युद्ध जो घूँसों से हो।
मुसक—संज्ञा पुं. [फ़ा. मुश्क] कस्तूरी।
मुसकनि, मुसकनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकान] मुसकराहट, मुसकान। उ.—(क) मुनि-मन हरनि सु हँसि मुसकनियाँ। (ख) दाड़िम दशन मंदगति मुसकनि मोहत सुर-नर-नाग—१३१४। (ग) कोटि मुक्त वारौं मुसकनि पर योग बापुरो सरो—३१५४।
मुसकराना, मुसकरानो—क्रि. अ. [सं. स्मय+कृ] मंद-मंद हँसी हँसना, होठों में हँसना।
मुसकराहट, मुसकराहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराना + आहट] मुसकराने की क्रिया या भाव, मंद-मंद हँसी।
मुसकात—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] हँसता है, हँसते हैं। उ.—चुटकी दै दै ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुसकात (मुसुकात)—१०-२१५।
मुसकान—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसी।
मुसकाना—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना।
मुसकानि, मुसकानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसी, मंद हास्य। उ.—(क) बिकानी हरि-मुख की मुसकानी—११९७। (ख) स्याम आपनी चितवनि बरजो अरु मुख की मुसकानी—१५७२।
क्रि. अ.—मंद-मंद रूप से या होंठों में हँसने लगी। उ.—आवति सूर उरहने के मिस, देखि कुँवर मुसकानी—१०-३११।
मुसकाने—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसे (थे) उ.—सूर स्याम जब तुमहिं पठायो तब नैंकहुँ मुसकाने—३००६।
मुसकानो—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसना।
मुसकिराना, मुसकिरानो—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना।
मुसकिराहट, मुसकिराहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराहट] मंद-मंद हँसने की क्रिया या भाव, मंद हास।
मुसकुराना, मुसकुरानो—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना, होंठों में हँसना।
मुसकुराहट, मुसकुराहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराहट] मंद-मंद हँसने की क्रिया या भाव, मंद हास।
मुसक्याइ—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसकर। उ.—(क) नैंकु चितै, मुसक्याइ कै सब कौ मन हरि लीन्हौ—१-४४। (ख) असुर दिसि चितै मुसक्याइ मोहे सकल—८-८।
मुसक्यात—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या हँसते हैं। उ.—वारंबार बिलोकि सोचि चित नंद महर मुसक्यात (मुसुक्यात)—१०-१७२।

मुसक्यान—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकान] मंद-मंद हंसी। उ.—चारु चिबुक मुसक्यान—सारा. १७८।

मुसक्याना, मुसक्यानो – क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना, होंठों में हँसना।

मुसजर—संज्ञा पुं. [अ. मुशज्जर] एक छपा कपड़ा।

मुसना, मुसनो – क्रि. अ. [सं. मूषण] चुराया जाना।

मुसमुंद, मुसमुंध—वि. [देश.] नष्ट, ध्वस्त।

मुसरिया – संज्ञा स्त्री. [हिं. मूस] चूहे का बच्चा।

मुसल—संज्ञा पुं. [हिं. मूसल] धान कूटने का मूसल।

मुसलधार—क्रि. वि. [हिं. मूसलधार] मूसल जैसी मोटी धार से, बहुत तेज। उ.—बरसत मुसलधार सैनापति महा मेघ मघवा के पायक—९५४।

मुसलमान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] मुहम्मद साहब का अनुयायी।

मुसली—संज्ञा पुं. [सं. मुशली] मूसलधारी बलराम।

मुसल्लम—वि. [फ़ा.] पूरा, सारा, अखंड।

मुसल्ला – संज्ञा पुं. [हिं. मुसलमान] मुसलमान।

मुसवाना, मुसवानो—क्रि. स. [हिं. मूसना] लूटने या चोरी करने को प्रवृत्त करना।

क्रि. स. [हिं. मोसना] मोसने-मसलने देना।

मुसव्वर, मुसव्वरि, मुसव्विर—संज्ञा पुं. [अ. मुसव्विर] (१) चित्र खींचनेवाला। (२) बेल-बूटे बनानेवाला।

मुसव्विरी—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) चित्रकारी। (२) बेल-बूटे बनाने की क्रिया।

मुसाफिर—संज्ञा पुं. [अ.] बटोही, यात्री।

मसाहब—संज्ञा पुं. [अ.] वह जो किसी धनी या सम्पन्न के साथ रहकर उसका विनोद और चाटुकारी करे।

मुसाहबी, मुसाहिबी—संज्ञा स्त्री. [अ. मुसाहब] मुसाहब का पद या कार्य।

मुसीबत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) कष्ट। (२) संकट।

मुसुकाहट, मुसुकाहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराहट] मंद-मंद हँसना, मंद हास।

मुसुकि—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसकर।

मुसुक्यात—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसते हैं। उ.—नंद महर मुसुक्यात—१०-१७२।

मुसुक्यान, मुसुक्यानि, मुसुक्यानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसना, मंद हास। उ.—(क) अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर करति मदन मन हीन —४७८। (ख) तामैं मृदु मुसुक्यानि मनोहर न्याइ करत कवि मोहन नाउँ—६५३। (ग) वह चितवन वह चाल मनोहर वह मुसुक्यानि जो मंद ध्वनि गावन —३३०७।

क्रि. अ.—मंद-मंद हँसी हँसने लगी।

मसुक्याने—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसी हँसे या हंसने लगे। उ.—(क) सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने—१०-२२२। (ख) मनमोहन मन मैं मुसुक्याने —६०४।

मुस्कराना—क्रि. अ. [सं. स्मय+कृ] धीरे से हँसना।

मुस्कराहट—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुस्कराना] मंद हास।

मुस्काना—क्रि. अ. [हिं. मुस्कराना] धीरे से हँसना।

मुश्किल—वि. [अ. मुश्किल] कठिन, दुष्कर।

मुश्की—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकान] मुसकराहट।

वि. [फ़ा. मुश्की] (१) कस्तूरी जैसे काले रंग का। (२) जिसमें कस्तूरी मिली या पड़ी हो।

मुस्क्यान—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकाना] मुसकाहट।

मुस्क्याना—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसना।

मुस्क्यानि, मुस्क्यानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकान] मंद हास, मुसकराहट।

क्रि. अ.—मंद-मंद हँसी हँसने लगी।

मुस्क्यानो—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मंद-मंद हँसना।

मुस्टंड, मुस्टंडा—वि.[सं.पृष्ठ](१)मोटा-ताजा।(२)गुंडा।

मुस्तकिल—वि. [अ. मुस्तक़िल] (१) पक्का। (२) स्थायी।

मुस्तैद—वि. [अ. मुस्तअद] (१) फुरतीला। (२) तत्पर।

मुस्तैदी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुस्तैद] (१) फुरती, तेजी। (२) तत्परता।

मुस्तौफी—संज्ञा पुं. [अ. मुस्तौफ़ी] आय-व्यय की परीक्षा करनेवाला पदाधिकारी। उ.—चित्रगुप्त सु होत मुस्तौफी, सरन गहूँ मैं काकी—१-१४३।

मुहकम—वि. [अ.] मजबूत, दृढ़। उ.—सूर पाप कौ गढ़ दृढ़ कीन्हौ, मुहकम लाइ किवार—१-१४४।

मुहचंग, मुहचंगा—संज्ञा पुं. [हिं. मुरचंग] मुँह से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बजाया जानेवाला एक बाजा। उ.—(क) आउझवर मुहचंद नैन सलोन री रँग राची ग्वालिनि—२४०५। (ख) फूले ही बजावै डफ ताल मृदंग बजै मुहवरि मुहचंग सरस रस ही फूलडोल—२४१२।

मुहताज—वि. [अ.] (१) दरिद्र। (२) आश्रित।

मुहब्बत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) प्रीति। (२) चाह। (३) मित्रता। (४) लगन, लौ।

मुहब्बती—वि. [हिं. मुहब्बत] प्रेम या मित्रता का व्यवहार करने या बनाये रखनेवाला।

मुहम्मद—संज्ञा पुं. [अ.] इसलाम धर्म के प्रवर्तक।

मुहम्मदी—वि. [हिं. मुहम्मद] मुहम्मद साहब का अनुयायी।

मुहरा—संज्ञा पुं. [हिं. मुँह] (१) सामने का भाग। (२) मुँह की आकृति। (३) शतरंज की गोट। (४) घोड़े का एक साज जो उसके मुँह पर पहनाया जाता है। (५) द्वार।

मुहर्रम—संज्ञा पुं. [अ.] अरबी वर्ष का पहला महीना जिसमें इमाम हुसेन के शहीद होने के कारण मुसलमान शोक मनाते हैं।

मुहा०—मुहर्रम का पैदा (की पैदाइश वाला)—जो सदा रोनी सूरत बनाये और दुखी रहे।

मुहर्रमी—वि. [हिं. मुहर्रम] (१) मुहर्रम का। (२) शोक या दुख-सूचक। (३) मनहूस।

मुहा०—मुहर्रमी सूरत—रोनी सूरत।

मुहर्रिर—संज्ञा पुं. [अ.] लेखक, मुंशी। उ.—मुर्हरिर (मोहरिल) पाँच साथ करि दीने, तिनकी बड़ी बिपरीत—१-१४३।

मुहवर, मुहवरि—संज्ञा पुं. [हिं. महुअर] तूँबी या तूँबड़ी नामक बाजा। उ.—फूले ही बजावैं डफ ताल मृदंग बजै मुहवरि मुहचंग सरस रस ही फूलडोल—२४१२।

मुह ल—संज्ञा पुं. [अ. मुहासिल] (१) प्यादा, फेरीदार। (२) कर वसूलनेवाला।

मुहाँचही, मुहाचही, मुहाँचुही—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह +चाहना] परस्पर देखा-देखी। उ.—(क) मुहाँचुही सैनापति कीन्हीं—१०-६१। (ख) मुहाचही जुवतिन तब कीन्हीं—१२६७।

मुहाल—वि. [अ.] (१) असंभव। (२) कठिन।

मुहावरा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) वह वाक्य या शब्द जिसका विशेषार्थ लक्षणा-व्यंजना से निकलता हो। (२) आदत, अभ्यास।

मुहासिब—संज्ञा पुं. [अ.] (१) हिसाब-किताब जाननेवाला। (२) हिसाब लेने या जांच-पड़ताल करनेवाला। उ.—सूर आपु गुजरान मुहासिब लै जवाब पहुँचावै—१-१४२।

मुहासिबा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) हिसाब, लेखा। उ.—सूरदास को यह मुहासिबा (पाठा०—की यहै बीनती) दस्तक कीजै माफ—१-१४३। (२) पूँछताँछ।

मुहिं—सर्व. [हिं. मोहिं] मुझे, मुझको। उ.—सत्य बचन गिरिदेव कहत हैं, कान्ह लेइ मुहिं कर उचकाई—९६१।

मुहिम, मुहीम—संज्ञा स्त्री. [अ. मुहिम] (१) कठिन काम। (२) लड़ाई, युद्ध। (३) चढ़ाई, आक्रमण।

मुहुः—अव्य. [सं.] बार-बार।

मुहूरत, मुहूरति, मुहूर्त, मुहूर्त्त—संज्ञा पुं. [सं. मुहूर्त्त] (१) दिन-रात का तीसवाँ भाग। उ.—दोइ मुहूरति आयु बताई।.........। एक मुहूरत मैं भुव आयौ। एक मुहूरत हरि-गुन गायौ—१-३४३। (२) निर्दिष्ट काल या समय। (३) ज्योतिष की गणना से शुभ कार्य के लिए निकाला हुआ समय। उ.—(क) सुद्ध मुहूरत चौरी बिधि रची—१० उ.-२४। (ख) सुद्ध मुहूरत लग्न धरायौ—१० उ०-१३२।

मुह्य—वि. [सं.] (१) मोह-ममता में पड़ा या फँसा हुआ। (२) बेहोश, मूर्छित।

मूऐं—क्रि. अ. [हिं मरना] मरने (पर), मृत्यु को प्राप्त होने (पर)। उ.—जैसैं काग काग के मूऐं काँ काँ करि उड़ि जाहीं—१-३१९।

मूँग—संज्ञा स्त्री. [सं. मुद्ग] एक अन्न। उ.—(क) मूंग मसूर उरद चनदारी—३९६। (ख) मूंग ढरहरी हींग लगाई—२३२१।

मूँगफली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूंग+फली] चिनिया बादाम।

मूँगा—संज्ञा पुं. [हिं. मूंग] एक समुद्री कृमि के समूह-पिंड की लाल ठठरी जिसकी गिनती रत्नों में है।

मूँगिया—वि. [हिं. मूंग] मूँग-जैसे हरे रंग का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूँछ—संज्ञा स्त्री. [सं. श्मश्रु, प्रा० मस्सु या मच्छु] पुरुष के होंठ के ऊपरी बाल जो पुरुषत्व के विशेष चिह्न माने जाते हैं।

मूँछ उखाड़ना—घमंड चूर करना। मूँछ (मूछों) पर ताव देना–मूँछ मरोड़कर अकड़ या गर्व दिखाना। मूँछ नीची होना—(१) घमंड टूटना। (२) अपमान होना। मूँछ पर हाथ फेरना—अकड़ या घमंड दिखाना।

मूँछनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. मूँछ] मूँछ पर।

मुहा०—मूँछनि ताव दिखायौ—गर्व या घमंड किया। उ.—कवहुँक फूलि सभा मैं बैठ्यो मूँछनि ताव दिखायौ—१-३०१।

मूँछी—संज्ञा स्त्री. [देश.] सेव की कढ़ी।

मूँज—संज्ञा स्त्री. [सं. मुञ्ज] एक तृण जो पवित्र माना जाता है और उपनयन संस्कार पर जिसकी करधनी पहनायी जाती है।

मूँड़—संज्ञा पुं. [सं. मुंड] सिर, कपाल, मुंड।

मुहा०—मूँड़ उघारना—निर्लज्ज की तरह गुरुजन के सामने सिर खोलना। मूड़ उघारचो—गुरुजन के सामने सिर खोले फिरने की निर्लज्जता दिखायी। उ.—तजी लाज कुलकानि लोक की पति गुरुजन प्यौ-सारो री। जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ तिनमैं मूँड़ उघारचौ री—१-३३१। मूँड़ चढ़ना–ढिठाई करना। मूँड़ चढ़त है—ढिठाई करता है। उ.—जोइ मन करै सोइ करि डारै मूँड़ चढ़त है भारि—१०९९। मूँड़ चढ़ना—ढीठ या उद्दंड कर देना। मूँड़ चढ़ायौ—ढीठ या धृष्ट कर दिया (है)। उ.—(क) भलो कार्य तैं सुतहिं पढ़ायौ। बारे ही तैं मूँड़ चढ़ायौ—१०-३३१। (ख) तैं ही उनको मूँड़ चढ़ायौ—१६५८। (ग) अब लौं कानि करी मैं सजनी बहुतैं मूड़ चढ़ायौ—पृ० ३२२ (१३)। मूँड़ चढ़ावै- ढीठपन देखकर हैरान हो, धृष्टता सहन करे। उ.–ऐसी को ठाली वैसी है तोसौं मूँड़ चढ़ावै—२२८७। मूड़ चढ़ी—सर पर चढ़कर। उ.—ताकैं मूँड़ चढ़ी नाचति है मीचऽति नीच नटी—१-९८। मूड़ दुराना—सिर बचाकर अपनी रक्षा करना। मूँड़ दुरैहौ—सिर पर की गयी चोट बचाकर अपनी रक्षा करोगे। उ.—लादत जोतत लकुट बाजिहै तब कहँ मूँड़ दुरैहौ—१-३३१। मूँड पिराना (१) सर दर्द होना। (२) बकझक करके सर खाना या सर में दर्द कर देना। मूँड़ पिरायौ--बकझक करके सर खा लिया या सर में दर्द कर दिया। उ.—तुमहीं मिलि रसबाद बढ़ायौ उरहन दै दै मूँड़ पिरायौ—३९१। मूड़ मुड़ाना—सिर के बाल मुड़ाकर संन्यासी का वेश बनाना। मूँड़चौ मूड़–सिर मुड़वाकर संन्यासी का वेश बनाया। उ.--मूँड़ची मूड़,कंठ बनमाला मुद्रा-चक्र दिये--१-१७१।

मूँड़न—संज्ञा पुं. [मुंड़न] (१) मुंडन या चुड़ाकरण संस्कार जिसमें बालक के बाल पहले-पहल मुड़वाये जाते हैं (२) बाल मूँड़ने की क्रिया या भाव।

मूँड़ना मूँड़नो– क्रि. स. [सं. मुंडन] (१) सर के बाल बनाना। (२) किसी को ठगकर माल ले लेना। (३) चेला बनाना।

मूँड़ि—क्रि. स. [हिं. मूँड़ना] सर के बाल मुड़वाकर। उ.—अस्वत्थामा कौं गहि ल्याए। द्रौपदि सीस मूँड़ि मुकराए—१-२८९।

मूड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुंड] (१) सिर, कपाल।

मुहा०—मूँड़ी मरोड़ना—(१) गला दबाकर मार डालना। (२) किसी को धोखा देकर ठग लेना।

(२) किसी वस्तु का ऊपरी सिरा।

मूड़्यौ—क्रि. स. [हिं. मूँड़ना] (सिर के) बाल मुड़वा दिये। उ.—मूँड़्चौ मूँड़—१-१७१।

मूँठि, मूँठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी। उ.—मर्कट मूँठि छाँड़ि नहिं दीनी—२-२६।

मूँदना, मूँदनो–क्रि. स. [सं. मुद्रण] (१) ढक देना, बंद कर देना। (२) छेद खुला न रहने देना।

मूँदि—क्रि. स. [हिं. मूँदना] बंद करके।

प्र०—मूँदि लेत हैं—बंद कर लेते हैं। उ.—कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं—१०-४३।

मूँदे—क्रि. स. [हिं. मूँदना] बंद किये। उ.—(क) सवनि मूँदे नैन—५९७। (ख) नैन मूँदे खग—६५८।

मूँदै—क्रि. स. [हिं. मूँदना] वंद करता है, बंद करे। उ.—हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा—१०-२३९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूँदो—क्रि. स. [हिं. मूंदना] बंद करो या किया। उ.—आवत देखि सबनि मुख मूंदो—१२८५।

मूँदौं—क्रि. स. [हिं, मूंदना] बंद करूँ। उ.—मैं मूंदौं हरि आँखि तुम्हारी —१०-२३९।

मूँदौ—क्रि. स. [हिं. मूंदना] बंद करती ढकती हो। उ.—कर सौं कहा अंग उर मूंदी, मेरे कहैं उघारी —७९३।

मूँदयौ—क्रि. अ. [हिं. मूंदना] बंद किया। उ.—नैन उघारि, बदन हरि मूंदयौ—१०-२५३।

मूक—वि. [सं.] (१) गूँगा। (२) दीन। उ.—ज्यौं बिनु मनि अहि मूक फिरत है—२८०२।

मूकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] गूँगापन।

मूकना, मूकनो—क्रि. स. [सं. मुक्त] (१) छोड़ना, त्यागना। (२) बंधन खोलना, बंधन से छुड़ाना।

मूका—संज्ञा पुं. [हिं. मोखा] दीवार के आर-पार बना छेद, मोखा, झरोखा।

संज्ञा पुं. [हिं. मुक्का] मुक्का, घूँसा।

मूकिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] गूँगापन, मूकता।

मूकू, मूके—वि. [सं. मूक] (१) मट्ठूस। उ.— मूकू निंद निगोड़ा भोड़ा कायर काम बनावै—१-१८६। (२) गूँगा। उ.—मूके भये जज्ञ के पसु लौं—२८८२।

मूखना, मूखनो—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा लेना।

मूचना, मूचनो—क्रि. स. [हिं. मोचना](१) त्यागना। (२) बहा देना। (३) छुड़ाना, मुक्त कराना।

मूछहिं—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. मूँछ] मूँछ को।

प्र०—मूँछहिं पकरि अकरतौ—मूँछ पर हाथ फेर-कर गर्व या घमंड करता। उ.—मिथ्याबाद आप-जसु सुनि सुनि मूछहिं पकरि अकरतौ—१-२०३।

मूज़ी—वि. [अ. मूज़ी] कष्ट देनेवाला, दुष्ट।

मूठ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] (१) मुट्ठी। (२) मुठिया, दस्ता। (३) उतनी चीज जितनी मुट्ठी में आ सके। (४) जादू-टोना।

मुहा०—मूठ चलाना (मारना)—जादू-टोना करना। मूठ लगना - जादू-टोने का प्रभाव पड़ना।

मूठना, मूठनो—क्रि. अ. [सं. मुष्ट, प्रा. मुट्ठ] नष्ट होना।

मूठा—संज्ञा पुं. [हिं. मूठ] मुट्ठा, पूला।

मूठालि, मूठाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूठ] तलवार।

मूठि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूठ] मूठ, दस्ता।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी उ.—इतर नृपति जिहि उचत निकट करि देह न मूठि रिती—११-३।

मूठिक—वि. [हिं. मुट्ठी + इक=एक] एक मुट्ठी भर, जितना एक मुट्ठी में आ सके। उ.—मूठिक तंदुल बाँधि कृष्ण को बनिता त्रिनय पठायो—१० उ०-६५।

मूठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी। उ.—ज्यों मर्कट मूठी नहिं छाँड़त—पृ. ३२९ (८१)।

मूठे—क्रि. अ. [हिं. मूठना] मर मिटे, न रहे। उ.—दुइ तुरंग दुइ नाव पात्र धरि ते कवन न मूठे—३२००।

मूड़—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़] सिर, मूँड़।

मूढ़—वि. [सं.] (१) मूर्ख। उ.—तब तैं मूढ़ मरम नहिं जान्यौ जब मैं कहि समुझायौ—९-११९। (२) स्तब्ध। (३) हतबुद्धि।

मूढ़ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मूर्खता, अज्ञानता। उ.—बरबस ही इन गही मूढ़ता प्रीति जाय चंचल सों जोरी—पृ. ३२८ (७३)।

मूढ़ात्मा—वि. [सं. मूढ़ात्मन्] मूर्ख, अज्ञान।

मूढ़मति—वि. [सं.] मतिभ्रष्ट, अज्ञान। उ.—मूरख, मुग्ध, अजान, मूढ़मति नाहीं कोऊ तेरौ—१-३१९।

मूत—संज्ञा पुं. [सं. मूत्र] मूत्र।

मूतना, मूतनो—क्रि. अ. [हिं. मूत] मूत्र करना।

मूत्र—संज्ञा स्त्री. [सं.] मूत, पेशाब। उ.—(क) रुधिर मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर-गंध-गंवात—२-२४। (ख) आँखि नाक मुख मूल दुवार। मूत्र स्रौन नव पुर कौ द्वार—४-१२। (ग) मूत्र-पुरीष अंग लपटावै—५-२।

मूना, मूनो—क्रि. अ. [हिं. मुवना] मरना।

मूर—संज्ञा पुं. [सं. मूल] (१) जड़। (२) जड़ी। (३) असल या मूल धन। उ.—सूर मूर अक्रूर गयो लै ब्याज निबेरत ऊधो—३२७८।

मूरख—वि. [हिं. मूर्ख] नासमझ, अज्ञान। उ.—(क) इतनी जड़ जानत मन मूरख मानत याहीं धाम—१-७६। (ख) मूरख मुग्ध अजान मूढ़मति—१-३१९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूरखता, मूरखताइ, मूरखताई—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्खता] नासमझी, नादानी, अज्ञता, मूर्खता।

मूरछन, मूरछना, मूरछनि—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छना] संगीत में स्वरों का आरोह-अवरोह।

संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छा] बेहोशी, अचेतना।

मूरछना, मूरछनो—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छा] मूर्छित होना।

मूरछा—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छा] बेहोशी, अचेतना। उ.—(क) माया-मंत्र पढ़त मन निसि दिन मोह-मूरछा आनत—१-४९। (ख) सूर मिटै अज्ञान-मूरछा ज्ञान-सुभेषज खाऐं—२-३२।

मूरत, मूरति—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्ति] प्रतिमा, मूर्ति। उ.—मूरति त्रिया जु भई धरम की, तिनके हरि अवतार- सारा. ६७।

मूरतिवंत - वि. [सं. मूर्ति + वत्] सशरीर, मूर्तिमान।

मूरध—संज्ञा पुं. [सं. मूर्द्धा] सिर, मस्तक।

मूरनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. मूर = मूल] जड़ी-बूटियों के लिए। उ.—अनजानत मूरनि कौं जित-तित उठि दौरीं जिनि जहाँ बताई—७४८।

मूरि, मूरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मूल] (१) मूल, जड़। (२) जड़ी-बूटी। उ.—(क) सूरदास प्रभु बिनु क्यौं जीवौं जात सँजीवन मूरि। (ख) कृष्ण सुमंत्र जियावन मूरी जिन जन मरत जिवायौ—२-३२।

यौ०—ठगमूरी—कोई नशीली चीज जिसे पथिक को खिलाकर उसे ठग लिया जाय। उ.—सूर कहूँ ठगमूरी खाई व्याकुल डोलत ऐसे—पृ. ३३३ (२३)।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मूली] मूली। उ.—मूरौ के पातन के बदले को मुक्ताहल दैहै—३१०५।

मूरुख, मूर्ख—वि. [सं. मूर्ख] नादान, नासमझ।

मूर्खता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मूढ़ता, नासमझी।

मूर्खा, मूर्खिनि, मूर्खिनी—वि. [सं. मूर्ख] मूढ़ा (स्त्री)।

मूर्खिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मूर्खता, अज्ञता।

मूर्च्छन, मूर्छन—संज्ञा पुं. [सं. मूर्च्छन] (१) अचेत या बेहोश होने की क्रिया या भाव। (२) अचेत या बेहोश करने का मंत्र या प्रयोग। उ.—मोहन-मूर्छन (मुर्छन) बसीकरन पढ़ि अगमति देह बढ़ाऊँ—१०-४९। (३) कामदेव का एक बाण।

मूर्च्छना, मूर्छना—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छना] संगीत में स्वरों का आरोह-अवरोह।

मूर्च्छा, मूर्छा—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छा] अचेतावस्था।

मूर्च्छित, मूर्छित—वि. [सं. मूर्च्छित] बेसुध, अचेत। उ.—गौतम रूप धारि तहँ आयौ। मूर्च्छित भयौ अहिल्या पायौ—६-८।

मूर्त, मूर्त्त—वि. [सं. मूर्त्त] जिसका रूप या आकार हो।

मूर्तता, मूर्त्तता—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्त्तता] मूर्त या साकार होने का भाव, साकारता।

मूर्ति, मूर्त्ति—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्त्ति] (१) शरीर। (२) आकृति स्वरूप। (३) प्रतिमा, विग्रह।

मुहा०—मूर्ति के समान (वत्)—स्तब्ध, निश्चल। (४) चित्र, तसवीर।

मूर्तिकला, मूर्त्तिकला—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्त्तिकला] मूर्ति या प्रतिमा बनाने की विद्या या कला।

मूर्तिकार, मूर्त्तिकार—संज्ञा पुं. [सं. मूर्त्तिकार] (१) प्रतिमा बनानेवाला। (२) चित्र बनानेवाला।

मूर्तिपूजक—संज्ञा पुं. [सं. मूर्त्ति + पूजक] देव-भाव से प्रतिमा या विग्रह की पूजा करनेवाला।

मूर्तिभंजक, मूर्त्तिभंजक—वि. [सं. मूर्त्ति + भञ्जक] जो देव-मूर्तियों या प्रतिमाओं की पूजा व्यर्थ या आडंबर मानकर उनको तोड़ डालता हो।

मूर्तिपूजा—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्त्ति + पूजा] देव मानकर प्रतिमा का पूजन करने की क्रिया या भाव।

मूर्तिमान, मूर्तिमान्—वि. [सं. मूर्त्ति + मान्] (१) जिसका रूप या आकार हो, सशरीर। (२) साक्षात्।

मूर्द्ध, मूर्ध—संज्ञा पुं. [सं. मूर्द्धन्] सिर, मस्तक।

मूर्द्धन्य—वि. [सं.] (१) मूर्द्धा से संबंध रखनेवाला। (२) सिर या मूर्द्धा में स्थित। (३) जिन (वर्णों) का उच्चारण मूर्द्धा से हो; जैसे—ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र और ष।

मूर्द्धा—संज्ञा पुं. [सं. मूर्द्धन्] सिर, मस्तक।

मूल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेड़ की जड़। उ.—(क) महामूढ़ सो मूल तजि साखा जल नावै—२-९। (ख) सींचत नीर के सजनी मूल पतार गई—२७७३। (२) मीठी जड़ या कंठ। (३) आदि, प्रारंभ। (४) आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण, उत्पत्ति का हेतु, आधार। उ.—भई आकास-बानी तिहिं बार। तू ये चार स्लोक बिचार।........। मूल भागवत के येई चारि। सूर भलीबिधि इन्हैं बिचारि—२-३७। (५) असल धन या पूँजी जिससे कोई व्यापार आरंभ किया जाय। उ.—(क) होतो नफा साधु की संगति, मूल गाँठि नहिं टरतौ—१-२९७। (ख) और बनिज मैं नाहीं लाहा, होति मूल मैं हानि—१-३१०। (६) किसी वस्तु का प्रारंभिक भाग। (७) सत्ताइस नक्षत्रों में उन्नीसवां। (८) किसी देवता का आदि या बीज मंत्र।

वि.– मुख्य, प्रधान।

संज्ञा पुं. [सं. मूल्य] महत्व, सम्मान। उ.—देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनो मूल या बिधि सो खोवै—८-११।

मूलक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मूली। (२) मूल रूप।

वि. उत्पन्न करनेवाला, जनक।

मूल दुवार, मूल द्वार–संज्ञा पुं. [सं. मूल+द्वार] प्रधान या सिंह द्वार। उ.– आँखि, कान, मुख मूल दुवार—४-१२।

मूलधन—संज्ञा पुं. [सं.] पूँजी।

मूलस्थल, मूलस्थली—संज्ञा पुं. [सं.] थाला, आलबाल।

मूलहु—संज्ञा पुं. सवि. [सं. मूल+हिं. हु] पूँजी या मूलधन को भी। उ.—सूरदास तेहि वनिज कवन गुन मूलहु मांझ गवांए—३२०१।

मूलाधार - संज्ञापुं.[सं.]शरीर के भीतरी छह चक्रों में एक।

मूलिका—संज्ञा पुं. [सं.] औषधि की जड़, जड़ी।

मूली—संज्ञा स्त्री. [सं. मूलक] एक पौधे की लम्बी जड़ जो खायी जाती है। उ.—मूली (मूरी) के पातन के बदले को मुक्ताहल दैहै—३१०५।

मुहा०—(किसी को) मूली-गाजर समझना—बहुत तुच्छ समझना।

मूल्य—संज्ञा पुं. [सं.] दाम, कीमत।

मूल्यन –संज्ञा पुं. [सं. मूल्य+हिं. न] मूल्यांकन।

मूल्यवान, मूल्यवान्—वि. [सं. मूल्यवान्] कीमती।

मूल्यांकन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी वस्तु का मूल्य निश्चित करना। (२) किसी वस्तु का महत्व आँकना।

मूष, मूषक—संज्ञा पुं. [सं.] चूहा।

मूषकबाहन—संज्ञा पुं. [सं.] गणेश जी।

मूषत—क्रि.स.[हिं.मूसना] चुरा ले जाता है। उ.—निशा-निमेष कपाट लगे बिनशशि मूषत सतसार—२८८८।

मूषना, मूषनो—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा ले जाता है।

मूषिक—संज्ञा पुं. [सं.] चूहा।

मूषी—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा ले गया। उ.—तेरे हती प्रेम-संपति सखि सो संपति केहि मूषी—२२७५।

मूषे—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा ले गये। उ.—मेरेहु जान सूर प्रभु साँचे मदन चोर मिलि मूषे हो – १९६२।

मूस—संज्ञा पुं.[सं. मूष] चूहा। उ.—बालक मूस ज्यौं पूंछ धरि खेलिए तैसे हरि हाथ हाथी गिरायौ—२५९६।

मूसना, मूसनो—क्रि. स. [सं. मूषण] चुरा ले जाना।

मूसर, मूसल—संज्ञा पुं. [सं. मुशल, हिं. मूसल] (१) धान कूटने का मूसल। (२) एक अस्त्र जिसे बलराम धारण करते थे। उ.—हलधर हल-मूसल कर लीन्हे, सबहीं मलेच्छ सँहारे—सारा. ६०४। (३) राम और कृष्ण के पद का एक चिह्न।

वि.—अपढ़, गँवार या असभ्य।

मूसरचंद, मूसलचंद—वि. [हिं. मूसल+चंद्र] (१) अपढ़, गँवार। (२) हट्टा-कट्टा परन्तु निकम्मा।

मूसरधार, मूसलधार, मूसलाधार—क्रि. वि. [हिं. मूसल +धार] बहुत मोटी धार से, बहुत तेजी से।

संज्ञा पुं.—बहुत मोटी धार। उ.—मूसलधार टूटी चहुँ दिसि ते ह्वै गयौ दिवस अँधेरी—९५९।

मूसा—संज्ञा पुं. [सं. मूषक] चूहा। उ.—जैसैं घर बिलाव के मूसा रहत विषय-वस वैसौ—२-१४।

संज्ञा पुं. [इबरानी] यहूदियों के एक पैगंबर।

मूसि—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा-चुराकर। उ.—(क) मूसि मूसि लै गए मन माखन जो मेरे धन हो री—१५१३। (ख) सरबस मूसि देत माधव को—पृ. ३३४ (४०)।

मूसी—क्रि. स. [हिं. मूसना] चुरा ले गया, चुरा ली। उ.—(क) मृग मूसी नैननि की सोभा जाति न गुप्त करी—९-६३। (ख) तेरे हती प्रेम-संपति सखि सो संपति सब मूसी (मूषी)—२२७५।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन्य पशु । (२) हिरन । उ.—(क) मृग मूसी नैननि की सोभा—९-६३ । (ख) द्वै अपराध मोहिं वै लागे मृग-हित दियौ हथियार —९-८३ । (३) मृगशिरा नक्षत्र । (४) वैष्णवों के तिलक का एक भेद ।

मृगअरि—संज्ञा पुं. [सं. मृग+अरि] सिंह । उ.—राजति मृगअरि की सी लंक—२१९३ ।

मृगचरम, मृगचर्म—संज्ञा पुं. [सं. मृगचर्म] हिरन की खाल जो साधु-संन्यासी ओढ़ते,पहनते औरबिछाते हैं ।

मृगछाल, मृगछाला—संज्ञा स्त्री. [सं. मृग+हिं. छाल, छाला] हिरन की खाल । उ.—दंड कमंडल हाथ बिराजत और ओढ़े मृगछाला—सारा. ३३३ ।

मृगछौना—संज्ञा पुं. [सं. मृग+हिं छौना] हिरन का बच्चा । उ.—मैं मृगछौना मैं चित दयौ, तातैं मैं मृग-छौना भयौ—५-३ ।

मृगज—संज्ञा पुं. [सं.] मृग का बच्चा, मृग । उ.—(क) खंजन, मीन मृगज चपलाई नहि पटतर एक सैन—१३४९ । (ख) कमल खंजन मृगज मीन लोचन जीते—२१५६ ।

मृगजल—संज्ञा पुं. [सं.] मृगतृष्णा की लहरें ।

मृगजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कस्तूरी ।

मृगतृषा, मृगतृष्णा, मृगतृष्णिका, मृगतृष्ना—संज्ञा स्त्री. [सं. मृग+तृषा, तृष्णा] जल की लहरों का वह भ्रम जो रेतीले या ऊसर मैदान में कड़ी धूप पड़ने पर हो जाता है और जिसे जल समझकर प्यासा मृग दूर तक व्यर्थ दौड़ता है, मृग-मरीचिका । उ.—(क) रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौन चयौ—१-३८ । (ख) मृग-तृष्ना आचार-जगत जल ता सँग मन ललचावै—२-१३ ।

मृगदाव—संज्ञा पुं. [सं. मृग+दाव=वन] (१) वन जहाँ मृग बहुत हों । (२) 'सारनाथ' का प्राचीन नाम ।

मृगधर—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा ।

मृगनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह ।

मृगनाभि—संज्ञा पुं. [सं.] कस्तूरी ।

मृगनारी—संज्ञा पुं. [सं. मृग+नारी] हिरनी, मृगी । उ.—मृगनारी सौं बूझहीं बूझैं सुकुमारी—१८२३ ।

मृगनैनी—वि. [सं. मृग+हिं. नयन+ई] हिरन-जैसे सुन्दर नेत्र वाली (नारी) ।

मृगपति—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह । उ.—कर-पल्लव उडु-पति रथ खैंच्यौ मृगपति बैर करयौ—२८९५ ।

मृगबारि—संज्ञा पुं. [सं. मृगवारि] मृगतृष्णा का जल ।

मृगभद्र—संज्ञा पुं. [सं.] हाथियों की एक जाति ।

मृगमद—संज्ञा पुं. [सं.] कस्तूरी । उ.—(क) ज्यौं माखी मृगमद मंडित तन परिहरि पूय परै—१-१९८ । (ख) मथि मृगमद-मलय-कपूर माथैं तिलक किये—१०-२४ ।

मृगमरीचिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] मृगतृष्णा ।

मृगमित्र—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा ।

मृगमेद—संज्ञा पुं. [सं.] कस्तूरी ।

मृगया—संज्ञा स्त्री. [सं.] शिकार, आखेट, अहेर । उ.—एक दिवस मृगया कौं निकस्यौ कंठ महामनि लाइ—सारा. ६४४ ।

मृगराज—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह ।

मृगरोचन—संज्ञा पुं. [सं.] कस्तूरी ।

मृगलांछन—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा ।

मृगलेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] चंद्रमा का धब्बा ।

मृगलोचना, मृगलोचनी—वि. [सं. मृग+ लोचन] (स्त्री) जिसके नेत्र मृग के समान हों ।

मृगवारि—संज्ञा पुं. [सं.] मृगतृष्णा का जल ।

मृगशिरा, मृगसिरा—संज्ञा पुं. [सं. मृगशिरस्, हिं. मृग-शिरा] सत्ताइस नक्षत्रों में पाँचवाँ ।

मृगांक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चंद्रमा । (२) (वैद्यक में) एक रस जो सुवर्ण, रत्नादि से बनता है ।

मृगा—संज्ञा पुं. [सं. मृग] हिरन, मृग । उ.—(क) ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै, सुतौ ताके पास—१-७० । (ख) धावत कनक मृगा के पाछैं—१०-१९८ ।

मृगाक्षि, मृगाक्षी, मृगाछि, मृगाछी—वि. स्त्री. [सं. मृगाक्षी] (स्त्री) जिसके नेत्र मृग जैसे सुंदर हों ।

मृगाश, मृगाशन—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह ।

मृगिअन—संज्ञा पुं. सवि. [सं. मृग] मृगों को । उ.—जैसे मृगिअन ताकि बधिक दृग कर कोदंड गहि ताने—३१३६ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृगिनी, मृगी—संज्ञा स्त्री. [सं. मृग] हिरनी, हरिणी। उ.—(क) मृग-मृगिनी द्रुम बन सारस खग काहू नहीं बतायी री। (ख) जद्यपि व्याध बधै मृग प्रगटहि मृगिनी रहै खरी री—पृ. ३३३ (२५)।

मृगेंद्र, मृगेश—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह।

मृड़ा, मृड़ानी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा, पार्वती।

मृणाल—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कमल की नाल जिसमें फूल लगता है। (२) कमल की जड़। (३) खस।

मृणालिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलनाल।

मृणालिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलिनी।

मृणाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलनाल।

मृत—वि. [सं.] मरा हुआ, मुर्दा।

मृतकंबल—संज्ञा पुं. [सं.] वस्त्र जिससे मुर्दा ढका जाय, कफन।

मृतक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मरा हुआ प्राणी। उ.—(क) दासी बालक मृतक निहारि। परी धरनि पर खाइ पछारि—६-५। (२) मरे हुए के समान। उ.—जबते कह्यौ कंस सों मन मोहन जीवत मृतक करि लेखो—२५४८।

मुहा०—मृतकहु ते पुनि मारे—जो स्वयं ही मर रहा था उसी को मार दिया, जिस पर स्वयं अपार संकट था, उस पर और भी अत्याचार किया। उ.—सूर स्याम करी पिय ऐसी मृतकहु ते पुनि मारे—१० उ०-८३।

मृतक कर्म—संज्ञा पुं. [सं.] मरे हुए प्राणी का क्रिया-कर्म या प्रेत-कर्म।

मृतक धूम—संज्ञा पुं. [सं.] राख, भस्म।

मृतजीवनी—संज्ञा स्त्री. [सं.]। वह विद्या जिससे मृतक को भी जिला लिया जाय।

मृतप्राय—वि. [सं.] जो मरने के निकट हो।

मृतभाषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] भाषा जो पहले कभी प्रचलित रही हो, परन्तु अब वैसी प्रचलित न हो और उसको बोलनेवाले बहुत कम हों।

मृतवत्सा—वि. स्त्री. [सं.] (स्त्री.) जिसकी संतान मर गयी हो या बार-बार मर जाती हो।

मृतसंजीवनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक बूटी जिससे मृतक को भी जिला लिया जाय।

मृत्तिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] मिट्टी। उ.—कियौ स्नान मृत्तिका लाइ—१-३४१।

मृत्युंजय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह जिसने मृत्यु पर विजय पा ली हो। (२) शिव। (३) शिव का एक जाप जिससे मृत्यु टल जाती है।

मृत्यु—संज्ञा स्त्री. [सं.] मौत, मरण।

मृत्युबंधु—संज्ञा पुं. [सं.] यमराज।

मृत्युलोक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यमलोक। (२) संसार।

मृत्युहिं—संज्ञा स्त्री. सवि. [सं. मृत्यु.] मृत्यु को भी। उ.—मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै भावी-बस सो मरै—१-२६४।

मृदंग, मृदंगा—संज्ञा पुं. [सं. मृदंग] एक बाजा जो ढोलक से कुछ लम्बा होता है। उ.—ताल मृदंग झाँझ इंद्रिनि मिलि बीना वेनु बजायौ—१-२०५।

मृदु—वि. [सं.] (१) छूने में नरम, कोमल। उ.—अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन मोहन-मुख बगराई—१०-१०८। (२) जो सुनने में कर्कश न हो। (३) सुकुमार। (४) मंद, धीमा। उ.—बिधु मुख मृदु मुसुक्यानि अमृत सम सकल लोक लोचन प्यारी—१-६९।

मृदुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कोमलता। (२) धीमापन।

मृदुल—वि. [सं.] (१) जो छूने में नरम हो, कोमल। (२) सुकुमार। उ.—मंजु मेचक मृदुल तनु—१०-१०९। (३) दयामय, कृपालु। उ.—सूर स्याम सरबज्ञ कृपानिधि करुना मृदुल हियौ—१-१२१।

मृदुलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] कोमलता।

मृनाल—संज्ञा स्त्री. [सं. मृणाल] कमल की नाल या जड़।

मृन्मय—वि. पुं. [सं.] मिट्टी का बना हुआ।

मृषा—अव्य. [सं.] झूठमूठ, व्यर्थ।

वि.—झूठ, असत्य।

में—अव्य. [हिं. महँ] अधिकरण कारकीय चिह्न।

मेंगनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मींगी] पशु की विष्टा, लेंडी।

मेकल—संज्ञा पुं. [सं.] विंध्य पर्वत का एक भाग।

मेकलकन्यका, मेकलकन्या, मेकलसुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नर्मदा नदी जो मेकल पर्वत से निकली है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेख—संज्ञा पुं. [सं. मेष] (१) भेड़। (२) एक राशि। (३) एक लग्न।

संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) कील। (२) खूँटा।

मुहा०—मेख ठोंकना—(१) (हाथ-पैर में कील ठोंकने-जैसा) कठोर दंड देना। (२) दबाना, हराना। मेख मारना—(१) कील ठोंककर हिलना-डोलना बंद करना। (२) ऐसी भाँजी मारना कि होता हुआ काम भी न हो। (३) चलते हुए काम में बाधा डालना।

मेखल, मेखला, मेखली—संज्ञा स्त्री. [सं. मेखला] (१) करधनी, किंकिणी। उ.—कटि पट पीत मेखला मुखरित पाइनि नूपुर सोहै—४५१। (२) वह वस्तु जो दूसरी के मध्य भाग में उसे चारों ओर से घेरे हो। (३) कमर में पहनी गयी डोरी। (४) गोल घेरा, मंडल। (५) कमरबंद जिसमें तलवार बाँधी जाती है। (६) साधुओं के गले में पड़ा रहनेवाला कपड़े का टुकड़ा, कफनी। उ.—कानन मुद्रा पहिरि मेखला धरैं जटा जोग अधारी—३२२३।

मेघ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बादल। उ.—को करि लेइ सहाइ हमारी प्रलय काल के मेघ अरे—८३२। (२) संगीत के छह रागों में एक।

मेघकाल—संज्ञा पुं. [सं.] वर्षा ऋतु।

मेघधनु—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्रधनुष।

मेघध्वज—संज्ञा पुं. [सं.] एक राजा जो विष्णु का बड़ा भक्त था और जिसने विदर्भ राज की कन्या से विवाह किया था। उ.—मेघध्वज सौं भयौ बिबाह। बिष्नु भक्ति कौ तिहिं उतसाह—४-१२।

मेघनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] इन्द्र।

मेघनाद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेघ का गर्जन। (२) रावण का पुत्र इन्द्रजित जिसे लक्ष्मण ने मारा था।

मेघपटल—संज्ञा पुं. [सं.] बादल की घटा।

मेघपति—संज्ञा पुं. [सं.] इन्द्र।

मेघपुष्प—संज्ञा पुं. [सं.] (१) इन्द्र का घोड़ा। (२) श्रीकृष्ण के रथ के चार घोड़ों में एक।

मेघमलार, मेघमल्लार—संज्ञा पुं. [सं.] एक राग।

मेघमाल, मेघमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] बादल की घटा।

मेघराज—संज्ञा पुं. [सं.] इन्द्र।

मेघबर्त, मेघबर्तक, मेघवर्त, मेघवर्तक, मेघवर्त्त—संज्ञा पुं. [सं. मेघवर्त्त] प्रलयकालीन मेघों में एक। उ.—सुनि मेघबर्त सजि सैन आए। बलबर्त्त, बारिबर्त, पौनबर्त, बज्र, अग्निबर्तक, जलद संग ल्याए—८५३।

मेघवाइ, मेघवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेघ + वाई] बादल की घटा।

मेघवाहन—संज्ञा पुं. [सं.] इन्द्र।

मेघा—संज्ञा पुं. [सं. मेघ] बादल।

संज्ञा पुं.—मेढक, मंडूक।

मेघाच्छन्न—वि. [सं.] बादलों से ढका हुआ।

मेघाच्छादित—वि. [सं.] बादलों से ढका हुआ।

मेघावर, मेघावरि, मेघावलि, मेघावारि—संज्ञा स्त्री. [सं. मेघावलि] बादलों की घटा।

मेघास्थि—संज्ञा पुं. [सं.] ओला।

मेचक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अंधकार। (२) धुआँ।

वि.—काला, श्याम। उ.—मंजु मेचक मृदुल तनु—१०-१०९।

मेचकता, मेचकताइ, मेचकताई—संज्ञा स्त्री. [सं. मेचकता] कालापन, श्यामता।

मेजा—संज्ञा पुं. [हिं. मेढक, पू० हिं. मेझुका] मेढक।

मेटक—वि. [हिं. मेंटना] मिटानेवाला, नाशक।

मेटत—क्रि. स. [हिं. मेटना] नष्ट करता है। उ.—सूरदास जो संतनि कौं हित कृपावंत मेटत दुख-जालहिं—१९४।

मेटति—क्रि. स. [हिं. मेटना] नष्ट करती है। उ.—मेटति है अपने बल सबहिनि की रीति—६५०।

मेटन—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेटना] मेटने के लिए। उ.—सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे मेटन कौं भू-भार—१०-१५।

मेटनहार, मेटनहारा, मेटनहारो—संज्ञा पुं. [हिं. मेटना + हार] मिटानेवाला। उ.—सो अब सत्य होत इहिं औसर को है मेटनहार—९-१२१।

मेटना, मेटनो—क्रि. स. [सं. मृष्ट, प्रा. मिट्ट + ना] (१) मिटा देना। (२) दूर करना। (३) नष्ट करना।

मेटि—क्रि. स. [हिं. मेटना] (१) मिटाकर, नष्ट करके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—बिधि की बिधि मेटि करति अपनी नई रीति —६५३।

प्र०—मेटि सकै—मिटा सकता है। उ.—जो कछु लिखि राखी नँदनंदन मेटि सकै नहिं कोइ—१-२६२। (२) दूर करके, रहने न देकर। उ.—मुनि-मद मेटि दास-व्रत राख्यौ अंबरीष-हितकारी—१-१७। (३) हटाकर, प्रचलित न रहने देकर। उ.—सुरपति पूजा मेटि गोबर्धन कीनो यह संजोग—९२१।

मुहा०—मेटि धरे—आदर सम्मान मिटाकर अप्रसन्न कर दिया। उ.—कुलदेवता हमारे सुरपति तिनको सब मिलि मेटि धरे—९५३।

मेटिबो, मेटिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. मेटना] मेटने की क्रिया या भाव।

क्रि. स.—दूर करना। उ.—सुख संदेस सुनाइ सबन कौ दिन दिन को दुख मेटिबो—२९४२।

मेटिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटका] मटकी।

वि. [हिं. मेटना] मेटनेवाला।

मेटी—क्रि. स. [हिं. मेटना] मिटायी, नष्ट की।

प्र०—मेटी नहिं जाहि—मिटायी नहीं जा सकती। उ.—सूर सीय पछिताति यहै कहि करम-रेख मेटी नहिं जाहि—९-५९।

(२) दूर की, मिटा दी। उ.—मेटी पीर परम पुरुषोत्तम—१-११३।

मेटुकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटकी] मटकी।

मेटुआ, मेटुवा—वि. [हिं. मेटना] दूसरे का किया हुआ उपकार न माननेवाला, कृतघ्न।

मेटे—क्रि. स. [हिं. मेटना] (१) मिटा दिये, साफ कर दिये। उ.—हमैं नंदनंदन मोल लिये। .... मेटे अंक बिये—१-१७१। (२) नष्ट कर दिये। उ.—अंग परसि मेटे जंजाला—७९९।

मेटै—क्रि. स. [हिं. मेटना] दूर करे, रहने न दे। उ.—सूर स्याम मेटै संताप—१-२६१।

मेटौंगी—क्रि. स. [हिं. मेटना] दूर करूँगी, रहने न दूँगी। उ.—मैं हारी त्योंही तुम हारो चरन चापि स्रम मेटौंगी—१७७९।

मेटौं—क्रि. स. [हिं. मेटना] दूर करूँ, रहने न दूँ। उ.—तुव दरस तन-ताप मेटौं काम-दुंद गँवाइ—६८३।

मेटौ—क्रि. स. [हिं. मेटना] (१) मिटाओ, (लांछन आदि) दूर करो। उ.—सूर स्याम इहिं बरजि कै मेटौ अब कुल-गारी हो—१-४४। (२) (विपत्ति आदि) दूर करो। उ.—मेटौ बिपति हमारी—१-१९३।

मेटयो, मेटयौ—क्रि. स. [हिं. मेटना] (१) मिटाया, दूर किया। उ.—(क) मेटयो सबै दुराजै—१-३६। (ख) दुख मेटयो दुहुँ घाँ को—१-११३। (ग) दुरजोधन को मेटयो गारौ—१-१७२। (घ) जामवंत मद्द मेटयौ—१०-१२७। (२) (वचन-आदि) तोड़ा।

मुहा०—न मेटयो जाइ—(वचन आदि) तोड़ा नहीं जाता। उ.—तुम्हरो बचन न मेट्यो जाइ—११-१।

मेड़—संज्ञा पुं. [सं. भित्ति ?] (१) खेत का ऊँचा घेरा। (२) खेत के बीच में या सीमा पर बना कुछ ऊँचा मार्ग।

मेड़रा—संज्ञा पुं. [हिं. मंडरा] (१) किसी गोल चीज का उभरा हुआ किनारा। (२) मंडलाकार ढाँचा।

मेडराना, मेडरानो—क्रि. अ. [हिं. मँडराना] (१) मंडल बाँधकर उड़ना। (२) चारों ओर घूमना। (३) आस-पास फिरना।

मेडरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेडरा] (१) गोल चीज का उभरा हुआ किनारा। (२) गोल ढाँचा।

मेड़िया—संज्ञा स्त्री. [हिं. मढ़ी] मंडप, घर।

मेढक, मेढ़क—संज्ञा पुं. [सं. मंडूक, हिं. मेढक] मंडूक।

मेढ़ा—संज्ञा पुं. [सं. मेढ्र] नर भेड़, दुंबा।

मेढ़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. वेणी] तीन लड़ियों की चोटी।

मेथी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक पौधा जिसका साग खाया जाता है और जिसकी फलियों के बाने 'मसाले' के काम आते हैं। उ.—सरसों मेथी, सोवा, पालक, बथुआ राँध लियौ जु उतालक—३९६।

मेथौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेथी+बरी] मेथी के साग और उर्द की पीठी की बरी या बड़ियाँ।

मेद—संज्ञा पुं. [सं. मेदस्, मेद] (१) चरबी।

उ.—रुधिर-मेद, मल-मूत्र, कठिन कुच, उदर गंध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंधात—२-२४। (२) चरबी बढ़ने या मोटा होने का रोग। (३) कस्तूरी।

मेदा—संज्ञा स्त्री. [अ.] पाकाशय, पेट।

मेदनी, मेदिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. मेदिनी] पृथ्वी जिसको मधु-कैटभ के 'मेद' से उत्पन्न माने जाने के कारण 'मेदिनी' कहते हैं। उ.—बरषत मेह मेदनी के हित—२१९४।

मेध, मेधा—संज्ञा पुं. [सं. मेध] यज्ञ।

मेधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] स्मरण रखने की शक्ति।

मेधविन, मेधावी—वि. [सं. मेधाविन्] (१) तीव्र स्मरण शक्तिवाला। (२) बुद्धिमान। (३) विद्वान।

मेनका—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक प्रसिद्ध अप्सरा जिसने विश्वामित्र का तप भंग करके उनके संयोग से शकुंतला को जन्म दिया था।

मेमना—संज्ञा पुं. [अनु. में में] (१) भेंड़ का बच्चा। (२) घोड़ों की एक जाति।

मेमार—संज्ञा पुं. [अ.] थवई, राजगीर।

मेर—संज्ञा पुं. [सं. मेल] मेल।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मेड़] मेड़-जैसा ऊँचा। उ.—मानहुँ कुमुदिनि कनक मेर चढ़ि ससि सनमुख मृदु सहित सिधाई—२११६।

सर्व. [हिं. मेरा] मेरा। उ.—मेर ही या हृदय की हरि कठिन सकल उपाइ —११-१।

मेरनि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मेल] मेल में। उ.—अपने अपने मेरनि मनो उनि होरी हरषि लगाई।

मेरवन—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेरवना] (१) मिलाने की क्रिया या भाव। (२) मिलाई हुई चीज।

मेरना, मेरनो, मेरवना, मेरवनो—क्रि. स. [सं. मेलना] (१) कई वस्तुओं को मिश्रित करना। (२) मेल-मिलाप कराना।

मेरा—सर्व. [हिं. मैं + रा] 'मैं' का संबंधकारकीय रूप।

संज्ञा पुं. [हिं. मेला] (१) मेला। (२) भीड़।

मेराउ, मेराव—संज्ञा पुं. [हिं. मेल] मेल-मिलाप।

मेरियै—सर्व. [हिं. मेरी] मेरी ही। उ.—यह सब मेरियै आइ कुमति—१-३००।

मेरी—सर्व. स्त्री. [हिं. मेरा] 'मेरा' का स्त्रीलिंग रूप। उ.—कौन गति करिहौ मेरी नाथ—१-१२४।

संज्ञा स्त्री.—(१) अहंकार। (२) मोह माया।

यौ०—मैं-मेरी—मोह-माया। मेरी-मेरी—मोह-ममता, माया।

मुहा०—मेरी मेरी करना—मोह-ममता लगाना, मोह-माया में फँसना। मेरी मेरी करि—मोह-माया लगाकर या उसमें फँसकर। उ.—अब मेरी-मेरी करि बौरे बहुरौ बीज बयौ—१-७८।

क्रि. स. [हिं. मेलना] मिलायी, मिश्रित की।

मेरु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) 'सुमेरु' पर्वत जो सोने का कहा गया है। (२) पर्वत। उ.—(क) तिनका सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु समान—१-८। (ख) अघ कौ मेरु बढ़ाइ—१६५। (३) जाप की माला का बड़ा दाना जो 'सुमेरु' कहलाता है।

मेरुदंड—संज्ञा पुं. [सं.] पीठ की निचली हड्डी, रीढ़।

मेरे—सर्व. [हिं. मेरा] 'मेरा' का बहुवचन। उ.—जौ प्रभु मेरे दोष बिचारैं—१-१८३।

मेरैं—सर्व. सवि. [हिं. मेरा] (१) मेरे (पास)। उ.—खेवनहार न खेवट मेरैं—१-१८४। (२) 'मेरे' का वह रूप जो सम्बंधी शब्द की विभक्ति लुप्त होने पर उसे दिया जाता है। उ.—तौ बिस्वास होइ मन मेरैं—१-१४६।

क्रि. स. [हिं. मिलाना] मिश्रित करते हैं।

मेरो, मेरौ—सर्व. [हिं. मेरा] मेरा। उ.—मेरौ मन मतिहीन गुसाईं—१-१०३।

क्रि. स. [हिं. मेलना] मिश्रित करो।

मेल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कई वस्तुओं या व्यक्तियों का संयोग या मिलाप। (२) एका, एकता।

यौ०—मेल-जोल, मेल-मिलाप या हेल-मेल—एका, एकता।

मुहा०—मेल करना—संधि या एका करना। मेल होना—संधि या एका होना।

(३) मित्रता, प्रीति।

मुहा०—मेल बढ़ना—मित्रता गाढ़ी होना। मेल बढ़ाना—मित्रता घनिष्ठ करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) संग, संगति, साथ, अनुरूप। उ.—ते अपनैं-अपनैं मेल निकसीं भाँति भली—१०-२४।

मुहा०—मेल खाना, बैठना या मिलना—(१) साथ निभना। (२) दो चीजों का जोड़ ठीक-ठीक होना।

(५) जोड़, टक्कर, बराबरी। (६) प्रकार, रीति। (७) दो वस्तुओं का मिश्रण।

मेलत—क्रि. स. [हिं. मेलना] डालता है। उ.—(क) कर पग गहि अँगुठा मुख मेलत—१०-६३। (ख) बरा कौर मेलत मुख भीतर—१२-२२४।

मेलना, मेलनो—क्रि. स. [हिं. मेल] (१) मिश्रित करना। (२) डालना, रखना। (३) पहनाना।

क्रि. अ.—इकट्ठा या एकत्र होना।

मेल-मल्लार—संज्ञा पुं. [सं.] एक रागिनी।

मेला—संज्ञा पुं. [सं. मेलक] (१) भीड़-भाड़। (२) दर्शन, उत्सव जैसे सामाजिक आयोजन के अवसर पर बहुत से लोगों का जमाव।

यौ०—मेला-ठेला—भीड़-भाड़।

मेलाना, मेलानो—क्रि. स. [हिं. मेल] मेल करने या मिलने को प्रवृत्त करना।

मेलि—क्रि. स. [हिं. मेलना] डालकर, रखकर। उ.—(क) सालिग्राम मेलि मुख भीतर बैठि रहे अरगाई—१०-२६३। (ख) ग्वालिन कर तैं कौर छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात—४६६।

प्र०—मेलि मोहिनी—मोहिनी डालकर। उ.—ना जानौं कछु मेलि मोहिनी राखे अँग-अँग भोरि—६५७।

मेली—संज्ञा पुं. [हिं. मेल] संगी-साथी।

वि.—हेल-मेल रखनेवाला।

क्रि. स. [हिं. मेलना] उपस्थित या प्रस्तुत की, विक्रयार्थ रखी। उ.—मुक्ति आनि मदे मो मेली—३१४४।

मेले—क्रि. स. बहु. [हिं. मेलना] मिलाये, डाले, मिश्रित किये। उ.—हींग हरद म्रिच छौंके तेले। अदरख और आँवरे मेले—३९६।

मेलो, मेलौ—क्रि. स. [हिं. मेलना] डालो, रखो।

प्र०—बंदि लै मेलो—बंदीगृह में डाल दो। उ.—बरु ए गो-धन हरौ कंस सब मोहिं बंदि लै मेलो—२५११।

मेल्यो, मेल्यौ—क्रि. स. [हिं. मेलना] डाला, रखा। उ.—चुपकहिं आनि कान्ह मुख मेल्यौ, देखौं देव बड़ाई—१०-२६१।

मेल्हना, मेल्हनो—क्रि. अ. [देश.] (१) छटपटाना, बेचैन होना। (२) टाल-टूल कर समय बिताना।

मेव—संज्ञा पुं. [देश.] राजपुताने की एक लुटेरी जाति, मेवाती।

मेवा—संज्ञा पुं. स्त्री. [फ़ा.] किशमिश आदि सूखे फल। उ.—दूध दही घृत माखन मेवा जो माँगौं सो दै री—१०-१७६।

मेवाटी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मेवा + बाटी] एक पकवान जिसमें मेवा भरी जाती है।

मेवाड़—संज्ञा पुं. [देश.] राजपुताने का एक प्रांत।

मेवात—संज्ञा पुं. [सं.] राजपूताने और सिंध का मध्यवर्ती प्रदेश।

मेवासा—संज्ञा पुं. [हिं. मवासा] (१) किला, गढ़। (२) रक्षा का आश्रय या स्थान। (३) घर, मकान।

मेवासी—संज्ञा. पुं. [हिं. मेवासा] (१) घर का स्वामी। (२) किले में सुरक्षित व्यक्ति आदि।

मेष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भेड़। (२) एक राशि। (३) एक लग्न। (४) सोच-विचार।

मुहा०—मेष या मीन-मेष करना—आगा-पीछा या सोच-विचार करना।

मेषै—संज्ञा पुं. सवि. [सं. मेष] सोच-विचार।

मुहा०—करत मेषै—आगा-पीछा या सोच-विचार करता है। उ.—मनो आए सँग देखि ऐसे रँग मनहि मन परस्पर करत मेषै—२४९३।

मेषी—संज्ञा स्त्री. [सं.] मादा भेड़।

मेहँदी—संज्ञा स्त्री. [सं. मेन्धी] एक झाड़ी जिसकी पत्तियाँ पीसकर लगाने से हाथ-पैर आदि अंगों पर लाली चढ़ जाती है।

मुहा०—क्या पैर में मेहँदी लगी है—जो किसी जगह से उठकर काम करने न जा रहा हो, उसको उठाने के लिए ताना। मेहँदी रचना—मेंहदी लगाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से खूब अच्छा लाल रंग चढ़ना। मेहँदी रचाना या लगाना—हाथ-पैर पर लाली चढ़ाने के लिए मेंहदी की पत्तियाँ पीसकर लगाना।

मेह—संज्ञा पुं. [सं. मेघ, प्रा. मेह] (१) बादल। (२) वर्षा, झड़ी। उ.—ठाढ़े रहो आँगन ही हो पिय जौं लौं मेह न नख-शिख भीजौ—२००२।

मेहतर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] भंगी।

मेहनत—संज्ञा स्त्री. [अ.] श्रम, प्रयास।

मेहनताना—संज्ञा पुं. [अ.+फ़ा.] पारिश्रमिक।

मेहनती—वि. [हिं. मेहनत] मेहनत करनेवाला।

मेहमान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] पाहुना, अतिथि।

मेहमानदारी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] अतिथि-सत्कार।

मेहमानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मेहमान] (१) अतिथि-सत्कार।

मुहा०–मेहमानी करना—गत बनाना, दुर्दशा करना। (२) मारना-पीटना। करति मेहमानी-दुर्दशा करती, अच्छी तरह गत बनाती। उ.—नंद महरि की कानि करति हौं नातरु करति मेहमानी—१०४६। मेहमानी खाना – दुर्दशा या गत बनायी जाना। मेहमानी खाते—दुर्दशा या गत बनायी जाती। उ.—मेहमानी कछु खाते।

(२) अतिथि के रूप में रहने का भाव।

मेहर—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] दया, कृपा।

मेहरबान—वि. [फ़ा.] दयालु, कृपालु।

मेहरबानगी, मेहरबानी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मेहरबानी] दया, कृपा, अनुग्रह।

मेहरा—संज्ञा पुं. [हिं. मेहरी] स्त्रियों के बीच में बहुत अधिक रहने-बसने वाला।

संज्ञा पुं. [हिं. मेहर] खत्रियों की एक उपजाति।

संज्ञा पुं. [हिं. मेह] मेह, वर्षा। उ.–बेगि साँवरे पाइँ धारिए सूर के स्वामी नतर भीजैगो पियरो पट आवत है पिय मेहरा—२००१।

मेहराना, मेहरानो—क्रि. स. [हिं. मेह+राना] वर्षा के कारण कुरकुरे पदार्थों का सील जाना।

मेहराब—संज्ञा स्त्री. [अ.] द्वार का ऊपरी अर्द्धमंडलाकार भाग।

मेहरारू, मेहरिया, मेहरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मेहना] (१) स्त्री, नारी। (२) पत्नी।

मेहु—संज्ञा पुं. [हिं. मेह] वर्षा, झड़ी। उ.—सूरदास विह्वल भई गोपी नैनन बरसत मेहु—१०-उ.–१९०।

मैं—सर्व. [सं. अहं] उत्तमपुरुष कर्त्ता-रूप सर्वनाम, स्वयं।

यौ०—मैं-मेरी—गर्व, स्वार्थ या लोभ का भाव। उ.—(क) मैं-मेरी कबहूँ नहिं कीजै कीजै पंच सुहातौ—१-२०३। (ख) मैं-मेरी करि जनम गँवावत—१-३०३। (२) मोह-ममता की भावना। उ.—मैं-मेरी अब रही न मेरैं, छुट्यो देह-अभिमान—२-३३।

अव्य०—[हिं. मय] युक्त, सहित।

मैंढ़नि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मेढ़ा] मेढ़ों (को)। उ.—अरु मम मैंढ़नि कौं मति खोवहु........। गंध्रब मैंढ़नि निसि लै धाए....। मम मैंढ़नि कौं लै गयौ कोइ—९-२।

मैं—अव्य. [हिं. मय] युक्त, सहित।

मैका—संज्ञा पुं.[हिं. मायका] स्त्री के माता-पिता का घर।

मैगर, मैगल—संज्ञा पुं. [सं. मदकल] (मस्त) हाथी। उ.—(क) माधव जू मन सबहीं बिधि पोच। अति उनमत्त निरंकुस मैगल चिंता रहित असोच—१-१०२। (ख) मेरे जानि गह्यौ चाहत हौ केरिकि मैगल मातो—३१३२।

वि.—मस्त, मत्त। उ.—गर्जंत अति गंभीर गिरा मन मैगल मत्त अपार—२८२६।

मैजल—संज्ञा स्त्री.[अ. मंजिल](१) मंजिल। (२) यात्रा।

मैत्रि, मैत्री—संज्ञा स्त्री. [सं. मैत्री] मित्रता। उ.—ताकौ कहा निहोरो हमको मैत्रि-भंग करि दीनो—२९३८।

मैत्रेय—संज्ञा पुं. [सं.] एक ऋषि जो पराशर के शिष्य थे और जिनसे विष्णुपुराण कहा गया था। उ.—विदुर सो मैत्रेय सौं लह्यौ—१-२२७।

मैत्रेयी—संज्ञा स्त्री. [सं.] याज्ञवल्क्य की विदुषी पत्नी।

मैथिल—वि. [सं.] मिथिला का, मिथिला-सम्बन्धी।

(१) मिथिला निवासी। (२) राजा जनक।

मैथिली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जानकी, सीता। (१) 'मैथिल' नाम की भाषा।

मैथुन—संज्ञा पुं. [सं.] संभोग, रति-क्रिया।

मैदा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] बहुत महीन आटा। उ.—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) बेसन मिलै सरस मैदा सौं अति कोमल पूरी है भारी—१०-२४१। (ख) मैदा उज्ज्वल करिकै छान्यौ —१००९।

मैदान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) समतल या सपाट भूमि। (२) खेलने की समतल भूमि। उ.—श्री मोहन खेलत चौगान। द्वारावती कोट कंचन मैं रच्यौ रुचिर मैदान —१० उ.-६।

मुहा०—मैदान मारना—खेल जीतना।

(३) युद्धभूमि, रणक्षेत्र।

मुहा०—मैदान करना—युद्ध करना। मैदान छोड़ना —लड़ाई से हटना या भागना। मैदान मारना—युद्ध में जीतना। मैदान हाथ रहना—युद्ध में जीतना। मैदान होना—युद्ध होना।

मैन—संज्ञा पुं. [सं. मदन] (१) कामदेव। उ.—(क) कचन कोट कँगूरन की छबि मानहुँ बैठे मैन—२५५८। (ख) निधरक भयौ चल्यौ ब्रज आवत आइ फौजपति मैन—२८१९ (२) मोम। उ.—स्याम रँग रँगे रँगीली नैन। धोएँ छुटत नहीं यह कैसैंहु मिले पघिलि ह्वै मैन —ना. २८६९।

मैनफर, मैनफल—संज्ञा पुं. [सं. मदनफल, हिं. मैनफल] एक वृक्ष या उसका अखरोट जैसा फल।

मैनमय—वि. [हिं. मैन + मय] कामासक्त।

मैना संज्ञा स्त्री. [सं. मदना] एक प्रसिद्ध पक्षिणी जो सिखाने से मनुष्य की बोली बोलती है, सारिका।

संज्ञा स्त्री. [सं. मेनका] (१) पार्वती की माता। (२) राधा की एक सखी। उ.—कहि राधा, किन हार चुरायौ।........। दर्वा, रंभा कृष्णा घ्याना मैना नैना रूप—१५८०।

संज्ञा पुं. [देश.] राजपूताने की 'मीना' जाति।

मैनाक—संज्ञा पुं. [सं.] एक पर्वत जो लंका के निकट समुद्र में सपक्ष रूप में स्थित माना जाता है।

मैमंत, मैमत, मैमत्त—वि. [सं. मदमत्त] (१) मतवाला, मदोन्मत्त। उ.—मैमत भए जीव जल-थल के तन की सुधि न सँभार—१७५२। (२) अभिमानी। उ.—अरी ग्वारि मैमंत बचन बोलत जो अनेरो—१११४।

मैया—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृका, प्रा. मातृआ, माइआ] मा, माता। उ.—मैया, मैं तो चंद-खिलौना लैहौं— १०-१९३।

मैर—संज्ञा स्त्री. [सं. मृदर, प्रा. मियर] साँप के काटने पर उसके विष से उठनेवाली लहर। उ.—(क) माया विषम भुजंगिनि कौं बिष उतरयौ नाहिन तोहिं।........।जाको मोह-मैर अति छूटै सुजस गीत के गाएँ—२-३२। (ख) डसी री स्याम भुअंगम कारे। मोहन-मुख मुसुक्यानि मनहुँ बिष, जात मैर सौं मारे—७४७।

मैलंद—संज्ञा पुं. [सं. मिलिंद, प्रा. मैलंद] भौंरा।

मैल—संज्ञा पुं. [सं. मलिन, प्रा. मइल] धूल, गर्द आदि जिसके पड़ने या जमने से वस्तु, शरीर आदि गंदा हो जाता है। उ.—कैसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ—१०-१८५।

मुहा०—हाथ-पैर का मैल—बहुत तुच्छ वस्तु।

(२) दोष, विकार।

मुहा०—मन का मैल—मन का दोष या विकार। मन में मैल रखना—दुर्भाव या बैर-भाव रखना।

मैलखोरा—वि. [हिं. मैल + फ़ा. ख़ोरा] (रंग) जिस पर मैल जल्दी न दिखायी दे।

मैला—वि. [हिं. मैल] (१) अस्वच्छ। (२) दूषित।

संज्ञा पुं.—(१) कूड़ा-कर्कट। (२) विष्टा।

मैलो, मैलौ—वि. [हिं. मैला] मलिन, अस्वच्छ, गंदा। उ.—इक नदिया इक नार कहावत मैलौ नीर भरौ —१-२२०।

मैहर—संज्ञा पुं. [हिं. नैहर] स्त्री के माता-पिता का घर, मायका।

मों—अव्य. [में] में, भीतर।

सर्व.—व्रज और अवधी में 'मैं' का वह रूप जो कर्त्ता के अतिरिक्त अन्य कारकों में कारकीय चिह्न लगाने के पहले प्राप्त होता है।

मोंछ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूंछ] मूंछ।

मोंढ़ा—संज्ञा पुं. [सं. मूढा, प्रा. मूड्ढा] (१) बाँस का बना ऊँचा आसन। (२) कंधा।

यौ०—सीना-मोढ़ा—छाती और कंधा।

मो—सर्व. [सं. मम] (१) मेरा। उ.—(क) मो अनाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के नाथ हरी—१-१४९। (ख) हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ—१-२८७। (२) मुझे, मुझको। उ.—मो तजि भए निनारे—१४३। (३) व्रजभाषा और अवधी में 'में' का वह रूप जो कर्ता के अतिरिक्त अन्य कारकों में कारकीय चिह्न लगाने के पूर्व प्राप्त होता है। उ.—(क) मोकौं जनि छांड़ौ—४१५। (ख) कछु न भक्ति मो मौं—१-१५१।

मोकति—क्रि. स. [हिं. मोकना] छोड़ती या त्यागतीहै। उ.—कंपित स्वांस त्रास अति मोकति—२१९७।

मोकना,मोकनो—क्रि. स. [हिं. मुकना] (१) छोड़ना, त्यागना। (२) फेंकना।

मोकल, मोकला—वि. [हिं. मुकना] जो बँधा न हो, मुक्त।

मोक्ष, मोख—संज्ञा पुं. [सं. मोक्ष] (१) बंधन से छुटकारा। (२) जन्म-मरण से मुक्ति। उ.—अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष फल चारि पदारथ देत गनी—१-३९।

मोखा—संज्ञा पुं. [सं. मुख] झरोखा।

मोगरा, मोगरो—संज्ञा पुं. [सं. मुद्गर] एक तरह का बेला (फूल)। उ.—फूले मरुवो मोगरो—२४०५।

मोघ—वि. [सं.] व्यर्थ चूक जानेवाला।

मोच—संज्ञा स्त्री. [सं. मुच] शरीर के किसी अंग की नस का झटके आदि से हट जाना जिससे बड़ी पीड़ा होती है।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मोचना] छोड़ने या त्यागने की क्रिया या भाव।

प्र०—डारौं मोच—त्याग दूंगी, छोड़ दूंगी। उ.—सूर प्रभु हिलि-मिलि रहौंगी लाज डारौं मोच—८९०।

मोचक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुक्त करने या छुड़ानेवाला। (२) संन्यासी जो विषय-युक्त हो।

मोचत—क्रि. स. [हिं. मोचना] (१) गिराता या बहाता है। उ.—अब काहे जल मोचत सोचत समो गए ते सूल नई—२५३७। (२) छोड़ता या त्यागता है। उ.—जा सँग रैनि बिहात न जानी भोर भए तेहि मोचत हौ—२१४०।

मोचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छुड़ाने या मुक्त करने की क्रिया या भाव। उ.—एहि बन बनी क्रीड़ा गज मोचन—१-६। (२) छुड़ाने या मुक्त करने क लिए। उ.—मित्र-मोचन मनहुँ आए तरल गति द्वै तरनि—३५१। (३) दूर करने या हटाने की क्रिया या भाव।

मोचना, मोचनो—क्रि. स. [सं. मोचन] (१) छोड़ना, त्यागना। (२) गिराना, बहाना। (३) छुड़ाना, मुक्त करना। (४) दूर करना, हटाना।

मोचहिंगे—क्रि. स. [हिं. मोचना] छुड़ायंगे, मुक्त करेंगे। उ.—अब तिनके बंधन मोचहिंगे—११६१।

मोचि—क्रि. स. [हिं. मोचना] छुड़ाकर, मुक्त करके। उ.—मोचि बंधन राज दीनो—२६५२।

मोची—संज्ञा पुं. [सं. मोचन] चमड़े का काम या जूते आदि बनानेवाला।

वि. [सं. मोचित] (१) छुड़ानेवाला। (२) हटानेवाला।

मोचै—क्रि. स. [हिं. मोचना] बहाती या गिराती हैं। उ.—सुनि बिधुमुखी बारि नयनन ते अब तू काहे मोचै—१० उ०-११०।

मोच्छ, मोछ—संज्ञा स्त्री. [सं. मोक्ष] (१) बंधन से छुटकारा। (२) जन्म-मरण से मुक्ति।

वि.—बंधन से मुक्त, स्वतंत्र। उ.—जमलार्जुन कौं मोच्छ कराए—३९१।

मोजा—संज्ञा पुं. [फ़ा. मोज़ा] पायताबा, जुर्राब।

मोट—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोटरी] गठरी। उ.—(क) मोट अघ सिर भार—१-९९। (ख) अति प्रपंच की मोट बाँधि कै अपनैं सीस धरी—१-१८४। (ग) जोग मोट सिर बोझ—३३१६।

संज्ञा पुं.—कुएँ से पानी निकालने का चरसा, पुर।

वि. [हिं. मोटा] (१) जो महीन न हो। (२) जो दुबला न हो। (३) कम मूल्य का।

मोटरी—संज्ञा स्त्री. [तैलंग मूटा=गठरी] गठरी, मोट।

मोटा—वि. [सं. मुष्ट] (१) जो दुबला न हो, स्थूल।

यौ०—मोटा-ताजा—स्थूल शरीरवाला।

(२) अच्छे दल का, दलदार। (३) बड़े घेरे का।

मुहा.—मोटा असामी—धनी या मालदार व्यक्ति।

मोटा भाग्य—सौभाग्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

१२५ VIII Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri १२।५।६१

(४) जो खूब महीन न हो, दरदरा। (५) घटिया, कम मूल्य का, निम्न कोटि का।

यौ०—मोटा-झोटा—जो (अन्न, वस्त्र आदि) ज्यादा महीन या बढ़िया न हो।

(६) जो सुघर या सुंदर न हो, भद्दा, बेडौल।

मुहा.—मोटा काम—ऐसा काम जिसमें अधिक बुद्धि या कौशल न लगाना पड़े।

(७) भारी, कठिन, असाधारण।

मुहा० —मोटा दिखायी देना—दृष्टि कमजोर होना।

(८) गर्व या घमंड करनेवाला, अहंकारी।

संज्ञा स्त्री. पुं. [हिं. मोट] गठरी, गट्ठर, बोझ।

मोटाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोटा] (१) मोटापन। (२) पाजीपन, मट्ठरपन।

मुहा०—मोटाई उतरना—पाजीपन या शरारत ट जाना। मोटाई चढ़ना—पाजी या शरारती हो जाना। मोटाई झड़ना—(१) पाजीपन या शरारत छूट जाना। (२) गर्व चूर हो जाना।

मोटाना, मोटानो क्रि. अ. [हिं. मोटा] (१) मोटा या स्थूल होना। (२) घमंडी होना। (३) मालदार होना।

क्रि. स.—किसी के मोटा होने में सहायता करना।

मोटापन—संज्ञा पुं. [हिं. मोटा+पन] (१) स्थूल होने का भाव। (२) घमंडी या धृष्ट होने का भाव। (३) धनी होने का भाव।

मोटापा—संज्ञा पुं. [हिं. मोटा] (१) मोटाई, मोटापन। (२) धृष्टता, गर्व, घमंड।

मोटायो, मोटायौ—क्रि. अ. [हिं. मोटाना] मोटा या स्थूल हो गया। उ.—तू कह्यौ, तैं है बहुत मोटायौ —५-४।

मोटिया—संज्ञा पुं. [हिं. मोटा] मोटा कपड़ा।

संज्ञा पुं. [हिं. मोट] बोझा ढोनेवाला।

मोटी—वि. स्त्री. [हिं. मोटा] (१) जो दुबली न हो, स्थूल। उ.—देखौ धन्य भाग गाइनि के प्रीति करत बनवारी। मोटी भई चरत बृंदाबन नंदकुँवर की पाली—६१३। (२) अधिक घेरे या मानवाली।

मुहा०—कर्मन की मोटी—बहुत भाग्यशालिनी। उ.—सूरदास मन मुदित जसोदा भाग बड़े कर्मनि की मोटी—१०-१६५।

(३) साधारण, निम्न कोटि की।

मुहा०—बुधि की मोटी—जो अधिक बुद्धिमती न हो। उ.—तुम जानति राधा है छोटी। चतुराई अँग अंग भरी है, पूरन ज्ञान न बुधि की मोटी—१४७९।

(४) जो सुंदर या सुघर न हो। उ.—मेली सजि मुख अंबुज भीतर उपजी उपमा मोटी—१०-१६४।

मोटे—वि. [हिं. मोटा] (१) स्थूल। (२) अधिक घेरे या मान वाला।

मुहा०—भाग्य के मोटे—सौभाग्यशाली। उ.—बड़े भाग्य के मोटे हौ—२०६१।

मोटो, मोटौ—वि. [हिं. मोटा] स्थूलकाय। उ.—नृपति कह्यौ, मोटौ तू आहि—५-४।

मोठ—संज्ञा स्त्री. [सं. मकुष्ठ, प्रा. मउट्ठ] एक मोटा अन्न।

मोठस—वि. [हिं. मट्ठस] किसी बात का उत्तर न देनेवाला।

मोड़—संज्ञा पुं. [हिं. मोड़ना] (१) मार्ग के घूमने का स्थान। (२) मुड़ने या घूमने की क्रिया या भाव। (३) किसी वस्तु का बीच या किनारे से घुमाव डालकर दूसरी ओर फेरा जाना।

मोड़ना, मोड़नो—क्रि. स. [हिं. मुड़ना] (१) फेरना, लौटाना।

मुहा०—मुंह मोड़ना—(१) किसी काम को करने से आनाकानी करना। (२) विमुख होना।

(२) विमुख करना। (३) फैली हुई चीज को तहाना। (४) सीधी लंबी चीज को किसी स्थान से दूसरी ओर घुमाना। (५) तेज धार को भुथरी या कुंठित करना।

मोड़ा—संज्ञा पुं. [सं. मुंड] लड़का, बालक।

मोतिअन—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मोती] मोतियों से, मोतियों की। उ.—हौं बैठी पोवति मोतिअन लर—१४४७।

मोतिनि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मोती] मोतियों का, मोतियों से। उ.—दीन्हौ हार गरैं कर कंकन मोतिनि थार भरै—१०-१७।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोतियन—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मोती] मोतियों (के या से) । उ.—एक समय मोतियन के धोखे हंस चुनत है ज्वारि –२०४२ ।

मोतिया—संज्ञा पुं. [हिं. मोती] एक तरह का बेला (फूल) ।

वि.—(१) हलके गुलाबी या पीले और गुलाबी रंग का । (२) मोती-संबंधी ।

मोती—संज्ञा पुं. [सं. मौक्तिक, प्रा. मोत्तिय] एक गोल रत्न जो सीपी से निकलता है । उ.—नख-ज्योती मोती मानो कमल दलनि पर—१०-१५१ ।

मुहा०—मोती ढरकना—आँसू बहना । मोती ढरकाना—आँसू बहाना । मोती पिरोना—(१) बहुत सुंदर भाषण देना । (२) बहुत सुंदर अक्षर लिखना । (३) कोई महीन काम करना । (४) आँसू बहाना । मोती बींधना—मोती को पिरोने के लिए उसमें छेद करना । मोती रोलना—बहुत कम श्रम से अधिक धन पाना । मोती से मुँह भरना—प्रसन्न होकर बहुत अधिक धन देना ।

संज्ञा स्त्री.—बाली जिसमें मोती पड़े हों ।

मोतीचूर—संज्ञा पुं. [हिं मोती+चूर] बूँदी का लड्डू ।

मोतीवेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोतिया+बेला] मोतिया बेला (फूल) ।

मोतीभात—संज्ञा पुं. [हिं. मोती+भात] एक तरह का धान ।

मोतीलाड़ू—संज्ञा पुं. [हिं. मोती+लड्डू] बूँदी का लड्डू । उ.—सुठि मोतीलाड़ू मीठे—१०-१८३ ।

मोतीसरि, मोतीसरी, मोतीसिरि, मोतीसिरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोती+सं. श्री] मोतियों की कंठी या माला । उ.—तोरि मोतीसरी तब गुप्त करि धर्‍यौ —१५४२ ।

मोथरा, मोथरो—वि. [हिं. भुथरा] कुंठित धारवाला ।

मोथा—संज्ञा पुं. [सं. मुस्तक, प्रा. मुत्थ] एक घास ।

मोद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हर्ष, आनंद । उ.—(क) पौढ़ाए पट पालनैं (हँसि) निरखि जननि मन-मोद । (ख) मोहची बाल-बिनोद मोद अति नैननि नृत्य दिखाइ —१०-१७७ । (२) सुगंध ।

मोदक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लड्डू । (२) किसी नशीली चीज, विष या औषध का बना हुआ लड्डू । उ.—(क) पीन उरोज मुख नैन चखावति इह विष मोदक जातन झारि—११६४ । (ख) ते ही ठग मोदक भए मन धीर न हरि तन छूछो छिटकाए—३४०० ।

वि.—मोद या आनंद देनेवाला ।

मोदकी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक तरह की गदा ।

मोदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रसन्न करना । (२) महकाना ।

मोदना, मोदनो—क्रि. अ. [सं. मोदन] (१) प्रसन्न या आनंदित होना । (२) सुगंधि फैलना, महकना ।

क्रि. स. (१) प्रसन्न करना । (२) सुगंध फैलाना ।

मोदप्रद—वि. स्त्री. पुं. [सं.] आनंददायिनी, सुखदायी । उ.—कनक बलय मुद्रिका मोदप्रद सदा सुभग संतनि काजैं—१-६९ ।

मोदा—संज्ञा पुं. [सं. मोद] हर्ष, आनंद । उ.—(क) सूर स्याम लए जननि खिलावति हरष सहित मन-मोदा—१०-२३९ । (ख) कछु रिस कछु मन मैं करि मोदा—७९९ । (ग) बाल-केलि हरि के रस मोदा —१०६९ ।

मोदित—वि. [सं.] प्रसन्न, आनंदित । उ.—मन मुदित-मोदित मानिनी मुख माधुरी मुसुकानि—२२८९ ।

मोदी—संज्ञा पुं. [सं. मोदक] (१) आटा, दाल आदि बेचनेवाला । (२) भंडारी । उ.—मोदी लोभ—१-१४१ । (३) कर्मचारी जो नौकरों की भरती करता हो ।

मोधुक—संज्ञा पुं. [सं. मोदक=एक वर्णसंकर जाति] मछली पकड़नेवाला । उ.—सोई मत्स्य पकरि मोधुक ने जाय असुर को दीन्ही—सारा. ६९३ ।

मोधू—वि. [सं. मुग्ध] मूर्ख, भोंदू ।

मोन—संज्ञा पुं. [सं. मोण] झाबा, पिटारा ।

मोना, मोनो—क्रि. स. [हिं. मोयन] भिगोना, तर करना ।

संज्ञा पुं. [सं. मोण] झाबा, पिटारा ।

मोम—संज्ञा पुं. [फ़ा.] वह चिकना पदार्थ जिससे शहद की मक्खियाँ छत्ता बनाती हैं ।

यौ०—मोम की नाक—(१) अस्थिर मति या बुद्धि-वाला । (२) जरा सी बात में मिजाज बदलनेवाला । मोम की मरियम—कोमल और सुकुमार (नारी) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुहा०—मोम करना (बनाना)—द्रवीभूत या दयार्द्र कर लेना। मोम होना—कठोरता छोड़कर द्रवीभूत या दयार्द्र हो जाना।

मोमी—वि. [हिं. मोम] मोम का बना हुआ।

मोय—सर्व. [हिं. मुझे] मुझे।

मोयन—संज्ञा पुं. [हिं. मैन=मोम] गूंधे हुए आटे, मैदा, बेसन आदि में घी-तेल डालना जिससे उससे बनी चीज खस्ता हो।

मोयौ—क्रि. अ. [हिं. मोना] भिगोया, लीन या मग्न किया। उ.—काम क्रोध-लोभ-मोह तृष्णा मन मोयौ —१-३३०।

मोरंग—संज्ञा पुं. [देश.] नैपाल का पूर्वी भाग जिसे 'किरात देश' भी कहा गया है।

मोर—संज्ञा पुं. [सं. मयूर, प्रा. मोर] मयूर पक्षी, शिखंडी, केकी। उ.—(क) मानो हंस मोर-भष लीन्हे—१०-१६४। (ख) सुनि सखि वे बड़भागी मोर—४७७।

सर्व. [हिं. मेरा] मेरा। उ.—(क) रावरैं हित मोर--१-२५३। (ख) यह जीवन-धन मोर—१०-३१०।

मोरचंग—संज्ञा पुं. [हिं. मुरचंग] 'मुरचंग' बाजा।

मोरचंदा—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+सं. चंद्र] मोर पक्षी के पंख की बूटी जो चंद्राकार होती है।

मोर-चंद्रिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर+सं. चंद्रिका] मोर पक्षी के पंख की चंद्राकार बूटी।

मोरचा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) लोहे पर लग जानेवाली जंग। (२) दर्पण पर जम जानेवाला मैल।

संज्ञा पुं. [फ़ा. मोरचाल] (१) गड्ढा जो किले के चारों ओर रक्षार्थ खोदा जाता है। (२) गढ़ की भीतरी सेना। (३) स्थान जहाँ से शत्रु से युद्ध किया जाता है।

मुहा०—मोरचाबंदी करना या बाँधना—गढ़े खोदकर या टीले बनाकर शत्रु से रक्षा करने के लिए सेना नियुक्त करना। मोरचा जीतना या मारना—शत्रु के मोरचे पर अधिकार कर लेना। मोरचा लेना—युद्ध जीतना।

मोरछड़, मोरछल—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+छड़] मोर की पूँछ के परों से बनाया गया चँवर जो राजाओं या देवी देवताओं पर डुलाया जाता है।

मोरछली—संज्ञा पुं. [हिं. मौलसिरी] बकुल (वृक्ष)।

संज्ञा पुं. [हिं. मोरछल] मोरछल डुलानेवाला।

मोरछाँह—संज्ञा पुं. [हिं. मोरछल] मोरछल।

मोरजुटना—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+जुटना] माथे का एक गहना जो बेंदे के स्थान पर पहना जाता है।

मोरत क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) विमुख करता है।

मुहा०—न मोरत अंग—अंग भिड़ाये रहता है, अंग विमुख नहीं करता। उ.—सोभित सुभट प्रचारि पैज करि भिरत न मोरत अंग—९५७।

(२) फेरता, घुमाता या टेढ़ा करता है। उ.—(क) बदन सकोरि भौंह मोरत है—८५६। (ख) सुभग भृकुटी बिवि मोरत—१३५०।

मुहा०—अंग मोरत—अँगड़ाई लेता है। उ.—कबहुँ जम्हात कबहुँ अँग मोरत—२०८२।

मोरध्वज—संज्ञा पुं. [सं. मयूरध्वज] एक राजा जो, श्रीकृष्ण के परीक्षा लेने पर, अपने पुत्र का जीवित शरीर स्वयं आरे से चीरने को तैयार हो गया था।

मोरन संज्ञा स्त्री. [हिं. मोड़ना] मोड़ने की क्रियाया भाव।

संज्ञा स्त्री. [सं. मोरट] शिखरन जो मथे हुए दही में शकर तथा कुछ सुगंधित वस्तुएँ डालकर बनायी जाती है।

मोरना—क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) फेरना, लौटाना। (२) घुमाना, टेढ़ा करना। (३) तेज धारको कुंठित करना।

क्रि. स. [हिं. मोरन] दही मथकर मक्खन निकालना।

मोरनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोड़ना] मोड़ने की क्रिया या भाव। उ.—(क) सूर स्याम प्रभु भौंह की मोरनि फाँसी गस—११७७। (ख) भौंह मोरनि नैन फेरनि तहाँ ते नहि टरै—१७७७।

संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मोर] अनेक मोर। उ.—हौं इन मोरनि की बलिहारी—ना० ४६७२।

मोरनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर] (१) मोर (पक्षी) की मादा। (२) नथ का लटकन।

मोरनो—क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) लौटाना, फेरना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) घुमाना, टेढ़ा करना। (३) तेज धार को कुंठित करना।

क्रि. स. [हिं. मोरन] वही मथकर माखन निकालना।

मोरपंख—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+पंख] मोर का पर।

मोरपंखी—संज्ञा पुं. [हिं. मोरपंख] (१) गहरा नीला रंग। (२) मोरपंख की कलगी।

संज्ञा स्त्री.—मोर के पंखों की बनी पंखी।

वि.—मोर जैसा पंख गहरा चमकीला नीला।

मोरपंखा—संज्ञा पुं. [हिं. मोरपंख] (१) मोर का पर। (२) मोर के पंखों की कलगी जो श्रीकृष्ण जी मुकुट आदि में खोंसा करते थे।

मोरपखिआँ, मोरपखियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोरपंखी] मोरपंख की कलगी। उ.—काहू को ढोटा री एक सीस मोरपखिआँ—२३६६।

मोरभख, मोरभष—संज्ञा पुं. [हिं मोर+सं. भक्ष्य] मोर का आहार, सर्प। उ.—कान्ह कुंवर गही दृढ़ करि चोटी। मानौ हंस मोर-भष लीन्हे—१०-१६५।

मोरमुकुट—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+सं. मुकुट] मोर के पंखों का बना मुकुट जो श्रीकृष्ण पहना करते थे।

मोरवा—संज्ञा पुं. [हिं. मोर] मोर, मयूर। उ.—हमारे माई, मोरवा वैर परे—२८४१।

मोरा—सर्व. [हिं. मेरा] मेरा।

मोराना, मोरानो—क्रि. स. [हिं. मोड़ना] घुमाना, फिराना।

मोरि—क्रि. स. [हिं. मोरना] (१) मोड़ या मरोड़कर। उ.—मटुकी लई उतारि मोरि भुज कंचुकि फारी—११२६। (२) घुमाकर, फिराकर। उ.—सूर स्याम सुनि सुनि यह बानी भौंह मोरि मुसुकात—११४९।

मुहा०—मुख मोरि—(१) मुंह फेरकर, सर्वथा उदासीन होकर। उ.—(क) चलत न कोऊ सँग चलै मोरि रहै मुख नारि—२-२९। (ख) चलत सदा चित चोरि मोरि मुख, एक न पग पहुँचायौ—२-३०। (२) विमुख या पराजित करके। उ.—तोरि धनुष मुख मोरि नृपति कौ सीय स्वयंबर कीनौ—९-११५।

मोरिबो, मोरिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. मोरना] मोड़ने की क्रिया या भाव। उ.—मुंह मोरिबौ बाउ अबिकारी सो लैबौ—१०५२।

मोरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोहरी] नाली, पनाली।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर] मोर की मादा, मयूरी।

क्रि. स. [हिं. मोरना] घुमायी, फेरी। उ.—सुमिरन सदा बसत हीं रसना दृष्टि न इत-उत मोरी—१० उ.-१०६।

मुहा०—मुँह मोरी—(१) विमुख करके, भर्त्सना करके। उ.—अब आवैं जो उरहन लै कै तौ पठऊँ मुँह मोरी—८६८। (२) मुंह घुमा या फेरकर। उ.—घोष की नारी रहसि चली मुँह मोरी—१०-२९३। (क) बार बार बिहँसति मुख मोरी—६६९।

सर्व. [हिं. मेरी] मेरी। उ.—मूसी मन-संपति सब मोरी।

मोरे—क्रि. स. [हिं. मोरना] घुमाये, फिराये। उ.—(क) कुँवरि मुदित मुख मोरे—७३२। (ख) ठठकति चलै मटकि मुँह मोरे—८७६।

मुहा०—मुख मोरे—उदासीन होने से। उ.—सूरदास प्रभु पछिले खेवा अब न बनै मुख मोरे—४८८।

सर्व. [हिं. मेरा] मेरे।

मोरैं—क्रि. स. [हिं. मोरना] मोड़ती हैं, घुमाती-फिराती हैं, वचने का यत्न करती हैं। उ.—सीत-उष्न कहुँ अंग न मोरैं—७९९।

मोल—संज्ञा पुं. [सं. मूल्य, प्रा. मुल्ल] (१) मूल्य।

मुहा०—मोल लई बिन मोल—बिना दाम के खरीद लिया। उ.—भौंहैं काट-कटीलियाँ मोहिं मोल लई बिन मोल—८९३।

(२) मूल्य जो अधिक बढ़ाकर कहा जाय। उ.—दीरघ मोल कह्यौ ब्यौपारी रहे ठगे सब कौतुक हार—१०-१७३।

यौ०—मोल-चाल या मोल-तोल—घटा-बढ़ाकर मूल्य तय करने का कार्य या भाव।

मुहा०—मोल करना—(१) उचित से अधिक मूल्य माँगना। (२) घटा-बढ़ाकर मूल्य तय करना।

मोलना—संज्ञा पुं. [अ. मौलाना] मुल्ला, मौलवी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोलाना, मोलानो—क्रि. स. [हिं. मोल] मोल तय करना।

मोलै—संज्ञा पुं. [हिं. मोल] दाम, कीमत, मूल्य।

मुहा०—बिकानी बिन मोलै—बिना दाम के ही बिक गयी। उ.—गोरस सुधि बिसरि गई आपु बिकानी बिनु मोलै—११८४।

मोवना, मोवनो—क्रि. स. [हिं. मोना] भिगोना।

मोष—संज्ञा पुं. [सं. मोक्ष] (१) छुटकारा। (२) मुक्ति।

मोह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भ्रम, अज्ञान। उ.—(क) महा मोह मैं परचौ सूर प्रभु काहैं सुधि बिसरी—१-१६। (२) सांसारिक पदार्थों या संबंधियों को अपना समझने का भ्रम या अज्ञान। उ.—सुत-कलत्र दुर्बचन जो भाषै, तिन्हैं मोह बस मन नहिं राखै—५-४। (३) प्रीति। उ.—मोह्यौ जाइ कनक-कामिनि-रस ममता-मोह बढ़ाइ—१-१४७।

यौ०—मया (माया) मोह—मोह-ममता का भाव। उ.—(क) मया-मोह न छाँड़ै तृष्ना—१-११८। (ख) माया-मोह ताहि नहिं गह्यौ—१-२२६। (ग) बिनु अपराध पुरुष हम मारैं, माया-मोह न मन मैं धारैं—९-२।

(४) दुख। (५) मूर्च्छा। (६) एक संचारी भाव।

मोहक—वि. [सं.] मन को लुभानेवाला।

मोहताज—वि. [अ.] (१) निर्धन। (२) आश्रित।

मोहन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जिसे देखकर मन लुभा जाय। (२) श्रीकृष्ण। उ.—कहन लागे मोहन मैया मैया—१०-१५५। (३) वह तांत्रिक प्रयोग जिससे किसी को मूर्छित किया जाय। उ.—मोहन मुर्छन बसीकरन पढ़ि अगमति देह बढ़ाऊँ—१०-४९। (४) एक प्राचीन अस्त्र जिससे शत्रु को मूर्छित कर दिया जाता था। (५) कामदेव का एक बाण।

वि.—लुभाने या मोहनेवाला।

मोहनभोग—संज्ञा पुं. [हिं. मोहन + भोग] हलुआ-विशेष।

मोहनमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] सोने के दानों की माला।

मोहना—क्रि. अ. [सं. मोहन] (१) रीझना, मुग्ध होना। (२) बेहोश या मूर्छित होना।

क्रि. स.—(१) मुग्ध या मोहित करना, लुभाना। (२) भ्रम या धोखे में डालना। (३) बेहोश या मूर्छित करना।

मोहनास्त्र—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन अस्त्र जो शत्रु को मूर्छित करने के लिए चलाया जाता था।

मोहनिशा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रलय। (२) जन्माष्टमी की रात्रि जो भादों मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को होती है।

मोहनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भगवान का स्त्री-रूप जो उन्होंने समुद्र-मंथन के पश्चात् देव-दानवों को अमृत बाँटते समय धारण किया था। (२) लुभाने या मुग्ध करने का प्रभाव।

मुहा०—मोहनी डालना (लाना)—किसी को तुरन्त मोहित कर लेना। मोहनी सी लाइ—तुरन्त माया के वश में करके। उ.—स्याम सुंदर मदन मोहन मोहनी (मोहिनी) सी लाई—६७८। मोहनी लगना—मुग्ध या मोहित होना। मोहनी सी लागत—जादू जैसा प्रभाव पड़ने से मुग्ध हो गयी। उ.—मुख देखत मोहनी (मोहिनी)सी लागी स्वयं न वरन्यौ जाई री—१०-१३९।

(३) माया।

वि. स्त्री.—मोहित करनेवाली सुन्दरी।

मोहनै—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मोहन] मोहन या श्रीकृष्ण को (से)। उ.—ऐसो कोऊ नाहिनै सजनी जो मोहनै मिलावै—२७४५।

मोहर—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.](१) ठप्पा जिससे अक्षर-चिह्न आदि अंकित किया जा सके। (२) वह छाप जो ठप्पे से अंकित की जाय। (३) स्वर्ण मुद्रा, अशरफी।

मोहरा—संज्ञा पुं. [हिं. मुँह + रा] (१) किसी बरतन या पदार्थ का ऊपरी खुला हुआ मुँह। (२) सेना की अगली पंक्ति। (३) सेना की गति या उसका रुख।

मुहा०-मोहरा लेना-सामना करना, भिड़ जाना।

(४) छेद जिससे कोई वस्तु बाहर निकले। (५) चोली की तनी या बंद।

संज्ञा पुं. [फ़ा. मोहर] शतरंज की गोटी।

मोहरात्रि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रलय। (२) जन्माष्टमी की रात्रि जो भादों मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को होती है।

मोहराना, मोहरानो—संज्ञा पुं. [फ़ा. मुहर + आना]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन जो किसी व्यक्ति को मोहर करने के लिए दिया जाय।

मोहरिल—संज्ञा पुं. [अ. मुहर्रिर] मुंशी। उ.—मोहरिल पांच साथ करि दीने तिनकी बड़ी बिपरीत—१-१४३।

मोहरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोहरा] (१) पाजामे का वह भाग जिसमें टाँगें रहती हैं। (२) नाली, मोरी।

मोहर्रिर—संज्ञा पुं. [अ.] मुंशी।

मोहलत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) छुट्टी। (२) कार्य की अवधि।

मोहला—संज्ञा पुं. [सं. मोह] स्नेह, प्रेम।

मोहार—संज्ञा पुं [हिं.मोहरा](१) द्वार। (२) अगला भाग।

मोहाल—संज्ञा पुं. [अ. महाल] मोहल्ला।

मोहिं—सर्व. [सं. मह्यं, पा. मय्हं]ब्रजभाषा और अवधी में उत्तम पुरुष 'मैं' का वह रूप जो किसी समय सभी कारकों में प्रयुक्त होता था, परन्तु कालांतर में केवल कर्म और सम्प्रदान में प्रयुक्त होने लगा, मुझे, मुझको। उ.—(क) अब मोहिं सरन राखियै नाथ—१-२० ८। (ख) माधौं जू, मोहिं काहे की लाज—१-१५०।

मोहि—क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या मोहित करके, लुभाकर। उ. —महामोहिनी मोहि आत्मा अपमारगहिं लगावै—१-४२।

मोहित—वि. [सं.] मुग्ध, आसक्त। उ.—(क) उमाहूँ देखि पुनि ताहि मोहित भई—८-१०। (ख) नृपति देखि तिहिं मोहित भयौ—९-२। (ग) प्रीति कुरग नाद स्वर मोहित बधिक निकट ह्वै मारै—२८१०।

मोहिनी—वि. स्त्री. [सं.] मोहने या आसक्त करनेवाली। उ.—(क) महामोहिनी मोहि आतमा अपमारगहिं लगावै—१-४२। (ख) मन-मोहिनी तोतरी बोलनि—१०-१०६।

संज्ञा स्त्री.—(१) विष्णु का वह स्त्री-रूप जो उन्होंने सागर-मंथन के पश्चात् देव-दानवों को अमृत बांटने के लिए धारण किया था। उ.—मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ, देखि सुर-असुर सब रहे लुभाई। आइ असुरनि कह्यौ, लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौं बाँटि मेटौ लराई—८-८। (२) विष्णु का वह स्त्री-रूप जो उक्त मोहिनी रूप का दर्शन शिव को कराने के लिए उन्होंने धारण किया था और जिसे देखकर शिव और उमा, दोनों अत्यन्त आसक्त हो गये थे। उ.—बैठि एकांत जोहन लगे पंथ सिव मोहिनी रूप कब दै दिखाई। ....। ह्वै अँतरधान हरि मोहिनी रूप धरि, जाइ बन माहिं दीन्हे दिखाई। ......। रुद्र कौ देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अंचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ। ....। रुद्र कौ बीर्य खसि कै परचौ धरनि पर, मोहिनी रूप हरि लियौ दुराई—८-१०। (३) माया, जादू, टोना। उ.—(क) मुख देखत मोहिनी सी लागी रूप न बरन्यौ जाई री—१०-१३८। (ख) ना जानौ कछु मेलि मोहिनी राखे अंग-अंग भोरि—६५७।

मोही—वि. [सं. मोहिन्] मुग्ध करनेवाला।

वि. [हिं. मोह+ई] (१) प्रीति या ममता रखने वाला। (२) भ्रम या अज्ञान में पड़ा हुआ, माया में लिप्त। (३) लोभी, लालची।

क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त हुई। उ.—मैं मोही तेरैं लाल री—१०-१४०।

मोहे—क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त कर लिये। उ.–(क) असुर दिसि चितै मुसकाइ मोहे सकल—८-८। (ख) महा मनोहर नाद सूर थिर-चर मोहे—६४८।

मोहैं—क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त होते हैं। उ.—सुक सनकादि सकल मुनि मोहैं—६२०।

मोहै—क्रि. अ. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त होता है। उ.—(क) कटि लहँगा नीलौ बन्यौ को जो देखि न मोहै (हो)—१-४४। (ख) नारि के रूप कौं देखि मोहै न जो सो नहीं लोक तिहुँ माहिं जायौ—८-१०।

मोह्यौ—क्रि. अ. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त हुआ। उ.—(क) मोह्यौ जाइ कनक-कामिनि रस ममता-मोह बढ़ाइ—१-१४७। (ख) रुद्र कौं देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अंचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ—८-१०।

क्रि. स.—(१) अज्ञान या माया में फँसा लिया। उ.—काम, क्रोधऽरु लोभ मोह्यौ, ठग्यौ नागरि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारि—१-३०९। (२) मुग्ध या आसक्त किया। उ.—स्याम, तुम्हारी मदन-मुरलिका नैंसुक सी जग मोह्यौ—६५३।

मौं—अव्य. [हिं. में] में। उ.—कछु न भक्ति मो मौं—१-१५१।

मौंगा—वि. [सं. मौन] मौन, चुप।

मौंगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मौंगा] मौन, चुप्पी।

मौंड़ा—संज्ञा पुं. [सं. माणवक] लड़का, बालक। उ.—कहन लगे बन बड़ो तमासो सब मौंड़ा (मौड़ा) मिलि आऊ—४८१।

मौका—संज्ञा पुं. [अ. मौका] (१) घटनास्थल। (२) स्थान, जगह। (३) समय, अवसर।

मुहा०—मौका तकना (ताकना, देखना)—उपयुक्त अवसर की खोज या ताक में रहना। मौका देना—(१) समय या अवकाश देना। (२) अवसर देना। मौका पाना—(१) फुरसत या अवकाश पाना। (२) उपयुक्त समय या अवसर पाना। मौका मिलना या हाथ आना—(१) फुरसत या अवकाश मिलना। (२) उपयुक्त अवसर या घात पाना।

मौक्तिक—संज्ञा पुं. [सं.] मोती।

मौक्तिकमाल, मौक्तिकमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] मोती की माला।

मौक्तिकावलि, मौक्तिकावली—संज्ञा स्त्री. [सं मौक्तिक वलि] मोती की माला।

मौख—संज्ञा पुं. [सं.] मुख से किया जाने वाला पाप जैसे गाली देना।

संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का मसाला।

मौखर—संज्ञा पुं. [सं.] बढ़-बढ़कर बात करना।

मौखरी—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन भारतीय राजवंश।

मौखिक—वि. [सं.] (१) मुख-संबंधी। (२) मुख से केवल कहा जानेवाला, जबानी।

मौगा—वि. [सं. मुग्ध] मूर्ख।

मौगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मौगा] स्त्री, नारी।

वि.—मूर्ख (स्त्री)।

मौज—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) लहर, तरंग, हिलोर।

मुहा०—मौज मारना—लहरा-लहरा कर बहना।

(२) मन की उमंग या उछंग। उ.—मनसानाथ मनोरथ-पूरन सुखनिधान जाकी मौज घनी—१-३९।

मुहा०—मौज आना (में आना)—उमंग में भरना, धुन होना। मौज उठना—उमंग में भरना। (किसी की) मौज पाना—इच्छा या मरजी जानना।

(३) धुन। (४) सुख, आनंद। उ.—(क) कछु हरषै कछु दुख करै मन मौज बढ़ावै—१६१४। (ख) सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै—२४७७। (५) विभूति, वैभव।

मौजा—संज्ञा पुं. [अ. मौज़ा] गाँव, ग्राम।

मौजी—वि. [हिं. मौज] (१) मनमाना काम करनेवाला। (२) सदा प्रसन्न या प्रफुल्ल रहनेवाला। (३) कभी कुछ और कभी कुछ सोचने-विचारनेवाला।

मौजूद—वि. [अ.] (१) विद्यमान। (२) प्रस्तुत।

मौड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. मौंड़ा] लड़का, बालक।

मौत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) मरने का भाव, मृत्यु। (२) मृत्यु का देवता।

मुहा०—मौत का सिर पर खेलना—(१) मरने को होना। (२) प्राण जाने का भय होना। (३) भयानक विपत्ति आना। अपनी मौत मरना—(१) सहज, स्वाभाविक या प्राकृतिक रूप से मरना। (२) स्वयं अपनी करनी से मरना। मौत बुलाना—ऐसी करनी करना जिससे मृत्यु निश्चित हो।

(३) मरने का समय या काल।

मुहा०—मौत के दिन पूरे करना—बड़े कष्ट से जीने के दिन पूरे करना या बिताना।

(४) बहुत कष्ट, भयानक विपत्ति।

मौन—संज्ञा पुं. [सं.] चुप रहने की क्रिया या भाव, चुप्पी। उ.—सुनत ये बचन हरि करयौ तब मौन।

मुहा०—मौन गहना (ग्रहण करना)—चुप रहना। मौह गही—चुप हो गया। उ.—सुनत बचन तब उनके मधुकर मौन गही। मौन खोलना (तजना)—कुछ समय तक चुप रहने के उपरान्त बोलना। मौन धरना (धारण करना)—चुप रहना। धरि मौन—चुप्पी साधे हुए। उ.—जहँ बैठी वृषभानु-नंदिनी तहँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आये धरि मौन। मौन बांधना (सँभारना)—चुप्पी साधना।

(२) चुप रहने का व्रत।

वि. [सं. मौनी] जो चुप हो। उ.—सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै घोष बात जनि चालहि।

संज्ञा पुं. [सं. मौण] (१) बरतन, पात्र। उ.—काढ़ौ कोरे कापरा हो अरु काढ़ौ घी के मौन—१०-२८। (२) डिब्बा, मंजूषा, पिटारा।

मौनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मौन होने या रहने का भाव।

मौनब्रत, मौनव्रत—संज्ञा पुं. [सं. मौनव्रत] व्रत जिसमें मौन रहा जाय।

मौना—संज्ञा पुं. [सं. मौण] घी-तेल का पात्र-विशेष।

मौनी—वि. [सं. मौनिन्] चुप रहनेवाला।

मौर—संज्ञा पुं. [सं. मुकुट, पा. मउड़] (१) विवाह के अवसर पर पहना जानेवाला विशेष शिरोभूषण जो ताड़पत्र, खुखड़ी आदि का बनता है। (२) प्रधान, शिरोमणि। उ.—लूटि-लूटि दधि खात सबन को सब चोरन के मौर।

संज्ञा पुं. [सं. मुकुल, प्रा. मउल] मंजरी, बौर। उ.—नंद महर घर के पिछवारे राधा आइ बतानी हो। मनौ अंब-दल मौर देखिकै कुहुकि कोकिला बानी हो।

मुहा०—मौर बँधना—बौर आना, मंजरी लगना।

संज्ञा पुं. [सं. मौलि=सिर] (१) गरदन, ग्रीवा। (२) सिर।

मौरना, मौरनो—क्रि. स. [हिं. मौर] वृक्ष में बौर या जरी लगना।

मौरसिरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मौलसिरी] बकुल, मौलसिरी।

मौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मौर] विवाह के अवसर पर वधू के बांधा जानेवाला छोटा मौर।

मौरूसी—वि. [अ.] पैतृक।

मौर्ख्य—संज्ञा पुं. [सं.] मूर्खता।

मौर्य—संज्ञा पुं. [सं. मौर्य्य] क्षत्रियों का वह वंश जो चंद्रगुप्त और अशोक के समय से बहुत प्रसिद्ध है।

मौलवी—संज्ञा पुं. [अ.] मुसलमान धर्म-शास्त्रज्ञ।

मौलसिरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मौलि+श्री] बकुल वृक्ष।

मौला—संज्ञा पुं. [अ.] (१) स्वामी। (२) ईश्वर।

मौलाना—संज्ञा पुं. [अ. मौलवी] मौलवी।

मौलि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सिरा, चोटी। (२) मस्तक। (३) मुकुट, किरी। (४) जटाजूट। (५) मुखिया।

मौलिक—वि. [सं.] (१) मूल या जड़ से सम्बन्धित। (२) मूल सिद्धांत या तत्व-संबंधी। (३) जो (रचना) अपनी प्रतिभा या योग्यता से लिखी जाय, अनुवादित या आधारित न हो।

मौली—वि. [सं. मौलिन्] किरीट या जटाजूट धारण करनेवाला।

संज्ञा स्त्री.—रँगा हुआ सूत जो पवित्र समझा जाता है और पूजा-जैसे अवसरों पर काम आता है।

मौसम—संज्ञा पुं. [अ. मौसिम] (१) ऋतु। (२) स्थान-विशेष की वह अवस्था जो ऋतु आदि के विचार से जानी जाती है।

मौसा—संज्ञा पुं. [हिं. मौसी] मौसी का पति।

मौसाल—संज्ञा पुं. [हिं. मौसी+आलय] मौसी-मौसा का कुल, परिवार या घर।

मौसिया—वि. [हिं. मौसी, मौसा] मौसी के सम्बन्ध का।

संज्ञा पुं.—मौसी का पति।

मौसी—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृष्वसा] माता की बहन।

मौसेरा—वि. [हिं. मौसी] मौसी के सम्बन्ध का।

म्याँउँ, म्याँवँ—संज्ञा स्त्री. [अनु.] (१) बिल्ली। (२) बिल्ली की बोली।

मुहा०—म्याँउँ-म्याँउँ या म्याँवँ-म्याँवँ करना—दीनता दिखाकर या बहुत दबकर बोलना

म्यान—संज्ञा पुं. [फ़ा. मियान] (१) वह खाना या कोश जिसमें तलवार, कटार आदि के फल रहते हैं। (२) अन्नमय कोश, शरीर।

म्याना—क्रि. स. [हिं. म्यान] म्यान में रखना।

संज्ञा पुं. [फ़ा. मियाना] एक तरह की पालकी।

म्यौं—संज्ञा स्त्री. [हिं. म्याँवँ] बिल्ली की बोली।

मुहा०—करत म्यौं-म्यौं—दीनता दिखाता या दबकर बोलता है। उ.—लै लै ते हथियार आपने सान धराए त्यौं। जिनके दारुन दरस देखि कै पतित करत म्यौं-म्यौं—१-१५१।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्लान—वि. [सं.] (१) कुम्हलाया हुआ। (२) मैला।

म्लानता, म्लानि—संज्ञा स्त्री. [सं. म्लानता] (१) मलिनता। (२) ग्लानि। (३) दुर्बलता।

म्लेच्छ—संज्ञा पुं. [सं.] वे जातियाँ जिनमें आर्यों की भाँति वर्णाश्रम धर्म न हो।

वि.—(१) नीच। (२) पापी।

म्हा—सर्व. [हिं. मुझ] मुझ।

म्हारा—सर्व. [हिं. हमारा] हमारा।

य

य—देवनागरी वर्णमाला का छब्बीसवाँ वर्ण जिसका उच्चारण-स्थान तालू है। स्पर्श और ऊष्म वर्णों के बीच का होने से यह 'अंतस्थ' वर्ण कहा जाता है।

यंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तंत्र-शास्त्र के अनुसार वे कोष्ठक आदि जिनमें कुछ अंक या अक्षरों के लिख दिये जाने पर देवताओं का अधिष्ठान मान लिया जाता है और जिनको कार्य-विशेष की सिद्धि के लिए हाथ या गले में पहना जाता है, जंतर। (२) कल, औजार, उपकरण। (३) वीणा, बीन, बाजा। उ.—सूरदास स्वामी के चलिवे ज्यौं यंत्री बिनु यंत्र सकात। (४) ताला।

यंत्रणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) यातना, कष्ट। (२) पीड़ा, वेदना।

यंत्र-मंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] जादू-टोना, टोटका।

यंत्रित—वि. [सं.] (१) यंत्र द्वारा रोका या बंद किया हुआ। (२) ताले में बन्द।

यंत्री—संज्ञा पुं. [सं. यंत्रिन्] (१) यंत्र-मंत्र जानने या करनेवाला। (२) बाजा बजानेवाला। उ.—(क) सूरदास स्वामी के चलिवे ज्यौं यंत्री बिनु यंत्र सकात। (ख) सूरदास प्रभु मौन सबै ब्रज बिन यंत्री बिन बीन—२८६६। (ग) अब तौ हाथ परी यंत्री के बाजत राग दुलारी—२९३५।

यक—वि. [हिं. एक] एक।

यकअंगी—वि. [हिं. एक+अंगी] (१) एक अंग या पक्षवाला। (२) जो एक पति या पत्नी के ही साथ रहे। (३) एक ही पर निर्भर रहनेवाला।

यकायक—क्रि. वि. [फ़ा.] अचानक, सहसा।

यकीन—संज्ञा पुं. [अ. यक़ीन] विश्वास।

यकृत—संज्ञा पुं. [सं.] (शरीर में) जिगर।

यक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्रकार के देवता जो कुबेर के सेवक माने जाते हैं। उ.—यक्ष प्रबल बाढ़े भुव-मंडल तिन मारचो निज भ्रात। (२) कुबेर।

यक्षकर्दम—संज्ञा पुं. [सं.] अंगलेप जो कपूर, अगरु, कस्तूरी और कंकोल से बनता है।

यक्षपति—संज्ञा पुं. [सं.] कुबेर। उ.—मृत्यु कुबेर यक्षपति कहियत जहँ संकर की धाम - सारा. २१।

यक्षपुर—संज्ञा पुं. [सं.] अलकापुरी।

यक्षरात्रि—संज्ञा स्त्री. [सं.] कार्तिकी पूर्णिमा।

यक्षिणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] यक्ष या कुबेर की पत्नी।

यक्षी—संज्ञा पुं. [सं.] यक्ष का उपासक।

यक्ष्मा—संज्ञा पुं. [सं. यक्ष्मन्] 'क्षय' रोग।

यगण—संज्ञा पुं. [सं.] एक 'गण' जिसमें पहला वर्ण 'लघु' और शेष दो 'गुरु' होते हैं।

यग्य—संज्ञा पुं. [सं. यज्ञ] यज्ञ, याग।

यच्छ—संज्ञा पुं. [सं. यक्ष] यक्ष।

यच्छिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. यक्षिणी] (१) कुबेर की पत्नी। (२) यक्ष जाति की स्त्री।

यजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यज्ञ आदि करना। (२) वह स्थान जहाँ यज्ञ आदि किया जाय।

यजना, यजनो—क्रि. स. [सं. यजन] (१) यज्ञ करना। (२) पूजा करना।

यजमान—संज्ञा पुं. [सं.] वह जो यज्ञ, पूजन आदि कराने के पश्चात् ब्राह्मणों को दक्षिणा दे, व्रती।

यजमानी—संज्ञा स्त्री. [सं. यजमान] (१) यजमान से पुरोहित को मिलनेवाली वृत्ति। (२) यजमानों के रहने का स्थान।

यजुर्वेद—संज्ञा पुं. [सं.] चार वेदों में एक जिसमें यज्ञ-कर्म का वर्णन बहुत विस्तार से है।

यज्ञ—संज्ञा पुं. [सं.] एक वैदिक कृत्य जिसमें हवन, पूजन आदि किया जाता था, योग, हवन। उ.—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा—१८६६ ।

यज्ञपत्नी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) यज्ञ की पत्नी दक्षिणा। (२) मथुरा के यज्ञ-कर्ता ब्राह्मणों की वे स्त्रियाँ जो पतियों का विरोध करने पर भी श्रीकृष्ण के लिए भोजन ले गयी थीं ।

यज्ञपुरुष - संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु । उ.—यज्ञपुरुष (जज्ञपुरुष) प्रसन्न जब भए, निकसि कुंड तैं दरसन दए—४-५ ।

यज्ञोपवीत - संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक संस्कार जो विद्यारंभ के पूर्व किया जाता था। यह ब्राह्मण बालक के आठवें, क्षत्रिय के ग्यारहवें और वैश्य के बारहवें वर्ष किया जाना चाहिए। आज इसमें कुछ धार्मिक कृत्य करके बालक को जनेऊ पहनाया जाता है; परंतु अवस्था का विशेष ध्यान नहीं रखा जाता। उ.—यज्ञोपवीत बिधोरु कियो बिधि सब सुर भिक्षा दीन्हीं - सारा० ३३२ । (२) जनेऊ, यज्ञसूत्र । उ.—बच्छ-उद्धरन ब्रह्मा उद्धरन येइ प्रभु यज्ञ के पति यज्ञोपवीत-धारी—१३०३ ।

यतना, यतने, यतनो—वि. [हिं. इतना] इस मात्रा का, इस कदर । उ.—नारद मन की भर्म तोहिं यतनो भरमायो—१० उ०-४७ ।

महा०—यतने माँझ—इसी समय, इसी बीच में । उ.—यतने माँझ आपु हरि आए सुनी नृपति सब बात—सारा० ६२९ ।

यति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) इंद्रियनिग्रही। (२) विरक्त, संन्यासी ।

संज्ञा स्त्री. [सं. यती] विराम (छंदशास्त्र) ।

यतिभंग—संज्ञा पुं. [सं.] वह काव्य-दोष जिसमें 'यति' उचित स्थान पर न हो ।

यती—संज्ञा पुं. [सं. यतिन्] (१) इंद्रियनिग्रही । (२) विरक्त, संन्यासी ।

यतीम—संज्ञा पुं. [अ.] अनाथ, दीन ।

यत्न—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रयत्न । (२) उपाय । (३) रक्षा का प्रबंध या आयोजन ।

यत्र—क्रि. वि. [सं.] जहाँ, जिस जगह ।

यत्रतत्र—क्रि. वि. [सं.] इधर-उधर । (२) जगह-जगह ।

यथा—अव्य. [सं.] जैसे, जिस प्रकार ।

यथाक्रम – क्रि. वि. [सं.] क्रम के अनुसार ।

यथातथ्य - अव्य. [सं.] जैसा हो, वैसा ही ।

यथायोग्य—अव्य. [सं.] जैसा उचित हो, वैसा ।

यथारथ—अव्य. [सं. यथार्थ] (१) उचित, ठीक । (२) जैसा उचित हो, वैसा ।

यथारुचि—अव्य. [सं.] रुचि के अनुकूल ।

यथार्थ—अव्य. [सं.] (१) उचित, ठीक । (२) जैसा उचित हो, वैसा ।

यथार्थता—संज्ञा स्त्री. [सं.] वास्तविकता ।

यथालाभ—वि. [सं.] प्राप्ति के अनुसार ।

यथार्थवाद—संज्ञा पुं. [सं.] किसी बात या प्रसंग को उसके यथार्थ रूप में मानना और उसी रूप में उसका वर्णन करना ।

यथार्थवाद—वि. [सं.] जो 'यथार्थवाद' का मानने-वाला हो ।

यथाशक्य—अव्य. [सं.] भरसक, शक्ति भर ।

यथाशक्ति—अव्य. [सं.] शक्ति के अनुसार ।

यथासंभव—अव्य. [सं.] जहाँ तक संभव हो ।

यथासमय - अव्य. [सं.] (१) नियत समय पर । (२) समय की माँग या आवश्यकता के अनुसार ।

यथास्थान—अव्य. [सं.] उचित स्थान पर ।

यथेच्छ - अव्य. [सं.] मनमाना, इच्छानुसार ।

यथेष्ट—वि. [सं.] जितना चाहिए, उतना ।

यथोचित—वि. [सं.] जैसा चाहिए, वैसा ।

यदपि—अव्य. [सं. यद्यपि] यद्यपि ।

यदा—अव्य. [सं.] (१) जब । (२) जहाँ ।

यदाकदा—अव्य. [सं.] जब-तब, कभी-कभी ।

यदि—अव्य. [सं.] जो, अगर ।

यदु—संज्ञा पुं. [सं.] राजा ययाति का बड़ा पुत्र जिसके वंशज श्रीकृष्ण थे ।

यदुनंदन—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण ।

यदुनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण ।

यदुपति—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदुराइ, यदुराई—संज्ञा पुं. [सं. यदु + हिं. राजा] (यदुवंशी) श्रीकृष्ण।

यदुराज—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

यदुवंश—संज्ञा पुं. [सं.] राजा यदु का वंश।

यदुवंशमणि—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

यदुवंशी—संज्ञा पुं. [सं. यदुवंशिन्] यदु के वंशज।

यदुवर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

यदुवीर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

यद्यपि—अव्य. [सं.] यदि ऐसा है ही, गो कि।

यम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यमराज। (२) इन्द्रिय-निग्रह। (३) धर्म-कर्म में चित्त लगाने का साधन जो 'योग' के आठ अंगों में पहला है। उ.—(क) अनुसूया के गर्भ प्रगट ह्वै कियौ योग आराधि। यम अरु नियम प्रान प्रत्याहार धारन ध्यान समाधि—सारा० ६०। (ख) सो अष्टांग जोग कौं करै। यम नियमासन, प्रानायाम, करि अभ्यास होइ निष्काम—२-२१।

यमक—संज्ञा पुं. [सं.] एक शब्दालंकार।

यमकात, यमकातर—संज्ञा पुं. [सं. यम + हिं. कातर] (१) यम का छुरा। (२) एक तरह की तलवार।

यमज—संज्ञा पुं. [सं.] जुड़वा बच्चे।

यमदग्नि—संज्ञा पुं. [सं.] एक ऋषि जो परशुराम के पिता थे।

यमद्वितीया—संज्ञा स्त्री. [सं.] कार्तिक शुक्ला द्वितीया जब बहन के यहाँ भोजन करके उसे कुछ नेग दिया जाता है, भाई दूज।

यमधार—संज्ञा पुं. [सं.] वह तलवार या कटार जिसमें दोनों ओर धार हो।

यमनाह—संज्ञा पुं. [सं. यमनाथ] धर्मराज।

यमपुर—संज्ञा पुं. [सं.] यमलोक। उ.—यमपुर जाय संख-धुनि कीन्हीं—सारा. ५४१।

यमपुरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] यमलोक।

यमयातना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) यमराज के दूतों द्वारा दी गयी पीड़ा, नरक की यातना। (२) मृत्यु की पीड़ा।

यमराज, यमराजा—संज्ञा पुं. [सं. यमराज] धर्मराज। उ.—यमपुर जाय संख-धुनि कीन्हीं यमराजा चलि आयौ—सारा. ५४१।

यमल—संज्ञा पुं. [सं.] युग्म, जोड़ा।

यमलार्जुन—संज्ञा पुं. [सं.] नंद जी के घर में लगे वे दो अर्जुन वृक्ष जिनका उद्धार श्रीकृष्ण ने उस समय किया था, जब वे उलूखल से बाँधे गये थे। पुराणानुसार वे वृक्ष कुबेर के दो पुत्र, नलकूबर और मणिग्रीव थे। एक बार वे मद्यावस्था में वस्त्रहीन हो स्त्रियों के साथ जलविहार कर रहे थे; तभी नारद ने उन्हें 'जड़ वृक्ष' हो जाने का शाप दिया था।

यमलोक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह लोक जहाँ प्राणी मृत्यु के पश्चात् जाता माना गया है। (२) नरक।

यमवाहन—संज्ञा पुं. [सं.] भैंसा।

यमालय—संज्ञा पुं. [सं.] यमलोक।

यमी—संज्ञा पुं. [सं.] यम की बहन, यमुना।

वि. [सं. यमिन्] संयमी, निग्रही।

यमुना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) यम की बहन यमुना जो सूर्य की, संज्ञा के गर्भ से उत्पन्न, पुत्री मानी गयी है। (२) उत्तरी भारत की एक प्रसिद्ध नदी जो हिमालय में यमनोत्तरी से निकलकर प्रयाग में गंगा से मिल जाती है। श्रीकृष्ण की क्रीड़ाभूमि, वृन्दावन, यमुना के किनारे ही थी। मथुरा, दिल्ली, आगरा आदि प्रसिद्ध नगर यमुना के किनारे ही बसे हैं। (३) राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा, किन हार चुरायो। ....। सुखमा, सीला, अवधा, नंदा, वृंदा, यमुना सारि—१५८०।

यमुनाभिद्—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण के भाई बलराम जिन्होंने अपने हल से यमुना के दो भाग कर दिये थे।

ययाति—संज्ञा पुं. [सं.] राजा नहुष का पुत्र जिसने शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से विवाह किया था और उसकी दहेज-रूप में प्राप्त दानवराज की पुत्री शर्मिष्ठा से भी संबंध बना रखा था। उनके देवयानी से दो और शर्मिष्ठा से तीन पुत्र थे। देवयानी का बड़ा पुत्र यदु था जिसके कुल में श्रीकृष्ण ने जन्म लिया था।

यव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जौ (अन्न)। (२) एक तौल जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारह सरसों या एक जौ की मानी जाती है। (३) एक नाप जो एक इंच की तिहाई होती है।

यवन—संज्ञा पुं [सं.] (१) यूनान देशवासी। (२) कालयवन नामक म्लेच्छ राजा जो श्रीकृष्ण से कई बार लड़ा था। (३) मुसलमान।

यवनिका—संज्ञा पुं. [सं.] नाटक का परदा।

यवनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] यवन जाति की स्त्री।

यश—संज्ञा पुं. [सं. यशस्] (१) कीर्ति। (२) प्रशंसा।

यशस्विनी—वि. स्त्री. [सं.] कीर्तिमती।

यशस्वी—वि. पुं. [सं. यशस्विन्] कीर्तिमान्।

यशी—वि. [सं. यश] कीर्तिमान्, यशस्वी।

यशुमति, यशोदा—संज्ञा स्त्री. [सं. यशोदा] नंद जी की पत्नी यशोदा, जिसने श्रीकृष्ण को पाला था। उ.—अतिहीं सुंदर कुमार यशुमति रोहिणि बार बिलखाति यह कहत सबैं लोचन जल ढोरैं -२६०४।

यशोधर—संज्ञा पुं. [सं.] रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण का एक पुत्र।

यशोधरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] गौतम बुद्ध की पत्नी।

यशोमति, यशोमती—संज्ञा स्त्री. [सं. यशोदा] यशोदा।

यष्टि, यष्टिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] लाठी, लकड़ी।

यह—सर्व., वि. [सं. इदं] (१) निकट की वस्तु आदि का निर्देशक सर्वनाम जिसका संकेत श्रोता-वक्ता के अतिरिक्त जीवों, पदार्थों आदि की ओर होता है। उ.—(क) कह्यौ मयत्रेय सौं समुझाइ, यह तुम विदुरहिं कहियौ जाइ—३-४। (ख) यह कहिकै मारी गदा हरि जू ताहि सम्हारि—३-११। (२) निकट की वस्तु का निर्देशक विशेषण। उ.—(क) यह आसा पापिनी दहै—१-५२। (ख) जसुमति, किंहि यह सीख दई—३८१।

यहाँ—क्रि. वि. [सं. इह] इस स्थान में या पर।

यहि—सर्व., वि.[हिं. यह] (१) 'यह' का विभक्ति लगने के पूर्व रूप, इस। (२) 'ए' का विभक्तियुक्त रूप, इसको।

यहीं—क्रि. वि. [हिं. यहाँ+ही] इसी जगह।

यही, यहै—अव्य. [हिं. यह] यह ही। उ.—(क) यही गोप, यह ग्वाल, इहै सुख, यह लीला कहुँ तजत न साथ। (ख) जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौं यातैं—१-१३७। (ग) यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख दीन्हौ बसन बढ़ाइ—५५६।

यहौ—अव्य. [हिं. यह] यह भी, इतना तक। उ.—अंतर्यामी यहौ न जानत जो मो उरहिं बिती—१० उ०-१०३।

याँ—क्रि. वि. [हिं. यहाँ] यहाँ।

या—सर्व., वि. [हिं. यह] (१) 'यह' का विभक्ति लगने के पूर्व रूप, इस। (२) निकटता-सूचक विशेषण-प्रयोग, इस। उ.—(क) ऐसी जो आवै या मन मैं तौ सुख कहँ लौं कहियै—२-१८। (ख) तमोगुनी चाहै या भाइ, मम बैरी क्यौंहूँ मरि जाइ—३-१३। (ग) लालन बारी या मुख ऊपर—१०-९२।

अव्य. [फ़ा.] अथवा, वा।

याक—वि. [हिं. एक] एक।

संज्ञा पुं. [सं. गावक, तिब्बती ग्याक] हिमालय का वह बैल जिसकी पूंछ का चँवर बनता है।

याकी—सर्व., वि. सवि. [व्रज या+की] इसकी। उ.—अकथ कथा याकी कछू कहत नहीं कहि आवै—१-४४।

याके—सर्व., वि. सवि. [व्रज. या+के] इसके, इसको। उ.—(क) याके मारैं हत्य होइ—१-२८९। (ख) टहल करत मैं याके घर की—१०-३२२।

याकैं सर्व. सवि. [व्रज. या+कैं] इसके (में, से आदि)। उ.—याकैं गर्भ अवतरैं जे सुत—१०-४।

याकौं—सर्व. सवि. [व्रज. या+कौं] इसको। उ.—याकौं हयाँ तैं देहु निकारि—१-२८४।

याग—संज्ञा पुं. [सं.] यज्ञ।

याचक—वि. [सं.] (१) माँगनेवाला। उ.—जिनि याजे व्रजपति उदार अति याचक फिरि न कहाये। (२) भिखारी।

याचत—क्रि. स. [हिं. याचना] माँगता या प्रार्थना करता है। उ.—याचत दास आस चरनन की अपनी सरन बसाव—पृ. ३५० (६४)।

याचना, याचनो—क्रि. स. [सं. याचन] (१) प्रार्थना करना, माँगना। (२) भिक्षा माँगना।

याज्ञ—वि. [सं.] यज्ञ-संबंधी।

याज्ञवल्क्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वैशंपायन के शिष्य एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषि (२) राजा जनक के दरबारी एक ऋषि जिनके दो पत्नियां थीं—मैत्रेयी और गार्गी। (३) एक स्मृतिकार।

याज्ञिक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यज्ञ करने-करानेवाला। (२) ब्राह्मणों की एक जाति।

यातना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पीड़ा, वेदना। (२) नरक के कष्ट।

याता—संज्ञा स्त्री. [सं. यातृ] देवर या जेठ की पत्नी।

यातायात—संज्ञा पुं. [सं.] आना-जाना।

यातुधान—संज्ञा पुं. [सं.] राक्षस।

याते, यातैं—अव्य. [व्रज. या+तैं] इससे, इसलिए। उ.—(क) जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौं यातैं—१-१३७। (ख) कछु करि गए तनक चितवनि मैं याते रहत प्रेम-मद छावची—२५४६।

यात्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) एक स्थान से दूसरे को जाने की क्रिया, सफर। (२) प्रयाण। (३) तीर्थाटन। (४) एक प्रकार का अभिनय जिसमें नाचना-गाना भी रहता है।

यात्री—संज्ञा पुं. [सं. यात्रा] (१) यात्रा करनेवाला। (२) तीर्थाटन को जानेवाला।

याद—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) स्मृति। (२) स्मरण करने की क्रिया।

यादगार—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] स्मारक, स्मृति-चिह्न।

याददाश्त—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) स्मृति। (२) स्मरण रखने को लिखी गयी बात।

यादव—वि. [सं.] राजा यदु-संबंधी।

संज्ञा पुं.—(१) यदु के वंशज। (२) श्रीकृष्ण।

यादवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] यादव जाति की स्त्री।

यान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वाहन, सवारी। उ.—प्रभु हाँकैं रथ यान—१-२७५। (२) विमान।

याना—वि. [सं. सज्ञान] ज्ञानवान।

यानी, याने—अव्य. [अ.] तात्पर्य यह कि।

यापन—संज्ञा पुं. [सं.] बिताना, व्यतीत करना।

याम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तीन घंटे का समय, पहर। (२) काल, समय।

संज्ञा स्त्री. [सं. यामि] रात। उ.—(क) इनकी को दासी सरि ह्वैहै धन्य सरद की याम। (ख) मन लौं हौं पहुनाई करिहौं राखौ अटकि द्यौस अरु याम—१५०९।

यामल—संज्ञा पुं. [सं.] जुड़वाँ बच्चे।

यामा—संज्ञा पुं. [सं. याम] तीन घंटे का समय, पहर। उ.—(क) ब्रज ते चले भए पट यामा—२६४३। (ख) चपल समीर भयो तेहि रजनी भीजे चारों यामा—१० उ०-६६।

यामिन, यामिनि, यामिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. यामिनी] रात, रात्रि, रजनी।

यामैं—सर्व. सवि. [व्रज. या+मैं] इसमें। उ.—हरिगुरु एक रूप नृप जानि। यामैं कछु संदेह न आनि—६-५।

यार—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) मित्र। (२) किसी स्त्री से अनुचित प्रेम-संबंध रखनेवाला, जार।

याराना—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) मित्रता। (२) किसी स्त्री-पुरुष का अनुचित प्रेम-संबंध।

यारी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) मित्रता। (२) किसी स्त्री-पुरुष का अनुचित प्रेम-संबंध।

यावक—संज्ञा पुं. [सं.] महावर।

यावत—वि. [सं. यावत्] सब, कुल।

अव्य.—(१) जब तक। (२) जहाँ तक।

याहि—सवि. सर्व. [व्रज. या+हि] इसे, इसको। उ.—(क) कह्यौ, याहि लै जाउ उठाइ। सुमिरत मो रिपु कौं चित लाइ—७-२। (ख) आयौ देखन याहि—८५९।

याहीं—अव्य. [व्रज. या+हीं] यहाँ ही, इसे ही। उ.—इतनी जउ जानत मन मूरख मानत याहीं धाम—१-७६।

याही—सर्व. सवि. [व्रज. या+ही] इसका ही। उ.—सुनैं भवन कहुँ कोउ नाहीं, मनु याही कौ राज—१०-२७७।

याहू—सर्व. [व्रज. या+हूँ] इसे भी, इसको भी। उ.—याहू सौंज संचि नहिं राखी अपनी धरनि धरी—१०-१३०।

युक्त—वि. [सं.] (१) जुड़ा या मिला हुआ। (२) सम्मिलित। (३) उचित, ठीक।

युक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उपाय। (२) चातुरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) रीति। (४) नीति। (५) कारण। (६) उचित बात।

युक्तियुक्त—वि. [सं.] न्याय या तर्कसंगत।

युग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दो वस्तुओं का जोड़ा। (२) पीढ़ी, पुश्त। (३) समय, काल। (४) काल का एक दीर्घ परिमाण।

मुहा०—युग-युग—बहुत समय तक। उ.—सूरदास चिरजीवहु युग-युग दुष्ट दले दोउ नंददुलारे—२५६९।

वि.—जो गिनती में दो हो।

युगति—संज्ञा स्त्री. [सं. युक्ति] (१) उपाय। (२) कौशल।

युगम—संज्ञा पुं. [सं. युग्म] जोड़ा, युग्म।

युगल—संज्ञा पुं. [सं.] जोड़ा, साथ-साथ दो।

युगांत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी काल या युग का अंतिम समय। (२) प्रलय।

युगांतर—संज्ञा पुं. [सं.] नया युग या समय।

मुहा०—युगांतर करना—(१) समय बदल देना। (२) पूर्व रीति-नीति बदलकर नयी चलाना।

युगुति—संज्ञा स्त्री. [सं. युक्ति] (१) उपाय। (२) कौशल।

युग्म—संज्ञा पुं. [सं.] जोड़ा, साथ-साथ दो वस्तुएँ।

युत—वि. [सं.] (१) सहित। (२) मिला हुआ।

युद्ध—संज्ञा पुं. [सं.] लड़ाई, संग्राम।

मुहा०—युद्ध माँड़ना—लड़ाई ठानना। युद्ध माँड़चौ—लड़ाई ठानी। उ.—निरखि यदुवंश को रहस मन में भयौ देखि अनिरुद्ध युद्ध माँड़चौ।

युधाजित—संज्ञा पुं. [सं. युधाजित्] (१) कैकेयी का भाई जो भरत का मामा था। (२) श्रीकृष्ण का एक पुत्र।

युधिष्ठिर—संज्ञा पुं. [सं.] कुंती का धर्मराज से उत्पन्न पुत्र जो पाँचों पांडवों में सबसे बड़ा था।

युयुत्सा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बैर, शत्रुता। (२) युद्ध की इच्छा।

युयुत्सु—वि. [सं.] युद्ध की इच्छा रखनेवाला।

युवक—संज्ञा पुं. [सं.] युवा, जवान।

युवति, युवती—संज्ञा स्त्री. [सं.] युवा नारी। उ.—ज्यौं युवती पति आवत सुनिकै पुलकित अंग भई—२५६२।

युवराइ, युवराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. युवराज] युवराज का पद या अधिकार।

युवराज, युवराजा—संज्ञा पुं. [सं. युवराज] राजकुमार जो राज्य का उत्तराधिकारी हो।

युवराजी—संज्ञा स्त्री. [सं. युवराज] युवराज का पद।

युवराज्ञी, युवरानी—संज्ञा स्त्री. [सं. युवराज्ञी] युवराज की पत्नी।

युवा—वि. [सं. युवक] युवक, जवान।

यूँ—अव्य. [हिं. यों] इस प्रकार, ऐसे।

यूथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) झुंड, समूह। उ.—(क) अर्ध रैनि चली धरनि ते यूथ यूथनि नारि—पृ. ३३८ (८१)। (ख) ज्यौं गजयूथ नेक नहिं बिछुरत शरद मदन मद मातौ—३३१९। (२) सेना, दल।

यूथनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] सरदार, सेनापति।

यूथप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नायक। (२) सेनापति।

यूथपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नायक। (२) सेनापति।

यूथिका, यूथी—संज्ञा स्त्री. [सं.] जूही का फूल या पौधा। उ.—सित अरु पीत यूथिका बेनी गूँथी बिबिध बनाय।

यूप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खंभा जिसमें बलि-पशु बाँधा जाता है। (२) विजय-स्मारक, कीर्ति-स्तंभ।

यूप, यूपा—संज्ञा पुं. [सं. द्यूत] जूआ, द्यूतकर्म।

यूह—संज्ञा पुं. [सं. यूथ] समूह, झुंड।

ये—सर्व., वि. [हिं. यह] 'यह' का बहुवचन। उ.—ये दससीस चरन पर राखौ मेटौ सब अपराध—९-११५।

येइ, येई—सर्व. [हिं. यह+ई] ये ही, यही। उ.—(क) मूल भागवत के येइ चारि—२-३७। (ख) येई हैं सब ब्रज के जीवन—३६७। (ग) ये महिमा येई पै जानैं—३८०। (घ) कंस बधन येई करिहैं—१०-८५।

येउ, येऊ—सर्व. [हिं. ये+ऊ] ये भी।

येत, येतो—वि. [हिं. इतना] इतना।

येह—सर्व. [हिं. यह] यह, ये।

येहु, येहू—सर्व. [हिं ये+ऊ] यह भी, ये भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यों—अव्य. [सं. एवमेव, प्रा० एमेअ, अप० एमि] ऐसे, इस भांति, इस प्रकार से ।

योंही—अव्य. [हिं. यों+ही] (१) इसी तरह से । (२) व्यर्थ ही । (३) बिना निश्चित उद्देश्य के ।

यो—सर्व. [हिं. यह] यह ।

योग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दो या अधिक पदार्थों का संयोग । (२) उपाय, युक्ति । (३) प्रेम । (४) शुभ अवसर । (५) कौशल । (६) मेल-मिलाप । (७) उपयुक्तता । (८) वैराग्य । (९) ठिकाना, सुभीता, जुगाड़ । (१०) ज्योतिष में विशिष्ट काल । (११) चित्त-वृत्ति का निरोध । उ.—योग यज्ञ जप तप तीरथ ब्रत कीजत है जेहि लोभा—२५६६ । (१२) छह दर्शनों में एक जिसमें चित्त-निरोध आदि का विधान है ।

वि. [सं. योग्य] उपयुक्त योग्य । उ.—(क) सूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुख योग—२६९९ । (ख) ऊधौ, योग योग हम नाहीं—३३१२ । (ग) बारंबार असीस देत सब यह बर बन्यौ रुक्मिणी योग—१० उ०-१७ ।

योगकन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] यशोदा के गर्भ से उत्पन्न वह कन्या जिसे लाकर वसुदेव ने, श्रीकृष्ण के स्थान पर, कंस को सौंप दिया था ।

योगक्षेम—संज्ञा पुं. [सं.] कुशल-मंगल ।

योगदान—संज्ञा पुं. [सं.] काम में सहयोग देना ।

योगफल—संज्ञा पुं. [सं.] एक से अधिक संख्याओं का जोड़ ।

योगबल—संज्ञा पुं. [सं.] योग-साधना से प्राप्त शक्ति ।

योगभ्रष्ट—वि. [सं.] जिसकी योग-साधना पूरी न हो सकी हो ।

योगमाया—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विष्णु की माया । (२) वह कन्या जो यशोदा के गर्भ से जन्मी थी और जिसे लाकर वसुदेव ने, श्रीकृष्ण के स्थान पर, कंस को सौंप दिया था । उ.—देखी परी योगमाया (जोगमाया) बसुदेव गोद करि लीनी—१०-४ ।

योगरूढ़ि—संज्ञा स्त्री. [सं.] दो शब्दों के योग से बना शब्द जिसका विशेष अर्थ हो ।

योगांग—संज्ञा पुं. [सं.] योग के आठ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि ।

योगाभ्यास—संज्ञा पुं. [सं.] योग की साधना । उ.—बदरिकाश्रम रहे पुनि जाई । योगाभ्यास (योग-अभ्यास) समाधि लगाई ।

योगाभ्यासी—संज्ञा पुं. [सं. योग+अभ्यासी] योग-साधक ।

योगासन—संज्ञा पुं. [सं.] योग की साधना के लिए बैठने की रीति ।

योगिनि, योगिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. योगिनी] (१) रण-पिशाचिनी । (२) तपस्विनी । उ.—सूरदास प्रभु यह उपजति है धरिए योगिनि-वेष—२७५३ । (३) देवी, योगमाया ।

योगिनी-चक्र—संज्ञा पुं. [सं.] योगिनियों के साधन का चक्र (तंत्रशास्त्र) ।

योगिराज—संज्ञा पुं. [सं.] बहुत बड़ा योगी ।

योगींद्र—संज्ञा पुं. [सं.] बहुत बड़ा योगी ।

योगी—संज्ञा पुं. [सं. योगिन्] (१) राग-विराग से मुक्त, आत्मज्ञानी । (२) वह जिसने योग-साधना में सिद्धि प्राप्त कर ली हो ।

योगीश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) योगियों का स्वामी । (२) बहुत बड़ा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगीश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) योगियों का स्वामी । उ.—योगीश्वर बपु धरि हरि प्रगटे योग-समाधि प्रमान्यो—सारा. ३५१ । (२) बहुत बड़ा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगेश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) योगियों का स्वामी । (२) बहुत बड़ा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) योगियों का स्वामी । (२) बहुत बड़ा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योग्य—वि. [सं.] (१) उपयुक्त या अधिकारी (पात्र) । (२) श्रेष्ठ, उत्तम । (३) उचित, ठीक । (४) आदरणीय ।

योग्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उपयुक्तता, पात्रता । (२) श्रेष्ठता, उत्तमता । (३) अनुकूलता, औचित्य । (४) आदर, सम्मान ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योजक—वि. [सं.] मिलाने या जोड़नेवाला।

योजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संयोग, मिलान। (२) दूरी की एक नाप जो दो, चार या आठ कोस की मानी जाती है।

योजनगंधा—वि. [सं.] जिसकी सुगंध एक योजन तक फलती हो।

संज्ञा स्त्री.—(१) कस्तूरी। (२) सत्यवती जो शांतनु की पत्नी और व्यास की माता थी।

योजना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नियुक्त करने की क्रिया। (२) रचना, बनावट। (३) व्यवस्था, आयोजन।

योद्धा, योधा—संज्ञा पुं. [सं. योद्धा] सैनिक, भट। उ.—तोरि कोदंड मारि सब योधा तब बल भुजा निहार्यौ—२५८६।

योधेय—संज्ञा पुं. [सं.] सैनिक, योद्धा।

योनि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) आकर, खानि। (२) उत्पत्ति-स्थान। (३) स्त्री की जननेंद्रिय। (४) प्राणियों के विभाग या वर्ग। (५) देह, शरीर।

योषिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] स्त्री, नारी।

यौं—अव्य. [हिं. यों] इस प्रकार से, ऐसे। उ.—(क) हँसि बोलौ जगदीस जगतपति बात तुम्हारी यौं—१-१५१। (ख) रहु रहु राजा, यौं न कहिए, दूषन लागै भारी—८-१४।

यौ—सर्व. [हिं. यह] यह।

यौगिक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रकृति-प्रत्यय के मेल से बना शब्द। (२) दो शब्दों के मेल से बना शब्द।

यौतक, यौतुक—संज्ञा पुं. [सं.] विवाह का दहेज।

यौधेय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) योद्धा। (२) एक प्राचीन देश या उसका निवासी।

यौन—वि. [सं.] योनि का, योनि-संबंधी।

यौवन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) युवा होने का भाव, तारुण्य, जवानी। उ.—सूर-स्याम बिनु क्यों मन राखौं तन यौवन के आगर—२९८०। (२) यौवन-काल। (३) युवती का सौंदर्य। (४) युवती के स्तन।

यौवराज्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) युवराजत्व। (२) युवराज का पद।

र

र—देवनागरी वर्णमाला का सत्ताईसवाँ व्यंजन, जो स्पर्श और ऊष्म वर्णों के मध्य का है और जिसका उच्चारण जिह्वाग्र को मूर्द्धा से स्पर्श कराने से होता है।

रंक—वि. [सं.] (१) दरिद्र, कंगाल। उ.—(क) जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होइ कै रानौ—१-११। (ख) रंक सुदामा कियौ इंद्र-सम—१-९५। (ग) राव-रंक हरि गनत न दोई—२-५। (२) कंजूस।

रग, रंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नाच-गाना, नृत्य-गीत। (२) नृत्य, अभिनय आदि का स्थान। (३) युद्धस्थल। (४) वर्ण। (५) वह पदार्थ जिससे चीजें रँगी जाती हैं। उ.—(क) सेत, हरी राती अरु पियरी रंग लेत है धोई—१-६३। (ख) सूरदास कारी कामरि पै चढ़त न दूजौ रंग—१-३३२। (ग) रंग कापै होत न्यारो हरद-चूनो सानि—८९५। (घ) पहिलै ही चढ़ि रह्यौ स्याम रँग छूटत नहिं देख्यौ धोई—३१४८।

यौ०—रंग-बिरंगा—जिसमें अनेक रंग हों।

मुहा०—रंग आना (चढ़ना)—रंग का अच्छे रूप में चमकने लगना। रंग उड़ना (उतरना)—रंग का फीका पड़ जाना। रंग खेलना (डालना या फेंकना)—होली के दिनों में रंग पानी में घोलकर एक दूसरे पर छिड़कना। रंग खेलत—होली के दिनों में रंग घोलकर परस्पर छिड़कते हैं। उ.—खेलत ग्वालनि संग रंग आनंद मुरारी—४९२। रंग निखरना—रंग का चटकीला हो जाना। रंग फीका होना—रंग में चमक या चटकीलापन न रह जाना। रँग ह्वैहै फीको—रँग की चमक या उसका चटकीलापन कम हो जायगा। उ.—बूँद परत रँग ह्वैहै फीको, सुरँग चूनरी भीजै—७३१।

(५) मुख और शरीर की रंगत।

मुहा०—रंग उड़ना (उतरना)—भय, लज्जा आदि से मुख का कांतिहीन हो जाना। रंग निकलना (निखरना)—मुख पर रौनक आ जाना, शरीर का कांतियुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाना। रंग फक होना—चेहरा पीला पड़ जाना। रंग बदलना—क्रोध से लाल-पीला होना।

(६) जवानी, युवावस्था, यौवन।

मुहा०—रंग चूना (टपकना)—यौवन का पूर्ण उभार या विकास पर होना, यौवन छा जाना।

(७) शोभा, सौंदर्य, छवि। उ.—कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहै—१-८६।

मुहा०—रंग पकड़ना (पर आना)—छवि या शोभा का बहुत बढ़ जाना। रंग फीका पड़ना (होना)—छवि या शोभा घट जाना। रंग बरसना—खूब रौनक होना। रंग है—वाह वा! बहुत बढ़िया।

(८) प्रभाव, असर।

मुहा०—रंग चढ़ना (जमना)—प्रभाव या असर होना।

(९) किसी के गुण, रूप आदि का दूसरे के हृदय पर पड़नेवाला प्रभाव या असर।

मुहा०—रंग जमना—अभीष्ट प्रभाव पड़ना। रंग उखड़ना—अभीष्ट प्रभाव न रह जाना। रंग जमाना—अभीष्ट रूप से प्रभावित कर लेना। रंग फीका रहना—अभीष्ट प्रभाव न पड़ सकना। रंग बँधना—अभीष्ट प्रभाव पड़ने लगना। रंग बांधना—(१) अभीष्ट प्रभाव डालने का यत्न करना। (२) ढोंग या आडम्बर रचना। रंग बिगड़ना—प्रभाव नष्ट या कम हो जाना। रंग बिगाड़ना—(१) प्रभाव या महत्व घटाना। (२) ढोंग या आडम्बर प्रकट कर देना। (३) शेखी किरकिरी करना। रंग लाना—प्रभाव या महत्व दिखाना।

(१०) खेल, विनोद, क्रीड़ा-कौतुक। उ.—एक गावत एक नाचत एक करत बहु रंग—२४१५।

यौ०—रंग-रलियाँ—आमोद-प्रमोद।

मुहा०—रंग-रलना—आमोद-प्रमोद, क्रीड़ा-विनोद या विलास-विहार करना। रंग रलिहैं—आमोद-प्रमोद या विलास-विहार करेंगे। उ.—भाव ही कह्यौ मन भाव दृढ़ राखिबो दै सुख तुमहिं संग रंग रलिहैं। रंग में भंग पड़ना (होना)—आमोद-प्रमोद या हास्य-विनोद में अकस्मात कोई दुःख या विघ्न आ पड़ना।

(११) मन की उमंग, तरंग या मौज। उ.—(क) रत्नजटित किंकिनि पग नूपुर अपने रंग बजावहु। (ख) तहँ सुख मानि, बिसारि नाथ-पद अपनैं रंग विहरतौ—१-२०३। (ग) खेलत स्याम अपनैं रंग—१०-२३४। (घ) बाजत वेनु विषान, सबै अपनैं रँग गावत—४३७। (ङ) चरहिं धेनु अपनैं अपनैं रँग अतिहिं सघन बन चारी—६११।

मुहा०—(किसी के) रंग में ढलना (ढरना)—किसी के प्रभाव में आकर उसकी इच्छानुसार कार्य करना। रँग ढरी—किसी के प्रभाव में आकर उसकी इच्छानुसार कार्य करने लगी। उ.—तुरत मन सुख मानि लीन्ही नारि तेहि रँग ढरी।

(१२) आनन्द, मजा। उ.—मोकौं व्याकुल छाँड़ि कै आपुन करैं जु रंग।

मुहा०—रंग आना—आनंद मिलना। रंग उखड़ना—आनंद के अवसर पर कुछ विपरीत बात से मजा किरकिरा हो जाना। रंग जमना—खूब आनन्द आना। रंग मचाना—घूम मचाना। रंग में भंग करना—आनन्द के अवसर पर अचानक कोई विघ्न खड़ा कर देना। रंग में भंग होना—आनन्द के अवसर पर सहसा विघ्न या बाधा आ जाना। रंग रचाना—उत्सव करना।

(१३) दशा, स्थिति, व्यवहार। उ.—कबहुँ नहिं इहिं भाँति देख्यौ, आजु कैसौ रंग—४२७।

मुहा०—रंग लाना—स्थिति या अवस्था-विशेष उपस्थित कर देना।

(१४) अद्भुत दृश्य या कांड। (१५) कृपा, दया, प्रसन्नता। (१६) प्रेम, अनुराग। उ.—(क) हरि-पद पंकज पियौ प्रेम-रस, ताही कै रँग रातौ—१-४०। (ख) देखि जरनि जड़ नारि की (रे) जरति प्रेत के संग। चिता न चित फीको भयौ (रे) रची जु पिय कैं रंग—१-३२५। (ग) भरतादिक सब हरि-रँग रए—५-२। (घ) कुबिजा भई स्याम-रँग-राती—१-६३।

मुहा०—रंग देना—दिखावटी प्रेम करना।

(१७) ढंग, ढब।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौ०—रंग-ढंग—(१) दशा, स्थिति, अवस्था। (२) चाल-ढाल। (३) व्यवहार-बर्ताव। (४) लक्षण।

मुहा०—रंग काछना—ढंग अपनाना, चाल चलना। रँग काछत—ढंग अपनाते हैं। उ.—सूर स्याम जितने रँग काछत जुवती जन-मन के गोऊ हैं। (किसी को अपने) रंग में रँगना—किसी को प्रभावित करके अपना-सा या अपने मत और पक्ष का कर लेना।

(१८) भांति, प्रकार। (१९) चौपर की १६ गोटियों का दो बराबर भागों में विभाजन जिनमें ८ 'रंग' और शेष 'बदरंग' कहलाती हैं।

मुहा०—रंग जमना—चौपड़ की 'रंग' गोटी का ऐसे घर में पहुँचना जिससे खिलाड़ी की जीत निश्चित हो जाय। रंग मारना—बाजी जीतना।

(२०) युद्ध, समर, लड़ाई।

यौ०—रण-रंग—युद्धोत्साह। उ.—भिड़चौ चानूर सौं नंद-सुत बांधि कटि पीतपट फेंट रण-रंग राजै—२६०७।

मुहा०—रंग मचाना—खूब उत्साह से युद्ध करना, घमासान मचा देना।

रंगत—संज्ञा स्त्री. [हिं. रंग] (१) रंग का भाव या उसकी चमक-दमक। (२) आनंद, मजा। (३) दशा, स्थिति, अवस्था।

रंग-थल—संज्ञा पुं. [सं. रंगस्थल] रंगस्थल।

रंगद्वार—संज्ञा पुं. [हिं. रंग+सं. द्वार] रंगभूमि का द्वार उ.—नवल नंदनन्दन रंगद्वार आए—२५९५।

रँगना, रँगनो—क्रि. स. [हिं. रंग] (१) रंग चढ़ाना, रंगीन करना। (२) प्रेम करने लगना। (३) प्रभाव डालकर अपने अनुकूल करना।

क्रि. अ.—आसक्त या प्रेम में लीन होना।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रेंगना] धीरे-धीरे कौतुक करते घिसटना या चलना। उ.—मनिमय आँगन नंदराइ को बाल गोपाल करै तहँ रँगना—१०-११३।

रंग-बिरंग, रंग-बिरंगा—वि. [हिं. रंग+बिरंग] (१) कई रंगोंवाला। (२) कई तरह का।

रंगभवन—संज्ञा पुं. [सं.] भवन जहाँ आमोद-प्रमोद के सभी साधन उपलब्ध हों।

रंगभूमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उत्सव, आयोजन आदि का स्थान। उ. कछु क्रोध कछु त्रास, कछु सोच, कछु सोक करैं सहास रंगभूमि आयौ २६०२। (२) क्रीड़ा, विनोद आदि का स्थान। उ.—रंगभूमि रमनीक मधुपुरी बारि चढ़ाइ कहो दह कीजो—१० उ०-९५। (३) कुश्ती होने का स्थान, अखाड़ा। उ०—रंगभूमि मैं कंस पछारौं, घीसि बहाऊँ बैरी—१०-१७६। (४) रण-भूमि, युद्धक्षेत्र। (५) नाटक खेलने का स्थान।

रंगभौन—संज्ञा पुं. [सं. रंगभवन] रंगमहल।

रँगमँगा, रँगमँगे—वि. [हिं. रंग+मग्न] आनंद में लीन, रसलीन। उ.—मानहुँ रति-रस भए रँगमँगे करत केलि पिय पलक न पारे—२१३२।

रंगमंच—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नाट्यशाला। (२) रंगभूमि।

रंगमहल—संज्ञा पुं. [सं. रंग+अ. महल] आमोद-प्रमोद या विलास का भवन। उ.—बैठी रंगमहल मैं राजति, प्यारी फेरि अभूषन साजति।

रँगमाता—वि. [सं. रंग+हिं. मत्त] आनंद में लीन।

रंग-रन—संज्ञा पुं. [सं. रंग+रण] युद्धोत्साह। उ.—धन्य सु भूमि जहाँ पग धारे जीतहिंगे रिपु आजु रंग-रन—२५७३।

रंगरली—संज्ञा स्त्री. [सं. रंग+हिं. रलना] आमोद-प्रमोद।

मुहा०—रंगरली करना (मचाना)—आमोद-प्रमोद या विलास-विहार करना।

रंगरस—संज्ञा पुं. [सं. रंग+रस] आमोद-प्रमोद।

रंगरसिया—वि. [सं. रंग+हिं. रसिया] विलासी।

रँगराता, रँगराते, रँगरातौं—वि. [सं. रंग+हिं. राता] अनुरक्त। उ.-भामिमि कुबिजा सौं रँगराते—२६८४।

रँगरेज—संज्ञा पुं. [फ़ा. रँगरेज़] कपड़ा रँगने का काम करनेवाला।

रगरेजिन, रँगरेजिनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रँगरेज] रँगरेज की स्त्री, कपड़े रँगनेवाली। उ.—जावक सों कहाँ पाग रँगाई रँगरेजिन मिलिहै को बाल—१९३६।

रंगरेलि, रंगरेली—संज्ञा स्त्री. [सं. रंग+रेलना] मौज, विलास, आमोद-प्रमोद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रँगवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रँगाई] रँगने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

रँगवाना, रँगवानो—क्रि. स. [हिं. रँगना का प्रे०] रँगने का काम दूसरे से कराना।

रंगशाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाट्यशाला।

रंगसाज—वि. [हिं. रंग+फ़ा. साज़] रंग बनाने या चढ़ानेवाला।

रंगस्थल—संज्ञा पुं. [सं.] रंगभूमि।

रंगा—संज्ञा स्त्री. [सं. रंग] राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा, किनि हार चुरायो।........। प्रेमा दामा रूपा हंसा रंगा हरषा जाउ—१५८०।

रँगाई—संज्ञा स्त्री. [सं. रंग+हिं. आई] रँगने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

क्रि. स. [हिं. रँगाना] रंग चढ़वाया, रँगने को प्रवृत किया, रँगवा ली। उ.—जावक सों कहाँ पाग रँगाई—१९३६।

रगाना, रँगानो—क्रि. स. [हिं. रँगना का प्रे०] रँगने का काम दूसरे से कराना।

रगावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. रंग+आवट] रँगने की क्रिया या भाव।

रगिया—संज्ञा पुं. [सं. रंग+हिं. इया] रँगनेवाला।

रंगी—वि. [हिं. रंग] (१) रँगीला। (२) रंगीन।

रंगीन—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) रँगा हुआ। (२) विलासी। (३) अनोखा, मजेदार।

रंगीनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रंगीन] (१) रंगीन होने का भाव (२) बनाव-सिंगार। (३) रँगीलापन।

रगीला—वि. [सं. रंग+हिं. ईला] (१) रसिक, रसिया। (२) सुंदर। (३) प्रेमी, अनुरागी।

रँगीली—वि. स्त्री. [हिं. रँगीला] आनंद में लीन, रसिकिनी, अपने राग-रंग में चूर। उ.—दधि लै मथति ग्वालि गरबीली।.......। भरी गुमान बिलोकति ठाढ़ी, अपनैं रंग रँगीली—१०-२९९। (२) सुंदर। (३) अनुरागभरी, मुग्ध।

रँगीले—वि. [हिं. रँगीला] रसिक, रसिया। उ.—स्याम रँग रँगे रँगीले नैन।

रँगैया—वि. [हिं. रँगना+ऐया] रँगनेवाला।

रँग्यौ—क्रि. अ. [हिं. रँगना] रँग लिया, रंग में मग्न या लीन हो गया। उ.—(क) तू तौ बिषया-रंग रँग्यौ है, बिन धोए क्यौं छूटै—१-६३। (ख) तेहि रँग सूर रँग्यौ मिलिकै मन होइ न स्वेत अरुन फिर पेरो—११९९।

रंच, रंचक—वि. [सं. न्यंच, प्रा० णंच] थोड़ा, तनिक, जरा सा। उ.—(क) रंच काँच-सुख लागि मूढ़ मति कंचन-रासि गँवाई—१-३२८। (ख) रंचक सुख-कारन तैं अंत क्यौं बिगोयौ—१-३३०। (ग) रंचक दधि के काज जसोदा बाँधे कान्ह उलूखल लाइ—२६९५।

रँचिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. रचना] लीन या मग्न होना। उ.—रे मन, छाँड़ि बिषय को रँचिबौ—१-५९।

रंज—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) दुख। (२) शोक।

रंजक—वि. [सं.] (१) रँगनेवाला। (२) आनंदकारी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रंच=अल्प] (१) बंदूक की प्याली में आग लगाने को रखी जानेवाली बारूद। (२) भड़काने या उत्तेजित करनेवाली बात।

रंजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रँगने की क्रिया। (२) प्रसन्न करने की क्रिया।

वि.—प्रसन्न या आनंदित करनेवाला। उ.—सब वे दिवस चारि मन-रंजन अंत काल बिगरैगौ—१-७५।

रंजना, रंजनो—क्रि. स. [सं. रंजन] (१) प्रसन्न करना। (२) स्मरण या भजन करना। (३) रँगना।

रंजित—वि. [सं.] (१) रँगा हुआ, सना हुआ। उ.—(क) अति बिराजत बदन-बिधु पर सुरभि-रंजित रेनु—१-३०७। (ख) सोभित मन अंबुज पराग-रुचि रंजित मधुप सुदेश—४७८। (२) प्रसन्न, हर्षित। (३) अनुरक्त, मुग्ध।

रंजिश—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) दुखी होने का भाव। (२) मन-मुटाव। (३) शत्रुता।

रंजीदा—वि. [फ़ा.] (१) दुखी। (२) अप्रसन्न।

रंजै—क्रि. स. [हिं. रचना] स्मरण या भजन करता है। उ.—आदि निरंजन नाम ताहि रंजै सब कोऊ—३४४३।

रंडा—वि. [सं.] राँड़, विधवा।

रंडापा—संज्ञा पुं. [सं. रंडा] विधवा की स्थिति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंडी—संज्ञा स्त्री. [सं. रंडा] वेश्या ।

रँडुआ, रँड़ुआ, रड़ुवा—वि. [हिं. राँड़] जिसकी पत्नी मर गयी हो ।

रंता—वि. [सं. रत] लीन, लगा हुआ ।

रंति—संज्ञा स्त्री. [सं.] केलि, क्रीड़ा ।

रंद—संज्ञा पुं. [सं. रंध्र] किले की दीवार का मोखा जिससे तोप आदि चलायी जा सके ।

रँदना, रँदनो—क्रि. स. [हिं. रंदा] रंदा फेरकर लकड़ी की सतह चिकनी करना ।

रंदा—संज्ञा पुं. [सं. रदन] लकड़ी की सतह चिकनी करने का औजार ।

रंधन—संज्ञा पुं. [सं.] रसोई बनाना ।

रंध्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छेद, सूराख । उ.—(क) जैसे फिरत रंध्र मगु उँगरी तैसे मैंहुँ फिराऊँ—पृ० ३११ (११) । (ख) ग्रीवा रंध्र नैन चातक जल पिक मुख बाजै बाजत—२८१७ । (२) दोष, छिद्र ।

रंभ—संज्ञा स्त्री. [सं.] शब्द, कोलाहल ।

रंभण, रंभन—संज्ञा पुं. [सं. रंभण] (१) गले लगाना, आलिंगन । (२) (गाय का) रँभाना ।

रंभना, रंभनो—क्रि. अ. [सं. रंभण] (१) जोर का शब्द करना । (२) (गाय का) बोलना ।

रंभा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) केला । (२) एक अप्सरा । (३) राधा की एक सखी का नाम । उ.—कहि राधा, किनि हार चुरायो । .... । दर्वा रंभा कृष्णा ध्याना, मैना नैना रूप—१५८० ।

रँभाना, रँभानो—क्रि. अ. [सं. रंभण] गाय का बोलना ।

रंभि—क्रि. अ. [हिं. रँभाना] रँभाकर । उ.—मुरली धुनि गौ रंभि चलत पग धूरि उड़ावति ।

रँहचटा—संज्ञा पुं. [हिं. रहस+चाट] लालच, चस्का ।

रइकौ—क्रि. वि. [हिं. रंच+कौ] जरा भी ।

रइनि—संज्ञा स्त्री. [सं. रजनी, प्रा० रयणी] रात ।

रईं—क्रि. अ. [हिं. रयना] लीन, आसक्त या अनुरक्त हुई । उ.—प्रेम-बिबस सब ग्वालि भईं । उरहन देन चलीं जसुमति कौं, मनमोहन के रूप रईं—७७१ ।

रई—संज्ञा स्त्री. [सं. रय] मथानी । उ.—(क) बासुकि नेति अरु मंदराचल रई, कमठ मैं आपनी पीठि धारों—८-८ । (ख) त्यौं-त्यौं मोहन नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ—१०-१४८ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रवा] (१) मोटा आटा । (२) चूर्ण ।

वि. स्त्री. [हिं. रयना] (१) मग्न, लीन, पगी हुई । (२) अनुरक्त ।

क्रि. अ.—अनुरक्त हुई । उ.—कहत परस्पर आपुस मैं सब कहाँ रहीं हम काहि रई । (ख) ज्यौं व्यभिचारि भवन नहिं भावत औरहि पुरुष रई—पृ० ३३४ (३९) । (ग) माधव राधा के रँग राचे, राधा माधव रंग रई—१० उ०-१२१ ।

रईस—वि. [अ.] धनी, अमीर ।

रईसी—संज्ञा स्त्री. [अ. रईस] धनी होने का भाव, अमीरी ।

रउताइ, रउताई—संज्ञा पुं. [हिं. रावत+आई] स्वामित्व, प्रभुता ।

रउरे—सर्व. [हिं. राव, रावल] मध्यम पुरुष के लिए आदरसूचक शब्द, आप ।

रए—क्रि. अ. [हिं. रयना] लीन या अनुरक्त हुए । उ.—(क) वह तौ जाइ समात उदधि में ए प्रति अंग रए—पृ० ३२१ (९७) । (ख) जोवन-बन ते निकसि चले ए मुरली-नाद रए—पृ० ३२५ (४८) ।

रकछ—संज्ञा पुं. [हिं. रिकवँच] पत्ते की पकौड़ी ।

रकत—संज्ञा पुं. [सं. रक्त] खून, लहू, रुधिर । उ.—चापि ग्रीव हरि प्रान हरे, दृग रकत-प्रवाह चल्यौ अधिकानी—१०-७८ ।

वि.—लाल ।

रकबा—संज्ञा पुं. [अ. रक़बा] क्षेत्रफल ।

रकबाहा—संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का घोड़ा ।

रकम—संज्ञा स्त्री. [अ० रक़म] धन-दौलत ।

रकसाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. राकस] राक्षसपन ।

रकाब—संज्ञा स्त्री. [फा.] घोड़े की जीन का पावदान ।

मुहा०—रकाब पर पैर रखे होना—(१) जाने को तैयार होना । (२) जाने की जल्दी मचाना ।

रकार—संज्ञा पुं. [सं.] 'र' का बोधक वर्ण ।

रक्त—संज्ञा पुं. [सं.] खून, लहू, रुधिर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वि.—(१) अनुरक्त, आसक्त। (२) रँगा हुआ। (३) लाल। (४) विलास में लीन।

रक्तकंठ—वि. [सं.] जिसका कंठ लाल हो।
संज्ञा पुं. (१) कोयल। (२) बैंगन, भाँटा।

रक्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] लाली, लालिमा।

रक्तदृग—वि. [सं.] जिसकी आँखें लाल हों।
संज्ञा पुं.—(१)कोकिल। (२) कबूतर।(३)चकोर।

रक्तपात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खून गिरना या बहना। (२) ऐसी लड़ाई कि लड़नेवाले घायल हो जायँ।

रक्तबीज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अनार, दाड़िम। (२) एक राक्षस जो शुंभ और निशुंभ का सेनापति था और जिसके शरीर से रक्त की जितनी बूँदें गिरती थीं, उतने ही राक्षस उत्पन्न हो जाते थे। चंद्रिका ने उसका सब रक्त पान करके उसे मार डाला था।

रक्ताक्त—वि. [सं.] (१) लाल। (२) रक्त-रंजित।

रक्ताभ—वि. [सं.] लाली लिए हुए।

रक्तिम—वि. [सं.] जो लाली लिये हुये हो।

रक्तोपल—संज्ञा पुं. [सं.] लाल (रत्न)।

रक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रक्षक। (२) रक्षा।
संज्ञा पुं. [सं. रक्षस्] राक्षस।

रक्षक—संज्ञा पुं. [सं.] रक्षा करनेवाला।

रक्षण, रक्षन—संज्ञा पुं. [सं. रक्षण] रखवाली।

रक्षना, रक्षनो—क्रि. स. [सं. रक्षण] रक्षा करना।

रक्षस—संज्ञा पुं. [सं. रक्षस्] असुर, निशाचर।

रक्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बचाव, रखवाली। (२) वह यंत्र या सूत्र जो नजर आदि से बचाने के लिए बालकों के बाँधा जाता है। (३) राखी जो रक्षाबंधन के दिन बाँधी जाती है।

रक्षाइद—संज्ञा स्त्री. [हिं. रक्षा + आइद] राक्षसपन।

रक्षाबंधन—संज्ञा पुं. [सं.] हिंदुओं का एक त्योहार जो श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को होता है और जिस दिन ब्राह्मण अन्य वर्गों के या बहनें, भाइयों के अथवा घर का बड़ा छोटों के 'राखी' बाँधता है।

रक्षित—वि. [सं.] जिसकी रक्षा की गयी हो।

रक्षी—संज्ञा पुं. [सं. रक्षिन्] रक्षा करनेवाला।
संज्ञा पुं. [सं. रक्षस्] राक्षसों को पूजनेवाला।

रखना—क्रि. स. [सं. रक्षण, प्रा० रक्खण] (१) धरना, टिकाना, (२) बचाना, रक्षा करना। (३) बिगड़ने या नष्ट न होने देना। (४) एकत्र या संग्रह करना। (५) सौंपना। (६) रेहन करना। (७) अपने अधिकार में करना। (८) पालना। (९) नियुक्त करना। (१०) पकड़ या रोक लेना। (११) चोट पहुँचाना। (१२) टालना, स्थगित करना। (१३) सामने न लाना। (१४) व्यवहार या उपयोग में लाना। (१५) मढ़ना, आरोप करना। (१६) ऋणी होना। (१७) मन में अनुभव करना। (१८) डेरा डलवाना, ठहरा देना। (१९) उपपत्नी या उपपति बनाना। (२०) बचा लेना।

रखनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखना] रखैल, उपपत्नी।

रखनो—क्रि. स. [सं. रक्षण, प्रा. रक्खण] रखना।

रखवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखाना] रखवाली करने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

रखवाना—क्रि. स. [हिं. रखना का प्रे०] रखने की क्रिया दूसरे से कराना।

रखवानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखना] रक्षा, सुरक्षा। उ.—जन्म भयौ जब तें ब्रज हरि को कहा कियौ करि-करि रखवानी—२३७९।

रखवानो—क्रि. स. [हिं. रखना का प्रे०] रखने की क्रिया, दूसरे से कराना।

रखवार, रखवारा—संज्ञा पुं. [हिं. रखवाला] (१) रक्षक। (२) चौकीदार।

रखवारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखवाली] रक्षा, रक्षा करने की क्रिया या भाव। उ.—(क) मन-ममता-रुचि सौं रखवारी पहिलैं लेहु निबेरि—१-५१। (ख) रखवारी को बहुत महाभट दर्न्हें रुक्म पठाई—१० उ०-१९।
संज्ञा पुं.—रक्षक, रखवाला। उ.—धेनुक असुर तहाँ रखवारी—४९९।

रखवारे—संज्ञा पुं. [हिं. रखवाला] रक्षा करने वाले। उ.—(क) येई हैं कुलदेव हमारे। काहूँ नहीं और मैं जानति ब्रज-गोधन रखवारे—८१२। (ख) सिर ऊपर बैठे रखवारे—१०-१०।

रखवारो—संज्ञा पुं. [हिं. रखवाला] रक्षक। उ.—अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को सात दिवस राखैंगो दूरि गयो ब्रज को रखवारी —२८३२।

रखवाला—संज्ञा पुं. [हिं. रखना+वाला] (१) रक्षा करनेवाला। (२) चौकीदार, पहरेदार।

रखवैया—संज्ञा पुं. [हिं. रखना+ऐया] रक्षा करनेवाला, रक्षक। उ.—दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ, जहाँ न कोऊ हो रखवैया—१०-३३५।

रखाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखना+आई] रक्षा करने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

रखाऊ—वि. [हिं. रखना] बहुत दिनों का रखा हुआ।

रखाना, रखानो—क्रि. स. [हिं. 'रखना' का प्रे०] रक्षा या चौकीदारी करने का काम दूसरे से कराना।

क्रि. अ.—रक्षा या रखवाली करना।

रखायौ—क्रि. स. [हिं. रखाना] रक्षा की।

मुहा०—बोल रखायौ—बात रख ली। उ.—तिहिं कारन मैं आइ कै तुव बोल रखायौ—७१६।

रखिया—संज्ञा पुं. [हिं. रखना+इया] रखनेवाला।

रखियाना, रखियानो—क्रि. स. [हिं. राख] राख से मांजना।

रखेल, रखेली, रखैल, रखैली—संज्ञा स्त्री. [हिं. रखना +एल, एली]स्त्री जो बिना विवाह के ही पत्नी की तरह रहे।

रखैया—संज्ञा पुं. [हिं. रखना+ऐया] (१) रखनेवाला। (२) रक्षक।

रग—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] नस या नाड़ी।

मुहा०—रग दबना—दबाव मानना। रग-रग फड़कना—बहुत उत्साह होना। रग-रग में—सारे शरीर में।

रगड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. रगड़ना] (१) रगड़ने की क्रिया या भाव। (२) रगड़ने से बन जानेवाला चिह्न। (३) कड़ी मेहनत।

मुहा०—रगड़ पड़ना—बहुत श्रम उठाना।

रगड़ना, रगड़नो—क्रि. स. [सं. घर्षण] (१) घिसना, घर्षण करना। (२) पीसना। (३) कोई काम बार-बार करना। (४) तंग या परेशान करना।

क्रि. अ.—कड़ी मेहनत करना।

रगड़वाना, रगड़वानो—क्रि. स. [हिं. 'रगड़ना' का प्रे०] रगड़ने का काम दूसरे से कराना।

रगड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. रगड़ना] (१) रगड़ने की क्रिया या भाव। (२) कड़ी मेहनत। (३) बहुत दिन चलनेवाला झगड़ा।

रगण—संज्ञा पुं. [सं.] एक 'गण' जिसमें पहला वर्ण गुरु, दूसरा लघु और तीसरा गुरु होता है (छंदशास्त्र)।

रगत—संज्ञा पुं. [सं. रक्त] खून, रुधिर।

रगमगा, रगमगो—वि. [सं. रंग+मग्न] प्रेमासक्त।

रगर—संज्ञा स्त्री. [हिं. रगड़] रगड़।

रगरा—संज्ञा पुं. [हिं. रगड़ा] रगड़ा।

रग-रेशा—संज्ञा पुं. [फ़ा. रग+रेशा] (१) नस। (२) सूक्ष्म से सूक्ष्म बात।

रगवाना, रगवानो—क्रि. स. [हिं. 'रगाना' का प्रे०] चुप कराना।

रगा—संज्ञा पुं. [देश.] मोर।

रगाना, रगानो—क्रि. अ. [देश.] चुप या शांत होना।

क्रि स.—चुप या शांत करना।

रगी, रगीला—वि. [हिं. रग] (१) जिद्दी। (२) दुष्ट।

रगेद—संज्ञा स्त्री. [हिं. रगेदना] दौड़ने की क्रिया।

रगेदना, रगेदनो—क्रि.स.[हिं. खेदना] भगाना, खदेड़ना।

रघु—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्यवंशी राजा दिलीप के, सुदक्षिणा से उत्पन्न पुत्र जो राजा दशरथ के दादा और राम के परदादा थे।

रघुकुल—संज्ञा पुं. [सं.] राजा रघु का वंश। उ.—हैं केतिक ये तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के भानुहिं—९-९५।

रघुनंद, रघुनंदन—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र।

रघुनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र।

रघुनायक—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र।

रघुपति—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र। उ.—रघुपति रिस पावक प्रचंड अति सीता-स्वाँस समीर—९-१५८।

रघुवंश—संज्ञा पुं. [सं. रघुवंश] महाराज रघु का वंश जिसमें श्रीरामचंद्र जन्मे थे।

रघुवंसी—संज्ञा पुं. [सं. रघुवंशी] महाराज रघु के वंशज। उ.—दसरथ नृपति हुतौ रघुबंसी—१-१८९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रघुबर—संज्ञा पुं. [सं. रघुवर] श्रीरामचंद्र । उ.—जनक-सुता-पति हैं रघुबर-से—९-१४० ।

रघुबीर—संज्ञा पुं. [सं. रघुवीर] श्रीरामचंद्र । उ.—प्रगट्यौ आइ लंक दल कपि कौ फिरी रघुबीर-दुहाई —९-८२ ।

रघुराइ, रघुराई—संज्ञा पुं. [सं. रघुराज] श्रीरामचंद्र ।

रघुराज, रघुराजा—संज्ञा पुं. [सं. रघुराज] श्रीरामचंद्र ।

रघुराय, रघुराया, रघुरैया—संज्ञा पुं. [सं. रघुराज] श्रीरामचंद्र ।

रघुवंश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) महाराज रघु का प्रसिद्ध कुल जिसमें श्रीरामचंद्र जन्मे थे । (२) कालिदास का प्रसिद्ध महाकाव्य ।

रघुवंशकुमार—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र ।

रघुवंशी—संज्ञा पुं. [सं.] महाराज रघु का वंशज ।

रघुवर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र ।

रघुवीर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र ।

रचक—संज्ञा पुं. [सं.] रचना करनेवाला ।

वि. [हिं. रंचक] थोड़ा, जरा सा, तनिक ।

रचन—संज्ञा स्त्री. [हिं. रचना] निर्माण की क्रिया, चातुरी या विधान । उ.—(क) बात बनावन कौं है नीकौ बचन-रचन समुझावै—१-१८६ । (ख) हाव-भाव नैनन सैनन दै बचन-रचन मुख भाषी—१८५६ । (ग) बचन-रचन माधुरी सधर पर कवन कोकिला कूर—२११९ ।

रचना—संज्ञा स्त्री [सं.] (१) बनाने की क्रिया या भाव, बनावट । उ.—(क) प्रभु जी की आरती बनी । अति विचित्र रचना रचि राखी परति न गिरा गनी—२-२८ । (ख) इंद्रलोक-रचना रिषि ठई—९-३ । (ग) बुधि न सकति सेतु रचना रचि राम-प्रताप बिचारत—९-१२३ । (२) निर्माण-कौशल । (३) निर्मित वस्तु । (४) केश-विन्यास । (५) लिखा गया गद्य या पद्य-विशेष ।

क्रि. स. [सं. रचन] (१) बनाना, निर्माण करना । (२) निश्चित करना । (३) ग्रंथ आदि लिखना । (४) उत्पन्न करना । (५) ठानना, अनुष्ठान करना । (६) युक्ति या आयोजन करना । (७) कल्पना करना । (८) सजाना, सँवारना । (९) क्रमानुसार रखना ।

क्रि. स. [सं. रंजन] रँगना ।

क्रि. अ. (१) रँग चढ़ना, रंगा जाना । (२) अ क्त या अनुरक्त होना ।

रचनी—वि. [हिं. रचना] रची हुई, निर्मित । उ.—काल-कर्म-गुन-ओर-अंत नहिं प्रभु इच्छा रचनी—२-२८ ।

रचनो—क्रि. स. [सं. रचन] रचना ।

क्रि. स. [सं. रंजन] रँगना ।

क्रि. अ. (१) रँगा जाना । (२) आसक्त होना ।

रचयिता—संज्ञा स्त्री. [सं. रचयितृ] निर्माण करने, रचने या बनानेवाला ।

रचयो, रचयौ—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाया, तैयार किया । उ.—(क) ग्वाल-सखा सबहीं पय अँचयौ । नीकैं औटि जसोदा रचयौ - ३९६ । (ख) सीतल जल कपूर-रस रचयौ—५१४ ।

रचवाना, रचवानो—क्रि. स. [हिं. 'रचना' का प्रे०] (१) 'रचने' का काम दूसरे से कराना । (२) मेंहँदी, महावर आदि लगवाना ।

रचाऊँ—क्रि. स. [हिं. रचाना] बनाऊँ, निर्मित करूँ । उ.—नव निकुंज बन-धाम निकट इक आनँद-कुटी रचाऊँ—१८५७ ।

रचाना, रचानो—क्रि. स. [सं. रचन] (१) आयोजन या अनुष्ठान करना या कराना । (२) बनवाना ।

क्रि. स. [सं. रंजन] मेंहदी, महावर आदि लगाना ।

रचायो, रचायौ—क्रि. स. [हिं. रचाना] आयोजन या अनुष्ठान किया । उ.—(क) दच्छ प्रजापति जज्ञ रचायौ—४-५ । (ख) ब्रज नर-नारि-ग्वाल-बालक, कहि, कौनैं ठाठ रचायौ—४३६ ।

रचि—क्रि. स. [हिं. रचना] (१) सजा-सँवार कर । उ.—रचि बिरचि मुख-भौंह छबि लै चलति चित्त चुराइ—१-५६ ।

मुहा०—रचि-रचि— (१) बड़ी लगन, प्रेम या ममता से सजा-सँवारकर । उ.—(क) भूषन-बसन आदि सब रचि-रचि माता लाड़ लड़ावै । (ख) केसरि कौ उबटनो बनाऊँ रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ—१०-१८५ । (२) बड़ी कुशलता और चातुरी से बनाकर । रचि-पचि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—(१) बड़ा श्रम करके। (२) गढ़ गढ़कर। उ.—बतियाँ रचि-पचि कहत सयानी—३४४२।

(२) बनाकर, निर्माण करके। उ.—पुनि सबकौ रचि अंड आपु मैं आपु समाए—२-३६। (२) आडंबर रचकर, छद्म वेश बनाकर उ.—बकासुर रचि रूप माया रह्यौ छल करि आइ ४२७। (३) फूल माला या गुच्छ आदि बनाकर। उ.—रचि स्रक कुसुम सुगंध सेज सजि बसन कुमकुमा बोरि—२८१२।

रचित—वि. [सं.] (१) बनाया हुआ, निर्मित। (२) लिखा हुआ, लिखित।

रचियो, रचियौ—क्रि. स. [हिं. रचाना] बनवाया, निर्मित कराया। उ.—लाखा-मंदिर कौरव रचियौ तहँ राखे बनवारी—१-२८२।

रची—वि. [हिं. रंच] थोड़ा, जरा सा।

क्रि. स. [हिं. रचना] (१) सोची, कल्पित की। उ.—तब इक बुद्धि रची अपनैं मन, गए नाँघि पिछवारैं—१०-२७७। (२) अनुरक्त या आसक्त हुई। उ.—देखि जरनि जड़, नारि की, जरति जु पिय कैं संग। चिता न चित फीकौ भयौ रची जु पिय कै रंग—१-३२५। (३) ठानी, निश्चित की। उ.—सूरदास प्रभु रची सु ह्वैहै, को करि सोच मरै—१-२६४।

रचे—क्रि. स. [हिं. रचना] (१) बनाये, निर्मित किये। उ.—रोम-रोम प्रति अंड कोटि रचे—४९७। (२) पैदा या उत्पन्न किये। उ.—बालक बच्छ बनाइ रचे वे ही उनहारी—४९२।

रचै—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाता या निर्मित करता है। उ.—लोक रचै राखै अरु मारै, सो ग्वालनि सँग लीला धारै—१०-३।

रचैगी—क्रि. स. [हिं. रचना] गढ़ लेगी, (नयी बात, उक्ति या बहाना) बता देगी। उ.—बूझत ही कछु बुद्धि रचैगी वड़ी चतुर यह नारि—१५२५।

रचौं—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाऊँ, निर्मित करूँ। उ.—(क) रचौं सृष्टि-विस्तार, भई इच्छा इक औसर—२-३६। (ख) तीन पैग वसुधा दै मोकौं, तहाँ रचौं ध्रमसारी—८-१४।

रचौंहाँ—वि. [हिं. रचना] (१) रचा हुआ। (२) रँगा हुआ। (३) मुग्ध, अनुरक्त।

रचौ—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाओ, निर्मित करो, प्रबंध या आयोजन करो। उ.—लछिमन, रचौ हुतासन भाई—९-१६१।

रच्छ—संज्ञा पुं. [सं. रक्ष] (१) रक्षक। (२) रक्षा।

रच्छक—संज्ञा पुं. [सं. रक्षक] रक्षा करने या बचानेवाला। उ.—(क) कृषि-रच्छक भाइनि तब कीन्हौ—५-३। (ख) नंदघरनि कुल-देव मनावति, तुमहीं रच्छक घरी-पहर के—६०५।

रच्छन—संज्ञा पुं. [सं. रक्षण] (१) रक्षा या रखवाली करना। (२) रक्षक।

रच्छनहार, रच्छनहारा—वि. [सं. रक्षा + हिं. हार, हारा] रक्षा करनेवाला, रक्षक।

रच्छना, रच्छनो—क्रि. स. [सं. रक्षा] रक्षा करना।

रच्छस—संज्ञा पुं. [सं. राक्षस] दैत्य, दानव, असुर।

रच्छा—संज्ञा स्त्री. [सं. रक्षा] बचाव, रक्षण। उ.—(क) जन अर्जुन की रच्छा कारन सारथि भए मुरारी १-२८८। (ख) जिहिं बल बिप्र तिलक दै थाप्यौ, रच्छा करी आप बिदमान—१०-१२७।

रच्यो, रच्यौ—क्रि. स. [हिं. रचना] (१) बनाया, निर्मित किया, गढ़ा। उ.—(क) ससि-तन गारि रच्यौ बिधि आनन बाँके नैननि जोहै—१०-१५८। (ख) द्वारावती कोट कंचन में रच्यो रुचिर मैदान—१० उ०-६। (२) आयोजित किया। उ.—द्वै बालक बैठारि सयाने खेल रच्यौ ब्रज-खोरी—६०४।

रज—संज्ञा पुं. [सं. राजस्] (१) स्त्रियों तथा मादा प्राणियों के योनि-मार्ग से प्रति मास निकलनेवाला रक्त। (२) तीन गुणों में से दूसरा गुण जो काम, क्रोध लोभ आदि का उत्तेजक माना गया है। (३) भक्ति का एक रूप। उ.—माता, भक्ति चारि परकार। सत रज तम गुन सुद्धा-सार—३-१३। (४) पानी, जल। (५) पुष्प का पराग।

संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धूल, गर्द। उ.—(क) सूरज प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह
१०-१११। (ख) संध्या समय साँवरे मुख पर गो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद-रज लपटाए—४१७। (ग) कुंज-कुंज प्रति लोटि-लोटि व्रज-रज लागै रँग-रीतनि—४९०।

मुहा०—रज छानना—(१) इधर-उधर भटकना, मारे-मारे फिरना। (२) व्यर्थ का श्रम करना। उ.—अतिसय सुकृत-रहित अघ व्याकुल वृथा स्रमित रज छानत —१-२०१।

(२) रात। (३) ज्योति।

संज्ञा पुं. [सं. रजत] चाँदी।

संज्ञा पुं. [सं. रजक] धोबी। उ.—मारग मैं इक रज संहारचौ सबहिं बसन हरि लीन्हें।

रजक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) धोबी। उ.—नृपति रजक अंबर नृप धोवत—२५७४। (२) कंस का धोबी जिसकी धृष्टता से खीझकर श्रीकृष्ण ने उसको मार डाला था। उ.—रजक मल्ल चानूर-दवानल-दुख-भंजन सुखदाई—१-१५८।

रज-गज—संज्ञा स्त्री. [हिं. रज+गज (अनु.)] राजसी ठाटबाट।

रजगुन—संज्ञा पुं. [सं. रजोगुण] प्रकृति का वह गुण जिससे काम, क्रोध आदि की उत्पत्ति होती है।

रजतंत—संज्ञा स्त्री. [सं. राजतत्व] शूरता, वीरता।

रजत—संज्ञा स्त्री. [सं.] चाँदी, रूपा।

वि.—सफेद, श्वेत, उज्ज्वल।

रजताइ, रजताई—संज्ञा स्त्री. [सं. रजत+हिं. आई] सफेदी, श्वेतता, उज्ज्वलता।

रजधानी—संज्ञा स्त्री. [सं. राजधानी] (१) वह नगर जहाँ राजा या शासक रहता हो अथवा जो शासन-प्रबंध का केन्द्र हो। उ.—(क) रामचन्द्र दसरथ-सुत ....कहँ तात के पंचवटी बन, छाँड़ि चले रजधानी —१०-१९९। (ख) रत्न जटित पलिका पर पौढ़े बरनि न जाइ कृष्न रजधानी—२३७९। (२) प्रसिद्ध या प्रमुख स्थान। उ.—नंदहिं कहति जसोदा रानी। माटी कैं मिस मुख दिखरायौ, तिहूँ लोक रजधानी—१०-२५६। (३) प्रभु या आराध्य का निवास-स्थान। उ.—अब तौ यहै बात मनमानी। छाँड़ौं नहीं स्याम-स्यामा की वृन्दावन रजधानी—१-८७।

रजना, रजनो—क्रि. अ. [सं. रंजन] रँगा जाना।

क्रि. स. रंग में डुबोना, रँगना।

रजनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रात्रि। (२) हल्दी।

रजनीकर—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

रजनीगंधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक सुगंधित फूल जो रात में फूलता है।

रजनीचर—वि. [सं.] जो रात में घूमता हो।

संज्ञा पुं. (१) राक्षस। (२) चंद्रमा।

रजनीपति—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

रजनीमुख—संज्ञा पुं. [सं.] संध्या, सायंकाल। उ.—(क रजनीमुख आवत गुन गावत नारद तुंबुर नाऊँ —९-१७२। (ख) रजनी-मुख बन तें बने आवत भावति मंद गयंद की लटकनि—६१८।

रजनीश, रजनीस—संज्ञा पुं. [सं. रजनीश] चंद्रमा। उ.—कुटिल हरि-नख हिऐं हरि के हरषि निरखति नारि। ईस जनु रजनीस राख्यौ भाल तैं जु उतारि —१०-१६९।

रजपूत—संज्ञा पुं. [सं. राजपूत] (१) राजपूत। (२) राजस्थान के क्षत्रियों के कुल-विशेष। (३) वीर पुरुष।

रजपूती—संज्ञा स्त्री. [हिं. राजपूत] (१) क्षत्रियपन। (२) वीरता।

रजवंती, रजवती—वि. [सं. रजोवती] रजस्वला।

रजवाड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. राज्य+बाड़ा] (१) राज्य, रियासत। (२) राजा।

रजवार, रजवारा—संज्ञा पुं. [सं. राजद्वार] राज-दरबार, राजसभा।

रजस्वला—वि. स्त्री. [सं.] (स्त्री) जिसका मासिक धर्म चालू हो, ऋतुमती।

रजा—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) मरजी, इच्छा। (२) आज्ञा। (३) स्वीकृति।

रजाइ, रजाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. राजा+आई] (१) राजाज्ञा। (२) आज्ञा, आदेश।

संज्ञा स्त्री. [देश.] हलका लिहाफ।

रजाना, रजानो—क्रि. स. [सं. राज्य] (१) राज्य-सुख का भोग कराना। (२) बहुत सुख से रखना।

रजामंद—वि. [फ़ा. रज़ामंद] राजी, सहमत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजामंदी—वि. [हिं. रजामंद] सहमति, स्वीकृति ।

रजाय—संज्ञा स्त्री. [हिं.राजा] (१) आज्ञा । (२) इच्छा ।

रजायस, रजायसु—संज्ञा पुं. [सं. राजादेश, प्रा. रजाएस] (१) राजा की आज्ञा । (२) आज्ञा । उ.— (क) अब तौ सूर सरन तकि आयौ सोइ रजायसु दीजै—१-२६९ । (ख) मोकौं राम रजायसु नाहीं—९-३२ ।

रजी—क्रि. अ. [हिं. रजना] रँग गयी । उ.—सूर स्याम को मिली चून हरदी ज्यों रंग रजी—११७३ ।

रजु—संज्ञा स्त्री. [सं. रज्जु] रस्सी, जेवरी । उ.—(क) परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस भज्यौ न श्रीपति रानौ —१-४७ । (ख) जसुमति रिस करि-करि रजु करषै —१०-३४२ ।

रजोकुल—संज्ञा पुं. [सं. राजकुल] राजघराना ।

रजोगुण, रजोगुन—संज्ञा पुं. [सं. रजोगुण] प्रकृति के तीन गुणों में से एक जिससे काम, क्रोध, लोभ आदि की उत्पत्ति होती है ।

रजोगुणी, रजोगुनी—वि. [सं. रजोगुण + हिं. ई] जिसके स्वभाव में रजोगुण की प्रधानता हो । उ.—भक्त सात्विकी चाहत मुक्ति । रजोगुनी धन-कुटुंब अनुरक्ति—३-१३ ।

रजोदर्शन—संज्ञा पुं. [सं.] (स्त्री का) रजस्वला या मासिक धर्म से होना ।

रजोधर्म—संज्ञा स्त्री. [सं.] (स्त्री का) मासिक धर्म या रज-प्रवाह ।

रज्जु—संज्ञा स्त्री. [सं.] रस्सी, जेंवरी ।

रज्वा—संज्ञा स्त्री. [सं. रज्जु] रस्सी । उ.—अति बल करि-करि काली हारयौ । .... । अति बलहीन छीन भयौ तिहिं छन देखियत है रज्वा सम डारयौ —५७४ ।

रटंत, रटंती—संज्ञा स्त्री. [हिं. रटना + अंत] रटने की क्रिया या भाव, रटाई ।

रट—संज्ञा स्त्री. [हिं. रटना] किसी शब्द या बात को बार-बार दोहराना । उ.—रहति रैनि दिन हरि-हरि हरि रट—३४६२ ।

रटत—क्रि. स. [हिं. रटना] (१) किसी शब्द या बात को बार-बार दोहराता है । उ.—रटत कृष्न गोबिंद हरि हरि मुरारी—१० उ०-३१ ।

रटति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. रटना] (१) किसी शब्द को बार-बार दोहराती है । उ.—निसि दिन रटति सूर के स्वामिहिं, ब्रज-बनिता देहैं बिसराई—६३९ । (२) बार-बार बजती या शब्द करती है । उ.—पाइ पैंजनि रटति रुनझुन—१०-११८ ।

रटन—संज्ञा स्त्री. [हिं. रटना] रटने की क्रिया या भाव ।

रटना, रटनो—क्रि. स. [अनु.] (१) किसी शब्द या बात को बार-बार कहना । (२) किसी शब्द या वाक्य को कंठाग्र करने के लिए दोहराना । (३) शब्द करना, बजना ।

रटि—क्रि. स. [हिं. रटना] बार-बार कहकर । उ.—सूर सुमिरि सो रटि निसि-बासर, राम-नाम निज सार—१-२३१ ।

रटिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. रटना] रटने की क्रिया या भाव । उ.—राम-नाम नित रटिबौ करै—७-२ ।

रटै—क्रि. स. [हिं. रटना] कहता है, बतलाता है । उ.—होत सो जो रघुनाथ ठटै । .... । चारौं वेद रटै—१-२६३ ।

रठ—वि. [देश.] रूखा, शुष्क ।

रढ़ना, रढ़नो—क्रि. स. [हिं. रटना] (१) बार-बार कहना, रटना । (२) ईर्ष्या या क्षोभ से हूँसना ।

रढ़ै—क्रि. स. [हिं. रढ़ना] (१) रटता है । उ.—मन मैं राम-नाम नित रढ़ै—५-३ । (२) बहकाती है, कहती है । उ.—कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि बढ़ै । .... । पुनि पीवत हीं कच टकटोरत झूठहिं जननि रढ़ै—१०-१७४ ।

रण—संज्ञा पुं. [सं.] लड़ाई, युद्ध ।

संज्ञा पुं. [सं. अरण्य] वन, जंगल ।

रणक्षेत्र—संज्ञा पुं. [सं.] युद्धभूमि ।

रण-चंडी—संज्ञा स्त्री. [सं.] रणक्षेत्र में मार-काट कराने-वाली देवी ।

रणछोड़—संज्ञा पुं. [सं. रण + हिं. छोड़ना] श्रीकृष्ण का एक नाम जो मथुरा पर जरासंध के आक्रमण करने पर भागकर उनके द्वारका चले जाने से पड़ा था ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रणखेत—संज्ञा पुं. [सं. रणक्षेत्र] युद्धभूमि ।

रणधीर—वि. [सं.] युद्ध में धैर्य न छोड़नेवाला । उ. —सुनि भयभीत वज्र के पिंजर सूर सुरति रणधीर—१९०३ ।

रणन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शब्द करना । (२) बजना ।

रण-नाद—संज्ञा पुं. [सं.] युद्ध में योद्धाओं की ललकार या गरज ।

रणभूमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] युद्धभूमि ।

रण-रोज, रण-रोझ—संज्ञा पुं. [सं. अरण्यरोदन] वन या एकान्त में बैठकर रोना जो व्यर्थ होता है ।

रणरंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) युद्ध । (२) युद्धभूमि । (३) युद्ध का उत्साह ।

रणवीर—वि. [सं.] बहुत बड़ा योद्धा ।

रणसिंघा, रणसिंहा—संज्ञा पुं. [सं. रण+हिं. सिंह] तुरही बाजा ।

रण-स्तंभ—संज्ञा पुं. [सं.] विजय-स्मारक ।

रणांगण—संज्ञा पुं. [सं.] युद्धक्षेत्र ।

रत—वि. [सं.] (१) (कार्य में) लीन या तत्पर । उ.—परमारथ सौं बिरत बिषय-रत भाव-भगति नाहिनैं कहुँ जानीं—१-१४९ । (२) आसक्त, अनुरक्त ।

रतजगा—संज्ञा पुं. [हिं. रात+जागना] (१) रात भर जागना । (२) किसी उत्सव आदि के अवसर पर रात भर जागना । (३) रात भर चलनेवाला आनंदोत्सव ।

रतन—संज्ञा पुं. [सं. रत्न] रत्न, मणि । उ.—(क) हय गय-रतन-हेम पाटंवर आनन्द-मंगलचारा—१०-४ । (ख) दोउ भैया मिलि खात एक सँग रतन-जटित कंचन की थारी—१०-२८८ ।

रतनकर, रतनगर—संज्ञा पुं. [सं. रत्नाकर] समुद्र ।

रतनाइ, रतनाई—संज्ञा स्त्री. [सं. रक्त, हिं. राता] लाली ।

रतनाकर, रतनागर—संज्ञा पुं. [सं. रत्नाकर] समुद्र ।

रतनार, रतनारा—वि. [सं. रत्न] कुछ-कुछ लाल ।

रतनारी—संज्ञा पुं. [हिं. रतनार] एक तरह का धान ।

वि. स्त्री.—कुछ-कुछ लाल ।

संज्ञा स्त्री.—लाली, लालिमा ।

रतनारे—वि. पुं. बहु.[हिं. रतनारा] कुछ-कुछ लाल । उ. —(क) काजर हाथ भरौ जनि मोहन ह्वैहैं नैना अति रतनारे–१०-१६० । (ख) सूर-स्याम सुखदायक लोचन दुखमोचन लोचन रतनारे —२१३२ ।

रतनालिया—वि. [हिं. रतनारा] कुछ-कुछ लाल ।

रतनावली—संज्ञा स्त्री. [सं. रत्नावली] रत्न-समूह ।

रतमुँहाँ—वि. [सं. रक्त+हिं. मुँह] लाल मुँहवाला ।

रताना, रतानो—क्रि. अ. [सं. रत+आना] रत होना ।

क्रि. स.—किसी का ध्यान अपनी ओर लगाना ।

रतालू—संज्ञा पुं. [सं. रक्तालु] पिंडालू नामक तरकारी । उ.—सुंदर रूप रतालू रातो—२३२१ ।

रति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दक्ष प्रजापति की पुत्री जो कामदेव की पत्नी थी । उ.—वह रति, तुम रतिनाथ हो—२०१२ । (२) काम-क्रीड़ा, संभोग । उ.—(क) पर-तिय-रति अभिलाप निसा-दिन मन-पिटरी लै भरतौ—१-२०३ । (ख) स्वान संग सिंहिनि-रति अजुगुत वेद बिरुद्ध असुर करै आइ—१० उ० -१० । (३) प्रेम, प्रीति । उ.—(क) मीन बियोग न सहि सकै, नीर न पूछै बात । देखि जु तू ताकी गतिहिं, रति न घटै तन जात—१-३२५ । (ख) रति बाढ़ी गोपाल सौं—८०४ । (ग) मधुपुरी की जुवति सब कहति अति रति भरी, देरौ री देखौ अंग अंग की लोनाई—२५९६ । (४) स्नेह, वात्सल्य । उ.—(क) बेद-कमल-मुख परसति जननी अंक लिए सुत रति करि स्याम—१०-१५७ । (ख) माखन माँगि लियौ जसुमति सौं । माता सुनत तुरत लै आई लगी रखावन रति सौं—१०-३१२ । (५) मोह-ममता । उ.—सुत-संतान-स्वजन-बनिता-रति घन समान उनई—१-५० । (६) छवि, शोभा । (७) शृंगार रस का स्थायी भाव ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रात] रात्रि, निशा ।

रतिक—क्रि. वि. [हिं. रत्ती+क] थोड़ा, जरा सा ।

रतिकर—वि. [सं.] प्रेम या आनंद बढ़ानेवाला ।

रतिज—वि. [सं. रति+ज] रति या संभोग से उत्पन्न (रोग आदि) ।

रतिदान—संज्ञा पुं. [सं.] संभोग, मैथुन । उ.—कह्यौ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्रमिष्ठा अवसर पाइ, रति की दान देहु मोहिं राइ —९-१७४।

रतिनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—वह रति, तुम रतिनाथ हौ, हम कैसे भावैं—२०१२।

रतिनायक—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

रतिनाह—संज्ञा पुं. [सं. रतिनाथ] कामदेव।

रतिपति—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—मुनि-मन हरत जुवति-जन केतिक, रतिपति-मान जात सब खोइ—१०-२१०।

रतिप्रिय—वि. [सं.] अत्यन्त कामी, कामुक।

रति-प्रीता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नायिका जिसे प्रिय का चिंतन और ध्यान ही रुचिकर हो।

रतिभवन, रति-भौन—संज्ञा पुं. [सं. रति+भवन] केलि-गृह जहाँ रति-क्रीड़ा की जाय।

रति-मंदिर—संज्ञा पुं. [सं.] केलिगृह।

रतियाना, रतियानो—क्रि. अ. [सं. रति] अनुरक्त या आसक्त होना।

रतिरमण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामदेव। (२) मैथुन।

रतिराइ, रतिराई—संज्ञा पुं. [सं. रतिराज] कामदेव।

रतिराज, रतिराजा—संज्ञा पुं. [सं. रतिराज] कामदेव।

रतिवंत—वि. [सं. रति+हिं. वंत] सुन्दर (पुरुष)।

रतिवर—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

रती—संज्ञा स्त्री. [सं. रति] (१) कामदेव की पत्नी, रति। (२) छवि, शोभा। (३) संभोग, मैथुन। (४) प्रेम, प्रीति।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रत्ती] घुँघुची, गुंजा।

वि.—थोड़ा, कम।

क्रि. वि.—जरा सा, रत्ती भर।

रतोपल—संज्ञा पुं. [सं. रक्तोत्पल] लाल कमल।

रतौंधी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रात+अंधा] रात में दिखायी न देने का रोग।

रतौहाँ—वि. [हिं. रत] किसी की ओर अनुरक्त होने की प्रवृत्तिवाला।

रत्त—संज्ञा पुं. [सं. रक्त] खून, रुधिर।

रत्ती—संज्ञा स्त्री. [सं. रक्तिका, प्रा० रत्तीय] (१) घुँघुची का दाना, गुंजा। (२) तौल का एक बहुत छोटा मान जो घुँघुची के दाने से तौला जाता है।

मुहा०—रत्ती भर—बहुत थोड़ा सा।

संज्ञा स्त्री. [सं. रति] छवि, शोभा।

रत्थी—संज्ञा स्त्री. [सं. रथ] शव की अरथी।

रत्न—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मणि, नग, नगीना। (२) लाल, मानिक, माणिक्य। (३) सर्वश्रेष्ठ वस्तु या व्यक्ति।

रत्नगर्भ—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

रत्नगर्भा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी, वसुंधरा।

रत्नसू—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी।

रत्ना—संज्ञा स्त्री. [सं.] राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा, किन हार चुरायो। ....। रत्ना कुमुदा मोहा करुना ललना लोभा नूप—१५८०।

रत्नाकर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) समुद्र। (२) रत्न-समूह।

रत्नावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] मणिमाला।

रथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन सवारी, स्यंदन। उ.—देख री आजु नैन भरि हरि जू के रथ की सोभा—२५६६। (२) शरीर जो आत्मा का रथ है।

रथयात्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] हिंदुओं का एक पर्व जो आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को होता है। इसमें जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा जी की मूर्तियाँ रथ पर चढ़ाकर निकाली जाती हैं। 'पुरी' में यह उत्सव बहुत धूमधाम से होता है।

रथवान—संज्ञा पुं. [सं. रथवान्] सारथी।

रथवारे—वि. [सं. रथ+हिं. वाला] रथ पर चढ़ने योग्य, रथी। उ.—पीवौ छाँछ अघाइ कै, कब के रथवारे—१०२३८।

रथवाह—संज्ञा पुं.[सं.रथवाह](१) सारथी। (२) घोड़ा।

रथवाहक—संज्ञा पुं. [सं.] सारथी।

रथसूत—संज्ञा पुं. [सं.] सारथी।

रथांग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रथ का पहिया। (२) चक्र।

रथिक, रथी—संज्ञा पुं. [सं. रथिन्] (१) रथ पर चढ़कर चलने वाला। (२) रथ पर चढ़कर लड़नेवाला जो एक हजार योद्धाओं से अकेला लड़ सके।

वि.—रथ पर सवार।

संज्ञा स्त्री. [सं. रथ] शव की टिकठी, अरथी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रथ्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाली, नाबदान ।

रद—संज्ञा पुं. [सं.] दाँत, दशन ।

वि. [अ०] (१) खराब । (२) फीका, हीन ।

रदच्छद, रदछद—संज्ञा पुं. [सं. रदच्छद] ओंठ । उ. नासा की मुकता रदछद पर—१०-९३ ।

संज्ञा पुं [सं. रदक्षत] रति-प्रसंग में कपोल, स्तन आदि पर दांत के काटने से बन जानेवाला चिह्न ।

रदन—संज्ञा पुं. [सं.] दाँत, दशन ।

रदनच्छद, रदनछद—संज्ञा पुं. [सं. रदनच्छद] ओंठ ।

रदनी—वि. [सं. रदनिन्] दाँतवाला । उ.—चिबुक मध्य मेचक रुचि राजति बिंदु कुंद रदनी—पृ० ३१६ (५४) ।

संज्ञा पुं.—हाथी ।

रदपट—संज्ञा पुं. [सं.] ओंठ, अधर ।

रद्द—वि. [अ.] (१) जो काट-छांट करके निकाल या बदल दिया गया हो । (२) खराब, निकम्मा ।

रद्दा संज्ञा पुं. [देश.] (१) तह । (२) गिराकर रगड़ते हुए आघात करना ।

रद्दी—वि. [फ़ा. रद] निकम्मा, बेकार ।

संज्ञा स्त्री.—बेकार की चीजें ।

रन—संज्ञा पुं. [सं. रण] लड़ाई, युद्ध । उ.—(क) गहि सारँग रन रावन जीत्यौ, लंक बिभीषन फिरी दुहाई —१-२४ (ख) आजु अति कोपे हैं रन राम–९-५८ ।

संज्ञा पुं. [सं. अरण्य, प्रा० रन्न] बन, जंगल ।

रनकना, रनकनो—क्रि. अ. [सं. रणन] घुंघरू बजना ।

रनखेत—संज्ञा पुं. [सं. रणक्षेत्र] युद्धभूमि । उ.—अमृत की वृष्टि रन-खेत ऊपर करी—९-१६३ ।

रनछोर—संज्ञा पुं. [सं. रणछोड़] श्रीकृष्ण का वह नाम जो जरासंध के आक्रमण करने पर उनके द्वारका भाग जाने पर पड़ा था ।

रनधीर—वि. [सं. रणधीर] भयंकर युद्ध में भी धैर्यपूर्वक डटा रहनेवाले । उ.—रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर—९-५८ ।

रनना, रननो—क्रि. अ. [सं. रणन] बजना, झनकारना ।

रनबंका, रनबाँकुरा—वि. [सं. रण+हिं. बाँका] वीर ।

रनरोर—वि. [सं. रण] शूर, वीर ।

संज्ञा पुं.— युद्ध का कोलाहल ।

रनवादी—वि. [सं. रण+हिं. वादी] शूर, वीर ।

रनवास—संज्ञा पुं. [हिं. रानी+वास] अंतःपुर ।

रनसाजी—संज्ञा स्त्री.[सं.रण+फ़ा साजी]लड़ाई छेड़ना ।

रनित—वि. [हिं. रनना] बजता या झनकार करता हुआ । उ.—चरन रनित नूपुर-धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल—१०-११४ ।

रनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. रानी] रानी । उ.—चकित भई नँद-रनियाँ—१०-८३ ।

रनिवास—संज्ञा पुं. [हिं. रानी+वास] रानियों के रहने का स्थान, अंतःपुर ।

रनी—संज्ञा पुं. [सं. रण+हिं. ई] वीर, योद्धा ।

रपट—संज्ञा स्त्री. [हिं. रपटना] (१) रपटने की क्रिया या भाव । (२) दौड़ । (३) उतार, ढाल ।

रपटत—क्रि. अ. [हिं. रपटना] फिसलता है । उ.—आली, रपटत पग नहिं ठहरात—पृ. ३१४ (४६) ।

रपटना, रपटनो—क्रि. अ. [सं. रफन] (१) फिसलना । (२) झपट कर चलना ।

क्रि. स.—कोई काम चटपट कर डालना ।

रपटाना, रपटानो—क्रि. स. [हिं. रपटना] (१) फिसलाना । (२) फिसलवाना । (३) किसी से चटपट काम कराना । (४) दौड़ाना ।

रपटीला—वि. [हिं. रपटना+ईला] जहाँ पैर रपट जाय ।

रपट्टा—संज्ञा पुं. [हिं. रपटना] (१) फिसलाहट । (२) दौड़-धूप । (३) झपट्टा, चपेट ।

रफा—वि. [अ. रफ़ा] (१) समाप्त या पूरा किया हुआ । (२) दबाया हुआ, शांत ।

रब—संज्ञा पुं. [अ.] परमेश्वर ।

रबकत—क्रि. अ. [हिं. रबकना] लपकता है । उ.—नैन मीन सरवर आनन मैं चंचल करत बिहार । मानौं कर्नफूल चारा कौ रबकत बारंबार ।

रबकना, रबकनो—क्रि. अ. [हिं. रबकना] (१) लपकना, तेजी से बढ़ना । (२) उमगना, उछलना ।

रबकि—क्रि. अ. [हिं. रबकना] (१) लपक-लपककर । उ.—(क) परम सनेह बढ़ावत मातनि रबकि रबकि हरि बैठत गोद—१०-११९ । (ख) लीने बसन देखि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊँचे द्रुम रबकि चढ़नि बलबीर की—३३०३। (२) उमगकर। उ.—यह अति प्रबल स्याम अति कोमल रबकि-रबकि उर परते।

रबड़ना, रबड़नो—क्रि. स. [सं. वर्त्तन, प्रा. वट्टन] (१) चलाना। (२) (कलछी से) फेंटना।

रबड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रबड़ना] एक मिठाई जो दूध को खूब गाढ़ा करके लच्छेदार बनाकर तैयार की जाती है, बसौंधी।

रबदा—संज्ञा पुं. [हिं. रबड़ना] कीचड़।

मुहा०—रबदा पड़ना—खूब पानी बरसना।

रबाना—संज्ञा पुं. [देश.] छोटा डफ (बाजा)।

रबाब—संज्ञा पुं. [अ.] एक बाजा जिसमें सारंगी की तरह तार लगे होते हैं। उ.—ताल मुरज रबाब वीना किन्नरी रस-सार—पृ. ३४६ (४५)।

रबाबी—वि. [हिं. रबाब] रबाब बजानेवाला।

रबी—संज्ञा स्त्री. [अ. रबीअ] (१) वसंत ऋतु। (२) फसल जो वसंत में काटी जाती है।

रब्त—संज्ञा पुं. [अ.] (१) अभ्यास। (२) मेल।

यौं०—रब्त-जब्त—मेल-जोल।

रब्ब—संज्ञा पुं. [अ. रब] परमेश्वर।

रभस—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वेग। (२) प्रसन्नता। (३) उमंग। (४) खेद। (५) पछतावा।

रमक—संज्ञा पुं. [सं.] प्रेमी, प्रेमपात्र।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रमकना] झोंका, झकोरा।

संज्ञा स्त्री. [अ. रमक़] (१) अंतिम श्वांस। (२) हल्का प्रभाव। (३) नशे का थोड़ा असर।

रमकत—क्रि. अ. [हिं. रमकना] झूलता या पेंग मारता है। उ.—कबहुँक निकट देखि बर्षा रितु झूलत सुरंग हिंडोरे। रमकत झमकत जनक-सुता-सँग हरष-भाव चित चोरे—सारा. ३१०।

रमकना, रमकनो—क्रि. अ. [हि. रमना] (१) झूलना, पेंग मारना। (२) इतराते या झूमते हुए चलना।

रमण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विलास, क्रीड़ा। (२) मैथुन, संभोग। (३) घूमना, विचरना। (४) पति।

वि.—(१) सुन्दर (२) प्रिय। (३) रमनेवाला।

रमणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नारी। (२) सुन्दरी।

रमणीक—वि. [सं. रमणीय] सुन्दर, मनोहर।

रमणीय—वि. [सं] सुंदर, मनोहर।

रमणीयता—संज्ञा स्त्र. [सं.] सुन्दरता।

रमत—क्रि. अ. [हिं. रमना] घूमता या विचरता है। उ.—बिबुधनि मन तर मान रमत ब्रज—१०-१२०।

रमता—वि. [हिं. रमना] घूमने-फिरनेवाला।

रमन—संज्ञा पुं. [सं. रमण] (१) विलास, केलि। (२) संभोग, मैथुन। (३) घूमना। (४) पति।

रमना—संज्ञा पुं. [सं. आराम] (१) चरागाह। (२) घेरा, हाता। (३) बाग, वाटिका। (४) रमणीक स्थान।

रमना, रमनो—क्रि. अ. [सं. रमण] (१) सुख-विलास के लिए ठहरना या रहना। (२) संभोग या रति-क्रीड़ा करना। (३) आनंद करना, मजा उड़ाना। (४) चारों ओर व्याप्त होना। (५) अनुरक्त होना। (६) आस-पास घूमना, लगे लगे फिरना। (७) गायब या लुप्त हो जाना। (८) आनंद-पूर्वक विचरना।

रमनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रमणी] सुंदरी नारी।

रमनीक—वि. [सं. रमणीक] सुंदर, मनोहर। उ.—अति रमनीक कदंब छाँह-रुचि परम सुहाई—४९२।

रमनीय—वि. [सं. रमणीय] सुंदर, मनोहर।

रमल—संज्ञा पुं. [अ.] एक प्रकार का ज्योतिष।

रमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] लक्ष्मी। उ.—(क) यह सीता जो जनक की कन्या, रमा आपु रघुनंदन-रानी—९-११६। (ख) कामधेनु सुरतरु सुख जितने रमा सहित बैकुंठ भुलावत—४४९।

रमाइ, रमाई—क्रि. स. [हिं. रमाना] रचाकर, आयोजित करके।

मुहा०—रास रमाइ—रास रचाकर। उ.—(क) षट-दस सहस गोपिका बिलसत बृंदाबन रस रास रमाइ—४९७। (ख) करौं पूरन काम तुम्हरौ सरद रास रमाई—७९६। (ग) सूर स्याम बन बेनु बजावत चित हित रास रमाई—पृ. ३३९ (८३)।

रमाकांत—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु। उ.—रमाकांत जासु को ध्यायो—१८६०।

रमानरेश, रमानरेस—संज्ञा पुं. [सं. रमा+नरेश] विष्णु। उ.—जाय पताल बाट गहि लीन्हीं धरनी रमानरेस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रमाना, रमानो—क्रि. स. [हिं. 'रमना' का सक०] (१) मुग्ध या अनुरक्त करना, लुभाना। (२) अपने अनुकूल करना। (३) रोकना या ठहरा लेना। (४) रचना, आयोजित करना।

मुहा०—रास रमाना—रास रचाना। भभूत या विभूति रमाना—(१) शरीर में भस्म पोतना। (२) संन्यास लेना। मन रमाना—मन बहलाना।

रमानिवास—संज्ञा पुं. [सं. रमा+निवास] विष्णु।

रमापति—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु। उ.—छुद्र पतित तुम तारि रमापति अब न करौ जिय गारौ—१-१३१।

रमारमण—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु।

रमावति—क्रि. स. [हिं. रमाना] मुग्ध या अनुरक्त करती है, लुभाती है। उ.—गोरस मथत नाद इक उपजत किंकिनि-धुनि सुनि स्रवन रमावति—१०-१४९।

रमावै—क्रि. स. [हिं. रमाना] रचता या आयोजित करता है। उ.—जाकी महिमा कहत न आवै, सो गोपिन सँग रास रमावै—१०-३।

रमित—वि. [हिं. रमना] मुग्ध, लुभाया हुआ।

रमूज—संज्ञा स्त्री. [अ. रमूज़] (१) संकेत। (२) भेद।

रमेश—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु।

रमेसरी—संज्ञा स्त्री. [सं. रामेश्वरी] लक्ष्मी।

रमनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रामायण] कबीर के बीजक का वह भाग जो दोहे-चौपाइयों में है।

रमैया—संज्ञा पुं. [हिं. राम] (१) राम। (२) ईश्वर।

रम्माल—वि. [अ.] रमल जाननेवाला।

रम्य—वि. [सं.] सुंदर, मनोहर।

रम्हाना, रम्हानो—क्रि. अ. [सं. रँभण] गाय का रँभाना।

रय—संज्ञा पुं. [सं. रज] धूल, गर्द, खेह।

संज्ञा पुं. [सं.] (१) वेग। (२) प्रवाह।

रयन—संज्ञा स्त्री. [सं. रजनी, प्रा. रयणी] रात।

रयना—क्रि. स. [सं. रंजन] रंग से भिगोना।

क्रि. स.—(१) अनुरक्त होना। (२) मिलना।

क्रि. स. [सं. रवण] (१) शब्द उत्पन्न करन। (२) कहना, बोलना।

रयनि, रयनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रजनी, प्रा. रयणी] रात।

रयनो—क्रि. स. [सं. रंजन] रंग से भिगोना।

क्रि. अ. (१) अनुरक्त होना। (२) मिलना।

क्रि. स. [सं. रवण] (१) शब्द उत्पन्न करना। (२) बोलना, कहना।

रय्यत—संज्ञा स्त्री. [अ. रअ़य्यत] प्रजा।

ररंकार—संज्ञा पुं. [सं. रकार] 'रकार' की ध्वनि।

रर—संज्ञा स्त्री. [हिं. ररना] रट, रटन।

ररक—संज्ञा स्त्री. [अनु.] कसक, टीस।

ररकना, ररकनो—क्रि. अ [अनु.] कसकना, सालना।

ररना, ररनो—क्रि. अ. [सं. रटना, प्रा. रड़ना] रटना।

ररिहा—संज्ञा पुं. [हिं. ररना+हा] (१) रट लगानेवाला। (२) रट या धुन लगाकर माँगनेवाला।

ररे—क्रि. अ. [हिं. ररना] बार-बार बोले। उ.—मनु बरषत मास असाढ़ दादुर-मोर ररे—१०-२४।

ररै—क्रि. अ. [हिं. ररना] बार-बार कहे। उ.—कब नंदहिं बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै—१०-७६।

ररा—वि. [हिं. रार] झगड़ालू।

संज्ञा पुं. [हिं. ररना] (१) गिड़गिड़ाकर माँगनेवाला। (२) अधम, नीच।

रलना, रलनो—क्रि. अ. [सं. ललन] मिल जाना।

यौ०—रलना-मिलना, रलनो-मिलनो—मिल-जुल कर एक हो जाना।

रलाना, रलानो—क्रि. स. [हिं. 'रलना' का सक.] मिलाना-जुलाना, सम्मिलित करना।

रलिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. रली] (१) क्रीड़ा। (२) आनंद।

रलिहैं—क्रि. अ. [हिं. रलना] विलास-विहार या आमोद-प्रमोद करेंगे। उ.—भाव ही कह्यो मन भाव दृढ़ राखिबो दै सुख तुमहिं सँग रंग रलिहैं—२०५६।

रली—क्रि. अ. [हिं. रलना] मिल गई, सम्मिलित हो गई। उ.—चली पीठि दै दृष्टि फिरावति अँग-अँग आनंद रली—७३९।

संज्ञा स्त्री. [सं. ललन] आनंद, प्रसन्नता। उ.—विविध कियो ब्याह बिधि बसुदेव मन उपजी रली—१० उ०-२४।

रल्ल—संज्ञा पुं. [हिं. रेला] हल्ला, कोलाहल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ध्वनि, गुंजार। (२) आवाज, शब्द। (२) शोर, कोलाहल, हल्ला।

संज्ञा पुं. [सं. रवि] सूर्य, रवि।

रवकत—क्रि. अ. [हिं. रवकना] लपकता है। उ.—नैन मीन सरवर आनन मैं चंचल करत बिहार। मानौं कर्नफूल चारा के रवकत बारंबार।

रवकना, रवकनो—क्रि. अ. [हिं. रमना] (१) लपककर चलना, दौड़कर बढ़ना। (२) उमगना, उछलना।

रवकि—क्रि. अ. [हिं. रवकना] (१) लपककर। उ.—(क) परम सनेह बढ़ावत मातनि रवकि-रवकि हरि बैठत गोद—१०-११९। (ख) लीने बसन देखि ऊँचे द्रुम रवकि चढ़नि बलबीर की—३३०३। (२) उमगकर। उ.—यह अति प्रबल स्याम अति कोमल रवकि-रवकि उर परते।

रवणरेती—संज्ञा स्त्री. [सं. रमण + हिं. रेती] गोकुल के निकट यमुना-तट की वह रेतीली भूमि जहाँ श्रीकृष्ण ग्वाल-बालों के साथ खेलते थे।

रवताइ, रवताई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रावत + आई] (१) राजा होने का भाव। (२) प्रभुत्व, स्वामित्व।

रवन—संज्ञा पुं. [सं. रमण] पति। उ.—(क) भवन रवन सबही बिसरायौ—७६५। (ख) भवन-रवन की सुधि न रही तनु सुनत सब्द वह कान—पृ० ३३७ (७२)।

वि.—रमण करनेवाला। उ.—कर जोरि बिनती करै, सुनहु न हो रुकमिनी-रवन—१-१८०।

रवनवै—क्रि. अ. [हिं. रवना] रमण करता है, रमण कर सकता है। उ.—नँदनंदन बहु रवनि रवनवै, यहै जानि बिसरायौ—१६५८।

रवना—क्रि. अ. [हिं. रमना] भोग-विलास करना।

क्रि. अ. [हिं. रव] शब्द करना, बोलना।

रवनि, रवनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रमणी] (१) पत्नी, भार्या। उ.—भूप अनेक बंदि तैं छोरे राज-रवनि जस अति विस्तारौ—१-१७२। (२) रमणी, सुन्दरी नारी। उ.—नंदनंदन बहु रवनि रवनवै—१६५८।

रवनो—क्रि. अ. [हिं. रमना] रमण करना।

क्रि. अ. [हिं. रव] बोलना, कहना।

रवन्ना—संज्ञा पुं. [फ़ा. रवाना] कागज, जिस पर भेजे गये माल का ब्योरा लिखा हो।

रवाँ—वि. [फ़ा.] अभ्यस्त।

रवा—संज्ञा पुं. [सं. रज, प्रा. रअ] (१) कण, दाना। (२) सूजी (आटा)।

रवाज—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] प्रथा, परिपाटी।

रवादार—वि. [फ़ा. रवा + दार] संबंध रखनेवाला।

रवानगी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] चलना, प्रस्थान।

रवाना—वि. [फ़ा.] भेजा हुआ।

क्रि. स. [हिं. रमाना] रमाना।

रवि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूर्य। उ.—(क) घट उपजै बहुरौ नसि जाइ, रवि-ससि रहैं एकहीं भाइ—३-१३। (ख) रवि बहु चढ़्यौ, रैनि सब निघटी—४०७। (२) मदार का पेड़। (३) अग्नि।

रवि-कर—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्य की किरण।

रविकुल—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्यवंश।

रविचंचल—संज्ञा पुं. [सं.] काशी का 'लोलार्क' तीर्थ।

रवि-तनय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यम। (२) शनि। (३) सुग्रीव। (४) कर्ण। (५) अश्विनीकुमार।

रवि-तनया—संज्ञा स्त्री. [सं.] सूर्य की पुत्री, यमुना नदी। उ.—गए स्याम रवि-तनया कैं तट ६७२।

रवितनुजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] यमुना।

रविनंद, रविनंदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। उ.—रविनंदन जब मिले राम को अरु भेंटे हनुमान। अपनी बात कही उन हरि सौं बालि बड़ो बलवान—सारा. २७४। (३) शनि। (४) यमराज। (५) अश्विनीकुमार।

रविनंदिनि, रविनंदिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रविनंदिनी] यमुना।

रविपुत्र, रविपूत—संज्ञा पुं. [सं. रविपुत्र] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। (३) शनि। (४) यम। (५) अश्विनीकुमार।

रविबंसी—वि. [सं. रवि + वंश] सूर्यवंश का, सूर्यवंशी। उ.—रविबंसी भयौ रैवत राजा—९-४।

रविबिंब—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्यमंडल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रविमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] वह लाल गोला जो सूर्य के चारो ओर दिखायी देता है ।

रविवंश—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्यकुल ।

रविवंशी—वि. [सं.] सूर्यकुल से संबंधित ।

रविवाण—संज्ञा पुं. [सं.] ऐसा तीर जिससे सूर्य-जैसा प्रकाश निकलता हो ।

रविवार—संज्ञा पुं. [सं.] शनिवार और सोमवार के बीच का दिन, इतवार । उ.—फागुन बदि चौदस सुभ दिन औ' रविवार सुहायौ ।

रविवासर—संज्ञा पुं. [सं.] रविवार ।

रविसुअन, रविसुवन—संज्ञा पुं. [सं. रवि+सूनु] (१) कर्ण । (२) सुग्रीव । (३) शनि । (४) यम । (५) अश्विनीकुमार ।

रविसुत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कर्ण । (२) सुग्रीव । (३) शनि । (४) अश्विनीकुमार । (५) यमराज । उ.—कीजै लाज सरन आए की रवि-सुत-त्रास निवारी—१-१११ ।

रविसूनु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कर्ण । (२) सुग्रीव । (३) शनि । (४) यमराज । (५) अश्विनीकुमार ।

रवी—संज्ञा पुं. [सं. रवि] सूर्य । उ.—कुंडल बिराजत गंड मंडल नहीं सोभा रवी-ससी—पृ. ३४५ (२) ।

रवैया—संज्ञा पुं. [फ़ा. रवाँ] चाल-चलन, तौर-तरीका ।

रशना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) करधनी । (२) कमर-पेटी ।

संज्ञा स्त्री. [सं. रसना] जीभ, जिह्वा ।

रश्क—संज्ञा पुं. [फ़ा.] डाह, ईर्ष्या ।

रश्मि—संज्ञा पुं. [सं.] किरण ।

रस—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छह प्रकार के स्वाद—मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय, स्वाद । उ.—(क) ज्यौं गूँगैं मीठे फल कौ रस अंतरगत ही भावै—१-२ । (ख) छहौं रस जौ धरौं आगैं, तउ न गंध सुहाइ—१-५६ । (२) छह की संख्या । (३) पदार्थ का सार, तत्व । (४) साहित्य के पठन-पाठन से होने वाली चित्त की वह लोकोत्तर स्थिति जो जाग्रत स्थायी भाव के विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से पुष्ट होने पर होती है; ये रस नौ माने गये हैं—श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत । कुछ आचार्य 'शांत' को रस नहीं मानते तो कुछ 'वात्सल्य' को दसवाँ और 'भक्ति' को ग्यारहवां रस मानते हैं । (५) नौ की संख्या । (६) मजा, सुख, आनंद । उ.—(क) भ्रम-मद-मत्त, काम-तृष्णा-रस-वेग न क्रमै गह्यौ—१-४९ । (ख) पर-निंदा रसना के रस करि केतिक जनम बिगोए—१-५२ । (ग) मगन भयौ माया-रस-लंपट—१-९८ । (घ) सुत-तनया-बनिता-बिनोद-रस इहिं जुर-जरनि जरायौ—१-१५४ ।

मुहा०—रस बींधना—मजा आने की स्थिति होना, मजे की झोंक में होना । रस बींधि—मजे की झोंक में । उ.—ज्यौं कुजुवारि रस बींधि हारि गथ सोचतु पटकि चिती—१० उ०-२०३ । रस भीजना या भीनना—(१) मजा या आनंद आने लगना । (२) युवावस्था का आरम्भ होना । रस भीन्यौ—सुख या आनंद मानने-समझने लगा । उ.—सूरदास स्वामी-पन तजिकै सेवकपन रस भीन्यौ—८-१५ ।

(७) प्रेम, प्रीति, अनुराग ।

यौ०—रस-रंग—(१) प्रेम का सुख । (२) विलास-विहार का सुख । रस-रीति—(१) प्रीति की स्थिति में प्रेमी-प्रेमिका का पारस्परिक व्यवहार । (२) मित्रता का व्यवहार । उ.—और को जानै रस की रीति । कहाँ हौं दीन कहाँ त्रिभुवनपति मिले पुरातन प्रीति ।

(८) काम-क्रीड़ा, भोग-विलास । उ.—(क) सुत कुबेर के मत्त मगन भए बिषै रस नैननि छाए हो—१-७ । (ख) बालापन खेलत ही खोयौ, जुवा विषय-रस मातैं—१-११८ । (९) उमंग, जोश । (१०) गुण, विशेषता । (११) किसी प्रकार या विषय का आनंद । उ.—(क) जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावैं, सो रस गोकुल गलिनि बहावै—१०-३ । (ख) जो रस नंद-जसोदा बिलसत सो नहिं तिहूँ भुवनिया—१०-२३८ । (१२) कोई तरल या द्रव पदार्थ । (१३) पानी, जल । (१४) फल या वनस्पति का जलीय अंश । (१५) शरबत । (१६) धातुओं की भस्म । (१७) आनंदस्वरूप ब्रह्म । (१८) भांति, प्रकार, रूप । उ.—(क) जहँ बिधु-भानु समान एक रस सो बारिज सुख रास—१-३३८ । (ख) ज्ञानी सदा एक रस जानै । तन कै भेद भेद नहिं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानै—५-४। (१९) मन की तरंग, मौज। उ.—सर्वस रीझि देत अपने रस सूर स्याम गुन गाये—१० उ०-३८। (२०) भाव। उ.—भ्रुव सुंदर करुना रस पूरन—१०-१०४।

रसकोर, रसकौर, रसकौरा—संज्ञा पुं. [हिं. रस+कौर] रसगुल्ला।

रसगुनी—वि. [सं.रस+गुणी] काव्य या संगीत का ज्ञाता।

रसगुल्ला—संज्ञा पुं. [सं. रस+हिं. गोला] एक मिठाई।

रसज्ञ—वि. पुं. [सं.] (१) रस का ज्ञाता। (२) काव्य या संगीत का ज्ञाता। (३) कुशल।

रसज्ञता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मर्मज्ञता।

रसज्ञा—वि. स्त्री. [सं.] (१) रस का ज्ञान रखनेवाली। (२) काव्य या संगीत की मर्मज्ञा। (३) निपुण, कुशल। उ.—सुनि सुनि स्रवन रीझि मन ही मन राधा रास रसज्ञा—पृ० ३४६ (४४)।

रसति—क्रि. अ. [हिं. रसना] हर्षित या प्रफुल्लित होती है। उ.—सूर प्रभु नागरी हँसति मन मन रसति, बसत मन स्याम बड़े भागे।

रसद—वि. [सं.] (१) सुखद। (२) मजेदार।
संज्ञा स्त्री. [फा.] अनाज, गल्ला।

रसदार—वि. [सं. रस+हिं. दार] जिसमें रस हो।

रसन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चखना। (२) जीभ। उ. रसन दसन धरि भरि लिए लोचन—२८७१।

रसना—संज्ञा स्त्री. [सं.] जीभ, जबान। उ.—(क) रसना द्विज दलि दुखित होति बहु तउ रिस कहा करै। छमि सब छोभ जु छाँड़ि, छवौ रस लै समीप सँचरै—१-११७। (ख) रसना-स्वाद-सिथिल लंपट ह्वै अघटित भोजन करतौ—१-२०३। (ग) तब रसना हरि नाम भाषिकै—२५३३।

मुहा०—रसना खोलना—बोलने लगना। रसना तालू से लगाना—बोलना बंद करना। रसना तारू सौं नहिं लावत—क्षण भर को भी चुप नहीं होता। उ.—रसना तारू सो नहिं लावत पीवै-पीव पुकारत। रसना हारना—बात खाली जाना, इच्छा या याचना पूरी न होना। रसना हारी—बात खाली चली जाय, इच्छा पूरी न हो। उ.—जाँचक पै जाँचक कह जाँचै, जौ जाँचै तौ रसना हारी—१-३४।

रसना, रसनो—क्रि. अ. [सं. रस+हिं. ना, नो] (१) धीरे-धीरे बहना, टपकना। (२) पसीजना। (३) हर्षित या प्रफुल्लित होना। (४) तन्मय या परिपूर्ण होना। (५) रस या स्वाद लेना। (६) अनुरक्त होना।

रसनायक—वि. [सं.] कुशल, निपुण। उ.—सूर स्याम लीला रस नायक—१०३०।

रसनेंद्रिय—संज्ञा स्त्री. [सं.] जीभ, जिह्वा।

रसपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चंद्रमा। (२) शृंगार रस।

रसबाद—संज्ञा पुं. [सं. रसवाद] मनोरंजन के लिए की गयी छेड़छाड़। उ.—तुमही मिलि रसबाद बढ़ायौ, उरहन दै दै मूड़ पिरायौ—३९१।

रसभरी—संज्ञा स्त्री. [सं. रस+हिं. भरी] (१) एक खट-मिट्ठा फल। (२) एक मिठाई।

रसभीना, रसभीनो—वि. [सं. रस+भीनना] (१) आनंद में मग्न या लीन। (२) तर, गीला, आर्द्र।

रसम—संज्ञा स्त्री. [अ. रस्म] (१) परिपाटी, प्रथा। (२) मेल-जोल का संबंध।

रसमय—वि. [सं. रस+हिं. मय] रस से पूर्ण या युक्त। उ.—रसमय जानि सुवा सेमर कौं चौंच घालि पछितायौ—१-५८।

रसमसा—वि. [सं. रस+हिं. मस (अनु.)] (१) आनंदमग्न। (२) तर, गीला, आर्द्र।

रसमि—संज्ञा स्त्री. [सं. रश्मि] (१) किरण। उ.—तो जू मान तजहुगी भामिनि रवि की रसमि कांम फल फीको—२१८८। (२) चमक, आभा।

रसरा—संज्ञा पुं. [हिं. रस्सा] रस्सा, मोटी रस्सी।

रसराइ, रसराई, रसराउ, रसराऊ, रसराय, रसराया, रसराव, रसराज, रसराजा—संज्ञा स्त्री. [सं. रसराज] (१) पारा, पारद। (२) शृंगार रस।

रसरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रस्सी] रस्सी, मोटी डोरी।

रसरीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रीति का व्यवहार, भाव या आचरण। उ.—माया काल, कछू नहिं ब्यापै, यह रस-रीति जो जानै—१-४०।

रसलीन—वि. [सं. रस+हिं. लीन] आनंद में मग्न।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—यहि बिधि करि उपदेस सबन को किये भजन रसलीन—सारा. ११२।

रसवंत—वि. [सं. रसवत्] (१) रसिक, प्रेमी। (२) रस से पूर्ण, रसीला।

रसवंती, रसवती—संज्ञा स्त्री. [सं. रसवती] रसौत। वि. स्त्री.—(१) रसीली। (२) रसिकिनी।

रसवाद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रीति या रसिकता भरी बात। उ.—करति हौ परिहास हमसौं तजौ यह रसवाद—पृ. ३४० (९८)। (२) विनोद या मनोरंजन के लिए की गयी छेड़छाड़। उ.—तुमहीं मिलि रसवाद (रसबाद) बढ़ायौ। उरहन दै दै मूँड़ पिरायौ—३९१। (३) बकवाद। उ.—तुम रसवाद करन अब लागे—२२६७।

रससागर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सात समुद्रों में एक जो प्लक्ष द्वीप में ऊख रस से भरा कहा गया है। (२) आनंद-सागर। उ.—गुनसागर अरु रस-सागर मिलि मानत सुख व्यवहार—६८७।

रसा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पृथ्वी। (२) जीभ। संज्ञा पुं. [सं. रस] तरकारी आदि का झोल।

रसाइन—संज्ञा पुं. [सं. रसायन] रसायन।

रसाइनी—संज्ञा पुं. [सं. रसायन+ई] (१) 'रसायन' विद्या का जानकार। (२) कीमियागर।

रसाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] पहुँच।

रसातल—संज्ञा पुं. [सं.] पृथ्वी के नीचे के सात लोकों में छठा जहाँ दैत्य, दानव आदि रहते बताये गये हैं। उ.—(क) सुनि सुनि स्वर्ग रसातल भूतल तहाँ तहाँ उठि धाये—१-१५४। (ख) सप्त रसातल सेषासन रहे—१०-२२१।

मुहा०—रसातल में पहुँचाना—नष्ट या मटियामेट कर देना।

रसाना, रसानो—क्रि. स. [सं. रस+हिं. आना] (१) रस से पूर्ण या युक्त करना। (२) प्रसन्न करना। (३) पदार्थ-विशेष को रसने में प्रवृत्त करना।

क्रि. स.—(१) रस युक्त होना। (२) पदार्थ-विशेष का रसना। (३) प्रसन्न होना।

रसाभास—संज्ञा पुं. [सं.] रस-विशेष का अनुचित प्रसंग या स्थान में वर्णन।

रसायन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पदार्थों के तत्वों का ज्ञान। (२) एक कल्पित योग जिसमें ताँबे से सोना बनना माना जाता है। (३) धातु को भस्म में परिवर्तित करने की विद्या।

रसायनी—वि. [सं. रसायन] रसायन जाननेवाला।

रसाल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ऊख। (२) आम।

वि.—(१) मधुर, मीठा। उ.—(क) सिव बोले तब बचन रसाल—१-२२६। (ख) सुंदर बोलत बचन रसाल—४७३। (२) रसीला। (३) सुंदर, मनोहर। उ.—(क) जो राजत तिहिं काल लाल ललना रसाल रसरंग—२४५०। (ख) सूरदास प्रभु फिरि कै चितयौ अंबुज नैन रसाल—२५३६।

संज्ञा पुं. [अ. इरसाल] कर, खिराज, राजस्व।

रसालस—संज्ञा पुं. [सं. रसाल] कौतुक।

रसाला—वि. [सं. रसाल] (१) सुंदर, मनोहर। उ.—(क) कालिंदी कै कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला—१०-४। (ख) स्याम जलद तनु अंग रसाला—२४८२। (२) मधुर। (३) रसीला।

संज्ञा पुं. [फ़ा. रिसाला] घुड़सवार सेना।

रसालिका—वि. स्त्री. [सं. रसालक] सरस, सुंदर।

रसाली—वि. [सं. रस] रसिक।

रसाव—संज्ञा पुं. [हिं. रसना] रसने की क्रिया या भाव।

रसावर, रसावल—संज्ञा पुं. [हिं. रसौर] ऊख के रस में पकाये गये चावल।

रसिआउर, रसिआवर, रसिआवल—संज्ञा पुं. [हिं. रस+चाउर] (१) ऊख के रस में पकाये गये चावल। (२) एक गीत जो उस समय गाया जाता है जब नववधू पहली बार ऊख के रस या गुण के शर्बत में चावल पकाकर पति तथा अन्य संबंधियों को खिलाती है।

रसिक—वि. [सं.] (१) रस या स्वाद लेनेवाला। (२) प्रेमी-हृदय, सहृदय, भावुक, मर्मज्ञ। (३) आनंदी, रसिया। उ.—(क) सूरदास रास रसिक बिनु रास रसिकिनी बिरह बिकल करि भई हैं मगन। (ख) सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि—१०-२९८। (४) मुग्ध,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसक्त या लीन होनेवाले। उ.—रूप रसिक लालची कहावत सो करनी कछुवै न भई—२५३७।

रसिकइ, रसिकई—संज्ञा स्त्री. [सं. रसिक+ई] (१) रसिक होने का भाव या धर्म। उ.—रसिक रसिकई जानि नाम लेहु रहे जाके—२०८२। (२) हँसी-ठट्ठा, परिहास।

रसिकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रसिक होने का भाव या धर्म। (२) हँसी-ठट्ठा, परिहास।

रसिक बिहारी—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण का एक नाम।

रसिकाइ, रसिकाई—संज्ञा स्त्री. [सं. रसिक+हिं. आइ, आई] रसिकता।

रसित—संज्ञा पुं. [सं.] ध्वनि, शब्द।

रसिया—संज्ञा पुं. [सं. रसिक] (१) रस लेनेवाला, रसिक। उ.—जित देखौं तित दीखै री रसिया नंद कुमार जी—८८०। (२) फागुन का एक गीत।

रसी—वि. [सं. रसिक] रस लेनेवाला।

रसीद—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] प्राप्ति का प्रमाण-पत्र।

रसील, रसीला—वि. [सं. रस+हिं. ईला] (१) रस से भरा। (२) मजेदार। (३) रस या आनंद लेने वाला। (४) विलासी, प्रेमी। (५) छबीला, सुन्दर।

रसीले—वि. [हिं. रसीला] रस या आनंद लेनेवाले। उ.—(क) सूर स्याम रस रसे रसीले—पृ. ३२२ (१७)। (ख) सूरदास प्रभु नवल रसीले—१९६६।

रसीलापन—संज्ञा पुं. [हिं. रसीला+पन] रसिक होने का भाव।

रसूख—संज्ञा पुं. [अ. रुसूख] (१) विश्वास। (२) पहुँच।

रसूम—संज्ञा पुं. [अ.] (१) नियम। (२) प्रथानुसार दिया जानेवाला धन।

रसूल—संज्ञा पुं. [अ.] पैगंबर।

रसेस—संज्ञा पुं. [सं. रसेश] श्रीकृष्ण।

रसोइया—संज्ञा पुं. [हिं. रसोई] भोजन बनानेवाला।

रसोईं, रसोई—संज्ञा स्त्री. [सं. रस+हिं. ओई] (१) बना हुआ भोजन। उ.—भीतर चली रसोई कारन छींक परी तब आँगन आइ—५४२।

यौ०—कच्ची रसोई—दाल, भात, रोटी आदि जिनमें सामान को घी से तला नहीं जाता। पक्की रसोई—पूरी, पकवान आदि जो घी में तल लिया जाता है।

मुहा०—रसोई चढ़ना या तपना—भोजन तैयार होना। रसोई चढ़ाना या तपाना—भोजन तैयार करना।

(२) स्थान जहाँ भोजन बने, चौका, पाकशाला। उ.—जसुमति चली रसोई भीतर तबहिं ग्वालि इक छींकी—५४०।

रसोईघर—संज्ञा पुं. [हिं. रसोई+घर]चौका, पाकशाला।

रसोय—संज्ञा स्त्री. [हिं. रसोई] भोजन।

रसौत—संज्ञा स्त्री. [सं. रसोद्भूत] एक औषध।

रसौर—संज्ञा पुं. [सं. रस+आउर] ऊख के रस या गुड़ के शरबत में पके हुए चावल।

रस्ता—संज्ञा पुं. [हिं. रास्ता] राह, मार्ग।

रस्म—संज्ञा स्त्री. [अ.] मेलजोल।

यौ०—राह-रस्म—मेलजोल, घनिष्ठता।

(२) रिवाज, चाल, रीति, प्रथा।

रस्मि—संज्ञा स्त्री. [सं. रश्मि] किरण।

रस्सा—संज्ञा पुं. [हिं. रसरा] मोटी रस्सी।

रस्सी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रस्सा] मोटी डोरी।

रहँकला—संज्ञा पुं. [सं. रथ+हिं. कला] (१) एक हल्की गाड़ी। (२) तोप लादने की गाड़ी। (३) गाड़ी पर लदी छोटी तोप।

रहँचटा—संज्ञा पुं. [सं. रस+हिं. चाट] प्रेमानंद का चस्का, प्रीति की चाह।

रहँट—संज्ञा पुं. [सं. आरघट्ट, प्रा. अरहट्ट] कुएँ से पानी निकालने का एक यंत्र जिसके खींचे जाने पर उसमें बँधी बहुत सी बालटियाँ या घड़े थोड़े श्रम से ही बहुत सा पानी निकाल देते हैं। सामान्यतया इस यंत्र को बैल खींचते हैं। उ.—बारंबार रहँट के घट ज्यौं भरि-भरि लोचन ढरतु—२२५३।

रहँटा—संज्ञा पुं. [हिं. रहँट] सूत कातने का चर्खा।

रहँटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रहँटा] कपास ओटने की चर्खी।

रहचटा—संज्ञा पुं. [हिं. रहँचटा] प्रीति की चाह।

रहचह—संज्ञा स्त्री. [अनु.] चिड़ियों की चहचहाहट।

रहट—संज्ञा पुं. [हिं. रहँट] कुएँ से पानी निकालने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहँट । उ.—बारंबार रहट के घट ज्यों भरि भरि लोचन ढरतु—२२५३ ।

रहत—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है । उ.—(क) ज्यौं मृग नाभि कमल निज अनुदिन निकट रहत नहिं जानत—१-४९ । (ख) भूखे छिन न रहत मनमोहन —१०-२३१ ।

रहति—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. रहना] रहती है । उ.—घर की नारि बहुत हित जासौं रहति सदा सँग लागी—१-७९ ।

रहन—संज्ञा स्त्री. [हिं. रहना] (१) रहने की क्रिया या भाव, रहना ।

यौ०—रहन-सहन—चाल-ढाल, तौर-तरीका ।

(२) संसार में जीवित रहना । उ.—बौरे मन, रहन अटल करि जान्यौ—१-३१९ । (३) रहने का ढंग, व्यवहार, आचरण ।

रहना—क्रि. अ. [सं. राज, पु. हिं. राजना] (१) स्थित होना, ठहरना । (२) रुकना, प्रस्थान न करना । (३) एकही दशा में बहुत समय तक ठहरना । (४) बसना, निवास करना । (५) अस्थायी रूप से ठहरना । (६) काम करना स्थगित कर देना । (७) चलना बंद कर देना । (८) विद्यमान या उपस्थित होना । (९) चुप-चुप या विना किसी काम-काज के समय बिताना । (१०) काम-काज या नौकरी करना । (११) स्थित या स्थापित होना । (१२) संभोग या समागम करना । (१३) जीना, न मरना । (१४) बच जाना, शेष रह जाना ।

रहनि, रहनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रहना] (१) रहने की क्रिया, भाव या ढंग, आचरण-व्यवहार । (२) जीवित रहने की क्रिया या भाव । (३) लगन, प्रीति ।

रहनो—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहना ।

रहम—संज्ञा पुं. [अ.] (१) दया । (२) अनुग्रह ।

रहमान—संज्ञा पुं. [अ.] दयालु ईश्वर ।

रहल—संज्ञा स्त्री. [अ.] पुस्तक रखने की चौकी ।

रहस—संज्ञा पुं. [सं. रहस्] (१) रहस्य । (२) लीला, क्रीड़ा । (३) सुख, आनंद । उ.—भयौ जदुबंस अति रहस, सूर जन मंगलाचार गायौ—१०उ०-२५ ।

रहसत—क्रि. अ. [हिं. रहसना] (१) प्रसन्न या आनंदित होता है । उ.—(क) इहिं विधि रहसत-बिलसत दंपति—७३२ । (ख) परस्पर मिलि हँसत रहसत हरषि करत बिलास—पृ. ३४३ (२२) । (ग) कबहुँ रहसत मचत लै सँग एक एक सहेलि—२२७८ ।

रहसना, रहसनो—क्रि. अ. [हिं. रहस+ना] प्रसन्न या हर्षित होना ।

रहसबधावा—संज्ञा पुं. [हिं. रहस+बधाई] विवाह की एक रीति जिसमें वधू का मुख देखकर उपहार आदि दिये जाते हैं ।

रहसि—संज्ञा पुं. [हिं. रहस] (१) आनंद, प्रसन्नता । उ.—देस देस भयो रहसि सूर प्रभु जरासंध सिसुपाल की हाँसी—१०३०-२२ । (२) गुप्त या एकांत स्थान । उ.—सुनि बल-मोहन बैठ रहसि मैं कीन्हों कछू बिचार—सारा. ६०२ ।

क्रि. अ. [हिं. रहसना] हर्षित, आनंदित या प्रसन्न होकर । उ.—(क) कबहुँक बैठ्यौ रहसि रहसि कै ठोटा गोद खिलायौ—१-३०१ । (ख) इतनी सुनत घोष की नारी रहसि चली मुख मोरी—१०-२९३ ।

रहस्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गुप्त भेद । (२) गुप्त स्थान । उ.—कहुँ पौढ़े कमला के सँग में परम रहस्य एकांत—सारा. ६७२ । (३) मर्म या भेद की बात । (४) गूढ़ बात ।

रहस्यवाद—संज्ञा पुं. [सं.] वह धार्मिक वृत्ति जिसमें ईश्वर से परोक्ष भाव या रूप से संबंध स्थापित किया जाता है ।

रहस्यवादी—वि. [सं. रहस्यवादिन्] (१) रहस्यवाद-संबंधी । (२) रहस्यवाद में विश्वास रखनेवाला ।

रहाइ, रहाई—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है । उ.—(क) ऊँच-नीच ब्यौरो न रहाइ—१-२३० । (ख) महाकष्ट दस मास गर्भ बसि, अधोमुख-सीस रहाई—१-३१८ । (ग) अंग तषति कछु सुधि न रहाई—७४८ ।

संज्ञा स्त्री.—(१) रहने की क्रिया, भाव या रीति । (२) चैन, आराम ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहात—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है। उ.—छिनक मौन रहात —३५९।

रहाना, रहानो—क्रि. अ. [हिं. रहना] (१) रहना। (२) होना।

रहाय—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है। उ.—छिन जियरा न रहाय हो—२४००।

रहायो, रहायौ—क्रि. अ. [हिं. रहना] रह गया, शेष बचा। उ.—क्रोध बचन करि सबसे बोले, छत्री कोउ न रहायो—सारा. २२२।

रहावन—संज्ञा पुं. [हिं. रहना] पशुओं के रहने या एकत्र होने का स्थान।

रहा सहा—वि. [हिं. रहना + सहना (अनु.)] बचा-बचाया, बचा-खुचा, शेष।

रहाहीं—क्रि. अ. [हिं. रहना] (१) रहते हैं। उ.—बादल-छाहँ, घम-धौराहर जैसैं थिर न रहाहीं—१-३१९। (२) टिकता या ठहरता है। उ.—जद्यपि सुख-निधान द्वारावति तोऊ मन कहुँ न रहाहीं—१० उ०-१०३।

रहि—क्रि. अ. [हिं. रहना] (१) रहकर। (२) रह जा, रुक जा, चुप रह। उ.—(क) रहि री माँ धीरज उर धारे—५९५। (ख) रहि रहि अबला बोल न बोलै—९-१४०।

प्र०—रहि न सके—अपने को रोक न सके। उ.—रहि न सके, नरसिंह रूप धरि, गहि कर असुर पछारचौ—१-१०९। रहि गयौ—शेष रहा, बच रहा। उ.—एक बार महा परलै भयौ, नारायन आपुहिं रहि गयौ—९-२। रहि जात—रहा जाता है, चैन पड़ती है। उ.—कान्ह तुमहिं बिनु रहत नहिं, तुमसौं क्यों रहि जात—५८९। रहि गए—स्तब्ध होकर एक ही स्थान पर ठहरे रहे। उ.—निरखि सुर-नर सकल मोहे रहि गए जहां के तहाँ—१० उ०-२४।

रहित—वि. [सं.] बिना, बगैर, हीन। उ.—(क) अति उन्मत्त निरंकुस मैगल चिंतारहित असोच—१-१०२। (ख) ब्रह्म पूरन अकल कर्ला तें रहित—२५५६।

रहियै—क्रि. स. [हिं. रहना] टिक जाइए, ठहरिए, अस्थायी रूप से निवास कीजिए। उ.—सुनि सबहिनि सुख कियौ आजु रहियै जमुना-तट—५८९।

रहिल—संज्ञा पुं. [देश.] चना (अनाज)।

रहिहै—क्रि. अ. [हिं. रहना] बच सकेगी, बनी रह सकेगी। उ.—सूरदास अब बसै कौन ह्याँ पति रहिहै ब्रज त्यागैं—१०-३१७।

रही—क्रि. अ. [हिं. रहना] ध्यान न दिया, उपेक्षा की, गनीमत थी। उ.—चोरी रही, छिनारी अब भयौ, जान्यौ ज्ञान तुम्हारौ—७७३।

रहीम—वि. [अ.] दयालु, कृपालु।

संज्ञा पुं.—(१) प्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खान-खाना। (२) ईश्वर का एक नाम।

रहु—क्रि. अ. [हिं. रहना] रुक, बोल मत, चुप रह। उ.—रहु रहु राजा यौं नहिं कहियै दूषन लागै भारी —८-१४।

रहुआ, रहुवा—संज्ञा पुं. [हिं. रहना] दूसरे के यहाँ रोटियों पर रहनेवाला।

रहूगण, रहूगन—संज्ञा पुं. [सं. रहूगण] एक राजा जो अंगिरस गोत्रीय था और जिसने कपिल मुनि से ज्ञान सुना था। उ.—नृपति रहूगन कैं मन आई, सुनियै ज्ञान कपिल सौं जाई—५-४।

रहै—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है।

मुहा०—चित न रहै—चित्त स्थिर या शांत नहीं होता। उ.—तबहीं तैं ब्याकुल भइ डोलति चित न रहै कितनौ समझाऊँ—१६५४।

रहौंगौ—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहूँगा, मानूँगा, सहमत होऊँगा। उ.—बरज्यौ हौं न रहौंगौ—१०-१९४।

रह्यो रह्यौ—क्रि. अ. [हिं. रहना] (१) शेष रहा था, बचा था। उ.—हा करुनामय कुंजर टेरचौ, रह्यौ नहीं बल थाक्यौ—१-११३। (२) वास करता था, रहता था। उ.—जब मैं नाभि-कमल मैं रह्यौ—२-३७।

राँक, राँका, राँकौ—वि. [सं. रंक] दरिद्र, कंगाल। उ. —छोरी बंदि बिदा किए राजा, राजा ह्वै गए राँकौ —१-११३।

यौ०—राँकौ-फीकौ—बहुत ही दीन। उ.—बड़ी कृतघ्नी और निकम्मा बंधन, राँकौ-फीकौ—१-१८६।

राँग, राँगा—संज्ञा पुं. [सं. रंग, हिं. राँगा] एक धातु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो सफेद और नरम होती हैं। उ.—(क) नारि आनंद भरी राँग सी ह्वै ढरी, द्वार आपने खरी अंग पुलकी —२१५५। (ख) बातन हरत मन राँग ह्वै ढरै री—२४२३।

राँच—क्रि. अ. [हिं. राँचना] आकृष्ट हुआ, रम गया। उ.—बिषय अखेटक नृप मन राँच—४-१२।

अव्य. [हिं. रंच] जरा सा, तनिक।

राँचना, राँचनो—क्रि. अ. [सं. रंजन] (१) आसक्त या अनुरक्त होना। (२) लीन या मग्न होना। (३) रंग पकड़ना।

क्रि. स.—रँगना, रँग चढ़ाना।

राँचि—क्रि. अ. [हिं. राँचना] अनुराग करके।

यौ०—राँचि राँचि करि—बड़ी लगन या रुचि से, बड़े चाव से। उ.—यह तन राँचि राँचि करि बिरच्यौ, कियौ आपनौ भायौ—१-६७।

राँची—क्रि. अ. [हिं. राँचना] रँग गयी, लीन या मग्न हो गयी। उ.—धाय सुघरी सील कुल छाँड़े राँची वा अनुराग—६५६।

राँचे—क्रि. अ. [हिं. राँचना] आसक्त या मुग्ध हुए। उ.—स्याम प्यारी-नैन राँचे—६७६।

राँचै—क्रि. अ. [हिं. राँचना] अनुरक्त हो, प्रेम करे। उ.—जौ अपनौ मन हरि सौं राँचै—१-८१।

राँजना, राँजनो—क्रि. अ. [सं. रंजन] काजल लगाना।

क्रि. स.—रँगना, रंजित करना।

क्रि. स. [हिं. राँगा] राँगे से जोड़ना।

राँटा—संज्ञा पुं. [देश.] टिटिहरी चिड़िया।

संज्ञा पुं. [हिं. रहँटा] सूत कातने का चर्खा।

राँड़—वि. स्त्री. [सं. रंडा] विधवा, बेवा।

राँढ़ना, राँढ़नो—क्रि. स. [सं. रुदन] रोना।

राँध—संज्ञा पुं. [सं. परांत] (१) निकट का स्थान। (२) पड़ोस।

क्रि. वि.—पास, निकट, समीप।

संज्ञा स्त्री. [हिं. राँधना] भोगने बनाने या राँधने की क्रिया या भाव।

वि.—परिपक्व अवस्था या बुद्धिवाला।

राँधना, राँधनो—क्रि. स. [सं. रंधन] (भोजन) पकाना।

राँधि—क्रि. स. [हिं. राँधना] पका कर। उ.—सरसों मेथी, सोवा पालक बथुआ राँधि लियौ जु उतालक—३९६।

राँध्यो, राँध्यौ—क्रि. स. [हिं. राँधना] पकाया। उ.—बथुआ भली भाँति रचि राँध्यौ—२३२१।

राँभति—क्रि. अ. [हिं. राँभना] (गाय) बँबाती या बोलती है। उ.—राँभति गाइ बछा हित सुधि करि—४८०।

राँभना, राँभनो—क्रि. अ. [सं. रंभण] गाय का बोलना।

राआ—संज्ञा पुं. [सं. राजा] राजा, सम्राट।

राइ—संज्ञा पुं. [सं. राजा, प्रा. राया] (१) राजा, सम्राट। उ.—(क) निज पुर आइ राइ भीषम सौं कही जो बातैं हरि उचरी—१-२६८। (ख) सुक कह्यौ, सुनौ परिच्छित राइ, देहुँ तोहिं वृत्तांत सुनाइ—६-५। (२) राय, सरदार।

संज्ञा स्त्री. [हिं. राई] 'राई' नामक वस्तु।

मुहा०—राइ-लोन उतारि—नजर लगने पर उतारा करके राई और नमक आग में डालकर। उ.—कबहुँ अँग भूषन बनावति राइ-लोन उतारि—१०-११८।

राइता—संज्ञा पुं. [हिं. रायता] पतले दही में उबाले हुए साग आदि के साथ मसाले डालकर बनाया गया नमकीन पदार्थ। उ.—पानौरा राइता पकौरी —२३२१।

राई—संज्ञा पुं. [सं. राजा, प्रा. राया] (१) राजा। उ.—कुंदनपुर कौ भीषम राई—१० उ०-७। (२) राय, सरदार। (३) राज्य, राज्याधिकार। उ.—तुम्हैं मारि महिरावन मारैं, देहिं बिभीषन राई—९-१४०। (४) प्रभु, स्वामी। उ.—किलकि झटकि उलटे परे देवनि-मुनि-राई—१०-६६।

संज्ञा स्त्री.—राजा होने का भाव, राजापन।

वि.—संपन्न, उत्तम, श्रेष्ठ। उ.—सूर स्याम ऐसे गुन राई—१८८०।

संज्ञा स्त्री. [सं. राजिका, अ. राइआ] (१) बहुत छोटी सरसों-जैसा एक मसाला।

मुहा०—राई काई करना—टुकड़े-टुकड़े कर डालना। राई काई होना—टुकड़े-टुकड़े हो जाना। राई-नोन (लोन) उतारना—नजर लगने पर राई-नमक उतार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर आग में डालना। राई-नोन (लोन) उतारि— नजर लगने से बचाने के लिए राई-नोन उतार कर और आग में डालकर। उ.—कबहूँ अँग भूषन बनावति राई-लोन उतारि। राई लोन उतारै—नजर से बचाने के लिए राई-नोन उतारकर आग में डालती है। उ.—जाको नाम कोटि भ्रम टारै, तापर राई-लोन उतारै—१०-१२९। राई से पर्वत करना—(१) थोड़ी बात को बहुत बढ़ा देना। (२) असंभव बात को भी संभव कर देना। राई से पर्वत करि डारै—छोटी या असंभव बात को बहुत बड़ा या संभव कर देता है। उ.—अविगति गति जानी न परै। राई ते पर्वत करि डारै पर्वत राई करै।

(२) बहुत थोड़ी मात्रा या परिमाण।

मुहा०—राई भर—(१) बहुत छोटा। (२) बहुत थोड़ा। राई-रत्ती करके—छोटी-छोटी रकम, तौल या नाप के हिसाब से।

राउ—संज्ञा पुं. [सं. राजा, प्रा. राय, राव] राजा। उ.—(क) हरि, हौं सब पतितनि कौ राउ—१-१४५। (ख) कह्यौ वृषभ, तुम ऐसेहिं राउ—१-२९०।

राउत—संज्ञा पुं. [सं. राज+पुत्र, प्रा. राअउत] (१) कोई राजवंश। (२) वीर पुरुष। (३) क्षत्रिय।

राउर—संज्ञा पुं. [सं. राज+पुर, प्रा० राय+उर] राजमहल का अंतःपुर, रनिवास, राजमहल। उ.—ब्रज घर-घर बूझत नँद-राउर, पुत्र भयौ, सुनि कै उठि धायौ—१०-२४८।

वि. आपका।

राउल—संज्ञा पुं. [सं. राजकुल] (१) राजा। (२) राजकुल का पुरुष।

राकस—संज्ञा पुं. [सं. राक्षस] राक्षस।

राकसिनि, राकसिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राकस] राक्षसी।

राका—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूर्णिमा की रात। उ.—(क) व्रजप्राची राका तिथि यशुमति शरद सरस रितु नंद—१३३१। (ख) स्वेत छत्र मनो ससि प्राची दिसि उदय कियौ निसि राका—२५६६।

राकापति—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

राकेश, राकेस—संज्ञा पुं. [सं. राकेश] चंद्रमा।

राक्षस—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दैत्य, असुर। (२) दुष्ट व्यक्ति। (३) विवाह जिसमें कन्या के लिए युद्ध किया जाय।

राक्षसपति—संज्ञा पुं. [सं.] रावण।

राक्षसी—वि. [सं. राक्षस] (१) राक्षस-संबंधी। (२) राक्षसों जैसा जघन्य या विकट।

राख—संज्ञा स्त्री. [देश.] भस्म, खाक। उ.—निंदत मूढ़ मलय चंदन कौं राख अंग लपटावै—२-१३।

राखत—क्रि. स. [हिं. रखना] (१) रक्षा करता है। उ.—राखत नहिं कोउ करुनानिधि अति बल ग्राह गह्यौ—८-४। (२) स्थिर या स्थापित करता है, रखता है। उ.—इक लोहा पूजा मैं राखत, इक घर बधिक परौ—१-२२। (३) जीवित रहने देता है, बचाता या उपेक्षा करता है। उ.—वै हैं काल तुम्हारे प्रगटे काहे उनकौं राखत—५२२।

राखति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. रखना] रोकती या ठहराती हूँ।

प्र०—बाँधि राखति—बाँधकर रखती हूँ। उ.—मैं बाँधि राखति सुतहिं मेरे देत महरहिं गारि—३८७।

राखनहार—वि. [हिं. रखना+हार] बचानेवाला, रक्षक। उ.—(क) राखनहार अहै कोउ और—७-४। (ख) गोकुल-ग्वाल-गाइ-गोसुत के येई राखनहार—५०८।

राखना, राखनो—क्रि. स. [हिं. रखना] (१) धरना, स्थित करना। (२) बचाना, रक्षा करना। (३) पालन या निर्वाह करना। (४) संग्रह करना। (५) सौंप देना। (६) रेहन या बंधक करना। (७) अधिकार में कर लेना। (८) नियुक्त करना। (९) पकड़ या रोक लेना। (१०) सामने न लाना। (११) व्यवहार करना। (१२) आरोप करना। (१३) ठहराना, निवास कराना।

राखहि—क्रि. स. [हिं. रखना] रखती (है)।

प्र०—बस राखहि—वश या अधिकार में रखती (है)। उ.—इंद्रिय बस राखहि किन पाँचौ—१-८३।

राखहु—क्रि. स. [हिं. रखना] रोक लो, जाने मत दो। उ.—गोपालहिं राखहु मधुबन जात—३४३१।

राखि—क्रि. स. [हिं. रखना] (१) बचा लो, रक्षा करो। उ.—(क) हा जगदीस राखि इहिं अवसर प्रगट पुकारि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कह्यौ—१-१४७। (ख) नमस्कार करि बिनय सुनाई, राखि-राखि असरन सरनाई—६-५। (२) धारण करके। उ.—जोगी जोग धरत मन अपनैं सिर पर राखि जटै—१-२६३।

प्र०—राखि लियो—(१) बचा लिया, रक्षा कर ली। उ.—(क) अंबरीष ब्रत राखि लियौ—१-२६। (ख) सूरदास प्रभु कठिन बिपति सौं राखि लियौ जग जागी—१-२५०। राखि लीजे—बचा लीजिए, रक्षा कर लीजिए। उ.—जिहिं उपाय अपनौ यह बालक राखि कंस सौं लीजै—१०-९।

राखिहै—क्रि. स. [हिं. रखना] रक्षा करेगा, बचायेगा। उ.—क) उलटि जाहु नृप-चरन-सरन मुनि, वहै राखिहै भाई—९-७। (ख) मेरे मारत कौन राखिहै—१०४२।

राखीं—क्रि. स. [हिं. रखना] बचा लीं। उ.—रानी सबै मरत ते राखीं—२६२१।

राखी—संज्ञा स्त्री. [सं. राखी] रक्षाबंधन का डोरा जो हिंदुओं के यहाँ श्रावण पूर्णिमा को पुरुषों की दाहनी कलाई पर बाँधा जाता है।

संज्ञा स्त्री. [हिं. राख] राख, खाक।

क्रि. स. [हिं. रखना] (१) बचायी, रक्षा की। उ.—सभा माँझ द्रौपदि पति राखी—१-११३। (२) (ध्यान में) बसायी, स्मरण रखखी। उ.—सखी नृपति सौं यह कहि भाखी, नृप सुनिकैं हिरदैं मैं राखी—६-७। (३) प्रस्तुत या उपस्थित की। उ.—जांबवती अरपी कन्या हरि मनि राखी संमुहाइ—सारा० ६४९।

राखु—क्रि. स. [हिं. राखना] रक्षा करो, बचाओ। उ.—चटचटात अँग-अंग फटत हैं, राखु राखु प्रभु मोहिं—५८९।

राखैं—क्रि. स. [हिं. राखना] स्थिर या स्थित करते हैं, ठहराते या लगाते हैं। उ.—मन राखैं तुम्हरे चरननि पैं—१-१९६।

राखै—क्रि. स. [हिं. राखना] पालता-पोसता या रक्षा करता है। उ.—लोक रचै, राखै अरु मारै—१०-३।

राखौं—क्रि. स. [हिं. राखना] रक्षा करूँ। उ.—कहिं धौं प्रान कहाँ लौं राखौं, रोकि देह मुख द्वार—१-९२।

राखौ—क्रि. स. [हिं. राखना] बचाओ, रक्षा करो। उ.—(क) राखौ पति गिरिवर गिरिधारी—१-२४८। (ख) लाज मेरी राखौ स्याम हरी—१-२५४।

राख्यो, राख्यौ—क्रि. स. [हिं. राखना] (१) बचाया, रक्षा की। उ.—(क) राख्यौ गोकुल बहुत बिघन तैं कर-नख पर गोवर्धनधारी—१-२२। (ख) राख्यौ स्याम, नहीं तिहिं मारयौ—५७४। (२) निर्वाह या पालन करने में सहायक हुआ। उ.—(क) भारत मैं मेरी प्रन राख्यौ—१-१७७। (ख) धन्य सुपुत्र पिता-पन राख्यौ—९-१५१। (ग) देव ने राख्यौ बालक यह सुखकारी—सारा० ४१९। (२) (मन) स्थिर या स्थित किया, (ध्यान) लगाया। उ.—अनत नहीं चित राख्यौ—१०-१११। (३) निश्चित या निर्धारित किया। उ.—ताकौ नाम रुद्र बिधि राख्यौ—३-७।

राग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चाह, कामना, प्रवृत्ति। (२) कष्ट, क्लेश। (३) प्रेम, प्रीति। उ.—राग-द्वेष, विधि-अविधि, असुचि-सुचि, जिहिं प्रभु जहाँ सँभारी—१-१५७। (४) सुगंधित लेप, अंगराग। (५) (विशेषतः लाल) रंग। (६) संगीत की ध्वनि। उ.—सुमिरि सनेह कुरंग कौ, स्रवननि राच्यौ राग—१-३२५।

मुहा०—अपना राग अलापना—दूसरों से मेल न खाने वाली अपनी ही बात कहे जाना।

रागना, रागनो—क्रि. अ. [हिं. राग] (१) प्रेम करना। (२) रँग जाना। (३) निमग्न या लीन हो जाना।

क्रि. स.—गाना, अलापना।

रागिनि, रागिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रागिनी] किसी राग की पत्नी (संगीत)। उ.—गावत मलारी सुराग रागिनी गिरिधरन लाल छबि सोहनो—२२८०।

रागी—संज्ञा पुं. [सं. रागिन्] (१) प्रेमी। (२) विषयासक्त।

वि.—(१) रँगा हुआ। (२) लाल, अरुण। (३) रँगनेवाला। (४) कामना या चाह रखनेवाला। उ.—सूर सुजस-रागी न डरत मन सुनि जातना कराल—१-१८९।

संज्ञा स्त्री. [सं. राज्ञी] राजा की पत्नी, रानी।

राघव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रघुवंशी। (२) श्रीराम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—कुसुम-बिमान बैठी बैदेही देखी राघव पास—९-८२।

राच—क्रि. अ. [हिं. राचना] रँग गयी, अनुरक्त हो गयी।
उ.—रुकमिनि पुत्री हरि रँग राच—१० उ०-७।

राचत—क्रि. अ. [हिं. राचना] प्रसन्न होता है। उ.—एक नाचत, एक राचत—२४२५।

राचना, राचनो—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाना, रचना।
क्रि. अ. रचा जाना, बनना।
क्रि. अ. [सं. रंजन] (१) रँगा जाना। (२) आसक्त या अनुरक्त होना। (३) मग्न या लीन होना। (४) प्रसन्न होना। (५) भला जान पड़ना, शोभित होना। (६) सोच या चिंता में पड़ना।
क्रि. स. आसक्त या अनुरक्त करना।

राची—क्रि. स. [हिं. राचना] बनायी, रची। उ.—एक जीव देही द्वै राची—१६३६।
क्रि. अ.—(१) रँग गयी, रंजित हो गयी। उ.—(क) प्रेम मानि कछु सुधि न रही अँग रहे स्याम रँग राची। (ख) सूर प्रभु के अंग राची चितै रही चित लाइ—८४८। (२) आसक्त या अनुरक्त हो गयी। निरखि जो जेहि अंग राची तहीं रही भुलाइ—१९५४।

राचे—क्रि. अ. [हिं. राचना] रँग गये, रंजित हुए। उ.—(क) ताही के सिधारो पिय जाके रँग राचे—२००३। (ख) अब हरि औरहि रँग राचे—३३९३।

राचै—क्रि. अ. [हिं. राचना] सोच या चिंता में पड़े। उ.—हानि भए कछु सोच न राचै।

राच्छसि, राच्छसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राक्षसी] राक्षसी। उ.—बदन निहारि प्रान हरि लीनौ परी राच्छसी जोजन ताईं—१०-५०।

राच्यो, राच्यौ—क्रि. स. [हिं. रचना] रचा, आयोजित किया। उ.—धनि धनि सूरदास के स्वामी अद्भुत राच्यौ रास।
क्रि. अ.—(१) आसक्त या अनुरक्त हुआ। उ.—बिरचि मन बहुरि राच्यौ आइ। (२) लीन या निमग्न हुआ। उ.—वाकैं रूप सकल जग राच्यौ।

राछ—संज्ञा पुं. [सं. रक्ष] (१) औजार। (२) जलूस।

राछस—संज्ञा पुं. [सं. राक्षस] राक्षस।

राछसि, राछसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राक्षसी] राक्षसी।

राज—संज्ञा पुं. [सं. राज्य] (१) शासन, राज्य-प्रबंध। उ.—ताकौं सुमिरि राज तुम करौ—१-२६१।
यौ०—राज-काज—शासन-प्रबंध। उ.—राज-काज कछु मन नहिं धरै। राज-पाट—(१) राज-सिंहासन। (२) शासन। उ.—राजपाट सिंहासन बैठी नील पदुम हूँ सौं कहै थोरी—१-३०३। राज-समाज—शासन प्रबंध और अधिकारी वर्ग। उ.—गए बन कौं तजि राज-समाज—५-३।
मुहा०—राज करना—खूब सुख भोगना। राज करैं—सदा सुख भोगे (आशीर्वाद या मंगल-कामना)। उ.—राज करैं वै धेनु तुम्हारी—४५५। राज देना—शासन-प्रबंध सौंपना, शासनाधिकार देना। दीन्हों राज—शासनाधिकार सौंपा। उ.—दीन्हें मार असुर हरि ने तब देवन दीन्हो राज—सारा०। दै राज—शासनाधिकार सौंपकर। उ.—भरतहुँ दै पुत्रनि कौ राज—५-३। राज पर बैठना—राज्याधिकार पाना। राज पर बैठाना—राज्याधिकार देना। राज बैठारचौ शासनाधिकार दिया। उ.—नरहरि हिरनाकसिप जब मारचौ, अरु प्रहलाद राज बैठारचौ—८-७। राज रजना या राजना—(१) शासन-प्रबंध करना। (२) राजाओं जैसा सुख भोगना। राज राजैं—राज्याधिकार प्राप्त करके सुख भोगते हैं—लंका राज बिभीषन राजैं—१-३६। राज रजाना—बहुत सुख देना।
(२) राजा द्वारा शासित भूमि, राज्य। उ.—जौ तोहिं नाहिं बाहु-बल-पौरुष अर्ध राज देउँ लंक—९-१३४। (३) पूरा अधिकार। (४. अधिकार या शासन का समय। (५) देश, जनपद।
संज्ञा पुं. [सं. राजन्] (१) राजा। उ.—यह कहियौ ब्रज जाइ नंद सौं कंस राज अति काज मँगायौ—५२२। (२) कारीगर, थवई।
संज्ञा पुं. [फ़ा. राज़] भेद, रहस्य।

राजई—क्रि. अ. [हिं. राजना] शोभित होता है। उ.—सेहरो सिर पर मुकुट लटक्यो कंठ माला राजई—१० उ०-२४।

राजकन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा की पुत्री।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजकर—संज्ञा पुं. [सं.] 'कर' जो राजा लेता है।
राजकीय—वि. [सं.] राज्य-संबंधी।
राजकुँअर—संज्ञा पुं. [सं. राजकुमार] राजकुमार। उ.—लख्यौ सुभद्रा इहि संन्यासी। राजकुँअर कोउ भेष उदासी—१०उ०-४३०१।
राजकुँअरि, राजकुँआरि, राजकुँआरी—संज्ञा स्त्री. [सं. राजकुमारी] राजकुमारी।
राजकुमार—संज्ञा पुं. [सं.] राजा का पुत्र।
राजकुमारि राजकुमारी—संज्ञा स्त्री. [सं. राजकुमारी] राजकुमारी।
राजगढ़—संज्ञा पुं. [हिं. राजा+गढ़] किला या गढ़ जिसमें राजा रहता हो। उ.—निरभय देह राजगढ़ ताकौ—१-४०।
राजगद्दी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राजा+गद्दी] (१) राजसिंहासन। (२) राज्याभिषेक। (३) राज्याधिकार।
राजगीर—संज्ञा पुं. [सं. राज+गृह] थवई, कारीगर।
राजगृह—संज्ञा पुं. [सं.] राजमहल।
राजछत्र—संज्ञा पुं. [सं.] राजचिह्न-रूप में राजा पर लगाया जाने वाला छत्र या छाता। उ.—राजछत्र नाहीं सिर धारौं—१-२६१।
राजतंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] राजा द्वारा शासन।
राजत—संज्ञा पुं. [सं. रजत] चाँदी (धातु)।
क्रि. अ. [हिं. राजना] बिराजते हैं। उ.—(क) प्रगट ब्रह्म राजत द्वारावति वेद पुरान उचारेउ। (ख) मध्य गोपाल मंडली राजत—४३२।
राजति—क्रि. अ. [हिं. राजना] शोभित होती है। उ.—(क) अति बिसाल बारिज-दल-लोचन राजति काजर-रेख री—१०-१३६। (ख) सूरदास जोरी अति राजति—४७३।
राजतिलक—संज्ञा पुं. [हिं. राजा+तिलक] राज्याभिषेक। उ.—नृपति जुधिष्ठिर राजतिलक दै मारि दुष्ट की भीर—सारा. ७८७।
राजत्व—संज्ञा पुं. [सं.] राजा का भाव, कर्म या पद।
राजदंड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजशासन। (२) वह दंड जो राजा या राज्यविधान द्वारा दिया जाय।
राजदरबार—संज्ञा पुं. [हिं. राज+फ़ा. दरबार] राज्यसभा।
राजदूत—संज्ञा पुं. [सं.] राजा या शासन द्वारा नियुक्त किया हुआ दूत।
राजद्रोह—संज्ञा पुं. [सं.] राजा या राज्य के प्रति किया गया विद्रोह।
राजद्रोही—वि. [हिं. राजद्रोह] राजद्रोह करनेवाला।
राजधर्म—संज्ञा पुं. [सं.] राजा का धर्म या कर्तव्य। उ.—(क) राजधर्म तब भीषम गायौ—१-२६१। (ख) राजधर्म सुनि इहै सूर जिहिं प्रजा न जाहिं सताए—३३६३।
राजधानी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह प्रधान नगर जहाँ राजा रहता हो या जहाँ से शासन-प्रबंध होता हो।
राजन—संज्ञा पुं. [हिं. राजा] हे राजा (संबोधन)। उ.—राजन कहौ दूत काहू को कौन नृपति है मारचौ—९-९८।
क्रि. अ. [हिं. राजना] राज करने (लगे)।
प्र०—लागे राजन—राज्य करने लगे। उ.—सूरदास श्रीपति की महिमा मथुरा लागे राजन—२८१७।
राजना—क्रि. अ. [सं. राजन=शोभित होना] (१) बिराजना। (२) सोहना, शोभित होना।
राजनीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वह नीति जिससे राज्य की सुरक्षा हो और शासन दृढ़ बना रहे। उ.—(क) राजनीति जानौ नहीं, गो-सुत चरवारे—१-२३८। (ख) संडामर्क रहे पचि हारि। राजनीति कहि बार-बार—७-२। (ग) हरि हैं राजनीति पढ़ि आए—३३६३।
राजनीतिक—वि. [सं.] राजनीति-संबंधी।
राजनो—क्रि. अ. [सं. राजन] (१) बिराजना। (२) सोहना, शोभित होना।
राजन्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) क्षत्रिय। (२) राजा।
राजपंथ, राजपथ—संज्ञा पुं. [सं. राजपथ] खूब चौड़ा मार्ग, राजमार्ग। उ.—(क) सुनु ऊधौ निर्गुन कंटक तें राजपंथ क्यों रूँधौ। (ख) राजपंथ तैं टारि बतावत उज्ज्वल कुचल कुपैंडौ—३३१३।
राजपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] राजकुमार।
राजपुत्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजकुमारी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजपुरुष—संज्ञा पुं. [सं.] राजकर्मचारी।

राजपूत—संज्ञा पुं. [सं. राजपूत] (१) राजकुमार। (२) क्षत्रियों के वंश-विशेष।

राज-प्रासाद—संज्ञा पुं. [सं.] राजमहल।

राजभंडार—संज्ञा पुं. [सं. राजभांडार] राजकोष।

राजभक्त—वि. [सं.] राजा या राज्य के प्रति भक्ति या सम्मान-भाव रखनेवाला।

राजभक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा या राज्य के प्रति सम्मान-भाव या भक्ति रखनेवाला।

राजभवन—संज्ञा पुं. [सं.] राजमहल, राजप्रासाद।

राजभाषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह भाषा जिसमें किसी राज्य का राज-कार्य होता हो।

राजभोग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक तरह का धान। (२) राज्य-सुख। (३) देवताओं का प्रातःकालीन भोग।

राजमहल—संज्ञा पुं. [हिं. राजा + अ. महल] राजप्रासाद।

राजमहिषी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पटरानी।

राजमाता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा की माता।

राजमारग, राजमार्ग—संज्ञा पुं. [सं. राजमार्ग] खूब चौड़ा मार्ग, राजपथ। उ.—छाँड़ि राजमारग यह लीला कैसे चलहि कुपैंड़े—३१६९।

राजमुनि—संज्ञा पुं. [सं.] राजर्षि। उ.- महाराज रिषिराज राजमुनि देखत रहे लजाई— १-४०।

राजयोग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अष्टांग योग जिसमें क्रमशः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि का अभ्यास किया जाता है। (२) ग्रहों का ऐसा योग जिससे मनुष्य राजसी सुख भोग सके।

राजरवनि, राजरवनी—संज्ञा स्त्री. [सं. राजा + रमणी] राजा की स्त्री। उ.--(क) राजरवनि सुमिरे पति-कारन, असुर-बंदि तैं दिए छुड़ाई—१-२४। (ख) भूप अनेक बंदि तैं छोरे राज-रवनि जस अति बिस्तारौ —१-१७२।

राजराज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजाओं का राजा, राजाधिराज। (२) कुबेर। (३) चंद्रमा।

राजराजेश, राजराजेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] राजाओं का राजा, राजाधिराज।

राजराजेश्वरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] महारानी।

राजरोग—संज्ञा पुं. [हिं. राजा + रोग] (१) असाध्य रोग। उ.— जाकौ राजरोग कफ बाढ़त दह्यौ खवावत ताहि—३१४५। (२) क्षय रोग।

राजर्षि—संज्ञा पुं. [सं.] वह ऋषि जो राजवंश या क्षत्रिय कुल का हो।

राजलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजवैभव, राज्यश्री।

राजवंश—संज्ञा पुं. [सं.] राजा का कुल।

राजवी—संज्ञा पुं. [सं. राजा] राजा।

राजश्री—संज्ञा स्त्री. [सं. राज्यश्री] राजवैभव, राज्यलक्ष्मी।

राजस—वि. [सं.] रजोगुण से उत्पन्न।

संज्ञा पुं.—(१) राज्याभिमान, राज-मद। उ.— इहिं राजस को को न बिगोयौ। हिरनकसिपु हिरनाच्छ आदि दै रावन कुंभकरन कुल खोयौ— १-५४। (२) क्रोध, आवेश।

वि. [सं. राजा] राजा या राज्य-संबंधी। उ.— राजस रीति सुरन कहि भाषी—२४५९।

राजसत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजशक्ति।

राजसभा—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा का दरबार।

राजसमाज—संज्ञा पुं. [सं.] राजाओं का दरबार या मंडल।

राजसिंहासन—संज्ञा पुं. [सं.] राजगद्दी।

राजसिक—वि. [सं. राजस] रजोगुणी।

वि. [हिं. राजसी] राजाओं-जैसा।

राजसिरी—संज्ञा स्त्री. [सं. राज्यश्री] राजलक्ष्मी।

राजसी—वि. [हिं. राजा] राजा के योग्य शान, ठाट-बाट या तड़क-भड़क वाला।

वि. स्त्री. [सं.] रजोगुण की प्रधानतावाली।

राजसू, राजसूय—संज्ञा पुं. [सं.] एक यज्ञ। उ.—बड़ो जग्य राजसू रचायौ—सारा. ७३५।

राजस्व—संज्ञा पुं. [सं.] राजकर, राजधन।

राजहंस—संज्ञा पुं. [सं.] एक तरह का हंस।

राजहीं—क्रि. अ. [हिं. राजना] सोहते हैं, सुशोभित हैं। उ.—हरि-नख उर अति राजहीं—१०-११६।

राजा—संज्ञा पुं. [सं. राजन्] (१) नृप, भूप। उ.— जिनकौं मुख देखत दुख उपजत तिनकौं राजा-राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहै—१-५३। (२) स्वामी, अधिपति। (३) बालकों के लिए प्रेम और दुलार का संबोधन। उ.—सो राजा जो अगमन पहुँचै, सूर सु भवन उताल—१०-२२३।

राजाज्ञा—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा की आज्ञा।

राजाधिराज—संज्ञा पुं. [सं.] राजाओं का राजा।

राजि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कतार, अवली। (२) रेखा।

राजित—वि. [सं.] (१) शोभित। (२) बिराजमान।

राजिव—संज्ञा पुं. [सं. राजीव] कमल।

राजिववर—संज्ञा पुं. [सं. राजीव+वर] श्रेष्ठ कमल। उ.—सुनि मधुकरि भ्रम तजि कुमुदनि कौं, राजिववर की आस—१-३३९।

राजी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पंक्ति, श्रेणी। उ.—राजति रोम-राजी रेख—६३५।

वि. [अ. राज़ी] (१) कोई बात मानने को प्रस्तुत, सहमत। (२) हर्षित, प्रसन्न (३) सुखी।

यौ०—राजी-खुशी—सकुशल और सानंद।

संज्ञा स्त्री. सहमति, अनुकूलता।

राजीव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कमल। उ.—मैं जु रह्यौं राजीव-नैन दुरि, पाप-पहार दरी—१-१३०। (२) नील कमल।

राजु—संज्ञा पुं. [हिं. राज] अधीनस्थ प्रदेश, राज्य। उ.—तज्यौ कंस कौ राजु—८०८।

राजेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] राजाओं का राजा।

राजैं—क्रि. अ. [हिं. राजा] (१) राज्य करते हैं।

मुहा०—राज राजैं—राज्य का सुख भोगते हैं। उ.—लंका राज बिभीषन राजैं—१-३६।

(२) सुशोभित हैं। उ.—पानि पदुम आयुध राजैं—१-६९।

राज्ञी—संज्ञा स्त्री. [सं.] रानी, राजमहिषी।

राज्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शासन। उ.—राज्य बिभीषन दैहौं—९-११३। (२) राजा द्वारा शासित प्रदेश।

राज्यश्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] राज्य की शोभा और वैभव।

राज्याभिषेक—संज्ञा पुं. [सं.] नये राजा का अभिषेक।

राज्यारोहण—संज्ञा पुं. [सं.] राजा का प्रथम बार सिंहासनासीन होकर राज्याधिकार प्राप्त करना।

राट—संज्ञा पुं. [सं. राट्] (१) राजा। (२) श्रेष्ठ व्यक्ति। (३) किसी कौशल में बढ़ा-चढ़ा व्यक्ति।

राठ—संज्ञा पुं. [सं. राष्ट्र] (१) राज्य। (२) राजा।

राठवर, राठौर—संज्ञा पुं. [सं. राष्ट्रकूट, हिं. राठौर] दक्षिण भारत का एक राजवंश।

राड़—वि. [देश.] (१) निकम्मा। (२) कायर।

राढ़—वि. [हिं. राड़] (१) निकम्मा। (२) कायर।

संज्ञा स्त्री. [सं. राटि] रार, झगड़ा।

राढ़ि—संज्ञा पुं. [सं.] वंग देश का उत्तरी प्रदेश।

राणा—संज्ञा पुं. [सं. राट्] (१) राजा। (२) उदयपुर के शासकों की उपाधि।

रात—संज्ञा स्त्री. [सं. रात्रि] रात्रि, रजनी। उ.—अँधियारी भादौं की रात—१०-१२।

मुहा०—रात-दिन—सदा, सर्वदा। उ.—यह ब्योहार लिखाय रात-दिन पुनि जीतौ पुनि मरतौ—१-२०३।

वि. [हिं. राता] लाल, अरुण।

रातड़ी, रातरी—संज्ञा स्त्री. [सं. रात्रि] रात, रजनी।

रातना, रातनो—क्रि. अ. [सं. रक्त, प्रा, रत्त+हिं. ना] (१) रंग से लाल हो जाना। (२) रँग जाना। (३) आसक्त या अनुरक्त होना।

राता—वि. [सं. रक्त, प्रा० रत्त] (१) लाल, अरुण। (२) रँगा हुआ। (३) आसक्त, अनुरक्त।

क्रि. अ. [हिं. रातना] आसक्त या अनुरक्त हुआ या है। उ.—ज्यों चकोर ससि राता—९-४९।

राति—संज्ञा स्त्री. [सं. रात्रि] रात, रात्रि। उ.—तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं, आवत ह्वै है राति—४११।

रातिचर—संज्ञा पुं. [हिं. रात+सं. चर] राक्षस।

रातिब—संज्ञा पुं. [अ.] पशु का दैनिक आहार।

राती—संज्ञा स्त्री. [हिं. रात] रात, रात्रि। उ.—निमिष निमिष मों बिसरत नाहीं सरद सुहाई राती २९८१।

मुहा०—दिन-राती—सदा, सर्वदा। उ.—दिन-राती पोषत रह्यौ, जैसैं चोली-पान—१-३२५।

वि. [हिं. राता] लाल रंग की। उ.—(क) पहिरे राती चूनरी—१-४४. (ख) धौरी धूमरि राती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रौंछी बोल बुलाइ चिन्हौरी—४४५। (ग) अँगिया नील माँड़नी राती—पृ० ३४५ (३८)।

क्रि. अ. [हिं. रातना] (१) रँग गयी। उ.— कुबिजा भई स्याम रँग-राती—१-६३। (२) अनुरक्त या आसक्त हो गयी।

रातुल—वि. [सं. रक्तालु, प्रा० रत्तालु] लाल रंग का। उ.—उर मोतिनि की माला री पहिरे, रातुल चीर, वारे कन्हैया।

राते, रात—वि. [हिं. राता] लाल रंग का। उ.—(क) चोली चतुरानन ठग्यौ, अमर उपरना राते (हो)—१-४४। (ख) वै जो देखत राते राते फूलन फूले डार —२७९८। (ग) सूरदास स्याम रँग राचे, फिर न चढ़ै रँग रातै—३०२४।

रातौ—वि. [हिं. रातौ] लाल (रंग का)। उ.—(क) सेत हरौ रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोई—१-६३। (ख) सुन्दर रूप रतालू रातौ—२३२१।

क्रि. अ. [हिं. रातना] रँग गया। उ.—हरि-पद पंकज पियौ प्रेम-रस ताही कैं रँग रातौ—१-४०।

रात्र, रात्रि—संज्ञा स्त्री. [सं. रात्रि] रात, निशा।

मुहा०—दिन-रात्र (रात्रि)—सदा, सर्वदा। उ.— छल-बल करि जित तित हरि पर-धन धायौ सब दिन रात्र—१-२१६।

रात्रिचर, रात्रिचारी—वि. [सं.] रात में विचरने वाला। संज्ञा पुं.—राक्षस, निशाचर।

रात्री—संज्ञा स्त्री. [सं. रात्रि] रात, निशा।

राधन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) साधना। (२) साधन।

संज्ञा स्त्री. [सं. आराधना] पूजा, आराधना। उ.—कर्म धर्म तीरथ बिनु राधन ह्वै गए सकल अकाथ —१-२०८।

राधना, राधनो—क्रि. स. [सं. आराधना] (१) पूजा या आराधना करना। (२) पूर्ण या सिद्ध करना। (३) काम निकालना।

राधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रीति। (२) वृषभानु गोप की पुत्री जो श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम-भाव रखती थी।

राधाकांत—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

राधाकुंड—संज्ञा पुं. [सं.] गोवर्द्धन के निकट एक सरोवर।

राधारमण, राधारमन, राधारवन—संज्ञा पुं. [सं. राधा + रमण] श्रीकृष्ण। उ.—तिहूँ भुवन भरि नाद समानो राधारवन बजाई—पृ० ३४७ (५३)।

राधावल्लभ—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

राधावल्लभी—वि. [सं.] श्रीकृष्ण या विष्णु से संबंधित। संज्ञा पुं.—वैष्णवों का एक प्रसिद्ध संप्रदाय।

राधाष्टमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] भादों सुदी अष्टमी जिस दिन राधा का जन्म हुआ माना जाता है।

राधिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] वृषभानु गोप की कन्या राधा जो श्रीकृष्ण की प्रेयसी थी।

राध्य—वि. [सं.] आराध्य।

रान—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] जाँघ, जंघा।

राना—संज्ञा पुं. [हिं. राणा] राणा।

क्रि. अ. [सं. राग] अनुरक्त होना।

रानी—संज्ञा स्त्री. [सं. राज्ञी, प्रा० राणी] (१) राजा की पत्नी। उ.—करुना करति मंदोदरि रानी—९-१६०। (२) स्वामिनी। (३) 'स्त्री' के लिए आदर सूचक शब्द।

रानीकाजर—संज्ञा पुं. [हिं. रानी + काजल] धान-विशेष।

रानो—क्रि. अ. [सं. राग] अनुरक्त होना।

रानौ, रान्यौ—संज्ञा पुं. [हिं. राणा, राना] (१) राजा। उ.—(क) जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होय कै रानौ—१-११। (ख) जतन जतन करि माया जोरी, लै गयौ रंक न रानौ—१-३२९। (ग) की मारि डारियो दुहुँनि को होइ सो होइ यह कहत रान्यौ—२६०२। (२) महाराज, परम प्रभु। उ.— भज्यौ न श्रीपति रानौ—१-४७।

रापरंगाल—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्रकार का नृत्य।

रापी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राँपी] चमड़ा साफ करने और काटने का औजार।

राब—संज्ञा स्त्री. [सं. द्रावक] औटाकर गाढ़ा किया हुआ गन्ने का रस।

राबड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राब+ड़ी] रबड़ी, बसौंधी।

राम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परशुराम। (२) बलराम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) दशरथ के बड़े पुत्र श्रीरामचंद्र जो दस अवतारों में एक माने जाते हैं।

मुहा०—राम शरण होना—(१) संन्यासी हो जाना। (२) मर जाना। राम जाने—(१) मुझे नहीं मालूम। (२) भगवान को साक्षी करके। राम राम करना—(१) प्रणाम करना। (२) भगवान को जपना। राम राम करके—बड़ी कठिनता से। राम राम होना—भेंट या मुलाकात होना। राम राम हो जाना—मर जाना। राम राम है—विदा-सूचक प्रणाम। उ.—सुनहु सूरज प्रभु अबकैं मनाइ ल्याउँ बहुरि रुठायही जू तौ मेरी राम राम है जू—२२४१।

(४) ईश्वर, भगवान। उ.—(क) कहत हे आगे जपिहैं राम—१-५७। (ख) पढ़ौ भाइ राम-मुकुंद मुरारि—७-४।

रामकली—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक रागिनी।

रामचंद्र—संज्ञा पुं. [सं.] दशरथ के बड़े पुत्र जो कौशल्या के गर्भ से जन्मे थे।

रामजनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राम+जनना] (१) वेश्या। (२) कन्या जिसके पिता का पता न हो।

रामटोड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक संकर रागिनी।

रामतरोई—संज्ञा स्त्री. [हिं. राम+तुरई, तरोई] एक तरकारी। उ.—खीरा रामतरोई तामें—२३२१।

रामता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राम का गुण या भाव।

रामतारक संज्ञा पुं. [सं.] एक मंत्र—रां रामाय नमः।

रामति—संज्ञा स्त्री. [हिं. रमना] (भिखारी की) फेरी।

रामत्व—संज्ञा पुं. [सं.] राम का गुण या भाव।

रामदल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राम की बानरी सेना। (२) प्रबल सेना।

रामदाना—संज्ञा पुं. [सं. राम+हिं. दाना] एक तरह का दाना जिसकी गिनती 'फलाहार' में की जाती है।

रामदास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान। (२) शिवा जी के गुरु जो 'समर्थ' रामदास कहलाते हैं।

रामदूत—संज्ञा पुं. [सं.] हनुमान।

रामधाम—संज्ञा पुं. [सं.] साकेत लोक जो भगवान राम का नित्यलोक माना जाता है।

रामधुन—संज्ञा स्त्री. [सं. राम+हिं. धुन] राम-नाम जपने, भजने या कीर्तन करने की क्रिया या भाव।

रामनवमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] चैत्र सुदी नवमी जिस दिन श्रीराम का जन्म हुआ था।

रामना—क्रि. अ. [सं. रमण] घूमना-फिरना।

रामनामी—संज्ञा पुं. [हिं. राम+नाम] (१) दुपट्टा जिस पर सारे में 'राम-राम' छपा हो। (२) गले का हार-विशेष जिसके बीच के टिकड़े पर 'राम' अंकित हो।

रामनो—क्रि. अ. [सं. रमण] घूमना-फिरना।

रामनौमी—संज्ञा स्त्री. [सं. रामनवमी] चैत्र सुदी नवमी जिस दिन श्रीराम का जन्म हुआ था।

रामपुर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अयोध्या। (२) बैकुंठ।

रामफटाका—संज्ञा पुं. [सं. राम+हिं. फटाका] रामानुज के अनुयायियों का लंबा तिलक।

राममंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] एक मंत्र—रां रामाय नमः।

रामरज—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक तरह की पीली मिट्टी।

रामरस—संज्ञा पुं. [हिं. राम+रस] नमक।

रामराज्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रीरामचंद्र का सुखद शासन। (२) शासन जिसमें प्रजा सब तरह सुखी रहे।

रामरौला—संज्ञा पुं. [सं. राम+हिं. रौला] व्यर्थ का कोलाहल।

रामलीला—संज्ञा स्त्री. [सं.] राम-चरित्र का अभिनय।

रामवाण—वि. [सं.] अचूक (औषध)।

रामशर—संज्ञा पुं. [सं.] एक तरह का सरकंडा।

रामश्री—संज्ञा पुं. [सं.] एक राग।

रामा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लक्ष्मी। (२) राधा। (३) सीता।

रामानंद—संज्ञा पुं. [सं.] एक वैष्णवाचार्य जो 'रामावत' संप्रदाय के प्रवर्तक थे।

रामानंदी—संज्ञा पुं. [हिं. रामानंद] रामानंद के 'रामावत' संप्रदाय का अनुयायी।

रामानुज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राम का छोटा भाई। (२) एक प्रसिद्ध वैष्णवाचार्य जो 'वैष्णव' संप्रदाय के प्रवर्तक थे।

रामायण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ग्रंथ जिसमें राम-कथा वर्णित हो। (२) वाल्मीकि-कृत रामायण। (३) गो० तुलसीदास-कृत रामायण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायणी—वि. [सं. रामायणीय] रामायण-संबंधी।
संज्ञा पुं.—रामायण का पंडित।

रामायन—संज्ञा पुं. [सं. रामायण] रामायण।

रामायुध—संज्ञा पुं. [सं.] धनुष।

रामावत—संज्ञा पुं. [सं.] रामानंद का संप्रदाय।

रामेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] वह शिवलिंग जो श्रीराम द्वारा लंका के लिए पुल बाँधने के पूर्व स्थापित किया गया कहा जाता है। यह भारत के चार मुख्य तीर्थों में एक है जो दक्षिण में समुद्रतट पर है।

राय—संज्ञा पुं. [सं. राजा, प्रा० राया] (१) राजा। (२) सामंत। (३) सम्मान की एक उपाधि। (४) भाट, बंदीजन। (५) एक लता।
संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] सम्मति, मत।

रायता—संज्ञा पुं. [सं. राजिकाक्त] उबाले हुआ कुम्हड़े, लौकी, बूँदी आदि को पतले दही में मसाला डालकर बनाया गया खाद्य। उ.—पानौरा रायता पकौरी डभकौरी मुँगठी सुठि सौंरी—३९६।

रायबेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. राय+बेल] एक लता।

रायभोग—संज्ञा पुं. [सं. राजभोग] धान-विशेष।

रायमुनिया, रायमुनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. राय+मुनिया] 'लाल' पक्षी की मादा।

रायमुनयनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. रायमुनियाँ] अनेक रायमुनिया पक्षी। उ.—मनु रायमुनैयनि पाँति पिंजरा तोरि चली—१०-२४।

रायरासि—संज्ञा स्त्री. [सं. राज+राशि] राजकोष।

रायसा—संज्ञा पुं. [हिं. रासो] काव्य जिसमें राजा-विशेष का जीवन-चरित्र हो।

राया—संज्ञा पुं. [सं. राजा] राजा।

रार, रारि, रारी—संज्ञा स्त्री. [सं. राटि, प्रा. राड़ि] (१) लड़ाई-झगड़ा, टंटा। उ.—(क) कृपा करि रारि डारो मिटाई—८-९। (ख) उनकौं मारि तुरत मैं कीन्हौं मेघनाद सौं रार—९-१०४। (ग) ऐसी कैसे हरि करै कतहिं बढ़ावति रारी—१०६१। (२) हठ, जिद। उ.—जागत ही उठि रारि करत है—१०-२३१।

रारिया, रारी—वि. [हिं. रार] झगड़ा करनेवाला।

राल—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक पेड़ का चिपचिपा रस।
संज्ञा स्त्री. [सं. लाला] पतला लसदार थूक जो कुछ बच्चों और बूढ़ों के मुख से कभी-कभी बहने लगता है।
मुहा०—राल गिरना, चूना, टपकना या बहना—किसी पदार्थ को देखकर उसे पाने की बहुत इच्छा होना।

राव—संज्ञा पुं. [सं. राजा, प्रा. राया] (१) राजा। उ.—राव-रंक हरि गनत न दोइ—२-५। (२) सरदार, सामंत। (३) धनी। (४) भाट, बंदीजन।
संज्ञा पुं. [सं. रव] ध्वनि, शब्द।

राव-चाव—संज्ञा पुं. [हिं. राव+चाव] लाड़-प्यार।

रावट—संज्ञा पुं. [हिं. रावल] राजमहल।

रावटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रावट] (१) छोलदारी। (२) छोटा घर। (३) बारहदरी।

रावण—वि. [सं.] दूसरों को रुलानेवाला।
संज्ञा पुं.—लंका का प्रसिद्ध राजा जिसके पिता का नाम विश्रवा और माता का कैकसी था। सीता-हरण का अपराध करने पर श्रीराम ने इसे मारा था।

रावणारि—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीरामचंद्र।

रावणि—संज्ञा पुं. [सं.] रावण का पुत्र मेघनाद।

रावत—संज्ञा पुं. [सं. राजपुत्र, प्रा. राय+हिं. उत] (१) सामंत, सरदार। (२) शूर-वीर। (३) छोटा राजा।

रावन—संज्ञा पुं. [सं. रावण] लंका का राजा रावण। उ.—राजा कौन बड़ौ रावन तैं गर्बहिं गर्ब गरै—१-३५।

रावनगढ़—संज्ञा पुं. [सं. रावण+गढ़] लंका।

रावना—संज्ञा पुं. [सं. रावण] रावण।

रावना, रावनो—क्रि. स. [सं. रावण] रुलाना।

रावर, रावरा—संज्ञा पुं. [सं. राजपुर+प्रा० राय+उर] रनिवास।
वि. [हिं. राउ+का (विभक्ति)] आपका।

रावरी—वि. [हिं. रावर] आपकी। उ.—(क) टेक परिहै जानि सब रावरी—५५१। (ख) सूरदास प्रभु आनि मिलावहु, ऊधी, कीरति होइ रावरी—३४३२।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रावरीय—वि. [हिं. रावर] आपकी ही। उ.—सूर स्याम प्यारी अति राजति रावरीय दुहाई—२२३९।

रावरैं—वि. [हिं. रावर] आप ही, (आपको ही)। उ.—पाँच पति हित हारि बैठे, रावरैं हित मोर—७९२।

रावरो, रावरौ—वि. [हिं. रावर] आपका। उ.—मानहिंगी उपकार रावरो करो कृपा बलवीर—७९२।

रावल—संज्ञा पुं. [सं. राजपुर, हिं. राउर] रनिवास।

संज्ञा पुं. [पा० राजुल] (१) राजा। (२) कुछ राजाओं की उपाधि। (३) सरदार, सामंत। (४) एक आदरसूचक संबोधन। (५) मथुरा का निकटवर्ती एक गाँव जहाँ राधा का जन्म होना कहा जाता है।

राशि, राशी—संज्ञा स्त्री. [सं. राशि] (१) समूह, ढेर, पुंज। (२) पृथ्वी जिस मार्ग से होकर सूर्य की परिक्रमा करती है, उस पर पड़ने वाले तारे-समूह जो बारह हैं—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुंभ और मीन।

मुहा०—राशि आना—अनुकूल होना। राशि मिलना—मेल मिलना।

राष्ट्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राज्य। (२) देश।

राष्ट्रिय, राष्ट्रीय—वि. [सं. राष्ट्रिय] राष्ट्र-संबंधी।

रास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कोलाहल। (२) वह मंडलाकार नृत्य जिसका आरंभ श्रीकृष्ण द्वारा शरद् पूर्णिमा की रात्रि को किये गये उनके नृत्य से माना जाता है। उ.—(क) सो गोपिनि सँग रास रमावै—१०-३। (ख) गोप-नारी संग मोहन कियौ रास बनाइ—४९८। (३) नाटक-विशेष जिसमें श्रीकृष्ण की रासलीला का अभिनय किया जाय।

संज्ञा स्त्री. [अ.] घोड़े की लगाम।

मुहा०—रास कड़ी करना या रखना—अधिकार या अंकुश को कड़ा रखना। रास में लाना—अधिकार या अंकुश में लाना।

संज्ञा स्त्री. [सं. राशि] (१) ढेर, समूह, पुंज। उ.—(क) जहँ बिधु-भानु समान एक रस सो बारिज सुख-रास—१-३३९। (ख) बरनौं कहा अंग अँग-सोभा भरी भाव जल-रास री—१०-१३९। (२) राशि (ज्योतिष)। (३) जोड़। (४) धान-विशेष।

रासक—संज्ञा पुं. [सं.] हास्य-प्रधान एकांकी नाटक-विशेष।

रासधारी—संज्ञा पुं. [सं. रासधारिन्] रासलीला का अभिनेता।

रासभ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गदहा, गर्दभ। उ.—गैवर मेटि चढ़ावत रासभ प्रभुता मेटि करत हिनती—१२२८। (२) एक दैत्य जिसे बलराम ने मारा था।

रासमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रास-क्रीड़ा का स्थान। (२) रासलीला में श्रीकृष्ण और राधा के साथ भाग लेनेवाली गोपियों का समूह, रासलीला करनेवालों की मंडली। उ.—रास-मडल बने स्याम स्यामा।

रासमंडली—संज्ञा स्त्री. [सं.] रासधारियों की टोली।

रासलीला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मंडलाकार नृत्य जो शरत पूर्णिमा की रात्रि को श्रीकृष्ण ने किया था। (२) रासधारियों द्वारा उक्त लीला-नृत्य का अभिनय।

रास-विलास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रास-क्रीड़ा। (२) आनंद-मंगल।

रासविहारी—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

रासि, रासी—संज्ञा स्त्री. [सं. राशि] (१) समूह, पुंज, ढेर। उ.—(क) कंचन-रासि गँवाई—१-३२८। (ख) सूरदास सुख की रासि कापै कहि आवै—१०-२०१। (ग) सूरदास प्रभु आनंद रासी—५४९। (घ) मुरली अधर सकल अँग सुन्दर रूप-सिंधु की रासी—३१०८। (२) पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा के मार्ग में पड़नेवाले तारक-समूह। उ.—(क) चौथैं सिंह रासि के दिनकर जीति सकल महि लैहैं—१०-८६। (ख) रासि सोधि इक सुदिन धरचौ—१०-८८।

रासु—वि. [फ़ा. रास्त] (१) सरल। (२) ठीक।

संज्ञा पुं. [सं. रास] रास (लीला)।

रासेश्वरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] राधा।

रासो—संज्ञा पुं. [सं. रहस्य] राजा-विशेष की युद्धवीरता आदि को लेकर लिखा गया पद्यमय जीवन-चरित्र।

रास्त—वि. [फ़ा.] (१) सीधा। (२) उचित।

रास्ता—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) राह, मार्ग, पथ।

मुहा०—रास्ता काटना—(१) चलनेवाले के सामने से होकर निकल जाना। (२) यात्रा में समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिताना। रास्ता देखना—प्रतीक्षा करना। रास्ता पकड़ना—चल देना। रास्ता बताना—टालना, हटाना। रास्ते पर लाना—सीधे ढंग पर लाना।

(२) रीति, चाल। (३) तरकीब, उपाय।

मुहा०—रास्ता बताना–तरकीब या उपाय बताना।

राह—संज्ञा पुं. [सं. राहु] राहु (ग्रह)।

संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) मार्ग, पथ। उ.—(क) चलत न तुम क्यौं सूधैं राह—५-४। (ख) काहे को भरि भरि ढारति हौ इन नैन राह के नीर—२६८६।

मुहा०—राह गहना – मार्ग-विशेष पर चलना। राह मन गहियौ—राह-विशेष पर ही चलने का मन में निश्चय किया। उ.—ये सब बचन सुने मनमोहन वहै राह मन गहियौ—१०-३१३। राह ताकना या देखना – प्रतीक्षा करना। राह पड़ना - डाका या लूट पड़ना। राह लगना—(१) ठीक रास्ते पर आ जाना। (२) अपने काम से काम रखना। राह बताना—टालना, हटाना। राह पर लगाना या लाना—ठीक मार्ग बताना।

(२) प्रथा, रीति, चाल। उ.—(क) हमहिं छाँड़ि कुबिजा मन बाँध्यौ कौन बेद की राह—२७६८। (ख) हमहिं छाँड़ि कुबिजहिं मन दीनों मेटि बेद की राह—३३९७। (३) तरकीब, उपाय।

संज्ञा पुं. [हिं. रोहू] रोहू मछली।

राहगीर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] बटोही, पथिक।

राहचलता—वि. [फ़ा. राह + हिं. चलना] पथिक।

राहचौरंगी—संज्ञा पुं. [फ़ा. राह + हिं. चौरंगी] चौराहा।

राहजनी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. राहज़नी] लूट, डकैती।

राहत—संज्ञा स्त्री. [अ.] सुख, चैन, आराम।

क्रि. अ. [हिं. रहना] रहता है।

राहना, राहनो—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहना।

राही—संज्ञा पुं. [फ़ा.] पथिक, बटोही।

राहु—संज्ञा पुं. [सं.] नौ ग्रहों में एक जिसके पिता का नाम विप्रचित्ति और माता का सिंहिका था। सागर-मंथन के समय जब वह चोरी से अमृत पीने लगा था तब सूर्य और चंद्र के संकेत से विष्णु ने उसका सिर काट दिया था। परंतु अमृत के प्रभाव से वह मरा नहीं। तभी से उसका सिर 'राहु' और कबंध 'केतु'-रूप में जीवित है। उसी के ग्रसने पर सूर्य और चंद्र-ग्रहण होता है। उ.—(क) कहँ वह राहु कहाँ वै रवि-ससि आनि सँजोग परै—१-२६४। (ख) राहु ससि-सूर के बीच मैं बैठि कै, मोहिनी सौं अमृत माँगि लीन्हचौ—८-८। (ग) ऊँच-नीच जुवती बहु करिहैं सतएँ राहु परे हैं—१०-८६।

राहै—संज्ञा पुं. सवि. [सं. राहु] राहु ने, राहु द्वारा। उ.—बिलपति अति पछितातति मनहिं मन चंद्र गहे जनु राहै—२८०१।

रिंगए, रिंगन—संज्ञा पुं. स्त्री. [सं. रिंगण] (१) रेंगना, घुटनों के बल चलना। उ.—फिरि हरि आय जसोदा के गृह रिंगन लीला करिहैं—सारा. ५७१। (२) सरकना, फिसलना। (३) डिगना, विचलित होना।

रिंगना, रिंगनो—क्रि. अ. [हिं. रेंगना] (१) रेंगना। (२) धीरे धीरे चलना। (३) घूमना-फिरना।

रिंगाइ, रिंगाई—क्रि. स. [हिं. रिंगाना] (बहुत समय तक) खूब घुमा-फिराकर। उ.—सूर स्याम मेरौ अति बालक मारत ताहि रिंगाई—५१०।

रिंगाना, रिंगानो—क्रि. स. [सं. रिंगण] (१) रेंगने को प्रवृत्त करना। (२) धीरे धीरे चलाना। (३) बहुत समय तक घुमाना-फिराना।

रिंगावत—क्रि. स. [हिं. रिंगाना] रेंगने-जैसा धीरे-धीरे चलाते हैं। उ.—कबहुँ कान्ह-कर छाँड़ि नंद पग द्वैक रिंगावत—१०-१२२।

रिंगावै—क्रि. स. [हिं. रिंगाना] धीरे धीरे चलाती है। उ.—कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिंगावै—१०-१३०।

रिंग्यो, रिंग्यौ—क्रि. अ. [हिं. रिंगना] रेंग कर आया। उ.—मनहुँ बिबर तें उरग रिंग्यौ तकि गिरि के संधि थली—२०७१।

रिंद—वि. [फ़ा.] (१) उदार। (२) मनमौजी।

रिआयत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) कृपा। (२) छूट।

रिआया—संज्ञा स्त्री. [अ.] प्रजा।

रिक्त—वि. [सं.] (१) खाली, शून्य। (२) निर्धन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिक्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] रिक्त होने का भाव।

रिखभ—संज्ञा पुं. [सं. ऋषभ] बैल।

रिचा—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋचा] ऋचा।

रिच्छ, रिछ—संज्ञा पुं. [सं. ऋक्ष] भालू।

रिछराज, रिछराजा—संज्ञा पुं. [सं. ऋक्षराज] जांबवान। उ.—ताको मारि सिंह मीन लै गयौ, सिंह हत्यो रिछराजा—१० उ०-२६।

रिजाली—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. रजील = नीच] निर्लज्जता।

रिजु—वि. [सं. ऋजु] (१) सीधा। (२) सुगम। (३) सज्जन। (४) प्रसन्न। (५) ईमानदार।

रिझई—क्रि. स. [हिं. रिझाना] रिझा ली। उ.—(क) सूर स्याम ऐसे मोहिं रिझई—१२०९। (ख) मिटचो काम तनु ताम रिझई मदन गोपाल—२१५१।

रिझए—क्रि. स. [हिं. रिझाना] रिझा लिये, प्रसन्न या अनुकूल किये। उ.—(क) कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन बिमल-बिमल जस गाइ—१-१५५। (ख) सूरज प्रभु सेवा करि रिझए—पृ० ३२१ (३)।

रिझकवार—वि. [हिं. रीझना + वार] रीझनेवाला, मुग्ध या प्रसन्न होनेवाला।

रिझयो, रिझयौ—क्रि. स. [हिं. रिझाना] अनुकूल या प्रसन्न कर लिया। उ.—सूरदास प्रभु बिबिध भांति करि मन रिझयौ हरि पी को।

रिझवत—क्रि. स. [हिं. रिझाना] रिझाते या प्रसन्न करते हो। उ.—बिबिध बचन सुदेस बानी इहाँ रिझवत काहि—२८५०।

रिझवति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. रिझाना] रिझाती या मुग्ध करती है। उ.—आपुन रीझि कंत को रिझवति यह जिय गर्व बढ़ावति—पृ० ३५१ (७२)।

रिझवार—संज्ञा पुं. [हिं. रीझना + वार] (१) रीझने या मोहित होनेवाला। (२) प्रसन्न या अनुकूल होनेवाला। (३) प्रेम या अनुराग करनेवाला। (४) गुण का आदर करनेवाला।

रिझाई—क्रि. स. [हिं. रिझाना] मुग्ध कर लिया। उ.—सूर स्याम ऐसे गुन-आगर, नागरि बहुत रिझाई (हो)—७००।

रिझाउ—क्रि. स. [हिं. रिझाना] मुग्ध करो। उ.—पालागौं ऐसी इन बातनि उनहीं जाइ रिझाउ—३०७२।

रिझाए—क्रि. स. [हिं. रिझाना] प्रसन्न या अनुकूल कर लिया। उ.—बिटप भंजि जमलाजुन तारे, करि अस्तुति गोबिंद रिझाए—३८६।

रिझाना, रिझानो—क्रि. स. [सं. रंजन] (१) प्रसन्न या अनुकूल करना। (२) मुग्ध या मोहित करना।

रिझायल—वि. [हिं. रीझना + आयल] (१) रीझनेवाला। (२) अनुकूल या प्रसन्न होनेवाला।

रिझाव—संज्ञा पुं. [हिं. रीझना + आव] (१) मुग्ध या मोहित होने का भाव। (२) प्रसन्न या अनुकूल होने का भाव।

रिझावति—क्रि. स. [हिं. रिझावना] मुग्ध करती है। उ.—ललिता ललित बजाय रिझावति मधुर बीन कर लीन्हे।

रिझावना, रिझावनो—क्रि. स. [हिं. रिझाना] (१) प्रसन्न या अनुकूल करना। (२) मुग्ध, आसक्त या मोहित करना।

रिझावैं—क्रि. स. [हिं. रिझाना] प्रसन्न या अनुकूल कर लें। उ.—जल ही मैं सब बाँह टेकि कै देखहु स्याम रिझावैं—७९१।

रिझावै—क्रि. स. [हिं. रिझाना] मुग्ध करता है। उ.—तान की तरंग रस रसिक रिझावै (हो)—६२९।

रिझावौं—क्रि. स. [हिं. रिझाना] प्रसन्न या अनुकूल करूँ। उ.—कहा करौं, किहिं भाँति रिझावौं हौं तुमको सुंदर नँदलाल—१-१२७।

रिझै—क्रि. स. [हिं. रिझाना] मुग्ध करके। उ.—(क) रैनि नृत्यत रिझै पिय मन तड़ित तें छबि लसी—१८६२। (ख) सूर स्याम इहिं भाँति रिझै कै तुमहुँ अधर-रस लेहु—२३४३।

प्र०—रिझै लई—मुग्ध कर ली। उ.—तब भए स्याम बरस द्वादस के, रिझै लई जुवती वा छबि पर १०-३०१।

रिझौंहाँ—वि. [हिं. रीझ + औंहाँ] रीझनेवाला।

रिढ़ना, रिढ़नो—क्रि. अ. [हिं. कढ़िरना] अंग-दोष अथवा वैसे ही अन्य किसी कारण से घसिटते हुए चलना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रितयो, रितयौ—क्रि. स. [हिं. रितवना] खाली कर दिया। उ.—कुबुधि कमान चढ़ाइ कोप करि बुधि-तरकस रितयौ—१-६४।

रितवना, रितवनो—क्रि. स. [हिं. रीता+ना] रीता या खाली करना।

रिताना, रितानो—क्रि. स. [हिं. रीता] खाली करना।

रितु—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋतु] ऋतु। उ.—रितु आए को खेल कन्हैया सब दिन खेलत फाग—१०-३२८।

रितुवंती—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋतुमती] रजस्वला स्त्री।

रिद्धि, रिधि—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋद्धि] बढ़ती, समृद्धि।

रिद्धि-सिद्धि, रिधि-सिधि—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋद्धि सिद्धि] समृद्धि और वैभव।—उ.—तेरौ दुःख दूरि करिबे कौं रिधि-सिधि फिरि-फिरि जाहीं—१-३२३।

रिन—संज्ञा पुं. [सं. ऋण] ऋण।

रिनिआँ, रिनियाँ, रिनी—वि. [हिं. ऋणी] ऋणी।

रिपु—संज्ञा पुं. [सं.] दुश्मन, शत्रु। उ.—तऊ सुभाव न सीतल छाँड़ै रिपु-तन-ताप हरै—१-१७।

रिपुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] शत्रुता, वैर।

रिपुमार—संज्ञा पुं. [सं. रिपु+मार=काम] कामदेव का नाश करनेवाले। उ.—गिरिसुत तिन पति विवश करन को अक्षत लै पूजत रिपुमार—२३११।

रिम—संज्ञा पुं. [सं. अरिम्] शत्रु, बैरी।

रिमझिम—संज्ञा स्त्री. [अनु.] छोटी-छोटी बूँदों की वर्षा, फुहार।

क्रि. वि.—वर्षा की छोटी-छोटी बूँदों से।

रिमहर—संज्ञा पुं. [सं. अरिम्+हर] शत्रु-नाशक।

रिमिका—संज्ञा स्त्री. [देश.] काली मिर्च की लता।

रियासत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) राज्य। (२) रईसी।

रिर, रिरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रार] हठ, जिद।

रिरना, रिरनो, रिरिना, रिरिनो—क्रि. अ. [अनु.] गिड़गिड़ाना।

रिरिहा—वि. [हिं. रिरना] गिड़गिड़ाकर याचना करने-वाला।

रिलना, रिलनो—क्रि. अ. [हिं. रेलना] (१) घुसना, प्रवेश करना। (२) हिलना, मिलना, एक हो जाना।

रिवाज—संज्ञा पुं. [अ.] प्रथा, रीति, चलन।

रिश्ता—संज्ञा पुं. [फ़ा.] नाता, संबंध।

रिश्तेदार—संज्ञा पुं. [फ़ा.] नातेदार, संबंधी।

रिश्तेदारी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] नाता, संबंध।

रिश्वत—संज्ञा स्त्री. [अ.] घूस, उत्कोच।

रिष—संज्ञा पुं. [सं. ऋषि] ऋषि।

रिषभ—संज्ञा पुं. [सं. ऋषभ] (१) बैल। (२) ऋषभदेव। उ.—बहुरौ रिषभ बड़े जब भए। नाभि राज दै बन कौ गए—५-२।

रिषभदेव—संज्ञा पुं. [सं. ऋषभदेव] ऋषभदेव जो राजा नाभि के पुत्र थे। उ.—रिषभदेव तब जन्मे आइ, राजा के गृह बजी बधाइ—५-२।

रिषय, रिषि—संज्ञा पुं. [सं. ऋषि] ऋषि। उ.—(क) सेष सारद रिषय नारद संत चिंतत सरन—१-३०८। (ख) प्रगटे रिषय सप्त अभिराम—३-८। (ग) रिषि समाधि महँ त्योंही रह्यौ, सृंगी रिषि सौं लरिकन कह्यौ—१-२९०।

रिषिराज—संज्ञा पुं. [सं. ऋषि+राज] श्रेष्ठ ऋषि। उ.—(क) महाराज रिषिराज राजमुनि देखत रहे लजाई—१-४०। (ख) महर भवन रिषिराज गए—१०-८५।

रिषीस्वर—संज्ञा पुं. [सं. ऋषि+ईश्वर] श्रेष्ठ ऋषि। उ.—च्यवन रिषीस्वर बहु तप कियौ—९-३।

रिष्ट—वि. [सं. हृष्ट] (१) प्रसन्न। (२) मोटा-ताजा।

रिष्यमूक—संज्ञा पुं. [सं. ऋष्यमूक] दक्षिण का एक पर्वत जहाँ श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता की थी।

रिस—संज्ञा स्त्री. [सं. रुष] गुस्सा, क्रोध। उ.—(क) रिस भरि गए परम किंकर तब पकरयौ छुटि न सकौं—१-१५१। (ख) सँटिया लिए हाथ नँदरानी थर थरात रिस गात—१०-३४१।

मुहा०—रिस मारना—क्रोध को रोकना। रिस निवारना—क्रोध दूर करना। रिस निवारि—क्रोध दूर करके, क्रोध दूर करो। उ.—अपनी रिस निवारि प्रभु पितु मन अपराधी सो परम गति पाई - ७४।

रिसना, रिसनो—क्रि. स. [हिं. रसना] किसी द्रव का छोटे छिद्रों से छनछन कर बाहर आना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिसवाना, रिसवानो—क्रि.स. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होना।

रिसहा—वि. [हिं. रिस+हा] क्रोधी।

रिसहाई—वि. स्त्री. [हिं. रिसाया] क्रुद्ध, कुपित। उ.—(क) लखि लीनी तब चतुर नागरी ये मो पर सब हैं रिसहाई। (ख)जननी अतिहिं भई रिसहाई–१५४४।

रिसहाया—वि. [हिं. रिसाया] नाराज, क्रुद्ध।

रिसाइ—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होकर। उ.—(क) नाहिं कांचौ कृपानिधि हौं करौ कहा रिसाइ—१-१०६। (ख) जसोदा ग्वालिनि गारी देति रिसाइ—५१०।

रिसात—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होता है। उ.—कान्ह सौं आवत क्योंऽब्र रिसात—३६६।

रिसाति—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होती है। उ.—(क) कतहिं रिसाति जसोदा इन सौं—३५९। (ख) हँसति रिसाति बोलावति बरजति देखहु उलटी चालहिं—११८१।

रिसाना—क्रि. अ. [हिं. रिस+आना] क्रुद्ध होना।

क्रि. स.—किसी पर अप्रसन्न होना।

रिसानी—क्रि. अ. [हिं. रिसना] क्रुद्ध हुई। उ.—जसोदा एतो कहा रिसानी – १०-३४३।

रिसाने—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध हुए। उ.—(क) आपुहिं-आपु बलकि भए ठाढ़े, अब तुम कहा रिसाने—१०-२१४। (ख) आपुस ही मैं सबै रिसाने—१०६०।

रिसानो—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होना।

क्रि. स.—किसी पर क्रुद्ध होना, बिगड़ना।

रिसान्यो, रिसान्यौ—क्रि. स. [हिं. रिसाना] (किसी पर) क्रुद्ध हुआ। उ.—(क) सूर स्याम सँग मन उठि लाग्यौ मो पर बारंबार रिसान्यौ—१४६०। (ख) मोपर कहा रिसान्यौ—१६७१।

रिसायौ—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध हुआ। उ.—ध्रुव बिमाता-बचन सुनि रिसायौ—४-१०।

रिसाल—संज्ञा पुं. [अ. इरसाल] राज्य-कर।

रिसाला—संज्ञा पुं. [फ़ा.] घुड़सवारों की सेना।

रिसाहि—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध होती है। उ.—तनक दधि कारन जसोदा इतौ कहा रिसाहि—३५०।

रिसि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रिस] क्रोध।

रिसिआना, रिसिआनो—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध या कुपित होना।

क्रि. स.—किसी पर क्रुद्ध होना।

रिसिक—संज्ञा स्त्री. [सं. रिषीक] तलवार।

रिसियाना, रिसियानो—क्रि. अ. [हिं. रिसाना] क्रुद्ध या कुपित होना।

क्रि. स.—किसी पर क्रुद्ध होना।

रिसैयाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. रिस] गुस्सा, क्रोध। उ.—खेलत मैं को काकौ गुसैयाँ। हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस हीं कत करत रिसैयाँ—१०-२४५।

रिसौहाँ—वि. [हिं. रिस+औहाँ] (१) कुछ-कुछ क्रुद्ध। (२) क्रोध से युक्त।

रिहा—वि. [फ़ा.] छूटा हुआ, मुक्त।

रिहाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] छुटकारा, मुक्ति।

रिहाए—क्रि. स. [हिं. रिहाना] मुक्त किये, छुड़ाये। उ.—सूर कृपालु भए करुनामय आपुन हाथ सों दूत रिहाए।

रिहाना, रिहानो—क्रि.स. [फ़ा.रिहा] छुड़ाना, मुक्त करना।

क्रि. अ.—छूटना, मुक्त होना।

रींधना, रींधनो—क्रि. स. [सं. रंधन] (भोजन) पकाना, रांधना।

री—अव्य. [सं. रे] (१) स्त्री के लिए संबोधन। उ.—(क) राम जू कहाँ गए री माता—९-४९। (ख) सखी री, काहैं गहरु लगावति—१०-२३। (ग) मैया री, मोहिं माखन भावै—१०-२६४। (घ) सुनि सुनि री तैं महरि जसोदा तैं सुत बड़ी लड़ायौ—१०-३३९। (२) मादा पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि के लिए संबोधन। उ.—भृंगी री, भजि स्याम कमल-पद जहाँ न निसि कौ त्रास—१-३३९।

रीछ—संज्ञा पुं. [सं. ऋक्ष] भालू। उ.—रीछ लंगूर किलकारि लागे करन—९-१३८।

रीछराज—संज्ञा पुं. [सं. ऋक्ष+राज] जामबंत।

रीझ—संज्ञा स्त्री. [सं. रंजन] (१) प्रसन्न होने की क्रिया या भाव। उ.—तनक रीझ पै देत सकल तन—१०-१५२। (२) मुग्ध, आसक्त या मोहित होने की क्रिया या भाव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रि. अ. [हिं. रीझना] प्रसन्न होकर। उ.—रे मूरख, तू कहा पढ़ायौ कैसे देउँ तोहिं रीझ—सारा. ११८।

रीझत—क्रि. अ. [हिं. रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होता है। उ.—जौ रीझत नहिं नाथ गुसाईं तौ कत जात जँच्यौ—१७४।

रीझति—क्रि. अ. [हिं. रीझना] मुग्ध या मोहित होती है। उ.—रीझति नारि कहति मथुरा की—सारा. ५०४।

रीझना, रीझनो—क्रि. अ. [सं. रंजन] (१) प्रसन्न या अनुकूल होना। (२) मुग्ध या मोहित होना।

रीझहीं—क्रि. अ. [हिं. रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होते हैं। उ.—कबहुँ किएँ भक्ति हू के न ये रीझहीं—८-८।

रीझि—क्रि. अ. [हिं. रीझना] (१) प्रसन्न या अनुकूल होकर। उ.—सरबस प्रभु रीझि देत तुलसी कैं पाता—१-१२३।

प्र०—रीझि जाहीं—प्रसन्न हो जाते हैं। उ.—कबहुँ किएँ बैर के रीझि जाहीं—८-८।

(२) मुग्ध या मोहित होकर। उ.—रीझि तेहि रूप दियौ अंग सूधौ कियौ—२५८४।

रीझीं—क्रि. अ. [हिं. रीझना] मुग्ध या मोहित हुईं। उ.—ब्रज-ललना देखति गिरिधर कौं। एक-एक अँग-अँग पर रीझीं, अरुझीं मुरलीधर कौं—५४७।

रीझी—क्रि. अ. [हिं. रीझना] मुग्ध या मोहित हो गयी। उ.—देखत रीझी घोषकुमारी—७९९।

रीझे—क्रि. अ. [हिं. रीझना] (१) प्रसन्न हो गये। उ.—सूरदास प्रभु करत कलेवा रीझे स्याम सुजान—१०-२१२। (२) मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—कैधौं मृग-जूथ जुरे मुरली-धुनि रीझे—६४२। (ख) सूर-प्रभु सर्वज्ञ स्वामी देखि रीझे भारि—७८१। (ग) कहा देखि रीझे राधा सौं चंचल नैन बिसालहिं—१० उ०-१०१।

रीझै—क्रि. अ. [हिं. रीझना] प्रसन्न या मुदित होती है। उ.—मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै—१०-२१५।

रीझौं—क्रि. अ. [हिं. रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होऊँगा। उ.—ऐसैं नहिं रीझौं मैं तुम सौं—७९१।

रीठ, रीठि—संज्ञा स्त्री. [सं. रिष्ट] तलवार।

वि.—(१) अशुभ। (२) बुरा।

रीठा—संज्ञा पुं. [सं. रिष्ट, प्रा. रिट्ठ] एक वृक्ष या उसका छोटा और काला फल।

रीढ़—संज्ञा स्त्री. [सं. रीढ़क] पीठ की खड़ी हड्डी, मेरुदंड।

रीत—संज्ञा स्त्री. [सं. रीति] (१) प्रकार, ढंग। (२) रिवाज, प्रथा।

रीतना, रीतनो—क्रि. अ. [सं. रिक्त, प्रा. रित्त + हिं. ना] खाली या रिक्त होना।

क्रि. स.—खाली या रिक्त करना।

रीता—वि. [सं. रिक्त, प्रा. रित्त] खाली, रिक्त।

रीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) ढंग, प्रकार, ढब। उ.—(क) किंचित स्वाद स्वान-बानर ज्यौं घातक रीति ठटी—१-९८। (ख) जा दिना तैं जन्म पायौ यहै मेरी रीति—१-१०६। (ग) मंत्री काम क्रोध निज दोऊ अपनी-अपनी रीति—१-१४१। (घ) कहाँ वह प्रीति कहाँ वह बिछुरन कहाँ मधुबन की रीति—२७१६। (२) रस्म-रिवाज, परिपाटी उ.—(क) नई रीति इन अबहिं चलाई १०४१। (३) स्थिति, दशा। उ.—भई रीति हठि उरग छछूँदरि छाँड़ै बनै न खात—३०५७। (४) नियम। (५) साहित्य में वर्णन की वह वर्ण-योजना जिससे उसमें ओज, प्रसाद या माधुर्य आता है। (६) स्वभाव।

रीती—वि. स्त्री. [हिं. रीता] खाली, रिक्त। उ.—(क) देखै जाइ मटुकिया रीती—१०-२७१। (ख) गहि गहि पानि मटुकिया रीती उरहन कैं मिस आवति जाति—१०-३३२।

संज्ञा स्त्री. [सं. रीति] (१) ढंग। (२) परिपाटी।

रीते—वि. बहु. [हिं. रीता] खाली, रिक्त।

रीतै—क्रि. स. [हिं. रीतना] खाली या रिक्त करता है। उ.—रीतै, भरै, भरे पुनि ढारै—१-१०५।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीतौ—वि. [हिं. रीता] खाली, रिक्त । उ.—पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग–१-३३२ ।

रीत्यो, रीत्यौ—क्रि. अ. [हिं. रीतना] खाली या रिक्त कर दिया है । उ.—हमहूँ समुझि परी नीके करि यहै असित तनु रीत्यौ—२८८४ ।

रीधि सीधि—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋद्धि-सिद्धि] ऋद्धि-सिद्धि ।

रीस—संज्ञा स्त्री. [हिं. रिस] गुस्सा, क्रोध ।

संज्ञा स्त्री. [सं. ईर्ष्या] (१) डाह, ईर्ष्या । (२) स्पर्द्धा, होड़ । उ.—कहचौ हिमालय सिव प्रभु ईस । हमकौं उनकौं कैसी रीस ।

रीसना, रीसनो—क्रि. अ. [हिं. रिस] क्रुद्ध होना ।

रुंज—संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का बाजा । उ. (क) रुंज मुरज डफ झांझ झालरी यंत्र पखावज तार—२४३७ । (ख) बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ रुंज मुरुंज बाँसुरि ध्वनि थोरी—२४४८ ।

रुंड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बिना सिर का धड़, कबंध । (२) शरीर जिसके हाथ-पैर कटे हों ।

रुंदाइ—क्रि. स. [हिं. रुँदाना] पैरों से कुचलवा कर । उ.—मारौं गज तैं रुँदाइ मनहिं यह अनुमान्यो —२४७५ ।

रुंदाऊँ—क्रि. स. [हिं. रुदाना] पैरों से कुचलवा दूँगा । उ.—रंगभूमि गज चरन रुँदाऊँ—२४५९ ।

रुँदाना, रुँदानो, रुँदवाना, रुँदवानो—क्रि. स. [हिं. रौंदना का सक. या प्रेर.] पैरों से कुचलवाना, खुँदवाना ।

रुँधती—संज्ञा स्त्री. [सं. अरुंधती] वशिष्ठ मुनि की स्त्री ।

रुँधना, रुँधनो—क्रि. अ. [सं. रुद्ध+ना] (१) मार्ग न मिलने से रुकना या अटकना । (२) फँसना, उलझना । (३) काम में लगना । (४) रोक या रक्षा के लिए कँटीली झाड़ी आदि से घेरा जाना ।

रुंधि—क्रि. अ. [हिं. रुँधना] फाँसकर, बंद करके । उ.—ब्रज पिंजरी रुँधि मानो राखे निकसन को अकुलात—२७०३ ।

रु—अव्य. [हिं. अरु] और ।

रुआ—संज्ञा पुं. [सं. रोम] (१) शरीर के छोटे बाल, रोम । (२) सेमर के फूल का घूआ ।

रुआना, रुआनो—क्रि. स. [हिं. रुलाना] रुलाना ।

रुआब—संज्ञा पुं. [हिं. रोब] (१) धाक । (२) डर ।

रुई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूई] कपास, रूई । उ.—यह संसार सुआ-सेमर ज्यौं सुन्दर देखि लुभायौ । चाखन लाग्यौ रुई गई उड़ि हाथ कछू नहिं आयौ–१-३३५ ।

रुएँदा—वि. [हिं. रोना+ऐंदा] रुआसा ।

रुकना, रुकनो—क्रि. अ. [हिं. रोक] (१) मार्ग न मिलने से अटकना या ठहरना । (२) स्वेच्छा से ठहर जाना या आगे न बढ़ना । (३) सोच-विचार के कारण आगे काम न करना । (४) काम आगे न होना । (५) क्रम या सिलसिला बंद हो जाना ।

रुकमिनि, रुकमिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रुक्मिणी] रुक्मिणी जो श्रीकृष्ण की पहली पटरानी थी ।

रुकवाना, रुकवानो, रुकाना, रुकानो—क्रि. स. [हिं. रुकना का सक. या प्रेर.] रुकने या रोकने को प्रवृत्त करना ।

रुकाव—संज्ञा पुं. [हिं. रुकना] रुकावट, अटकाव ।

रुकावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. रुकना] (१) रोकने की क्रिया या भाव । (२) बाधा, अड़चन ।

रुकुम—संज्ञा पुं. [सं. रुक्म] रुक्म जो रुक्मिणी का भाई और श्रीकृष्ण का साला था ।

रुकुमि, रुकुमी—संज्ञा पुं. [सं. रुक्मी] रुक्मी जो रुक्मिणी का भाई और श्रीकृष्ण का साला था ।

रुक्का—संज्ञा पुं. [अ. रुक्कअ] छोटा पत्र या पुरजा । उ.—एक उपाय करौं कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ । पतित-उधारन नाम सूर प्रभु यह रुक्का पहुँचाऊँ—९-१७२ ।

रुक्ख—संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष ।

संज्ञा पुं. [हिं. रुख] रुख ।

रुक्म—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सोना, स्वर्ण । (२) रुक्मिणी का एक भाई जो उसका विवाह शिशुपाल से करना चाहता था । रुक्मिणी-हरण के अवसर पर रुक्म के विरोध करने पर श्रीकृष्ण ने इसके बाल मूड़ कर छोड़ दिया था । उ.—कुंदनपुर को भीषम राई । ....। रुक्म आदि ताके सुत पांच—१० उ.-७ ।

रुक्मिणि, रुक्मिणी, रुक्मिनि, रुक्मिनी—संज्ञा स्त्री.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[सं. रुक्मिणी] श्रीकृष्ण की पहली पटरानी जो विदर्भ के राजा भीष्मक की पुत्री थी। उ.—कुंदन-पुर कौ भीषम राई।"""""। रुक्मिणी पुत्री हरि रँग राँच—१० उ.-७।

रुक्मी—संज्ञा पुं. [सं. रुक्मिन्] रुक्मिणी का एक भाई।

रुक्ष—वि. [सं. रूक्ष] (१) जिसमें चिकनाहट या स्निग्धता न हो, रूखा। (२) जिसमें रसिकता न हो। (३) जिसमें रस न हो। (४) जिसमें जल या तरी न हो।

रुक्षता—संज्ञा स्त्री. [सं. रूक्षता] (१) रूखापन। (२) सूखापन। (३) अरसिकता।

रुख—संज्ञा पुं. [फ़ा. रुख़] (१) मुख का भाव, आकृति। (२) आकृति या चेष्टा से प्रकट इच्छा। उ.—(क) जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं कहति बीर के रुख की —४२५। (ख) जितहीं जितहिं रुख करैं लड़ैती तितहीं आपुन आवै—२२७५।

मुहा०—रुख देना—ध्यान देना। रुख फेरना या बदलना—ध्यान न देना।

(३) कृपादृष्टि।

मुहा०—रुख फेरना या बदलना—अप्रसन्न होना।

(४) सामने या आगे का भाग। (५) शतरंज का एक मोहरा जो 'हाथी' कहलाता है।

क्रि. वि.—(१) तरफ, ओर। (२) सामने।

संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष।

वि. [हिं. रूखा] (१) सूखा, शुष्क। (२) अरसिक।

रुखनि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. रुख+नि] इच्छा के अनुकूल। उ.—धन्य नंद धनि मातु जसोमति चलत जाके रुखनि—९८१।

रुखसत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) विदाई। (२) छुट्टी।

रुखाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूखा] (१) रूखापन, उदासीनता। उ.—कै तौ रुखाई छाँड़िए—१८०९। (२) सूखापन, शुष्कता।

रुखानल—संज्ञा पुं. [सं. रोषानल] क्रोधाग्नि।

रुखाना, रुखानो—क्रि. अ. [हिं. रूखा] (१) चिकना न रह जाना। (२) सूख जाना। (३) उदास, उदासीन या कठोर हो जाना।

रुखानी—संज्ञा स्त्री. [सं. रोक+खनित्र] एक औजार।

रुखावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूखा] रूखापन।

रुखिता—संज्ञा स्त्री. [सं. रुषिता] मानवती नायिका

रुखौंहाँ—वि. [हिं. रूखा] रूखेपन से युक्त।

रुग्ण, रुग्न—वि. [सं. रुग्ण] रोगी।

रुग्णता, रुग्नता—संज्ञा स्त्री. [सं. रुग्ण] रोगी होने का भाव।

रुच—संज्ञा स्त्री. [सं. रुचि] प्रवृत्ति, इच्छा।

रुचना, रुचनो—क्रि. अ. [सं. रुचि] भला लगना।

रुचि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रवृत्ति, झुकाव, इच्छा। उ.—कोटि लालच जौ दिखावहु नाहिनैं रुचि आन—१-१०६। (२) प्रीति, चाह। उ.—हम रुचि क... सूर के प्रभु सौं दूजो मन न सुहाइ—३२१०। (३) सुख, आनंद। उ.—कोटि देहु तौ रुचि नहिं मा... बिनु देखे नहिं जैहौं—१०-३५।

प्र०—रुचि करि—बहुत प्रसन्न या हर्षित होकर। उ.—कान्हैं लै जसुमति कोरा तैं रुचि करि कंठ लगा... —१०-५३।

मुहा०—रुचि-रुचि—बहुत चाव या उमंग से।

(४) छवि, शोभा। उ.—सुख मैं सुख औरै रुचि बाढ़ति हँसत देत किलकारी—१०-९१। (५) भूख, भोजन की इच्छा। (६) स्वाद।

प्र०—रुचि करि—स्वाद लेकर। उ.—बन फ... लै मँगाइ कै रुचि करि लागे खान—४३७। (७) एक अप्सरा।

वि.—फबता हुआ, शोभा के अनुकूल।

क्रि. वि.—सुख, सुविधा या इच्छा के अनुसार। उ.—तेल लगाइ कियौ रुचि मर्दन—१-५२।

रुचिकर—वि. [सं.] अच्छा लगनेवाला।

रुचिकारक—त्रि. [सं.] (१) अच्छा लगनेवाला। (२) स्वादिष्ट।

रुचिकारि, रुचिकारी—वि. [सं. रुचिकारिन्, हिं. रुचि... कारी] (१) अच्छा लगने वाला, मनोहर। उ.—कोउ निरखि कटि पीत काछनी मेखला रुचिकारि—६३४। (२) स्वादिष्ट।

रुचिमान—वि. [सं. रुचि+हिं. मान] सुंदर, मनोहर।

रुचिर—वि. [सं.] (१) सुंदर, मनोहर। उ.—रुचि...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमावली हरि कैं चारु उदर सुदेस—६३४ (२) मीठा।
रुचिरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुंदर होने का भाव।
रुचिराइ, रुचिराई—संज्ञा स्त्री. [सं. रुचिर] सुंदरता।
रुची—संज्ञा स्त्री. [सं. रुचि] (१) इच्छा। (२) स्वाद।
रुचै—क्रि. अ. [हिं. रुचना] अच्छा या प्रिय लगे। उ.—(क) कछू हौंस राखै जनि मेरी जोइ जोइ मोहिं रुचै री—१०-१७६। (ख) जोइ जोइ रुचै सोइ तुम मोपैं माँगि लेहु किन तात—१०-३०८।
रुच्छ—वि. [हिं. रुक्ष] (१) रूखा। (२) अप्रसन्न।
संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष।
रुज—संज्ञा पुं. [सं. रुज] (१) कष्ट। (२) घाव। (३) रोग। (४) एक बाजा।
रुजा—संज्ञा स्त्री. [सं. रुज] (१) रोग। (२) पीड़ा।
रुजाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] अनेक रोग या कष्ट।
रुजी—वि. [हिं. रुज] रोगी, अस्वस्थ।
रुजू—वि. [अ. रुजूअ] (१) प्रवृत्त। (२) किसी ओर ध्यान लगाये।
रुझना, रुझनो—क्रि. अ. [सं. रुद्ध, प्रा. रुज्झ] घाव भरना।
क्रि. अ. [हिं. उलझना] उलझना।
रुझान—संज्ञा पुं. [अ. रुजहान] प्रवृत्ति।
रुठ—संज्ञा पुं. [सं. रुष्ट, प्रा. रुट्ठ] गुस्सा, क्रोध।
रुठना, रुठनो—क्रि. अ. [हिं. रूठना] रूठ जाना।
रुठाना, रुठानो—क्रि. स. [हिं. रूठना] अप्रसन्न कर देना।
रुठायहौ—क्रि. स. [हिं. रुठाना] अप्रसन्न करोगे। उ. सुनहु सूरज प्रभु अबके मनाइ ल्याउँ बहुरि रुठायहौ ज़ू तौ मेरी राम राम है जू—२२४१।
रुणित—वि. [सं.] बजता या शब्द करता हुआ। उ.—चरन रुणित नूपुर ध्वनि मानो सूर बिहरत है बाल मराल।
रुत—संज्ञा स्त्री. [सं. ऋतु] ऋतु।
संज्ञा पुं. [सं.] (१) कलरव। (२) ध्वनि।
रुतबा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) पद। (२) प्रतिष्ठा।
रुदंती—वि. [हिं. रुदना] रोती-बिलखती हुई।
रुदति—क्रि. वि. [हिं. रुदना] रोती-बिलखती। उ.—सकल सुरभि यूथ दिन प्रति रुदति पुर दिसि धाइ—३४२४।
रुदन—संज्ञा पुं. [सं. रोदन] रोने की क्रिया, क्रंदन। उ.—(क) मीड़त हाथ सीस धुनि ढोरत रुदन करत नृप पारथ—१-१२७। (ख) घरी एक सजन कुटुंब मिलि बैठे रुदन बिलाप कराहीं—१-३१९। (ग) घरे न धीर अनमने रुदन बल सो हठ करनि परे—पृ. ३३१ (५)।
रुदना, रुदनो—क्रि. अ. [हिं. रुदन] रोना, बिलापना।
रुदराच्छ, रुदराछ—संज्ञा पुं. [सं. रुद्राक्ष] रुद्राक्ष।
रुदित—वि. [सं.] रोता हुआ।
रुद्ध—वि. [सं.] (१) घेरा या रोका हुआ। (२) बंद, मुँदा हुआ।
यौ०—रुद्धकंठ—जो प्रेमावेश आदि के कारण बोल न सके।
रुद्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक गणदेवता जो क्रोध-रूप माने जाते हैं। इनकी संख्या ग्यारह है। उ.—तब इक पुरुष भौंह तैं भयौ, होत समय तिन रोदन ठयौ। ताकौं नाम रुद्र बिधि राख्यौ—३-७। (२) ग्यारह की संख्या। (३) शिव का एक रूप। (४) रौद्र रस।
वि.—डरावना, भयंकर।
रुद्रक—संज्ञा पुं. [सं. रुद्राक्ष] रुद्राक्ष।
रुद्रतेज—संज्ञा पुं. [सं. रुद्र + तेज] स्वामिकार्तिक।
रुद्रपति—संज्ञा पुं. [सं.] शिव, महादेव। उ.—रुद्रपति, छुद्रपति लोकपति वोकपति धरनिपति, गगनपति अगमबानी—१५२२।
रुद्राक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] एक वृक्ष का बीज जिसकी माला शैव लोग पहनते हैं।
रुद्राणी, रुद्रानी—संज्ञा स्त्री. [सं. रुद्राणी] पार्वती।
रुधिर—संज्ञा पुं. [सं.] रक्त, लहू। उ.—रुधिर मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर गंध गंधात—२-२४।
रुधिराशी—वि. [सं.] रक्त पीनेवाला।
रुनकझुनक—संज्ञा स्त्री [अनु.] नूपुर आदि का रुनझुन शब्द। उ.—रुनकझुनक कर कंकन बाजै—१०-२९९।
रुनझुन—संज्ञा स्त्री. [अनु.] नूपुर आदि की झनकार। उ.—(क) कटि किंकिनि रुनझुन सुनि तन की हंस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करत किलकारी। (ख) रुनझुन करति पाइँ पैंजनियाँ —१०-१०६।

रुनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. अरुणाई] लाली, अरुणता।

रुनित—वि. [सं. रुणित] बजता या झनकार करता हुआ। उ.—चरन रुनित नूपुर कटि किंकिन करतल ताल रसाल—पृ. ३५० (६४)।

रुनी—संज्ञा पुं. [देश.] घोड़ों की एक जाति।

रुनुक, रुनुकझुनुक—संज्ञा स्त्री. [अनु.] नूपुर आदि की झनकार या रुनझुन ध्वनि। उ.—(क) रुनुक झुनुक नूपुर पग बाजत धुनि अति ही मन-हरनी—१०-१२३ (ख) सूरदास प्रभु गिरिवरधर को चली मिलन गजराजगामिनी झनक रुनुक बन धाम—१९०२।

रुनुझुनु—संज्ञा स्त्री. [अनु.] नूपुर आदि की झनकार।

रुपना, रुपनो—क्रि. अ. [हिं. रोपना] (१) रोपा या लगाया जाना। (२) डट जाना, अड़ जाना।

रुपमनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूपवती] सुंदरी (स्त्री)।

रुपया—संज्ञा पुं. [सं. रुप्य] (१) चाँदी का एक सिक्का जो पहले सोलह आने के बराबर था और अब सौ नये पैसे के बराबर हैं। (२) धन-सम्पत्ति।

मुहा०—रुपया उड़ाना—खूब धन खर्च करना। रुपया जोड़ना—धन जमा करना। रुपया पानी में फेंकना—व्यर्थ धन खरचना।

यौ०—रुपया-पैसा—धन-सम्पत्ति।

रुपहरा, रुपहला—वि. [हिं. रूपा=चाँदी, रुपहला] चाँदी जैसे उज्ज्वल रंग का।

रुपैया—संज्ञा पुं. [हिं. रुपया] रुपया।

रुपौला—वि. [हिं. रुपहला] रुपहला।

रुबाइ, रुबाई—संज्ञा स्त्री. [अ.] वह कविता जिसमें चार मिसरे हों।

रुमावलि, रुमावली—संज्ञा स्त्री. [सं. रोमावली] नाभि से पेट तक गयी हुई रोयों की पंक्ति।

रुरना, रुरनो—क्रि. अ. [देश.] छा जाना।

रुराइ, रुराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूरा] सुंदरता। उ.—मैं सब लिखि सोभा जो बनाई। सजल जलद तन बसन कनक रुचि उर बहु दाम रुराई।

रुरुआ—संज्ञा पुं. [हिं. ररना, ररुआ] एक तरह का उल्लू जिसके संबंध में प्रसिद्ध है कि यदि वह किसी नाम लेकर रटने लगे तो वह मर जाता है।

रुरुक्ष—वि. [सं.] रूखा, रुक्ष।

रुलति क्रि. अ. [हिं. रुलना] हिलती-डोलती है। —वेनी पीठि रुलति झकझोरी—६७२।

रुलना, रुलनो—क्रि. अ. [सं. लुलन] (१) मारे-मारे फिरना या घूमना। (२) इधर-उधर हिलना-डोलना

रुलाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोना.] (१) रोने की क्रिया या भाव। (२) रोने की प्रवृत्ति या आवेग।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रुलना] हिलना-डोलना। —नील, सेत अरु पीत लाल मनि लटकन भा[...] रुलाई—१०-१०८।

रुलाना, रुलानो—क्रि. स. [हिं. रोना का प्रेर.] रो[ने] में प्रवृत्त कराना।

क्रि. स. [हिं. रुलना] (१) इधर-उधर घुमाना फिराना। (२) हिलाना-डोलाना। (३) नष्ट करना।

रुवाँ—संज्ञा पुं. [हिं. रोवाँ] सेमल के फूल का घूआ।

रुवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रुलाई] रोने की क्रिया या भाव।

रुष—संज्ञा पुं. [सं.] गुस्सा, क्रोध।

संज्ञा पुं. [हिं. रुख] (१) चेहरे का भाव। (२) चेष्टा या आकृति द्वारा प्रकट इच्छा। (३) शतरंज का 'हाथी' नामक मोहरा।

रुषा – संज्ञा स्त्री. [सं.] गुस्सा, क्रोध।

रुष्ट—वि. [सं.] क्रुद्ध, अप्रसन्न।

रुष्टता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अप्रसन्नता।

रुष्ट-पुष्ट—वि. [सं. हृष्टपुष्ट] मोटा-ताजा।

रुष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] गुस्सा, क्रोध।

रुसना, रुसनो—क्रि. अ. [हिं. रूसना] नाराज होना।

रुसवा—वि. [फ़ा.] बदनाम, निंदित।

रुसवाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] बदनामी।

रुसित—वि. [सं. रुषित] अप्रसन्न, क्रुद्ध।

रुस्तम—संज्ञा पुं. [अ.] (१) फ़ारस का एक प्रसिद्ध वीर। (२) वीर पुरुष।

मुहा०—छिपा रुस्तम—वह जो देखने में सीधा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सादा और साधारण हो, परन्तु काम पड़ने पर बहुत गुणी, योग्य और कुशल सिद्ध हो।

रुह—वि. [सं.] उत्पन्न।

रुहठि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोहट=रोना] रूठने की क्रिया या भाव। उ.—रुहठि करै, तासौं को खेलै —१०-२४५।

रुहिर—संज्ञा पुं. [सं. रुधिर, प्रा. रुहिर] खून, रक्त।

रुहिराता—वि. [प्रा. रुहिर+हिं. राता] खून छलकने से लाल हो जानेवाला।

रुहिराते—वि. [हिं. रुहिराता] जो खून छलकने से लाल हो गया हो। उ.—उर नख-छत कंकन छत पाछे सोभित है रुहिराते—२१३६।

रूँगटा—संज्ञा पुं. [हिं. रोंगटा] रोम, रोआँ।

रूँगटाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोंगटा+वाली] भेंड़।

रूँदना—क्रि. स. [हिं. रौंदना] पैरों से कुचलना।

रूँध—वि. [सं. रुद्ध] रुका हुआ, अवरुद्ध।

रूँधना, रूँधनो—क्रि. स. [सं. रुंधन] (१) कटीली झाड़ी आदि से घेरना, बाढ़ लगाना। (२) चारो ओर से घेरकर रोकना। (३) मार्ग बन्द करना।

रूँधे—क्रि. स. [हिं. रूँधना] बंद या अवरुद्ध कर दिये। उ.—सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा घेरचौ आइ—१-३१६।

रूआ—संज्ञा पुं. [हिं. घूआ] कपास का घूआ।

रूइ, रूई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोवाँ, रोईं, रूई] कपास के कोष के अन्दर का घूआ जिसके चिटकने पर कोमल रेशे के लच्छे निकलते हैं। उ.—पवन लागत ज्यौं रूइ उड़ाइ—११-३।

मुहा०—रूई का गाला—बहुत कोमल और सफेद। रूई की तरह तूमना—(१) अच्छी तरह नोचना। (२) बहुत मारना-पीटना। रूई की तरह धुनना या धुनकना—बहुत मारना-पीटना। रूई सा—बहुत कोमल।

रूख—संज्ञा पुं. [सं. वृक्ष, प्रा. रुक्ख] पेड़, वृक्ष। उ.—(क) बूझो द्रुम प्रति रूख राय कोउ कहै न पिय को नाउँ—१८१५। (ख) कै ए दोऊ रूख हमारे यमलार्जुन तोरे—३०८१। (ग) पाके फल वै देखि मनोहर चढ़े कृपा करि रूख—३२२७।

वि. [हिं. रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।

रूखड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष।

रूखना, रूखनो—क्रि. अ. [हिं. रूसना] रूठना।

रूखरा—संज्ञा पुं. [हिं. रूखड़ा] पेड़, वृक्ष।

वि. [हिं. रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।

रूखा—वि. [सं. रुक्ष, प्रा. रुक्ख] (१) जो चिकना न हो। (२) जिसमें चिकना पदार्थ न लगा हो। (३) जो रुचिकर, चटपटा या स्वादिष्ट न हो।

मुहा०—रूखा-सूखा—जिसमें घी-तेल आदि रुचिकर या स्वादिष्ट बनानेवाले पदार्थ न पड़े हों।

(४) सूखा, नीरस। (५) जिसमें प्रेम या रसिकता न हो। (६) कठोर, परुष, अनुदारतापूर्ण। उ.—लंगर ढीठ, गुमानी, टूँडक, महा मसखरा रूखा—१-१८६।

मुहा०—रूखा पड़ना या होना—(१) बेमुरौव्वती करना। (२) क्रुद्ध या अप्रसन्न होना।

(७) विरक्त, उदासीन।

रूखापन—संज्ञा पुं. [हिं. रूखा+पन] (१) चिकनाहट का अभाव। (२) शुष्कता। (३) नीरसता। (४) अरसिकता। (५) व्यवहार या वचन की कठोरता। (६) उदासीनता। (७) स्वादहीनता।

रूखी—वि. स्त्री. [हिं. रूखा] (१) जिसमें चिकने पदार्थ न लगे हों। उ.—षटरस भोजन त्यागि कही को रूखी रोटी खात—पृ. ३२१। (२) कठोर, परुष। उ.—अब कैसे रहति स्याम रँग राती ए बातैं सुनि रूखी—३०२९।

रूखे—वि. [हिं. रूखा] (१) कठोर, अप्रसन्न।

मुहा०—रूखे हो—अप्रसन्न या क्रुद्ध हो। उ.—हमहीं पर पिय रूखे हो—२१४१। ह्वै गए रूखे—अप्रसन्न या क्रुद्ध हो गये। उ.—यह सुनि कै ह्वै गए वै रूखे—८९६।

रूखो, रूखौ—वि. [हिं. रूखा] बिना चिकनाई का। उ.—साँच-झूठ करि माया जोरी आपुन रूखो खातौ —१-३०२।

रूचना, रूचनो—क्रि. स. [हिं. रुचना] रुचिकर लगना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूझना, रूझनो—क्रि. अ. [हिं. उलझना] उलझना।

रूठ—संज्ञा स्त्री. [सं. रुष्टि, प्रा. रुट्ठि] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) गुस्सा, क्रोध।

रूठन – संज्ञा स्त्री. [हिं. रूठना] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) कोध, अप्रसन्नता।

रूठना—क्रि. अ. [सं. रुष्ट, प्रा. रुट्ठ + हिं. ना] अप्रसन्न या क्रुद्ध होना, रूसना।

रूठनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूठना] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) कोप, अप्रसन्नता।

रूठनो—क्रि. अ. [हिं. रूठना] रूसना।

रूठब – संज्ञा स्त्री. [हिं. रूठना] रूठने की क्रिया या भाव। उ.—तोहिं किन रूठब सिखई प्यारी–२२०१।

रूठि—क्रि. अ. [हिं. रूठना] क्रुद्ध या अप्रसन्न होकर। उ.—(क) ताकौ काल रूठि का करिहै जो चित चरन धरे—१-८२। (ख) हौं जु रही हठि रूठि मौन धरि—२७३६। (ग) कितिक कठिन सुरतरु प्रसून की, या कारन तू रूठि रही री—१० उ.-३०।

रूठेहिं—वि. सवि. [हिं. रूठना] रूठे हुए या अप्रसन्न (व्यक्ति) को। उ.—रूठेहिं आदर देत सयाने इहै सूरज सगाइए—१६८८।

रूड़, रूड़ा—वि. [हिं. रूरा] श्रेष्ठ, उत्तम।

रूढ़—वि. [सं.] (१) सवार, आरूढ़। (२) प्रसिद्ध, प्रचलित। (३) गँवार, उजड्ड। (४) कठिन, कठोर। (५) अविभाज्य (संख्या)।

संज्ञा पुं.—वह शब्द जो दो शब्दों या शब्द और प्रत्यय के योग से बना हो, परंतु जिसके खंड सार्थ न हों।

रूढ़ा—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रसिद्ध, प्रचलित।

रूढ़ि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उत्पत्ति। (२) प्रसिद्धि, ख्याति। (३) प्रथा, चाल। (४) विचार, निश्चय। (५) रूढ़ शब्द की शक्ति जिससे वह खंडों के सार्थ न होने पर भी अर्थ का बोध कराता है।

रूप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूरत-शकल, आकार। उ.—रूप-रेख-गुन जाति-जुगुति बिनु निरालंब कित धावै—१-२। (२) स्वभाव। (३) सुंदरता।

मुहा०—रूप हरना—अपने सुंदरतर या सुंदरतम रूप से दूसरे या दूसरों को लज्जित करना।

(४) शरीर, देह। उ.—(क) रहि न सके नरसिंह रूप धरि गहि कर असुर पछारयौ—१-१०९। (ख) काग-रूप करि रिषि गृह आयौ, अर्ध निसा तिहिं बोल सुनायौ—६-८। (ग) धेनु-रूप धरि पुहुमि पुकारी सिव-बिरंचि के द्वारा—१०-४।

मुहा०—रूप लेना—देह धरना। रूप लीनो—देह धारण की। उ. पाछें पृथु को रूप हरि लीनो।

(५) वेश, भेस। उ.—(क) रूप मोहिनी धरि ब्रज आई—१०-५०। (ख) अति मोहिनी रूप धरि लीनौ—१०-५१। (६) दशा, स्थिति, अवस्था। (७) समानता, सादृश्य। (८) भेद। (९) चिह्न, लक्षण। (१०) चाँदी, रूपा।

वि.—सुंदर, मनोहर।

रूपक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मूर्ति। (२) दृश्यकाव्य। (३) एक अर्थालंकार।

रूपगर्विता—वि. [सं.] जिसे रूप का गर्व हो।

रूपचतुर्दशी—संज्ञा स्त्री. [सं.] कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी जिसे 'नरकाचौदस' भी कहते हैं।

रूपजीविनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

रूपधारी—वि. [सं.] (दूसरे का) रूप धारण करनेवाला।

रूपता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रूप का भाव। (२) सुंदरता, मनोहरता।

रूपमंजरी – संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) एक फूल। (२) धान-विशेष।

रूपमनी—वि. स्त्री. [हिं. रूपमान] रूपवती, सुंदरी।

रूपमय—वि. [सं. रूप + हिं. मय] बहुत सुन्दर। उ. — नील निचोल छाल भइ फनि मनि भूषन रोम रोम पट उदित रूपमय।

रूपमान – वि. [सं. रूपवान्] बहुत सुन्दर।

रूपरेख, रूपरेखा—संज्ञा स्त्री. [सं. रूप + रेखा] (१) आकार, शक्ल। उ.—(क) कहा करौं नीके करि हरि को रूप-रेख नहिं पावति। (ख) आदि अनादि रूपरेखा नहिं, इनतैं नहिं प्रभु और बियौ—१०-८५। (२) ढाँचा। (३) चिह्न, लक्षण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपवंत—वि. [सं. रूपवान् का बहु.] सुंदर।
रूपवती—वि. स्त्री. [सं.] सुंदरी (स्त्री)।
रूपवान, रूपवान्-वि. [सं. रूपवत्] सुंदर।
रूपसी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुंदरी नारी।
रूपांतर—संज्ञा पुं. [सं.] बदला हुआ रूप।
रूपांतरित—वि. [सं.] जिसका रूप बदल गया हो।
रूपा-संज्ञा पुं. [सं. रुप्प] (१) चाँदी। उ.—लोह तरैं मधि रूपा लायौ, ताके ऊपर कनक लगायौ—७-७। (२) राधा की एक सखी का नाम। उ.—करि राधा, किनि हार चुरायौ।.........। प्रेमा दामा हंसा रंगा हरषा रूपा जाउ—१५८०।
रूपाजीवा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।
रूपाश्रय—संज्ञा पुं. [सं.] सुंदर पुरुष।
रूपी-वि. [सं. रूपिन्] (१) रूपधारी। (२) सदृश।
रूपे—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. रूपा] चाँदी से। उ.—ताँवे, रूपे, सोने सजि राखीं वै बनाइकै—२६२८।
रूपैं—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. रूपा] चाँदी से। उ.—खुर ताँबैं, रूपैं पीठि, सोनैं सींग मढ़ीं—१०-२४।
रूपै—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. रूप] रूप या सौंदर्य का।
संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. रूपा] चाँदी का।
रूप्य वि. [सं.] (१) सुंदर। (२, उपमेय।
संज्ञा पुं. [हिं. रूपा] चाँदी।
रूबरू—क्रि. वि. [फ़ा.] सामने, समक्ष।
रूम—संज्ञा पुं. [फ़ा.] टर्की या तुर्की देश।
रूमना, रूमनो—क्रि. स. [हिं. झूमना का अनु.] झूमना।
रूमाल—संज्ञा पुं. [फ़ा.] कपड़े का चौकोर टुकड़ा।
रूमी—वि. [फ़ा.] (१) रूम देश का। (२) रूम-वासी।
रूरना, रूरनो—क्रि. अ. [सं. रोरवण] (१) चिल्लाना। (२) विलाप करना।
रूरा—वि. पुं. [सं. रुढ़] श्रेष्ठ, सुंदर।
रूरि—क्रि. अ. [हिं. रूरना] (१) चिल्ला कर। (२) विलाप करके। उ.—संगहिं सबै चलौ माधौ के ना तौ मरिहौं रूरि (रूरी)—१० उ.-८२।
रूरी—वि. स्त्री. [हिं. रूरा] श्रेष्ठ, सुंदर। उ.—(क) दमकति दूध दतुरियाँ रूरी—१०-११७। (ख) आरोगत मुख की छवि रूरी—३९६।

रूष—संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष।
रूषना, रूषनो -क्रि. अ. [हिं. रोष] रूठना।
संज्ञा पुं.- अप्रसन्न होने या रूठने का भाव या कार्य। उ.—प्रानहिं पियहिं रूपनो कैसौ सुन वृषभानु दुलारी—२२७५।
रूषा—संज्ञा पुं. [हिं. रूख] पेड़, वृक्ष।
वि. [हिं. रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।
रूषि—क्रि. अ. [हिं. रूसना] अप्रसन्न होकर, रूठकर।
प्र०—रूषि रही—अप्रसन्न हो रही हैं, रूठी हैं। उ.—आजु तेरे तन मैं नयो जोवन ठौर ठौर सु बन्यो पिय मिलि मेरे मन काहे रूषि रही वेकाज—२२०२।
रूषी—क्रि. अ. [हिं. रूषना] रूठी, अप्रसन्न हुई। उ.—तू जु झुकति है और रूसने अब कहि कैसे रूषी—२२७५।
रूसन—संज्ञा पं. [हिं. रूसना] रूठने या अप्रसन्न होने का भाव या कार्य। उ.—तासो न रूसन कीजै हित कै मनाइ लीजै—२२३१।
रूसनहारी—वि. [हिं. रूसना+हारी] रूठने या अप्रसन्न होने वाली। उ.—ज्यौं ज्यौं मैं निहोरे करौं त्यौं त्यौं यों बोलति है री अनोखी रूसनहारी—२०४७।
रूसना—क्रि. अ. [हिं. रोष] रूठना, अप्रसन्न होना।
रूसने—क्रि. अ. [हिं. रूसना] रूठ जाने (पर)। उ.—तू जु झकति है और रूसने अब कहि कैसे रूषी—२२७५।
रूसनो—क्रि. अ. [हिं. रूसना] रूठना।
रूसा—संज्ञा पुं. [सं. रूपक] 'अड़ूसा' वृक्ष।
संज्ञा पुं. [सं. रोहिष] एक सुगंधित घास।
रूसि—क्रि. अ. [हिं. रूसना] अप्रसन्न होकर, रूठकर। उ. (क) कहाँ मैं जाउँ, कह धौं रहौं रूसिकै—१५८६। (ख) कहा चूक हमको पिय लागे रूसि रहे हौ काहे जू—१९६१।
रूसिबे—संज्ञा स्त्री. [हिं. रूसना] अप्रसन्न होने या रूठने की। उ.—यह रितु रूसिबे की नाहीं—२१९४।
रूसे—वि. [हिं. रूसना] रूठे हुए, अप्रसन्न। उ. - यह उपकार तुम्हारो सजनी रूसे कान्ह मिलाए री—पृ० ३१९ (८३)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूह—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) जीवात्मा। (२) सत्त, सार।

रूहना, रूहनो—क्रि. अ. [सं. रोहण] उमड़ना।

क्रि. अ. [हिं. रूँधना] घेरना, छेंकना।

रेंकना, रेंकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) गदहे का बोलना। (२) भद्दे स्वर से गाना।

रेंगत—क्रि. अ. [हिं. रेंगना] (१) घुटनों के बल या धीरे धीरे चलता है। उ.—(क) गिरि गिरि परत घुटुरुवनि रेंगत—१०-११३। (ख) ठुमुकि-ठुमुकि पग धरनी रेंगत—१०-१२६। (२) धीरे-धीरे चलता है। उ.—कोउ पहुँचे कोउ रेंगत मग में—९१९। (३) घूमते-फिरते (हैं)। उ.—तुम्हरी कमल-बदन कुम्हिलैहै रेंगत घामहिं माँझ—४११।

रेंगना—क्रि. अ. [सं. रिंगण] (१) कीड़ों आदि का पेट के बल चलना। (२) शिशु का घुटनों के बल या ठुमुक ठुमुककर चलना। (३) धीरे-धीरे चलना, घूमना-फिरना।

रेंगनि, रेंगनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेंगना] शिशु की घुटनों या ठुमुक-ठुमुक चलने की क्रिया। उ.—(क) धूसर धूरि घुटुरुवनि रेंगनि—१०-१०५। (ख) मैं बलिहारी रेंगनियाँ—१०-१३२।

रेंगनो—क्रि. अ. [सं. रिंगण] (१) कीड़ों आदि का पेट के बल चलना। (२) शिशु का घुटनों के बल या ठुमुक-ठुमुककर चलना। (३) धीरे-धीरे चलना या घूमना-फिरना।

रेंगाना, रेंगानो—क्रि. स. [हिं. रेंगना] (किसी को) रेंगने को प्रवृत्त करना।

रेंगै—क्रि. अ. [हिं. रेंगना] (शिशु) घुटनों के बल या ठुमुक-ठुमुक कर चले। उ.—कब मेरो लाल घुटुरुवन रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै—१०-७६।

रेंड—संज्ञा पुं. [सं. एरण्ड] एक पेड़।

रेंडना—क्रि. अ. [हिं. रेड़] पेड़-पौधे का बढ़ना।

रेंडी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेंड] रेंड़ के बीज।

रेंरना, रेंरनो—क्रि. अ. [अनु.] बच्चे का धीरे-धीरे रोना।

रे—अव्य. [सं.] (१) पुरुष के लिए संबोधन शब्द। उ.—(क) रामहिं राम पढ़ौ रे भाई—७-२। (ख) रे पिय, लंका बनचर आयौ—९-११९। (ग) रे रे अंध बीसहू लोचन पर-तिय हरन बिकारी—९-१३२। (२) पुल्लिग वर्ग के पदार्थ आदि के लिए संबोधन शब्द। उ.—रे मन, छाँड़ि बिषय को रँचिबौ—१-५९।

रेख—संज्ञा स्त्री. [सं. रेखा] (१) लकीर, रेखा। उ.—अति बिसाल बारिज-दल लोचन राजति काजर-रेखरी—१०-१३६।

मुहा०—रेख काढ़ना, (खाँचना, खींचना या बनाना)—(१) लकीर बनाना। (२) जोर देकर या निश्चय पूर्वक कहना। काढ़ति रेख—रेखा बनाती है। उ.—तृन तोरचो गुन जात जिते गुन काढ़ति रेख मही। रेख बनाई—रेखा खींची। उ.—भृकुटि बिच तकि मृगमद की रेख बनाई—६१६। रेख देना—रेखा खींचकर सीमाबद्ध करना। दै रेख—रेखा द्वारा सीमाबद्ध करके। उ.—गयौ सो दै रेख, सीता कह्यौ सो कह्यौ न जाई—९-६०।

(२) निशान, चिह्न।

यौ०—रूप-रेख—आकार, ढाँचा, प्रारंभिक रूप।

(३) गिनती, गणना। (४) लेखा, लिखावट।

यौ०—कर्मरेख, करमरेख—भाग्य का लेख। उ.—सूर सीय पछितात यहै कहि, करम-रेख मेटी नहिं जाई—९-५९।

(५) निकलती हुई नयी मूछें।

मुहा०—रेखा आना, भीजना या भीनना - निकलती हुई मूछें दीख पड़ना।

रेखता—संज्ञा पुं. [फ़ा.] एक प्रकार का गाना जो अरबी-फारसी मिश्रित हिंदी में होता था और जिससे 'उर्दू' को बहुत समय तक 'रेखता' कहा जाता रहा।

रेखना—क्रि. स. [हिं. रेखा] (१) रेखा खींचना। (२) खरोंचना।

रेखनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. रेखा] रेखाएँ। उ.—कर कपोल भुज धरि जंघा पर लेखति माइ नखन की रेखनि—२७२२।

रेखनो—क्रि. स. [हिं. रेखना] (१) रेखा बनाना। (२) खरोंच डालना।

रेखहिं—क्रि. स. [हिं. रेखना] रेखा या चिह्न बनायें। उ.—बनमाला तुमकों पहिरावहिं धातु-चित्र तनु रेखहिं—४२६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेखांकन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रूप-रेखा अंकित करने का कार्य। (२) रेखाचित्र।

रेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लकीर। (२) लिखावट।

यौ०—कर्मरेखा या भाल की रेखा—भाग्य में लिखी बात, भाग्य-लेख। उ.—सूर न मिटै भाल की रेखा—९-११६।

(३) गिनती, गणना। (४) सूरत-शक्ल, आकार। (५) हथेली, तलुए आदि की लकीरें।

रेखागणित—संज्ञा पुं. [सं.] गणित का वह विभाग जिसमें रेखाओं द्वारा अनेक प्रकार के सिद्धांत निश्चित किये जाते हैं।

रेखाचित्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) केवल रेखाओं से बना चित्र। (२) शब्द-चित्र।

रेखित—वि. [सं. रेखा] (१) अंकित, लिखित। (२) जिस पर रेखा पड़ी हो। (३) मसका या फटा हुआ।

रेखी—संज्ञा स्त्री. [सं. रेखा] रेखा, पंक्ति। उ.—कोमल नील कुटिल अलकावलि रेखी राजति भाल—३३३३।

रेखें—संज्ञा स्त्री. बहु. [सं. रेखा] रेखाएँ। उ.—(क) अब क्यों मिटत हाथ की रेखें—३१४८। (ख) गनतहि गनत गई सुनि सजनी कर अँगुरिन की रेखें—३१९०।

रेखै—क्रि. स. [हिं. रेखना] रेखा खींचती या चित्र बनाती है। उ.—भीति बिन कर चित्र रेखै—२०४३।

रेखो, रेखौ—क्रि. स. [हिं. रेखना] रेखा खींचते या खींचती या अथवा चित्र अंकित करते या करती हो।

प्र०—चित्र करति रखौ—चित्र अंकित करती हो उ.—भीति बिनु चित्र तुम करति रेखौ—१२४६।

रेग—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] बालू।

रेगिस्तान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] मरुस्थल।

रेचक—वि. [सं.] जिसके खाने से दस्त आ जाय।

संज्ञा पुं.—प्राणायाम की तीसरी क्रिया जिसमें स्वांस को विधिपूर्वक बाहर निकालने का अभ्यास किया जाता है। उ.—सब आसन रेचक अरु पूरक कुंभक सीखे पाइ—३१३४।

रेचन—संज्ञा पुं. [सं.] दस्त लाने की औषध।

रेचना, रेचनो—क्रि. स. [सं. रेचन] दस्त लाना।

रेजगारी, रेज़गी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] छोटे सिक्के।

रेज़ा—संज्ञा पुं. [फ़ा. रेज़ा] छोटा टुकड़ा या खंड।

रेणु—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धूल। (२) बालू।

रेणुका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धूल। (२) बालुका। (३) परशुराम की माता का नाम।

रेत—संज्ञा स्त्री. [सं. रेतजा] (१) बालू। उ.—सूरदास जन ते बिछुरे ज्यौं कृत राई रेत—३३०९।

रेतना, रेतनो—क्रि. स. [हिं. रेत] (१) रेती या वैसे ही किसी औजार से रगड़ना। (२) धीरे-धीरे काटना।

रेतला—वि. [हिं. रेतीला] रेतीला, बलुआ।

रेता—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेत] (१) धूल। (२) बालू।

रेती—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेतना] रेतने का औजार।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रेत] बालू, रेत।

रेतीला—वि. पुं. [हिं. रेत+ईला] बलुआ।

रेनु—संज्ञा स्त्री. [सं. रेणु] (१) धूल। उ.—(क) लै लै चरन-रेनु निज प्रभु की रिपु कैं स्रोनित न्हात—९-१४७। (ख) माधौ, मोंहि करौ वृंदाबन-रेनु—४८९। (ग) करहु मोंहि ब्रज-रेनु—४९२। (२) रेत। (३) धूल के कण। उ.—भूमिरेनु कोउ गनै—२-३६।

रेनुका—संज्ञा स्त्री. [सं. रेणुका] (१) धूल। (२) बालू। (३) परशुराम की माता का नाम।

रेफ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रकार (र)। (२) 'रकार' का वह रूप जो किसी अक्षर के ऊपर लगता है।

रेरना, रेरनो—क्रि. स. [हिं. रे+करना] 'रे' कहकर या दुलार-तिरस्कार के साथ पुकारना।

रेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेलना] (१) बहाव, धारा। (२) अधिकता, भरमार।

रेलठेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेलना+ठेलना] (१) भीड़-भड़क्का। (२) भरमार, अधिकता।

रेलना, रेलनो—क्रि. स. [देश.] (१) ढकेलना, धक्का देकर आगे बढ़ाना। (२) खूब ठूँस-ठूँस कर खाना।

क्रि. अ.—ठसाठस भरा होना।

रेल-पेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेलना+पेलना] (१) भीड़-भाड़। (२) अधिकता।

रेला—संज्ञा पुं. [देश.] (१) जल-प्रवाह। (२) धावा। (३) धक्कमधक्का। (४) अधिकता। (५) समूह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेलि—क्रि. वि. [हिं. रेलना] अधिकता से। उ.—फूली माधवी मालती रेलि—२४०७।

रेवड़—संज्ञा पुं. [देश.] भेड़-बकरी का झुंड।

रेवड़ी—संज्ञा स्त्री. [देश.] चीनी या गुड़ के पाग में तिल चिपका कर बनायी गयी टिकिया।

रेवत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक राजा जिसकी पुत्री रेवती बलराम को ब्याही थी। (२) एक पर्वत। उ.—द्वारका माँह उत्पात बहु भाँति करि बहुरि रेवत अचल गयौ धाई—१० उ.-४३।

रेवती—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सत्ताईसवाँ नक्षत्र। (२) बलराम की पत्नी जो राजा रेवत की कन्या थी। उ.—रविबंशी भयौ रैवत राजा।.....। ता गृह जन्म रेवती लयौ।.....। हलधर कौं तुम देहु बिबाहि—९-४।

रेवतीरमण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बलराम। (२) विष्णु।

रेवा—संज्ञा स्त्री. [सं.] नर्मदा नदी जिसके किनारे किसी समय हाथी बहुत पाये जाते थे। उ.—मनहुँ सेज रेवा ह्रद ते उठि आवत है गजराज—२१८५।

रेवाउतन—संज्ञा पुं. [सं. रेवा+उत्पन्न] हाथी (रेवा-तट किसी समय हाथियों की अधिकता के लिए विख्यात था)।

रेशम—संज्ञा पुं. [फ़ा.] एक तरह का महीन चमकीला और चिकना रेशा जो एक प्रकार के कीड़े तैयार करते हैं, पाट, कौशेय।

रेशमी—वि. [फ़ा.] रेशम का बना हुआ।

रेशा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] तंतु या महीन सूत।

रेष—संज्ञा स्त्री. [हिं. रेख] रेख, रेखा।

रेसम—संज्ञा पुं. [फ़ा. रेशम] एक तरह का महीन चमकीला और चिकना रेशा जो एक प्रकार के कीड़े तैयार करते हैं, पाट, कौशेय। उ.—(क) पँचरंग रेसम लगाउ—१०-४१। (ख) रतन जटित वर पालनौ रेसम लागी डोर—१०-४७ (ग) रेसम बनाइ नव-रतन पालनौ—१०-४८।

रेसमी—वि. [फ़ा. रेशमी] रेशम का।

रेसा—संज्ञा पुं. [फ़ा. रेशा] तंतु या महीन सूत।

रेह—संज्ञा स्त्री. [देश.] खार मिली मिट्टी।

संज्ञा स्त्री. [सं. रेख] लकीर, रेखा।

रेहन—संज्ञा पुं. [फ़ा.] बंधक, गिरवीं।

रेहुआ—वि. [हिं. रेह] जिसमें रेह अधिक हो।

रेहू—संज्ञा पुं. [हिं. रोहू] एक तरह की मछली।

रैंगति—क्रि. अ. [हिं. रेंगना] धीरे धीरे चलना। उ.—एक खालि गो-सुत ह्वै रैंगति—३४८४।

रैता—संज्ञा पुं. [देश.] श्रीकृष्ण का सखा एक ग्वाल-बाल। उ.—रैता पैंता मना मनसुखा हलधर संगहिं रैहौं—४१२।

रैतिक—वि. [सं.] पीतल का।

रैतुआ, रैतुवा—सज्ञा पुं. [हिं. रायता] रायता।

रैदास—संज्ञा पुं. [देश.] (१) एक प्रसिद्ध भक्त जो जाति का चमार और रामानंद का शिष्य था। (२) चमार।

रदासी—वि. [हिं. रैदास] रैदास के संप्रदाय का।

रैन, रैना—संज्ञा स्त्री. [सं. रजनी] रात, रात्रि।

रैना—क्रि. अ. [सं. रंजन] (१) रँगा जाना। (२) मुग्ध, आसक्त या अनुरक्त होना।

क्रि. स.—(१) रँगना। (२) अनुरक्त करना।

रैनि, रैनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रजनी] रात, रात्रि। उ.—रवि बहु चढ़चो रैनि सब निघटी—४०८। (ख) आजु रैनि नहिं नींद परी—२५४४।

रैनो—क्रि. अ. [सं. रंजन] (१) रँगा जाना। (२) मुग्ध, आसक्त या अनुरक्त होना।

क्रि. स.—(१) रँगना। (२) अनुरक्त करना।

रैयत—संज्ञा स्त्री. [अ.] प्रजा।

रैया—संज्ञा पुं. [हिं. राव] छोटा राजा। उ.—जानि रिपु-हानि तजि कानि यदुराज की बबकि उठि फूलि बसुदेव रैया—२६०७।

रैयाराव—संज्ञा पुं. [हिं. राजा+राव] (१) छोटा राजा। (२) सामंतों की एक प्राचीन उपाधि।

रैवंता—संज्ञा पुं. [हिं. रज+वंत] घोड़ा।

रैवत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गुजरात का एक पर्वत। (२) एक सूर्यवंशी राजा जिसकी पुत्री रेवती बलराम को ब्याही थी। उ.—रविबंसी भयौ रैवत राजा।........ता गृह जन्म रेवती लयौ।........रैवत ब्याह कियौ भुवि आइ।.....। हलधर ब्याह भयौ या भाइ—९-४।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रैवतक—संज्ञा पुं. [सं.] गुजरात का एक पर्वत जहाँ अर्जुन ने सुभद्रा का हरण किया था।

रैसा—संज्ञा पुं. [सं. रेष] कलह, युद्ध।

रैहर—संज्ञा पुं. [सं. रेष] लड़ाई, कलह।

रैहै—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहेगा, बसेगा। उ.—नैंकु सुनत जो पैहौं ताकै, सो कैसैं व्रज रैहै री—७११।

रैहौं—क्रि. अ. [हिं. रहना] (साथ) रहूँगा। उ.—हलधर संगहिं रहौं—४१२।

रैहौ—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहना। उ.—मोहिं नियरैं तुम रैहौ—६८०।

प्र०—रैहौ—मानोगे। उ.—हम जानति तुम यौं नहिं रैहौ, रैहौ गारी खाइ—१०२९।

रोंग, रोंगटा—संज्ञा पुं. [सं. रोमक, प्रा० रोअंक, हिं. रोंग+टा] शरीर का रोम या रोआँ।

रोंगटि, रोंगटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोना] खेल में बुरा मानना या बेइमानी करना। उ.—रोंगटि करत तुम खेलत ही में, परी कहा यह बानि।

रोंगटे—संज्ञा पुं. बहु. [हिं. रोगटा] रोम।

मुहा०—रोंगटे खड़े होना—भयानक या क्रूर कर्म देखकर जी दहलना।

रोंठा—संज्ञा पुं. [देश] कच्चे आम की सूखी फांक।

रोंवँ—संज्ञा पुं. [सं. रोम] शरीर के रोम।

रो—क्रि. अ. [हिं. रोना] रुदन या विलाप करो।

मुहा०—रो बैठना—निराश होकर रह जाना। रो-रोकर—(१) दुख और कष्ट के साथ। (२) बहुत रुक-रुककर। रो-रोकर घर भरना—बहुत विलाप करना। रो-गाकर—दुःख के साथ और गिड़गिड़ाकर।

रोआँ—संज्ञा पुं. [हिं. रोयाँ] शरीर के रोम।

रोआइ, रोआई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रुलाई] रुलाई।

रोआसा—वि. [हिं. रोना+आसा] जो रोने को हो।

रोइ—क्रि. अ. [हिं. रोना] रोकर, विलाप करके। उ.—(क) मातु-पिता अतिहीं दुख पावत, रोइ रोइ सब कृष्ण बुलावत—५४९। (ख) नंद पुकारत रोइ—५८९।

प्र०—दीन्हौ रोइ—रो दिये, रो पड़े। उ.—भीर देखत अति डराने दुहुँनि दीन्हौ रोइ १०-२९०।

रोउँ—संज्ञा पुं. [हिं. रोवें] रोम, रोंगटा।

रोऊ—वि. [हिं. रोना] रोनेवाला। उ.—निर्घिन, नीच कुलज, दुर्बुद्धी, भोंदू, नित को रोऊ—१-१८६।

रोएँदार—वि. [हिं. रोआँ+फा. दार] जिसके या जिसमें बहुत रोम या रोएं हों।

रोए—क्रि. अ. [हिं. रोना] रो दिये। उ.—काल-बली तैं सब जग कांप्यौ, ब्रह्मादिक हूँ रोए—१-५२।

रोक—संज्ञा स्त्री. [सं. रोधक] (१) बाधा, अटकाव, अवरोध। (२) मनाहीं, निषेध। (३) काम में बाधा। (४) रोकनेवाली वस्तु। उ.—आनंदे मधुबन के वासी गई नगर की रोक—१० उ०-२।

संज्ञा पुं. [सं. रोक=नगद] रोकड़।

रोकटोक—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोकना+टोकना] (१) कार्य में बाधा या प्रतिबंध। (२) मनाही, निषेध।

रोकड़—संज्ञा स्त्री. [सं. रोक] (१) नगद रुपया। (२) पूँजी जो किसी व्यापार में लगायी जाय।

रोकत—क्रि. स. [हिं. रोकना] (१) रोकता या बाधा डालता है। उ.—काहे को रोकत मारग सूधो। (२) अधिकार में लेता या करता है। उ.—इक मारत इक रोकत गेंदहिं—५३३।

रोकनहार, रोकनहारा—वि. [हिं. रोकना+हार] रोकने या बाधा देनेवाला। उ.—सूर ऐसो कौन जो पुनि तुमहिं रोकनहार—११७१।

रोकना, रोकनो—क्रि. स. [हिं. रोक] (१)चलने या बढ़ने न देना। (२) जाने से मना करना। (३) कार्य स्थगित करना। (४) मार्ग छेंकना। (५) अड़चन या बाधा डालना। (६) वर्जन या मना करना। (७) ऊपर लेना, ओटना। (८) वश में करना। (९) सेना का सामना करना।

रोकि—क्रि. स. [हिं. रोकना] (१) मार्ग छेंककर। उ.—रोकि रहत गहि गली—१०-३२८।(२) वश में रखकर। उ.—प्रान कहाँ लौं राखौं रोकि—९-९२।

रोके—क्रि. स. [हिं. रोकना] (द्वार आदि पर अधिकार करके) मार्ग अवरुद्ध किये हुए। उ.- द्वार कपाट कोटि भट रोके—१०-११।

रोक्यो, रोक्यौ—क्रि. स. [हिं. रोकना] वर्जन या मना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया। उ.—हरि-दरसन कों जात क्यों रोवयौ बिना बिचार—३-११।

रोख, रोखा—संज्ञा पुं. [सं. रोष] गुस्सा, क्रोध।

रोग—संज्ञा पुं. [सं.] बीमारी, व्याधि।

मुहा०—रोग लेना—माता, पिता आदि गुरुजनों का बालकों को स्वस्थ रखने के लिए उनका रोग-धोग अपने ऊपर लेने की कामना करना। लीन्हे रोग—(बालकों के) रोग-धोग अपने ऊपर लेने की कामना की। उ.—सूर स्याम गाइन सँग आए मैया लीन्हें रोग—४९३।

रोगग्रस्त—वि. [सं.] बीमार, रोग से पीड़ित।

रोगन—संज्ञा पुं. [फा. रौगन] (१) चिकनाई। (२) पालिश जिससे कोई वस्तु चमकने लगे।

रोगिणि, रोगिणी, रोगिनि, रोगिनी—वि. स्त्री. [सं. रोगिणी] बीमार (स्त्री)।

रोगिया—वि. [हिं. रोग] रोगी, बीमार। उ.—यथा-योग ज्यौं होत रोगिया कुपथी करत नई।

रोगी—वि. [हिं. रोग] बीमार, अस्वस्थ। उ.—(क) कलहा, कुही, मूष रोगी—१-१८६। (ख) अंध छीन जे रोगी—३२०६।

रोचक—वि. [सं.] (१) रुचनेवाला। (२) मनोरंजक।

रोचकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] रोचक होने का भाव।

रोचन—वि. [सं.] (१) रुचनेवाला। (२) प्रिय। (३) लाल (रंग का)। उ.—मिलि रिस रुचि लोचन भए रोचन चितवत चित्त पराई ओर—२१३१।

संज्ञा पुं.—(१) रोली, रोचना। उ.—(क) कनक-थार भरि दधि-रोचन लै वेगि चली मिलि गावति—१०-२३। (ख) रोचन भरि लै देत सींक सौं स्रवन निकट अति ही चातुर की—१०-१८०। (२)गोरोचन।

रोचना—संज्ञा स्त्री. [सं. रोचन] रोली। उ.—एकनि माथैं दूब-रोचना—१०-२५।

रोचि—संज्ञा स्त्री. [सं. रोचिस] (१) प्रभा, शोभा। (२) किरण।

रोज—संज्ञा पुं. [सं. रोदन] रोना-धोना, विलाप।

संज्ञा पुं. [फ़ा. रोज़] दिन, दिवस।

अव्य.—प्रतिदिन, नित्य।

रोजगार—संज्ञा पुं. [फ़ा. रोज़गार] (१) पेशा, उद्यम।

मुहा०—रोजगार चमकना—पेशे में लाभ होना। रोजगार छूटना—बिना पेशे के होना। रोजगार चलना—पेशे में लाभ होने लगना। रोजगार लगना—पेशा मिल जाना। रोजगार लगाना—पेशे का प्रबंध कर देना। रोजगार से होना—पेशा मिल जाना।

(२) तिजारत, व्यापार।

रोजमर्रा—अव्य. [फ़ा. रोज़मर्रा] प्रतिदिन, नित्य।

रोजा—संज्ञा पुं. [फ़ा. रोज़ा] (१) व्रत। (२) रमजान के ३० दिनों का व्रत।

रोजाना—क्रि. वि. [फ़ा. रोज़ाना] प्रतिदिन, नित्य।

रोजी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. रोज़ी] जीविका।

रोजीना—संज्ञा पुं. [फ़ा. रोज़ीना] प्रतिदिन का।

रोट—संज्ञा पुं. [हिं. रोटी] (१) मोटी रोटी। (२) पूआ।

रोटिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोटी] छोटी रोटी।

रोटिहा—वि. [हिं. रोटी+हा] केवल भोजन पर रहने वाला (सेवक)।

रोटी—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) चपाती, फुलका। उ.—(क) गोपालराय दधि माँगत अरु रोटी—१०-१६३। (ख) रोटी रुचिर कनक बेसन करि—२३२१। (२) भोजन, रसोई।

मुहा०—रोटी कपड़ा—खाना-कपड़ा। रोटी कमाना—जीविका का अर्जन करना। रोटी को रोना—भूखों मरना। रोटी का मारा—भोजन के बिना दुखी। किसी के यहाँ रोटी तोड़ना—किसी का दिया खाना। रोटी लगना—भोजन पाकर इतराना। रोटी लगाना—जीविकार्जन का साधन निश्चित कर देना। रोटी-दाल से खुश—अच्छा खाता-पीता। रोटी-दाल चलना—जीवन-निर्वाह होना।

रोड़ा—संज्ञा पुं. [सं. लोष्ठ, प्रा. लोट्ठ] पत्थर का टुकड़ा।

मुहा०—रोड़ा अटकाना या डालना—बाधा या अड़चन डालना।

रोदन—संज्ञा पुं. [सं.] रोना, क्रंदन। उ.—(क) माता ताको रोदन देखि, दुख पायौ मन माँहि बिसेखि। (ख) तब इक पुरुष भौंह तैं भयौ, होत समय तिन रोदन ठयौ—३-७।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोदसि, रोदसी—संज्ञा स्त्री. [सं. रोदसि] (१) स्वर्ग। (२) भूमि, पृथ्वी।

रोदा—संज्ञा पुं. [सं. रोध] धनुष की डोरी।

रोध संज्ञा पुं. [सं. रोध] (१) रुकावट, बाधा। (२) तट, किनारा।

रोधक—संज्ञा पुं. [सं.] रोकनेवाला।

रोधन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रुकावट। (२) दमन।

रोधना, रोधनो—क्रि. स. [सं. रोधन] रोकना।

रोन—संज्ञा पुं. [सं. रमण] रमण।

रोना—क्रि. अ. [सं. रोदन, प्रा. रोअन] (१) रुदन या विलाप करना, दुख से आँसू बहाना।

मुहा०—रोना-कलपना या रोना-धोना—विलाप करना। रोना-पीटना—छाती या सिर पीटकर रोना। किसी वस्तु को रोना—वस्तु-विशेष के लिए बहुत दुखी होना। रोना-गाना—बहुत दुख से और गिड़-गिड़ाकर कहना।

(२) चिढ़ना, बुरा मानना। (३) पछताना।

संज्ञा पुं. दुख, शोक।

मुहा०—रोना या रोना-पीटना पड़ना—शोक छा जाना।

वि.—(१) छोटी सी बात पर भी बहुत दुखी होने वाला। (२) बात-बात पर खीझने और चिढ़नेवाला। (३) हर समय रोवांसा रहनेवाला।

रोनी धोनी—वि. स्त्री. [हिं. रोना+धोना] हर समय दुखी रहकर आँसू बहानेवाली।

संज्ञा स्त्री. मनहूसियत।

रोप—संज्ञा पुं. [सं.] ठहराव, रुकावट।

रोपक—वि. [सं.] रोपनेवाला।

रोपण—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्थापित करना। (२) (बीज या पौधा) जमाना या उगाना। (३) मोहित या मुग्ध करना।

रोपना—क्रि. स. [सं. रोपण] (१) (पौधा) जमाना या उगाना। (२) पौधे को एक स्थान से उखाड़कर दूसरे पर लगाना। (३) दृढ़ता के साथ स्थापित करना। (४) बीज बोना। (५) मोहित करना। (६)(हाथ या बर्तन) फैलाना या बढ़ाना।

मुहा०—हाथ रोपना—माँगने को हाथ फैलाना।

रोपनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोपना] रोपने का काम।

रोपनो—क्रि. स. [हिं. रोपना] (१) (पौधा) जमाना। (२) (बीज) उगाना। (३) पौधा एक स्थान से उखाड़ कर दूसरे पर लगाना। (४) दृढ़ता से स्थापित करना। (५) कुछ माँगने को (हाथ या पात्र) फैलाना या बढ़ाना। (६) मोहित करना।

रोपित—वि. [सं.] (१) लगाया या जमाया हुआ। (२) स्थापित। (३) खड़ा किया हुआ।

रोपी—क्रि. स. [हिं. रोपना] (१) दृढ़ता से स्थापित की। उ.—रोपी सुथिर थुनी—१०-२४। (२) मुग्ध हुई। उ.—अँखियाँ स्याम रूप रोपी—३४८७।

रोपैं—क्रि. स. [हिं. रोपना] दृढ़ता से स्थापित करते हैं। उ.—मालिनि बाँधैं तोरना (रे) आँगन रोपैं केरि—१०-४०।

रोप्यो, रोप्यौ—क्रि. स. [हिं. रोपना] (१) लगाया, जमाया (२)। उ. —रोप्यौ द्वार सुभगति कलपतर—१० उ०-७०। दृढ़ता के साथ स्थापित किया। उ. (क)—बीच सभा अंगद पद रोप्यौ। (ख) सर-पंजर रोप्यो चहूँ दिसि तें जहाँ पवन नहिं जाय—सारा. (५१)।

रोब—संज्ञा पुं. [अ. रूअब) धाक, आतंक।

मुहा०—रोब जमाना—आतंक बैठाना। रोब मिट्टी में मिलना (मिटना)—धाक न रह जाना। रोब मिट्टी में मिलाना (मिटाना)—प्रभाव नष्ट करना। रोब दिखाना—प्रभाव डालना। रोब में आना—(१) प्रभावित होना। (२) भय मानना।

रोबदार—वि. [अ.] प्रभावशाली, तेजस्वी।

रोम—संज्ञा पुं. [सं. रोमन्] (१) रोयाँ, रोंगटा, लोम। उ.—(क) सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी—१०-१३७। (ख) इक इक रोम बिराट किए तन किटि कोटि ब्रह्मांड—४८७।

मुहा०—रोम-रोम प्रति—प्रत्येक रोंगटे में। उ.—जिह्वा रोम-रोम प्रति नाहीं पौरुष गनौं तुम्हारे—९-१४७। रोम रोम में—सारे शरीर में। रोम रोम से—सच्चे हृदय से, तन-मन से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) छेद, छिद्र ।

रोमकूप—संज्ञा पुं. [सं.] छिद्र जिनसे शरीर के रोयें निकले होते हैं ।

रोमनि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. रोम+नि] रोम में । उ.—सत सत अघ प्रति रोमनि—१-१९२ ।

रोमपाट—संज्ञा पुं. [सं.] ऊनी कपड़ा ।

रोमराजी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रोमावली । (२) नाभि से पेट तक की रोम-पंक्ति । उ.—राजति रोमराजी रेष—६३५ ।

रोमलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाभि से पेट तक की रोम-पंक्ति ।

रोमहर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] रोंगटे खड़े होना ।

रोमहर्षण—वि. [सं.] जिससे रोंगटे खड़े हों, भयंकर ।

रोमांच—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भय से रोओं का खड़े होना । (२) हर्ष से रोओं का खड़े होना । उ.—तनु पुलकित रोमांच प्रगट भए आनंद अश्रु बहाइ—७५८ ।

रोमांचित—वि. [सं.] (१) हर्षित । (२) भयभीत ।

रोमालि, रोमाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] रोमावली ।

रोमावलि, रोमावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रोयों की पंक्ति । (२) नाभि से पेट तक की रोम-पंक्ति । उ. —(क) रुचिर रोमावली हरि कैं चारु उदर प्रदेस—६७४ । (ख) रोमावली अनूप बिराजति जमुना की अनुहारि—६३७ । (ग) उर सुदेस रोमावलि राजति —पृ. ३४० (९३ ।) ।

रोमिल—वि. [सं. रोम] रोयेंदार ।

रोयाँ—संज्ञा पुं. [हिं. रोम] रोम, लोम ।

मुहा०—एक रोयाँ न उखड़ना—जरा भी हानि न होना । रोयाँ खड़ा होना—(१) हर्षित होना । (२) भयभीत होना । रोयाँ पसीजना—तरस आना ।

रोयो, रोयौ—क्रि. अ. [हिं. रोना] रुदन किया ।

मुहा०—नख-सिख तैं रोयौ—तन-मन से बहुत दुखी होकर पछताया । उ.—चारु मोहिनी आइ आंध कियौ, तब नख-सिख तैं रोयौ—१-४३ ।

रोर, रोरा—संज्ञा स्त्री. पुं. [सं. रवण, हिं. रोर] (१) कोलाहल । उ.—जिनके जात बहुत दुख पायो, रोर परी यहि खेरे । (२) रोने-चिल्लाने का शब्द । (३) पक्षियों का कोलाहल । उ.—तमचुर खग-रोर सुनहु बोलत बनराई—१०-२०२ । (३) उपद्रव, हलचल । (४) अत्याचार, दुख, कष्ट । उ.—रोर कै जोर तैं सोर घरनी कियौ—१-५ ।

वि.—(१) प्रचंड । (२) उपद्रवी, अत्याचारी ।

रोरि, रोरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोली] रोली । उ.—(क) मुख-मंडित रोरी रँग सेंदुर माँग छुही—१०-२४ । (ख) काजर-रोरी आनहू (मिलि) करौ छठी कौ चार—१०४० ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. रोर] चहल-पहल, धूम । उ. —रोरि परी गोकुल मैं जहँ तहँ—२५२१ ।

वि. [हिं. रूरा] सुंदर, रुचिर । उ.—उर बन-माल काछनी काछे करि किंकिनि छवि रोरी—पृ. ३४५ (३९) ।

रोरित, रोरीत—वि. [हिं. रोर] कोलाहलपूर्ण ।

रोल—संज्ञा स्त्री. पुं. [हिं. रोर] (१) शोर, कोलाहल । (२) ध्वनि, शब्द । उ.—आजु भोर, तमचुर के रोल । गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल धुनि महराने टोल—१०-९४ ।

रोला—संज्ञा पुं. [हिं. रोर] (१) शोर । (२) घोर युद्ध ।

संज्ञा पुं. [सं.] एक छंद (पिंगल) ।

रोली—संज्ञा स्त्री. [सं. रोचनी] चूने-हल्दी से बनी लाल बुकनी, पूजा के अवसर पर जिसका टीका या तिलक लगाया जाता है ।

रोवत—क्रि. अ. [हिं. रोना] रोता या विलाप करता है । उ.—(क) लीन्हे गोद बिभीषन रोवत—९-१६० । (ख) मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत—३६० ।

रोवति—क्रि. अ. [हिं. रोना] रोती है । उ.—तासु वृषभ कैं पग त्रय नाहिं, रोवति गाइ देखि करि ताहि —१-२९० ।

रोवन—संज्ञा पुं. [हिं. रोना] रोने का कार्य या भाव ।

प्र०—रोवन लग्यौ—रोने लगा । उ.—रोवन लग्यो मृतक सो जान—१-२९० ।

रोवनहार, रोवनहारा—वि. [हिं. रोवना+हार] रोने या शोक करनेवाला ।

रोवना—क्रि. अ. [हिं. रोना] रुदन करना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वि.—(१) जल्दी ही रो देनेवाला। (२) जल्दी बुरा मान जाने या चिढ़नेवाला।

रोवनिहार, रोवनिहारा—वि. [हिं. रोवनहार] रोने या शोक करनेवाला।

रोवनी-धोवनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोवना + धोवना] रोने-धोने की वृत्ति, मनहूसी।

वि.—रोनी सूरत बनाये रहनेवाली।

रोवनो—क्रि. अ. [हिं. रोना] रोना, रुदन करना।

वि. (१) जल्दी रो देनेवाला। (२) जल्दी चिढ़ने वाला।

रोवाँ—संज्ञा पुं. [हिं. रोयाँ] रोम, रोंगटा।

रोवासा—वि. [हिं. रोवना] रोने को तैयार।

रोवैं—क्रि. अ. [हिं. रोवना] रोते हैं। उ.—(क) रोवैं वृषभ तुरग अरु नाग—१-२८६। (ख) पुत्र-कलत्र देखि सब रोवैं—१-१४१।

रोवै—क्रि. अ. [हिं. रोवना] रोता है। उ.—कमलनैन हरि हिलकिनि रोवै—३४६।

रोवौं—क्रि. अ. [हिं. रोवना] रोता रहा। उ.—हौं डरपौं काँपौं अरु रोवौं, कोउ नहिं धीर धराउ—४८१।

रोशन—वि. [फ़ा.] (१) जलता हुआ। (२) चमकदार। (३) प्रसिद्ध। (४) प्रकट।

रोशनाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) स्याही। (२) रोशनी।

रोशनी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) प्रकाश। (२) दीपक। (३) दीपमाला का प्रकाश। (४) ज्ञान आदि का प्रकाश।

रोष—संज्ञा पुं. [सं.] गुस्सा, क्रोध। उ.—(क) रोष बिषम किन्हौ रघुनंदन सिय की ब्रिपति बिचारि—९-१२४। (ख) इतनी कहि उकसारत बाहैं रोष सहित बल धायौ—३७४। (२) द्वेष। (३) लड़ाई का जोश।

रोषी—वि. [सं. रोषिन्] क्रोधी।

रोस—संज्ञा पुं. [सं. रोष] गुस्सा, क्रोध।

रोसी—वि. [सं. दोष] क्रोधी।

रोसनाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. रोशनाई] स्याही।

रोसनी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. रोशनी] रोशनी।

रोह—संज्ञा पुं. [देश.] नील गाय।

रोहण संज्ञा पुं. [सं.] (१) चढ़ाई। (२) उगना।

रोहना, रोहनो—क्रि. अ. [सं. रोहण] (१) चढ़ना। (२) ऊपर उठना। (३) सवार होना।

क्रि. स.—(१) चढ़ाना। (२) धारण करना।

रोहिणि, रोहिणी—संज्ञा स्त्री. [सं. रोहिणी] (१) वसुदेव की एक पत्नी जो बलराम की माता थी। (२) सत्ताइस नक्षत्रों में चौथा जो चंद्रमा की स्त्री कहा गया है।

रोहिणीपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चंद्र। (२) वसुदेव।

रोहित—वि. [सं.] लाल रंग का, लोहित।

संज्ञा पुं.—(१) लाल रंग। (२) रक्त। (३) कुंकुम।

रोहिनि, रोहिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रोहिणी] (१) वसुदेव की स्त्री जो बलराम की माता थी। उ.—देखत नंद जसोदा रोहिनि अरु देखत ब्रज लोग—४९३। (२) सत्ताइस नक्षत्रों में चौथा। उ.—कृष्न पच्छ, रोहिनी, अर्द्ध निसि हर्षन जोग उदार—१०-८६।

रोही—वि. [सं. रोहिन्] चढ़नेवाला।

संज्ञा पुं. [देश.] एक हथियार।

रोहू—संज्ञा स्त्री. [सं. रोहिष] एक तरह की मछली।

रौंट, रौंटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोना] (१) खेल में बुरा मानना। (२) चिढ़कर बेईमानी करना। उ.—रौंटि करत तुम खेलत ही मैं परी कहा यह बानि—५३४।

रौंथ—संज्ञा स्त्री. [देश.] चौपायों की जुगाली।

रौंद, रौंदन—संज्ञा स्त्री. [हिं. रौंदन] रौंदने की क्रिया।

रौंदना, रौंदनो—क्रि. स. [सं. मर्दन] (१) पैरों से कुचलना। (२) लातों से मारना।

रौ—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) गति, चाल। (२) वेग, झोंक। (३) पानी का बहाव। (४) किसी बात की धुन।

संज्ञा पुं. [सं. रव] (१) शोर। (२) ध्वनि। उ.—गोरंभन गोपाल गरजनि घन घूमि दुंदुभिन रौ की—२७५०।

रौगन—संज्ञा पुं. [अ. रौग़न] (१) तेल। (२) पक्का रंग।

रौजा—संज्ञा पुं. [अ. रौज़ा] (१) बाग। (२) प्रसिद्ध कब्र।

रौणी—संज्ञा स्त्री. [सं. रमणी] नारी, स्त्री।

रौत—संज्ञा पुं. [हिं. रावत] ससुर।

रौताइन—संज्ञा स्त्री. [हिं. राव, रावत] (१) रावत की स्त्री। (२) स्त्री के लिए आदरसूचक संबोधन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रौताई—संज्ञा स्त्री. [हिं. रावत+आई] रावत होने का भाव या पद ।

रौद्र—वि. [सं.] (१) रुद्र-संबंधी । (२) भयंकर । (३) क्रोध-सूचक ।

संज्ञा पुं.—(१) क्रोध । (२) काव्य के नौ रसों में एक जिसमें क्रोध का वर्णन होता है ।

रौद्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भयंकरता । (२) प्रचंडता ।

रौन—संज्ञा पुं. [सं. रमण] (१) विलास, क्रीड़ा । (२) मैथुन । (३) घूमना, विचरना । (४) पति ।

रौनक—संज्ञा स्त्री. [अ. रौनक़] (१) चमक-दमक । (२) प्रफुल्लता । (३) शोभा, सुहावनापन ।

रौना—संज्ञा पुं. [सं. रमण] गौना, मुकलावा ।

संज्ञा पुं. [हिं. रोना] दुख, शोक ।

रौनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रमणी] (सुन्दरी) स्त्री ।

रौप्य—संज्ञा पुं. [सं.] चाँदी, रूपा ।

वि.—चाँदी का बना हुआ ।

रौर, रौरई—संज्ञा स्त्री., पुं. [हिं. रोर] शोर, कोलाहल । उ.—रैनि कहूँ फँग परे कन्हाई कहति सबै करि रौर—२०९० ।

रौरव—वि. [सं.] (१) डरावना । (२) कपटी ।

संज्ञा पुं.—इक्कीस नरकों में पाँचवाँ ।

रौरा—संज्ञा पुं. [हिं. रौला] (१) शोर । (२) उद्यम ।

सर्व. [हिं. रावरा] आपका ।

रौराना—क्रि. अ. [हिं. रोद, रोरा] प्रलाप करना ।

रौरानी—क्रि. अ. [हिं. रौराना] प्रलाप करने लगी । उ. —अब यह और सृष्टि बिरहिनि की बकत बाइ रौरानी

रौरानो—क्रि. अ. [हिं. रौराना] प्रलाप करना ।

रौरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. रोर] शोर-गुल, कोलाहल । उ. —तिनके जात बहुत दुख पायो रौरि परी यहि खेरे—२६६४ ।

रौरे—सर्व. [हिं. राव, रावत] आप ।

रौल, रौला—संज्ञा पुं. [सं. रवण] (१) शोर । (२) उद्यम ।

रौलि—संज्ञा स्त्री. [देश.] चपत, धौल ।

रौस—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. रविश] (१) चाल, गति । (२) रंग-ढंग । (३) बाग की क्यारियों के बीच का मार्ग ।

रौहार, रौहाल—संज्ञा स्त्री. [देश.] घोड़ों की एक जाति ।

वि. [फ़ा. रहवार] चलनेवाला ।

ल

ल—देवनागरी वर्णमाला का अट्ठाईसवाँ व्यंजन जिसका उच्चारण-स्थान दंत है ।

लंक—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमर, कटि । उ.—उर सुदेस रोमावलि राजति मृग-अरि की सी लंक—पृ. ३४०-९३ ।

संज्ञा स्त्री. [सं. लंका] लंका द्वीप जहाँ रावण का राज्य था । उ.—(क) गहि सारँग रन रावन जीत्यो, लंक बिभीषन फिरी दुहाई—१-२४ । (ख) जरिहै लंक कनकपुर तेरौ उदवत रघुकुल भान—९-७९ । (ग) लैहैं लंक बीस भुज भानी—९-११६ ।

लंकनाथ, लंकनायक—संज्ञा पुं. [सं. लंका + नाथ, नायक] (१) रावण । (२) विभीषण ।

लंकपति—संज्ञा पुं. [सं. लंका+पति] लंका का राजा रावण ।

लंकपुर—संज्ञा पुं. [सं. लंका+पुर] लंका । उ.—लंकपुर आइ रघुराइ डेरा दियौ—९-१४२ ।

लंकपुरी—संज्ञा स्त्री. [सं. लंका+पुरी] लंका ।

लंका—संज्ञा स्त्री. [सं.] भारत के दक्षिण का एक द्वीप जहाँ रावण का राज्य था । उ.—(क) लंका बसत दैत्य अरु दानव—९-८६ । (ख) रे पिय, लंका बनचर आयौ -९-११९ ।

लंकादाही—संज्ञा पुं. [सं. लंकादाहिन्] हनुमान ।

लंकाधिपति—संज्ञा पुं. [सं.] रावण ।

लंकापति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रावण । उ.—(क) जनक-सुता हित हत्यौ लंकापति—१-२५५ । (ख) मारौं आजु लंक लंकापति—९-७५ । (२) विभीषण ।

लंकापति-अनुज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विभीषण । (२) कुंभकर्ण ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंकापती—संज्ञा पुं. [सं. लंकापति] लंका का स्वामी या राजा। उ.—आइ त्रिभीषन सीस नवायौ। देखत ही रघुबीर धीर कहि लंकापती बुलायौ—९-११२।

लंकार—संज्ञा पुं. [सं. अलंकार] भूषण, अलंकार, साज-श्रृंगार। उ.—बिधि सों धेनु दई बहु बिपुनि सहित सर्व लंकार—२६२९।

लंकारि—संज्ञा पुं. [सं. लंका + अरि] श्रीरामचंद्र।

लंकाल—संज्ञा पुं. [हिं.] शेर, सिंह।

लंकिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक राक्षसी जिसे, लंका में प्रवेश करते समय हनुमान ने मारा था।

लंकृत—वि. [सं. अलंकृत] सजा-सजाया, विभूषित, शोभित। उ.—(क) हृदय हार बिन ही गुन लंकृत —२०८८। (ख) सुंदर स्याम गंड लंकृत—३३२०। (ग) मानो इंदु आये नलिनी दल लंकृत अमी ओसकन जाल—३४५३।

लंकेश, लंकेस—संज्ञा पुं. [सं. लंकेश] (१) रावण। उ.—(क) कह्यौ लंकेस दै ठेस पग की तबै—९-११। (ख) दै सीता अवधेस पाइँ परि, रहु लंकेस कहावत ९-१३३। (२) विभीषण।

लंकेश्वर, लंकेस्वर—संज्ञा पुं. [सं. लंकेश्वर] (१) रावण। उ.—लंकेस्वर बाँधि राम-चरननि तर डारौं —९-८५। (२) विभीषण।

लंग—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाँग] धोती की लाँग जो पीठ की ओर खोंसी जाती है।

संज्ञा पुं. [फ़ा.] लँगड़ापन।

वि. जो लँगड़ा हो।

लंगड़—वि. [हिं. लँगड़ा] जो लँगड़ता हो।

संज्ञा पुं. [हिं. लंगर] लंगर।

लँगड़ा—वि. [फ़ा. लंग] (१) जिसका एक पैर टूटा हो। (२) जिसका एक पाया टूटा हो।

संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का कलमी आम।

लँगड़ाना, लँगड़ानो – क्रि. अ. [हिं. लँगड़ा] लँगड़े होकर चलना।

लगर—वि. [देश.] (१) दुष्ट। (२) ढीठ।

लंगर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) लोहे का बड़ा काँटा जो नाव या जहाज रोकने के लिए जल में डाल दिया जाता है। (२) लकड़ी का कुंदा जो पशु को भागने से रोकने के लिए उसके गले से बाँधा जाता है। (३) लोहे की भारी जंजीर। (४) चांदी का तोड़ा जो पैर में पहना जाता है। (५) सिलाई के मोटे टाँके।

वि. (१) भारी, बोझीला। (२) नटखट, उपद्रवी। उ.—सूर स्याम दिन दिन लंगर भयौ—८६२। (३) धृष्ट, दुष्ट, अनाचारी। उ.—(क) लंगर ढीठ गुमानी टूँडक—१-१८६। (ख) महर बड़ी लंगर सब दिन कौ हँसति देखि मुख गारि—७०३।

मुहा०—लंगर करना—(१) उपद्रव करना। (२) दुष्टता या धृष्टता करना।

संज्ञा स्त्री.—ढिठाई, शरारत, उपद्रव। उ.—सूर स्याम जहँ तहाँ खिझावत जो मन भावत, दूरि करौं लंगर सगरी—१०४५।

वि. [हिं. लँगड़ा] जो लँगड़ाकर चलता हो।

लँगरई, लँगराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लंगर + अई, आई] नटखटपन, ढिठाई। उ.– (क) अजहूँ छाँड़ोगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आये—३७०। (ख) अब पाई इनकी लँगराई रहते पेट समाने—पृ. ३२६ (५६)। (ग) दूरि करौं लँगराई वाकी—११६४।

मुहा०—लँगरई (लँगराई) करना या ठानना—नटखटपन या शरारत करना। लँगरई करत—शरारत या नटखटपन करता है। उ.—कालि्हहि तैं लँगरई करत अति—४२५। करन लँगरई लागे—शरारत करने लगे हैं। उ.—मोहन करन लँगरई लागे—७७०। लँगरई कीन्हौ—शरारत की है। उ.—बहुत लँगरई कीन्हौं मोसौं—३४४। लँगरई ठानी—शरारत की। उ.—स्याम लँगरई ठानी—१०-२५३।

लँगराना, लँगरानो—क्रि. अ. [हिं. लँगड़ाना] लँगड़े होकर चलना।

लँगरी—वि. [हिं. लंगर] (१) शरारत भरी, नटखटपन की। उ.—भरन देहु जमुना-जल हमको, दूरि करौ बातैं ए लँगरी—८५३। (२) धृष्ट, दुष्ट। उ.—सूर स्याम मुख पोंछि जसोदा कहति, सबै जुवती हैं लँगरी —१०-३१९। (३) निर्लज्ज। उ.—बन में पराई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारि रोकि राखी बनवारी, जान नहीं देत, ह्यां कौन ऐसी लँगरी—१०४५।

संज्ञा स्त्री.—शरारत, नटखटपन। उ.—भली कही यह कुँवर कन्हाई, आजु मेटिहौं तुम्हरी लँगरी—८५४।

लँगरैयाँ—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. लंगर] शरारतें, नटखटपन की बातें। उ.—जा दिन तैं सचरे गोपिनि मैं, ताही दिन तैं करत लँगरैयां—७३५।

लँगरैया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लंगर] शरारत, नटखटपन। उ.—दूरि करैं लँगरैया—८६२।

लंगी—वि. [हिं. लंग] लँगड़ाती हुई, लँगड़ी। उ.—ग्राह गह्यौ गज बल बिनु ब्याकुल, बिकल गात, गति लंगी—१-२१।

लंगर—संज्ञा पुं. [सं. लांगुली] (१) एक (विशेष) बंदर। उ.—(क) रीछ लंगूर किलकारि लागे करन—९-१३८। (२) (बंदर की) पूंछ। उ.—सन अरु सूत चीर पाटंबर लै लंगूर बँधाए—९-९८।

लंगूरफल—संज्ञा पुं. [हिं. लंगूर+सं. फल] नारियल।

लंगूल—संज्ञा पुं. [सं. लांगूल] (बंदर की) पूंछ।

लँगोट, लँगोटा—संज्ञा पुं. [सं. लिंग+ओट या पट्ट] कमर पर बांधने का एक विशेष वस्त्र।

यौ०—लँगोटबंद—ब्रह्मचारी।

लँगोटिया—वि. [हिं. लँगोट] लंगोटी बांधने के दिनों का, बचपन का।

मुहा०—लँगोटिया दोस्त या यार—बचपन का मित्र।

लँगोटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लँगोट] कोपीन, कछनी।

मुहा०—लँगोटी पर फाग खेलना—कम सामर्थ्य या साधन होने पर भी अधिक व्यय करना। लँगोटी बँधवाना—बहुत दीन या दरिद्र कर देना। लँगोटी बिकवाना—इतना दरिद्र या दीन कर देना कि पहनने को लँगोटी भी न रह जाय।

लंघन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फाका, उपवास। (२) लांघने की क्रिया। (३) अतिक्रमण।

लंघना, लंघनो—क्रि. स. [हिं. लाँघना] लांघना, पार चले जाना, नांघना।

संज्ञा स्त्री. [सं.] उपेक्षा, अवमानना।

लंघै—क्रि. स. [हिं. लंघना] पार जाता है, लांघ जाता है। उ.—जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै—१-१।

लंठ—वि. [हिं. लट्ठ] उजड्ड, गँवार, मूर्ख।

लंडूरा—वि. [देश.] बिना मूंछ का।

लंतरानी—संज्ञा स्त्री. [अ.] डींग, शेखी।

लंपट—वि. [सं.] (१) विषयी, कामुक, व्यभिचारी। उ.—मगन भयौ माया-रस लंपट—१-९८। (२) लोभी, कामी। उ.—(क) साधु-निंदक, स्वाद-लंपट—१-१२४। (ख) अति रस-लंपट मेरे नैन—२७६५।

संज्ञा पुं.—उपपति, यार।

लंपटता—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुराचार, कामुकता।

लंब—संज्ञा पुं. [सं.] (१) समकोण बनानेवाली रेखा। (२) प्रलंबासुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

संज्ञा स्त्री., पुं. विलंब।

वि. लंबा।

यौ०—लंबतड़ंग—बहुत लंबा।

लंबा—वि. [सं. लंब] (१) जो किसी एक दिशा में दूर तक चला गया हो।

मुहा०—लंबा करना—(१) चलता करना, टालना। (२) पटककर चित कर देना। लंबा होना—चल देना।

(२) जिसकी ऊँचाई अधिक हो। (३) जिसका विस्तार अधिक हो। (४) बड़ा, दीर्घ।

लंबाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लंबा] लंबे होने का भाव।

लंबान—संज्ञा स्त्री., पुं. [हिं. लंबा] लंबाई।

लंबायमान—वि. [हिं. लंबा] लेटा हुआ।

लंबी—वि. स्त्री. [हिं. लंबा] (१) जिसकी ऊँचाई या विस्तार अधिक हो। (२) बड़ी, दीर्घ।

मुहा०—लंबी तानना—ओढ़कर सो जाना। लंबी सांस लेना—दुख की ठंढी सांस लेना।

लंबुल—वि. [हिं. लंबा] लंबा, ऊँचा।

लंबोतड़ा, लंबोतरा—वि. [हिं. लंबा] लंबे आकार का।

लंबोदर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेटू। (२) गणेश।

लँहड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] समूह, झुंड।

लइँ—क्रि. स. [हिं. लेना] लीं।

प्र०—लइँ बुलाइ—बुलवा लीं। उ.—लइँ भीतर भवन बुलाइ सब सिसु-पाइँ परीं—१०-२५।

लई—क्रि. स. [हिं. लेना] ले ली। उ.—कामना-धेनु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनि सप्तरिषि कौं दई लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे —८-८।

प्र०— चुराइ लई—चुरा ली। उ.—तबहिं निसिचर गयौ छल करि लई सीय चुराइ—९-६०। रिझै लई—रिझा ली। उ.—रिझै लई जुवती वा छवि पर—१०-३०१। लइ लाइ—लगा ली, व्यस्त कर लिया। उ.—बातनि लई राधा लाइ—६८३।

लउटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लकुटी] लकड़ी।

लए—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) लिये या थामें हुए। उ.—लए लकुटिया द्वारैं ठाढ़े—८-१५। (२) साथ बैठाये, लगाये या लिये हुए। उ.—सूर स्याम लए जननि खिलावति—१०-२३९। (३) उठा लिये, पहुँचा दिये। उ.—आँगन मैं हरि सोइ गए री। दोउ जननी मिलि कै हरुएँ करि, सेज सहित तब भवन लए री—१०-२७४।

लकड़बग्घा—संज्ञा पुं. [हिं. लकड़ी + बाघ] एक जंगली पशु।

लकड़हारा-वि. [हिं. लकड़ी+हारा] लकड़ी बेचनेवाला।

लकड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. लगुड] (१) काठ। (२) ईंधन।

मुहा०—लकड़ी देना—मुरदे को जलाना। लकड़ी ठोंकना—मुरदे की कपाल-क्रिया करना।

(३) छड़ी, लाठी।

मुहा०—लकड़ी जैसा (सा)—बहुत दुबला-पतला। लकड़ी चलना—मार-पीट होना। लकड़ी होना—(१) दुबला-पतला होना। (२) सूखकर कड़ा होना।

लकरियन, लकरियनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. लकड़ी] लकड़ियों या ईंधन (के लिए)। उ.—जब हम तुम बन गए लकरियन पठए गुरु की भामा—१०उ०-६६।

लकरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लकड़ी] (१) लकड़ी, डंडी। उ.—हमरे हरि हारिल की लकरी—३३६०।

मुहा०—सिर ठोंकी लकरी—मुरदे की कपाल-क्रिया की। उ.—लै देहीं घर-बाहर जारी, सिर ठोंकी लकरी—१-७१।

लकवा—संज्ञा पुं. [अ. लक़वा] एक वात रोग।

लकीर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लीक] (१) धारी। (२) पंक्ति।

मुहा०—लकीर का फकीर—पुराने ढंग पर चलनेवाला। लकीर पर चलना (पीटना)—किसी तरह पुरानी प्रथा निभाना।

लकुट, लकुटि, लकुटिआ, लकुटिया, लकुटी—संज्ञा स्त्री. [सं. लगुड, हिं. लकुट] लाठी, छड़ी। उ.—(क) तहीं तहिं त्रासत अस्म, लकुट, पद-त्रान—१-१०३। (ख) माया नटी लकुटि कर लीन्हे कोटिक नाच नचावै—१-४२। (ग) चतुर ग्वालि कर गह्यौ स्याम की, कनक लकुटिआ पाई—८४२। (घ) करैं टहल लकुटिया सौं डरि—३९२। (ङ) लकुट लै लै त्रास दीन्हौ—२५८३। (च) दौरि दामन देहिंगी लकुटी जसोदा पानि — २७५६।

मुहा०—बिरध समय की हरत लकुटिया—बुढ़ापे का सहारा छीनता है। उ.—बिरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाहीं। लकुट बजना—लकड़ी से मार पड़ना। लकुट बाजिहै—लकड़ी से मार पड़ेगी। उ.—लादत जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूँड़ दुरैहौ—१-३३१।

लकुटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लकुट] लाठी, डंडा।

लक्कड़—संज्ञा पुं. [हिं. लकड़ी] लकड़ी का कुंदा।

लक्का—संज्ञा पुं. [अ. लक़्क़ा] एक तरह का कबूतर।

लक्खी—वि. [हिं. लाख] लाख के रंग का।

वि. [हिं. लाख (संख्या)] लखपती, बहुत धनी।

लक्तक—संज्ञा पुं. [सं.] अलता, अलक्तक।

लक्ष—वि. [सं.] एक लाख।

संज्ञा पुं. (१) अंक जो एक लाख का द्योतक हो। (२) वैर। (३) चिह्न। (४) लक्ष्य। (५) एक प्रकार का अस्त्र।

लक्षक—वि. [सं.] लक्ष कराने या जतानेवाला।

संज्ञा पुं.—शब्द जो संबंध से अर्थ सूचित करे।

लक्षण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आसार, चिह्न। उ.—अमल अकास कास कुसुमनि मिलि लक्षण स्वाति जनाए—२८५४। (२) नाम। (३) परिभाषा। (४) शरीर के विशेष चिह्न। (५) रंग-ढंग।

लक्षणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] शब्द की शक्ति-विशेष जिससे उसका अभिप्राय सूचित हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लखना, लखनो—क्रि. स. [हिं. लखना] देखना, निहारना, ताकना।

लखि—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्य] लक्ष्य।

लखित– वि. [सं.] (१) बताया हुआ। (२) देखा हुआ। (३) अनुमानित। (४) चिह्न या लक्षण-युक्त।

संज्ञा पुं.—'लक्षण' से ज्ञात शब्दार्थ।

लखिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नायिका जिसका प्रेम ज्ञात हो जाय।

लक्षी—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लक्ष्म—संज्ञा पुं. [सं.] चिह्न, लक्षण।

लक्ष्मण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजा दशरथ के तीसरे पुत्र जिनका जन्म सुमित्रा के गर्भ से हुआ था और जिनको उर्मिला ब्याही थी। (२) दुर्योधन का पुत्र।

लक्ष्मणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) श्रीकृष्ण की एक पटरानी जो मद्र देश के राजा बृहत्सेन की पुत्री थी। (२) श्रीकृष्ण के पुत्र सांब की पत्नी। उ.—स्याम सुनि साँब गयौ हस्तिनापुर तुरत लक्ष्मणा जहाँ स्वयंवर रचायौ—१० उ०-४६।

लक्ष्मी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धन की अधिष्ठात्री जो विष्णु की पत्नी मानी जाती है। (२) धन-संपत्ति। (३) शोभा, छवि। (४) सुंदर और सौभाग्यशालिनी स्त्री या बधू।

लक्ष्मीकान्त—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु और उनके अवतार।

लक्ष्मीपति—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु और उनके अवतार।

लक्ष्मीपुत्र—वि. [सं.] बहुत धनी।

लक्ष्मीरमण—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु और उनके अवतार।

लक्ष्मीवल्लभ—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु और उनके अवतार।

लक्ष्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) निशाना। (२) जिस पर आक्षेप किया जाय। (३) उद्देश्य। (४) अनुमानित प्रसंग। (५) 'लक्षणा' शक्ति से प्रकट अर्थ।

लक्ष्यक—वि. [सं.] (१) लक्ष्य करने-करानेवाला। (२) संकेत द्वारा सूचित करनेवाला।

लक्ष्यार्थ—संज्ञा पुं. [सं.] 'लक्षणा' से प्रकट अर्थ।

लख—वि. [सं. लक्ष] लाख (संख्या)। उ.—(क) चौरासी लख जोनि स्वांग धरि—२-१३। (ख) द्वै लख धेनु द्विजनि कौ दीन्हीं—१०-३२।

लखत—क्रि. स. [हिं. लखना] देखता है या देखते हैं। उ.—इहिं बिधि लखत—१-१८९।

लखति—क्रि. स. [हिं. लखना] दिखायी देती है। उ.—लखति पास बन सारी—२५६२।

लखन—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के छोटे भाई लक्ष्मण। उ.—लखन दल संग लै लंक घेरी--९-१३८।

संज्ञा स्त्री. [हिं.लखना] लखने की क्रिया या भाव।

लखना—क्रि. स. [सं. लक्ष] (१) समझ जाना, ताड़ लेना। (२) देखना।

लखनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लखना] लखने की क्रिया या भाव।

प्र.—जाति लखनि—समझी या जानी जा सकती है। उ.—सूर प्रभु महिमा अगोचर जाति कापै लखनि—९८१।

लखनो–क्रि. स. [हिं. लखना] (१) समझना, ताड़ जाना। (२) देखना।

लखपति, लखपती—वि. [सं.लक्ष + पति, हिं. लखपति] जिसके पास लाखों की संपत्ति हो, बहुत धनी।

लखमी—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लखरावँ—संज्ञा पुं. [हिं. लाख + रावँ] बाग जिसमें बहुत पेड़ हों।

लखलखा—संज्ञा पुं. [फ़ा. लखलखा] (१) सुगंधित द्रव्य। (२) मूर्च्छा दूर करने का सुगंधित द्रव्य।

लखाई—क्रि. स. [हिं. लखाना] दिखायी, बतायी। उ.—यह औषधि इक सखी लखाई—७४८।

लखाउ—संज्ञा पुं. [हिं. लखना] (१) पहचान। (२) निशानी।

लखाना, लखानो—क्रि. अ. [हिं. लखना] दिखायी पड़ना।

क्रि. स.—(१) दिखलाना। (२) समझाना, सुझाना।

लखायो, लखायौ—क्रि. स. [हिं. लखना] दिखायी दिया। उ.—(क) मग मैं अद्‌भुत चरित लखायौ—४-१२। (ख) खोजत जुग गए बीति अंत मोहूँ न लखायौ—४९२।

लखाव—संज्ञा पुं. [हिं. लखना] (१) चिह्न। (२) निशानी।

लखावत—क्रि. स. [हिं. लखाना] दिखाता है, दिखाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(हुआ)। उ.—आतम ब्रह्म लखावत डोलत घट-घट व्यापक जोई—३०२२।

लखि—क्रि. स. [हिं. लखना] देखकर। उ.—रिषिनि कह्यौ, तुव सतम जग्य अरंभ लखि इंद्र कौ राज हित कंप्यौ हीयौ—४-११।

मुहा०—लखि न जाइ—(१) दिखायी नहीं पड़ता। उ.—मंदिर मैं गए समाइ, स्यामल तनु लखि न जाइ—१०-२७५। (२) देखने की सामर्थ्य, योग्यता या पात्रता न रही।

लखिश्रा, लखिया—वि. [हिं. लखना] देखनेवाला।

वि. [हिं. लाख] लखपती, बहुत धनी।

लखी—क्रि. स. [हिं. लखना] देखी, दिखायी दी। उ.—लखी न राघव नारि—९-७५।

लखेरा—वि.[हिं.लाख] लाख की चूड़ी आदि बनानेवाला।

लखै—क्रि. स. [हिं. लखना] देखता-समझता है। उ.—भक्त सात्विकी सेवैं संत, लखै तिन्हैं मूरति भगवंत—३-१३।

लखोट, लखोटि, लखोठ, लखोठि—संज्ञा स्त्री. पुं. [हिं. लकुट] लाठी, छड़ी, लकड़ी।

लखो, लखौ—क्रि. स. [हिं. लखना] देखो। उ.—लखौ अब नैन भरि, बुझि गई अगिनि झरि—५९७।

लखौट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाख+औट] लाख की बनी हुई चूड़ियां।

लखौटा—संज्ञा पुं. [हिं. लाख+औटा] (१) डिब्बा जिसमें सेंदुर आदि रक्खा जाय। (२) उबटन-विशेष।

लखौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाखा] (१) भृंगी का घर। (२) एक तरह की पतली ईंट।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाख (संख्या)] किसी देवता पर लाख की संख्या में फल, फूल, पत्ती आदि चढ़ाना।

लख्यो, लख्यौ—क्रि. स. [हिं. लखना] देखा, लक्ष्य किया। उ.—गौतम लख्यौ, प्रात है भयौ—६-८।

लग—क्रि. वि. [हिं. लौ] (१) तक, पर्यन्त। (२) समीप।

अव्य. (१) लिए, वास्ते। (२) साथ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लौ] लगन, प्रीति। उ.—(क) लग लगान नहिं पावत स्याम—८७८। (ख) जब कहुँ लग लागे नहीं तब वाको जिव अकुलाइ री—८८०। (ग) लग लागे पागे उर अंतर कठिन सिलीमुख पायक—२२२९।

लगत—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) लगता है, लगते हैं।

प्र०—लगत गोहारी—पुकार मचाते हो। उ.—परसुराम, तुम आइ लगत क्यौं नहीं गोहारी—९-१४।

मुहा०—पलक लगत—नींद आती है। उ.—तब तौ पलक लगत दुख पावत—३४०५।

(२) छाती से लगते हैं। उ.—लगत सेष-उर बिलखि जगत-गुरु—९-६२। छेड़छाड़ या शरारत करता है। उ.—औरनि सो करि रहे अचगरी मोसौं लगत कन्हाई।

लगति—क्रि. अ. [हिं. लगना] छूती या स्पर्श करती है। उ.—वाके आश्रम जोउ बसत, माया लगति न ताय।

लगती—क्रि. अ. [हिं. लगना] प्रभावित करती (है)।

मुहा०—लगती बात—(१) चुभने या पीड़ा पहुँचाने वाली बात। (२) मर्म या भेद भरी बात।

लगन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] (१) प्रवृत्ति या ध्यान लगाने की क्रिया। उ.—कस्यप रिषि सुर-तात सु लगन लगावन रे—१०-२८। (२) प्रीति, स्नेह। (३) लगाव, संबंध।

संज्ञा पुं. [सं. लग्न] (१) विवाह का मुहूर्त। (२) सहालग। (३) शुभ कार्य का मुहूर्त।

यौ०—लगन घरी—शुभ कार्य का मुहूर्त। उ.—लगन घरी आवत यातैं न्हवाइ बनावौ—१०-९५।

(४) दिन का उतना अंश जितने में राशि-विशेष का उदय रहता है। उ.—(क) सोइ तिथि-बार-नछत्र लगन ग्रह सोइ जिहिं ठाट ठयौ—१-२९८। (ख) लगन सोधि सब जोतिष गनिकै—१०-८६।

लगनपत्री—संज्ञा स्त्री. [सं. लग्नपत्रिका] विवाह के मुहूर्त का निर्णय-सूचक पत्र जो कन्या पक्षवाले वर-पक्षवालों को भेजते हैं।

लगनवट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगन] प्रेम, लौ।

लगना—क्रि. अ. [सं. लग्न] (१) दो वस्तुओं का मिलना या सटना। (२) एक वस्तु का दूसरे में जुड़ना। (३) किसी वस्तु के तल पर पड़ना। (४) सिया या जड़ा जाना। (५) सम्मिलित होना। (६) उगना, जमना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७) ठिकाने पर पहुँचना। (८) क्रम से सजाया जाना। (९) खर्च होना। (१०) अनुभव होना। (११) स्थापित होना। (१२) कोई संबंध या रिश्ता होना। (१३) चोट या आघात पहुँचना। (१४) टकराना। (१५) पोता या मला जाना। (१६) जलन या किनकिनाहट उत्पन्न करना। (१७) बरतन के तल में लग जाना। (१८) शुरू हो जाना। (१९) काम में आना। (२०) काम के लिए जरूरी होना। (२१) चलना। (२२) जारी होना। (२३) रगड़ खाना। (२४) सड़ना, गलना। (२५) भीड़-भाड़ के कार्य का आरंभ होना। (२६) प्रभाव पड़ना। (२७) नियत या निश्चित होना। (२८) आरोप होना। (२९) जल उठना। (३०) ठीक, उपयुक्त या कामलायक होना। (३१) हिसाब या जोड़ होना। (३२) साथ हो जाना। (३३) चिमटना। (३४) कार्य में तत्पर होना। (३५) छूना, स्पर्श करना। (३६) दूध दुहा जाना। (३७) गड़ना, चुभना। (३८) बदले में दिया जाना। (३९) निकट पहुँचना। (४०) छेड़छाड़ करना। (४१) मुँदना, बंद होना। (४२) बाजी, दाँव या शर्त पर रखा जाना। (४३) अंकित या चिह्नित होना। (४४) धार का तेज किया जाना। (४५) ताक या घात में रहना। (४६) एकत्र होना। (४७) दाम आँका जाना। (४८) परच जाना। (४९) बिछना। (५०) होना। (५१) सामने या बराबर आना।

लगनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] (१) प्रवृत्ति या ध्यान लगने की क्रिया। (२) प्रीति। (३) लगाव, संबंध।

लगनो—क्रि. अ. [हिं. लगना] लगना।

लगभग—क्रि. वि. [हिं. लग+भग अनु.] करीब-करीब।

लगर—संज्ञा पुं. [देश.] एक शिकारी पक्षी।

लगलग—वि. [अ. लक़लक़] दुबला, सुकुमार।

लगव—वि. [अ. लग़ो] (१) झूठा, (२) व्यर्थ।

लगवाना, लगवानो—क्रि. स. [हिं. लगाना का प्रेर०] लगाने को प्रवृत्त करना।

लगवार, लगवारा, लगवारो—संज्ञा पुं. [हिं. लगना+वार] यार, उपपति।

लगाइ—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) लगाकर। (२) आरोपित करके। उ.—तिहिं बहु अवगुन देइ लगाइ ५-४। (३) सटाकर, चिपकाकर। उ.—(क) सूर स्याम बिरुझाने सोए लिए लगाइ छतियाँ महतारी—१०-१९६। (ख) लीन्हीं जननि कंठ लगाइ—५८०। (४) साथ लेकर। उ.—लिये अमरगन संग लगाइ—१०६६। (५) मलकर, पोतकर। उ.—कुच बिष बाँटि लगाइ कपट करि बालघातिनी परम सुहाई—१०-५०।

लगाईं—क्रि. स. [हिं. लगाना] छुईं, स्पर्श कीं।

मुहा०—मुँह न लगाईं—बात भी नहीं की। उ.—अष्ट-सिद्धि बहुरी तहँ आईं। रिषभदेव ते मुँह न लगाईं—५-२।

लगाई—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) की, कर दी। उ.—(क) बन मैं आजु अबार लगाई—४७१। (ख) जननी जिय व्याकुल भई कान्ह अबेर लगाई—५८९। (२) जोड़कर, संयुक्त करके। उ.—पटकत सिला गई आकासहि दोउ भुज चरन लगाई - १०-४।

प्र०—प्रीति लगाई—प्रेम किया। उ.– मिटि गए राग-द्वेष सब तिनके जिन हरि प्रीति लगाई–१-३१८। दीठि लगाई—नजर लगा दी। खेलत मैं कोउ दीठि लगाई—१०-२००। टेर लगाई—पुकारा, आवाज दी। उ.—सखा द्वार परभात सौं सब टेर लगाई—१०-२०९। होड़ लगाई-- स्पर्द्धा या प्रतियोगिता के लिए सन्नद्ध हुए। उ.—हमहूँ तुम मिलि होड़ लगाई—६६८। मोहिनी लगाई—मुग्ध या वशीभूत कर लिया। उ.—(क) स्याम बरन इक मिल्यौ ढोटौना तेहि मोकौं मोहनी लगाई ८४९। (ख) देखत ही मोहिनी लगाई—१४४०। समाधि लगाई—ध्यानावस्थित होकर। उ.—और कौन अबलनि व्रत धारचौ योग-समाधि लगाई—३३४३।

लगाउ—क्रि. स. [हिं. लगाना] जोड़ो, बाँधो, संबद्ध करो। उ.— पालनौ अति सुन्दर गढ़ि····पंचरंग रेसम लगाउ—१०-४१।

लगाऊँ—क्रि. स. [हिं. लगाना] लेप करूँ, मलूँ। उ.—मृगमद तन न लगाऊँ—२१५०।

लगाए—क्रि. स. [हिं. लगाए] (१) मले, रगड़े। उ.—तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उबटन तेल लगाए—१०-१८३ । (२) आघात किये । उ.—माता सँटिया ढूँक लगाए—३९१ । (३) साथ में ले लिये । उ.—ग्वाल-सखा सब संग लगाए—४४८ ।

लगातार—क्रि. वि. [हिं. लगना + तार] बराबर, निरंतर ।

वि.—क्रम से होता रहनेवाला ।

लगाद—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगाव] प्रेम, लौ ।

क्रि. वि. [हिं. लग] पर्यन्त, तक ।

लगान—संज्ञा पुं. [हिं. लगाना] भूमि-कर ।

लगाना—क्रि. स. [हिं. लगना] (१) एक वस्तु को दूसरे से मिलाना या सटाना । (२) एक वस्तु को दूसरी से जोड़ना । (३) किसी वस्तु के तल पर कुछ चिपकाना, गिराना या रगड़ना । (४) सीना, टांकना । (५) सम्मिलित करना । (६) जमाना, उगाना । (७) उपयुक्त स्थान पर पहुँचाना । (८) क्रम से सजाना । (९) खर्च करना । (१०) अनुभव कराना । (११) स्थापित करना । (१२) चोट या आघात पहुंचाना । (१३) लेपना, पोतना, मलना । (१४) प्रवृत्ति आदि उत्पन्न करना । (१५) काम में लाना । (१६) सड़ाना, गलाना ।(१७) भीड़-भाड़ एकत्र करने का आयोजन करना । (१८) दी जानेवाली संख्या आदि नियत या निश्चित करना । (१९) अभियोग लगाना । (२०) जलाना । (२१) ठीक स्थान पर बैठाना, जड़ना । (२२) हिसाब या जोड़ करना । (२३) साथ या पीछे चलने को नियुक्त करना । (२४) साथ में संबंद्ध करना । (२५) चुगली खाना ।

यौ०—लगाना-बुझाना—लड़ाई-झगड़ा कराना ।

(२६) साथ या पीछे ले चलना । (२७) काम में तत्पर करना । (२८) दूध दुहना । (२९) गड़ाना, घंसाना । (३०) समीप पहुँचाना । (३१) छुआना, स्पर्श कराना । (३२) बंद करना । (३३) बाजी, दांव या शर्त पर रखना । (३४) किसी बात का अभिमान करना । (३५) पहनना, धारण करना । (३६) धार तेज करना । (३७) अंकित या चिह्नित करना । (३८) बदले में लेना । (३९) मूल्य आंकना । (४०) परचाना । (४१) नियत स्थान या कार्य पर पहुँचाना । (४२) बिछाना, फैलाना । (४३) करना । (४४) सामने या बराबर ले जाना ।

लगानी—क्रि. अ. [हिं. लगना] अनुरक्त हो गयी, प्रीति करने लगी । उ.—दिन दिन देन उरहनो आवति, ठुकि ठुकि करति लरैया ।........। सूर स्याम सुन्दरहिं लगानी, वह जानै बल भैया—३७१ ।

लगानो—क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाना ।

लगाम—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.](१) लोहे का वह ढांचा जो घोड़े को वश में रखने के लिए उसके मुंह में रखा जाता है ।

मुहा०—लगाम चढ़ाना या देना--(किसी को)बोलने से रोकना ।

(२) उक्त ढाँचे से बँधी डोरी या तस्मा जो सवार या हाँकनेवाले के हाथ में रहता है, रास, बाग ।

लगाय—क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाकर ।

प्र०—राखी घात लगाय—ताक या घात में रहे । उ.—सहसबाहु के सुतनि पुनि राखी घात लगाय—९-१४ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लगाव] प्रेम, लौ । उ.—सूर जहाँ लौं स्याम-गात हैं, तिनसौं क्यों कीजिए लगाय ।

लगायत—क्रि. वि. [हिं. लगाना] तक, पर्यन्त ।

लगाये—क्रि. स. [हिं. लगाये] सजा-सँवारकर और खाद्य पदार्थ परोसकर रखे । उ.—सखा सब बोलि हरि मंडली बर्नाहि के पात दोना लगाये—११७५ ।

लगायो, लगायौ—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) आरोपित किया । उ.—तुमहुँ मोहिं अपराध लगायौ—३७६ । (२) कान भरे । उ.—ब्रजनारी बटपारिनि हैं सब चुगली आपुहिं खाइ लगायौ—११६१ । (३) मढ़ा, जड़ा । उ.—लोह तरैं मधि रूपा लायो, ताकैं ऊपर कनक लगायौ—७-७ ।

प्र०—चित, ध्यान या मन लगायौ—लौ लगायौ, ध्यान किया, भक्ति या प्रीति की । उ.—(क) हरि सौं चित्त न लगायौ—१-३०१ । (ख) अरु एकहिं सौं चित्त लगायौ—४-३ । (ग) मन-क्रम-बचन कहति हौं सांची मैं मन तुमहिं लगायौ—१२२३ । (घ) हरि-पद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौं नृप ध्यान लगायौ—२-२। कंठ लगायौ—गले या छाती से लगा लिया। उ.—(क) भरत सत्रुहन कियौ प्रनाम, रघुबर तिन्ह कंठ लगायौ—९-५५। (ख) सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि हँसि करि कंठ लगायौ—३५६।

लगार—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना+आर] (१) नियमित रूप से काम करने या कुछ देने का भाव या कार्य, बंधेज। (२) लगने की क्रिया या भाव, लगाव, संबंध। उ.—सहसौ फन फन फूंकरै नैन न तनहिं लगार। (३) सिलसिला, तार, क्रम। उ.—सात दिवस नहिं मिटी लगार, बरस्यौ सलिल अखंडित धार—१०६१। (ख) अखंड धारा सलिल निझरो मिटी नहीं लगार—९७३। (४) प्रीति, लगन। (५) भेद लाने या लेने-वाला। उ.—और सखी इक स्याम पठाई।........। बैठी आइ चतुरई काछे वह कछु नहीं लगार—२२-३२। (६) वह जिससे घनिष्ठ संबंध या मेल हो। (७) टिकने का स्थान।

लगालगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] (१) लगन, प्रीति। (२) हेल-मेल, मोल-जोल, संबंध।

लगाव—संज्ञा पुं. [हिं. लगना+आव] संबंध।

लगावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगाव] संबंध, लगाव, वास्ता। (२) प्रीति, लगन।

लगावत—क्रि. स. [हिं. लगाना] आरोपित करता है या करते हैं। उ.—झूठैं लोग लगावत मोकौं, माटी मोहिं न भावै—१०-२५३।

लगावति—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) आरोपित करती हैं। उ.—(क) सूर सु कत हठि दोष लगावति, घर ही को माखन नहिं खात—१०-३०८। (ख) अनलहते अपराध लगावति बिकट बनावति बात—१०-३२६। (२) मिलाती या जोड़ती हैं।

प्र०—न पलक लगावति—सोतीं नहीं। उ.—नैंकु न पलक लगावति डोल—६३०।

लगावति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. लगाना] (१) करती है। उ.—सखी री, काहैं गहरु लगावति—१०-२३। (२) संबंध जोड़ती है। उ.—कहा करौं, तुम बात कहूँ की कहूँ लगावति—१०७१। (३) मिलाती या संबद्ध करती है। (४) दोष या अपराध लगाती है। उ.—(क) झूठेंहि मोहिं लगावति ग्वारि—१०-३०४। (ख) जननी कैं खीझत हरि रोए झूठेंहि मोहिं लगावति धगरी—१०-३१९। (५) चिपटाती या चिपकाती है।

प्र०—कंठ लगावति—गले या छाती से लगाती है। उ.—लै जननी सुत कंठ लगावति—३९१।

लगावन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगाना] लगाने की क्रिया या भाव।

प्र०—लगावन पावै—सम्पन्न कर पाता है। उ.—पांड़े नहिं भोग लगावन पावै—१०-२४९।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लगाव] संबंध, लगाव।

लगावना, लगावनो—क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाना।

लगावहु—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) मलो, रगड़ो, पोतो। उ.—बिप्रनि कह्यौ, याहि अन्हवावहु। याकैं अंग सुगंध लगावहु—५-३। (२) लगा लोगे। उ.—गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु—४०१।

प्र०—चित्त लगावहु--ध्यान करो, मानसिक संबंध जोड़ो। उ.—ताही सौं तुम चित्त लगावहु—५-२।

लगावैं—क्रि. स. [हिं. लगाना] करें।

प्र०—प्रीति लगावैं—प्रेम या भक्ति करें। उ.—हरि-पद-पंकज प्रीति लगावैं—३-१३।

लगावै—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) संबद्ध करती है, संबंध कराती है। (२) प्रवृत्ति को उकसाती है। उ.—महामोहिनी मोहि आत्मा अपमारगहिं लगावै—१-४२। (३) छुआता या स्पर्श कराता है। उ.—धेनु फिरति बिललाति बच्छ थन कोउ न लगावै—५८९। (४) आरोप लगाता या लगाती है। उ.—जौ तू रामहिं दोष लगावै करौं प्रान को घात—९-७७। (५) लक्ष्य करके चलाती है। उ.—भृकुटी धनुष कटाक्ष बाण मनो पुनि-पुनि हरिहिं लगावै—८७५।

लगावो, लगावौ—क्रि. स. [हिं. लगाना] करती हो। उ.—वेगि करौ किन, बिलंब काहैं लगावौ—१०-९५।

लगि—क्रि. अ. [हिं. लगना] सटकर, निकट होकर। उ.—सूर स्याम बैठे ऊखल लगि—३६९।

क्रि. वि. [हिं. लग] तक, पर्यंत, ताईं। उ.—(क) अजहूँ लगि........राज करै—१-३७। (ख) माता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता बंधु-सुत तौ लगि, जौ लगि जिहिं कौ काम—१-७६। (ग) जब लगि काल न पहुँचै आइ—७-२। (घ) कहँ लगि तिनकौं करौं बखान—९-८। (ङ) तब लगि सबै सयान रहे - ६४६।

अव्य.—वास्ते, के लिए। उ.—(क) अबिहित बाद-बिबाद सकल मत इन लगि भेष धरत—१-५५। (ख) जन लगि भेष बनायौ—१-९०। (ग) तात बचन लगि राज तज्यौ—१०-१९८।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लग्गी] लंबा बाँस।

लगिहै - क्रि. स. [हिं. लगना] (१) लगेगी, होगी। उ.—घरिक मोहिं लगिहै खटिका मैं—६७०। (२) चोट या आघात पहुँचेगा उ.—दौरत कहा, चोट लगिहै कहुँ—१०-२२६।

लगीं—क्रि. स. [हिं. लगना] प्रवृत्त हुईं।

प्र०—कहन लगीं बोलने को प्रवृत्त हुईं, बोलने लगीं। उ.—कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात—३५५।

लगी—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) हुई, हो गयी। उ.—पवन-पुत्र पैठि मुख पधारे तहाँ लगी कछु बार—९-७४। (२) व्यस्त हो गयी। उ.—आपु लगी गृह कामहिं—५१५। (३) आवश्यकता हुई, अनुभव की। उ.—भूख लगी मोहिं भारी—३९५। (४) प्रवृत्त हुई।

प्र०—लगी खवावन—खिलाने में प्रवृत्त हुई। उ. माता सुनत तुरत लै आई लगी खवावन रति सौं—१०-३१२।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लग्गी] लंबा बाँस।

लगु—अव्य. [हिं. लग] (१) वास्ते। (२) संग।

लगुआ, लगुवा—वि. [हिं. लगना] पीछे-पीछे या साथ-साथ लगा रहनेवाला।

लगुड़—संज्ञा पुं. [सं.] डंडा, लाठी।

लगूर, लगूल—संज्ञा स्त्री. [सं. लांगूल] पूँछ, दुम।

लगे—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) जड़े गये, लगाये गये। उ.—बिच-बिच हीरा लगे (नँद) लाल गरे कौ हार—१०-४०। (२) अंकुरित हुए, उगे। उ.—क्रम क्रम लगे फूल-फल आइ—९-५९। (३) जान पड़े। उ.—तुमको कैसे स्याम लगे—१३१८। (४) प्रतीक्षा करने को प्रवृत्त हुए। उ.—बैठि एकांत जोहन लगे पंथ सिव—८-१०। (५) प्रवृत्त हुए।

प्र०—करन लगे—करने को प्रवृत्त हुए। उ.—बान बरषा लगे करन अति क्रुद्ध ह्वै—१-२७१।

लगैं—क्रि. अ. सवि. [हिं. लगना] लगने से, लगने पर। उ.—दुर्जन बचन सुनत दुख जैसौ बान लगैं दुख होय न तैसौ—४-५।

लगैगी—क्रि. स. [हिं. लगना] लग जायगी।

मुहा०—दीठि लगैगी—नजर लग जायगी। उ.—बाहेर जिन कबहूँ खैयै सुत, डीठि लगैगी काहू १००४।

लगौंहाँ—वि. [हिं. लगना] लगन लगानेवाला।

लगौ—क्रि. स. [हिं. लगना] लग जाय।

मुहा०—रोग-बलाइं लगौ—(तुम्हारा) रोग-दोष मुझे लग जाय। उ.—बाल-गोपाल लगौ इन नैननि रोग-बलाइ तुम्हारी—१०-९१।

लगात—संज्ञा स्त्री. [हिं. लागत] लागत।

लग्गा—संज्ञा पुं. [सं. लगुड] (१) लंबा बाँस। (२) दाँव।

संज्ञा पुं. [हिं. लगना] काम शुरू करना।

लग्गी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लग्गा] लंबा बाँस।

लग्घड़—संज्ञा पुं. [देश.] बाज पक्षी, शचान।

लग्न—संज्ञा पु. [सं.] (१) दिन का उतना अंश जितने में राशि-विशेष का उदय रहता है। उ.—(क) बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहिं बहुत सुख पैहैं—२०-८६। (ख) पुष्प नछत्र नौमी जु परम दिन लग्न सुद्ध सुभबार—सारा०-१६०। (२) शुभ कार्य का मुहूर्त। (३) बिवाह का समय। उ.—एकहि लगन सबहिं कर पकरेउ, एक मुहूर्त बियाहे।

वि.—लगा या मिला हुआ।

लग्नक—संज्ञा पुं. [सं.] जमानत करनेवाला, प्रतिभू।

लग्यो, लग्यौ—क्रि. स. [हिं. लगना] (१) लग गया, सन गया, तल पर पड़ गया। उ.—कर नवनीत परस आनन सौं, कछुक खात कछु लग्यौ कपोलनि—१०-१२१। (२) प्रवृत्त हुआ।

प्र०—लग्यौ गुहारि—पुकार सुनी। उ.—ताकौं हरन कियौ, दसकंधर हौं तिहिं लग्यौ गुहारि—९-६५।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लघिमा—संज्ञा स्त्री. [सं. लघिमन्] (१) लघु होने का भाव, लघुत्व।(२) आठ सिद्धियों में चौथी जिसे प्राप्त कर लेने पर मनुष्य छोटा और हलका बन सकता है।

लघु—वि. [सं.] (१) आयु में कनिष्ठ, छोटा। उ.—(क) लघु सुत-नाम नरायन धरयौ—६-४। (ख) लघु सुत नृपति-बुढ़ापो लयौ—९-७४। (२) लंबाई में जो बड़ा या बड़ी न हो, छोटा, छोटी। उ.—लघु लघु लट सिर घूंघरवारी—१०-९३। (३) आकार या विस्तार में छोटा। उ.—अस्त्र विद्या समर बहुरि लाग्यौ करन, कबहुँ लघु कबहुँ दीरघ सो होइ—१० उ०—५६। (४) थोड़ा, कम।

लघुचेता—वि. [सं. लघुचेतस्] तुच्छ विचारोंवाला।

लघुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) छोटाई, छोटापन। उ.—मुरली कौन सुकृत-फल पाए।.........। लघुता अंग, नहीं कछु करनी, निरखत नैन लगाए—६६१। (२) तुच्छता, अपयश, ओछापन। उ.—अब तौं सूर भजी नँदलालहिं की लघुता की होइ बड़ाई—११९३।

लघुत्व—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लघुता। (२) तुच्छता।

लचक—संज्ञा स्त्री. [हिं. लचकना] झुकाव, लचन।

लचकना—क्रि. अ. [हिं. लचक] (१) लचना, बीच से झुकना। (२) (कोमलता या हाव-भाव के संकेत-स्वरूप) स्त्री की कमर का झुकना या लचकना।

लचीला—वि. [हिं. लचना+ईला] (१) जो सरलता से झुक या लच सकता हो। (२) जिसमें सहज ही परिवर्तन या उतार-चढ़ाव हो सकता हो।

लचीलापन—संज्ञा पुं. [हिं. लचीला+पन] लचीला होने का भाव, अवस्था या गुण।

लचुइ, लचुई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुचुई] मैदा की पूरी।

लच्छ—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्य] (१) बहाना। (२) निशाना।

संज्ञा पुं. [सं. लक्ष] लाख (संख्या)।

संज्ञा स्त्री. [सं.] श्री, लक्ष्मी।

यौ०—लच्छ-लच्छ—लाखों। उ.—रोम-रोम हनु मंत्र लच्छ लच्छ बान—९-९६।

लच्छण, लच्छन—संज्ञा पुं. [सं. लक्षण] (१) आदत, स्वभाव। (२) आसार, चिह्न। (३) गुण। उ.—(क) मुक्त नरनि के लच्छन कहौं—३-१३। (ख) गर्ग निरूपि कह्यौ सब लच्छन—१०-८७।

संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज, लक्ष्मण।

लच्छना—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्षणा] लक्षणा (शब्दशक्ति)।

लच्छमी—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] श्री, लक्ष्मी। उ.—चहूँ ओर चतुरंग लच्छमी कोरिक दुहियत धैन री—१०-१३९।

लच्छा—संज्ञा पुं. [अनु.] (१) तारों का गुच्छा। (२) पतले-लंबे कटे टुकड़े। (३) इस प्रकार के लौकी के टुकड़ों की बनी मिठाई। (४) मैदे की एक मिठाई। (५) पैर का एक गहना जो सामान्यतया चाँदी का होता है।

लच्छागृह—संज्ञा पुं. [सं. लाक्षागृह] लाक्षागृह।

लच्छि—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

संज्ञा पुं. [सं. लक्ष] लाख की संख्या।

लच्छित—वि. [सं. लक्षित] (१) देखा या लक्ष्य किया हुआ। (२) अंकित, चिह्नित। (३) लक्षण से युक्त।

लच्छिनाथ—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मीनाथ] विष्णु।

लच्छिनिवास, लच्छिनिवासा—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मी+निवास] (१) विष्णु या उनके अवतार। (२) बैकुंठ।

लच्छी—वि. [देश.] एक तरह का घोड़ा।

संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] श्री, लक्ष्मी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लच्छा] गुच्छी, अट्टी।

वि. [सं. लक्षण] लक्षणों से युक्त।

लच्छेदार—वि. [हिं. लच्छा+फ़ा. दार] (१) जिसमें लच्छे पड़े हों। (२) (बात) जिसका सिलसिला न टूटे, पर साथ ही जो रोचक भी हो।

लछ—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष] लाख योनियाँ। उ.—नृप चौरासी लछ फिरि आयौ—४-१२।

लछन—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण। उ.—श्रीरघुनाथ-लछन ते मारे—९-५७।

संज्ञा पुं. [सं. लक्षण] (१) आदत, स्वभाव। (२) आसार, चिह्न। (३) गुण।

लछना, लछनो—क्रि. अ. [हिं. लखना] देखना, ताड़ना।

लछमन, लछिमन—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुज लक्ष्मण। उ.—लछिमन सीता देखी जाइ—१-१६१।

लछमना, लछिमना—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मण] **श्रीकृष्ण की एक पटरानी।** उ.—बहुरि लछमना सुमिरन कीन्हो। ताहि स्वयंबर मैं हरि लीन्हौ।

लछमी, लछिमी—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] **श्री, लक्ष्मी।** उ.—लछिमी सी जहँ मालिनि डोलै—१०-३२। (ख) लछमी सहित होति नित क्रीड़ा—१-३३७।

लज—संज्ञा स्त्री. [सं. लज्जा] **शर्म, लाज।**

लजना, लजनो—क्रि. अ. [सं. लज्जा] **लज्जित होना।**

लजवाना, लजवानो—क्रि. स. [हिं. लजाना] **(किसी को) लज्जित करना।**

लजाइ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होता है या होते हैं, लजाकर।** उ.—सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ—३५२।

लजाई—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हो गये, लजा गये।** उ.—नँदनंदन मुख देखौ माई। अंग-अंग-छवि मनहुँ उये रवि, ससि अरु समर लजाई—६२६।

प्र०—रहे लजाई—**लज्जित हो गये, लजा गये।** उ.—हरि के जन की अति ठकुराई। महाराज, रिषि-राज, राजमुनि, देखत रहे लजाई—१-४०।

लजाऊ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होऊँ।** उ.—भक्त-बछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ—१०-४।

लजाति—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होती है।** उ.—(क) सूरज दोष देत गोबिंद कौं गुरु लोगनि न लजाति—१०-२९४। (ख) प्राननाथ बिछुरे सखी जीवत न लजाति—२५४३।

लजाधुर—वि. [सं. लज्जाधर] **जो बहुत लज्जा करे।**

लजाना, लजानो—क्रि. अ. [सं. लज्जा] **लज्जित होना।**

क्रि. स. **लज्जित करना।**

लजानी—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुई।** उ.—(क) सुंदर मूरति देखि कै घन घटा लजानी—४७५। (ख) यह बानी कहति ही लजानी—७७६। (ग) रूप लकुट अभिमान निडर ह्वै जग-उपहास न सुनत लजानी—पृ. ३३३ (२९)।

लजाने—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुए।** उ.—कटि निरखि केहरि लजाने—१०-२३४।

लजान्यो, लजान्यौ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुआ।** उ.—मनहुँ चंद्रहि अब लजान्यो राहु घेरो जाल—१३५५।

लजायो, लजायौ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुआ।** उ.—गयो सो सब दिन हार जात मन बहुत लजायो १० उ.-३।

लजारा—वि. [हिं. लाज] **(१) लज्जाशील। (२) लज्जित।**

लजारु, लजारू, लजालु, लजालू—संज्ञा पुं. [सं. लज्जालु, हिं. लजालू] **एक पौधा।** उ.—रुचिर लजालु लोनिका फांगी—३९६।

लजावन—वि. [हिं. लजाना] **लज्जित करनेवाला।** उ.—बलि बलि जाउँ अरुन अधरनि की बिद्रुम-बिंब लजावन—६६४।

लजावनहार, लजावनहारा, लजावनहारो—वि. [हिं. लजावना] **लज्जित करने वाले।**

लजावना, लजावनो—क्रि. स. [हिं. लजाना] **लजाना, लज्जित करना।**

वि.—**लज्जित करने वाला।** उ.—सुंदर डाँडी चुनी बहुत लायौ कोटिक मदन लजावनो—२२८०।

लजावै—क्रि. स. [हिं. लजाना] **लज्जित करे।** उ.—(क) आन पुरुष कौ नाम लै पतिब्रतहिं लजावै—२-९। (ख) लोह गहैं लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै—९-१५२।

लजियाना, लजियानो—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लजाना, लज्जित होना।**

क्रि. स.—**लज्जित करना।**

लजीज—वि. [अ. लज़ीज़] **स्वादिष्ट, सुस्वादु।**

लजीला—वि. [हिं. लाज+ईला] **जो लजाता हो।**

लजुरि, लजुरी—संज्ञा स्त्री. [सं. रज्जु, माग० लज्जु] **कुएँ से पानी भरने की रस्सी।**

लजे—क्रि. अ. [हिं. लजना] **लज्जित हुए।** उ. (क) तारकगन लजे—पृ. ३४७ (५०)। (ख) सूर स्याम वैसेइ मनमोहन, वैसेहि प्यारी निरखि लजे—१८३३।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लजोर, लजोरा—वि. [हिं. लाज + आवर] जो लजाता हो, लजानेवाला।

लजोहन, लजोहा—वि. [सं. लज्जावह] जो लजाता हो, लजीला। उ.—रति-बिलास करि मगन भए अति निरखत नैन लजोहन—पृ. ३१५ (४४)।

लजोही—वि. [हिं. लजोहा] लजानेवाली।

लजौना—वि. [हिं. लाज+औना] (दूसरे को) लज्जित करने में समर्थ। उ.—सूर नंद-सुत मदन लजौना—२४२१।

लजौहाँ—वि. [हिं. लजोहा] जो लज्जित हो।

लजौहीं—वि. स्त्री. [हिं. लजौहाँ] जो लज्जित होती हो।

लज्जत—संज्ञा स्त्री. [अ. लज्ज़त] स्वाद।

लज्जा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लाज। उ.— जो पै जिय लज्जा नहीं, कहा कहौं सौ बार—१-३२५। (२) मान-मर्यादा या प्रतिष्ठा का ध्यान।

लज्जाप्रद—वि. [सं.] जिससे लज्जित होना पड़े।

लज्जावंत—वि. [सं.] जो लजाता हो।

लज्जावती—वि. स्त्री. [सं.] जो लजाती हो।

लज्यो—वि. [हिं. लजना] लज्जित हुए। उ. - तारागन मन में लज्यो—१८२४।

लज्जाशील—वि. [सं.] शीघ्र लजा जानेवाला।

लज्जित—वि. [हिं. लज्जा] जो लजा गया हो। उ.—(क) देखिकै उमा कौं रुद्र लज्जित भए, कहयौ मैं कौन यह काम कीन्हौ—८-१०। (ख) लज्जित होंहि पुर-बधू पूछैं सुनियत अद्भुत बात—९-४३।

लट—संज्ञा स्त्री. [सं. लट्वा] (१) बालों का लटकता हुआ गुच्छा, अलक। उ.—(क) लघु लघु लट सिर घूँघरवारी—१०-९३। (ख) लटकति लट चूमति—१०-७४। (ग) हौं जल भरति अकेली पनघट गही स्याम मेरी लट—८९०।

मुहा०—लट छिटकाना (१) सिर के बाल खोलकर इधर-उधर बिखराना। (२) सिर के बाल खोलकर बहुत नम्रता, विनय या दीनता दिखाना।

(२) उलझे हुए बालों का समूह।

मुहा०—लट छोरना—(१) उलझे हुए बाल खोलकर बिखराना। (२) लटें बिखराकर दीनता दिखाना।

लट छोरे—लटें बिखरा कर दीनता दिखाता हुआ। उ.—बिनवै चतुरानन कर जोरे। तुव प्रताप जान्यौ नहिं प्रभु जू, करै अस्तुति लट छोरे—४८८।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लपट] ज्वाला, लौ, लपट। उ. झपटि झपटति लपट फूल फल चट चटकि फटत लट लटकि द्रुम-द्रुम नवायौ—५९६।

लटक—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटकना] (१) लटकने की क्रिया या भाव। (२) लचक, झुकाव। (३) लुभावनी चाल या चेष्टा। उ.—प्राननाथ सों प्रान प्यारी प्रान लटक सों लीन्हे।

लटकत—क्रि. अ. [हिं. लटकना] (१) लटकता है। उ.—लटकन लटकत ललित भाल पर—१०-९८। (२) झुकता है, गिरने लगता है। उ.—पटकत बाँस काँस कुस चटकत लटकत ताल तमाल—६१५। (३) लचक या बल खाकर। उ.—लटकत चलत नंदकुमार।

लटकहिं—क्रि. अ. [हिं. लटकना] लटकती हैं। उ.—लटकति ललित लटुरियाँ—१०-११६।

लटकति—क्रि. अ. [हिं. लटकना] (१) झुककर। उ.—जसुमति लटकति पाइ परै—१०-१७। (२) लटकती (हुई या है)। उ.—लटकति बेसरि जननि की—१०-७२।

लटकन—संज्ञा पुं. [हिं. लटकना] (१) लटकने की क्रिया या भाव। (२) लटकने वाली चीज। (३) लुभावनी चाल या चेष्टा। (४) नाक का एक गहना। (५) कलगी आदि में लगा रत्नों का गुच्छा जो माथे पर हिलता-डोलता है। उ.—(क) लटकन लटकि रहयौ माथैं पर—१०-९२। (ख) लटकन लटकत भाल—१०-९७।

लटकना—क्रि. अ. [सं. लडन = झूलना] (१) ऊपरी आधार से नीचे झूलना। (२) ऊपरी आधार से नीचे लटककर हिलना-डोलना। (३) टँगना। (४) किसी ओर को झुकना। (५) लचक या बल खाना। (६) दुबिधा या अनिर्णय की स्थिति में होना। (७) कार्य आदि में देर होना।

लटकनि, लटकनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटकना] (१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लटकने की क्रिया या भाव। उ.—(क) लट लटकनि—१०-९१। (ख) लटकन लटकनि भाल की—१०-१०५। (२) लचकती, बल खाती या लचकभरी चाल। उ.—(क) भावति मंद गयंद की लटकनि—६१८। (ख) बझे जाइ खग ज्यौं पिय छबि लटकनी लस।

लटकनो—क्रि. अ. [हिं. लटकना] (१) ऊँचे आधार से लटककर झूलना। (२) हिलना-डोलना। (३) टँगना। (४) झुकना। (५) लचकना। (६) दुबिधा में पड़ना। (७) कार्य में देर होना।

लटकवाना, लटकवानो—क्रि. स.[हिं. लटकाना का प्रेर.] लटकाने का काम दूसरे से कराना।

लटका—संज्ञा पुं. [हिं. लटक] (१) चाल, ढब। (२) बनावटी चेष्टा। (३) बातचीत का बनावटी ढंग। (४) टोटका। (५) साधारण नुस्खा।

लटकाए—क्रि. स. [हिं. लटकाना] टाँग दिये। उ.—अति बिस्तार नीपतरु तामैं लै लै जहाँ-तहाँ लटकाए—७८४।

लटकाना, लटकानो—क्रि. स. [हिं. लटकना] (१) ऊँचे आधार से टिकाकर निराधार छोड़ देना। (२) टाँगना। (३) झुकाना, लचकाना। (४) दुबिधा में रखना। (५) कार्य में देर करना।

लटकायो, लटकायौ—क्रि. स. [हिं. लटकाना] टाँगा। उ.—देखि तुहीं सीकैं पर भाजन ऊँचै धरि लटकायौ—१०-३३४।

लटकि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटकना] (१) लटकने की क्रिया या भाव। (२) झुकाव। उ.—मुकुट लटकि अरु भृकुटी मटक देखौ—८३९।

क्रि. अ.—(१) टेढ़े होकर, लचककर। उ.—लकुटि लपेटि लटकि भए ठाढ़े, एक चरन धर धारे—६३२।

लटकीला—वि. [हिं. लटक + ईला] लचकदार।

लटकैं—क्रि. अ. [हिं. लटकना] दुबिधा में पड़ता है।

प्र०—रह्यौ लटकैं—दुबिधा में ही पड़ा रहा। उ.—ना हरि-भक्ति, न साधु-समागम रह्यौ बीचहीं लटकैं—१-२९२।

लटक्यो, लटक्यौ—क्रि. अ. [हिं. लटकना] लटका, लटकने लगा या लगी। उ.—(क) हरि तोरी मोतिनि की माला कछु गर कछु कर लटक्यौ—११११। (ख) सेहरो सिर पर मुकुट लटक्यो—१० उ०-२४।

लटकौआ, लटकौवा—वि. [हिं. लटकना] लटकनेवाला।

लटना, लटनो—क्रि. अ. [सं. लड = हिलना-डोलना] (१) थककर गिरना या लड़खड़ाना। (२) श्रम, रोग आदि से शिथिल या अशक्त होना। (३) शक्ति या उत्साह से रहित होना। (४) थक जाना। (५) व्याकुल या विकल होना।

क्रि. अ. [सं. लल, लड = ललचाना] (१) लेने को ललचाना या लुभाना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटपट, लटपटा—वि. [हिं. लटपटाना] (१) गिरता-पड़ता या लड़खड़ाता हुआ। (२) ढीला-ढाला, अस्त-व्यस्त। (३) टूटा-फूटा या अस्पष्ट (शब्द)। (४) अंडबंड, अव्यवस्थित। (५) अशक्त, शिथिल। (६) गिंजा या मला-दला हुआ, जिसमें शिकन या सिलवटें पड़ गयी हों।

लटपटाइ—क्रि. अ. [हिं. लटपटाना] लड़खड़ाकर। उ.—लटपटाइ (लटपटात) पग धरनि धरत गज—१०६७।

लटपटात—वि. [हिं. लटपटाना] लड़खड़ाता हुआ। उ.—लटपटात पग धरनि धरत गज—१०६७।

लटपटान—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटपटाना] (१) लड़खड़ाने की क्रिया या भाव। (२) लटक या लचकभरी गति या चाल।

लटपटाना, लटपटानो—क्रि. अ. [सं. लड + पत्] (१) गिरना-पड़ना, लड़खड़ाना। (२) डिगना, स्थिर न रहना। (३) ठीक तरह से काम न करना।

क्रि. अ. [सं. लल, लड] (१) लुभाना, ललचाना, लेने को लपकना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटपटी—वि. स्त्री. [हिं. लटपटा] (१) गिरती-पड़ती, लड़खड़ाती हुई। उ.—चलत लटपटी चाल—१०-११४। (२) ढीली-ढाली, अस्तव्यस्त। उ.—(क) लटपटी पाग, उनींदे नैन। (ख) सूर देखि लटपटी पाग पर जावक की छबि लाल। (२) गिंजी, मली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वली, शिकन या सिलवट भरी। उ.—त्रिबली पलोटन सलोट लटपटी सारी।

लटपटे—वि. [हिं. लटपटा] ढीले-ढाले, अस्तव्यस्त। उ.—छूटे बंदन अरु पाग की बाँधनि छुटी, लटपटे पेच अटपटे दिए—२००९।

लटा—वि. [सं. लट्ट] (१) लोलुप। (२) लुच्चा। (३) तुच्छ। (४) गिरा हुआ। (५) बुरा।

लटाना—क्रि. अ. [सं. लल, लड=लुभना] (१) लुभाना, लेने को ललकना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटानी—क्रि. अ. [हिं. लटाना] लुभा गयी, लोभ से भर गयी। उ.—सकल सिंगार कियौ व्रज बनिता नख-सिख लोभ लटानी हो—२४००।

लटानो—क्रि. अ. [हिं. लटाना] (१) लुभाना, लेने को ललकना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटापटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटपटाना] (१) लड़खड़ाने की क्रिया या भाव। (२) लड़ाई-झगड़ा।

लटापोट—वि. [हिं. लोटपोट] मुग्ध, मोहित।

लटि—क्रि. अ. [हिं. लटना] (१) लीन या अनुरक्त होकर। उ.—छपद कंज तजि बेलि सौं लटि-लटि प्रेम न जान्यो। (२) शिथिल या विकल होकर। उ.—सूर प्रान लटि लाज न छाँड़त सुमिरि अवध आधार—२८८८।

लटिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लट] लच्छी, अट्टी, आँटी।

लटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटा] (१) बुरी बात। (२) झूठी बात।

मुहा०—लटी मारना—गप्प हांकना। मारत-फिरत लटी—गप्प हांकता फिरता है। उ.—अरु झूठनि के बदन निहारत मारत फिरत लटी—१-९८।

(३) भक्तिन, संन्यासिनी। (४) वेश्या।

लटुआ—संज्ञा पुं. [हिं. लट्टू] लट्टू (खिलौना)।

लटुरियाँ—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. लटूरी] अलकें, लटें। उ.—(क) छिटकि रहीं चहुं दिसि जु लटुरियाँ—१०-१०५ (ख) लटकति ललित लटुरियाँ—१०-११६।

लटुरिया, लटुरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लटूरी] लट, अलक। उ.—लटकति ललित लटुरिया भ्रू पर—१०-१२४।

लटुवा, लटू—संज्ञा पुं. [हिं. लट्टू] लट्ट (खिलौना)।

मुहा०—लटू (लटुवा) भईं—मुग्ध या मोहित हो गयीं। उ.—हम तौ रीझि लटू भईं लालन महा प्रेम तिय जान—२८११।

लटूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लट] लट, केश, अलक। उ.—लटकति ललित ललाट लटूरी—१०-११७।

लटट—वि. [सं.] दुष्ट, दुर्जन।

लट्टपट्ट—वि. [हिं. लथपथ] लथपथ।

लट्टू—संज्ञा पुं. [सं. लुठन] एक खिलौना जिसे लत्ती या डोरी से नचाया जाता है।

मुहा०—(किसी पर) लट्टू होना—(१) मुग्ध या मोहित होना। (२) रीझना। (३) पाने या प्राप्त करने को हैरान होना।

लट्ठ—संज्ञा पुं. [सं. यष्ठि, प्रा. लट्ठि] मोटा डंडा।

मुहा०—(किसी के पीछे) लट्ठ लिये घूमना (फिरना)—विरोध या प्रतिकूल आचरण करना।

लट्ठबाज—वि. [हिं. लट्ठ+फ़ा. बाज़] लठैत।

लट्ठमार—वि. [हिं. लट्ठ+मारना] (१) लट्ठ मारने-वाला। (२) कठोर, कर्कश।

लट्ठा—संज्ञा पुं. [हिं. लट्ठ] (१) लकड़ी का बड़ा या लंबा टुकड़ा। (२) एक मोटा कपड़ा।

लठ—संज्ञा पुं. [हिं. लट्ठ] मोटा डंडा।

लठबाँसी—वि. [हिं. लट्ठ+बाँस] लाठी-डंडा बाँधे लड़ने को तैयार, लड़ाकू। उ.—बटपारी, ठग, चोर उचक्का, गाँठिकटा, लठबाँसी—१-१८६।

लठिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाठी] लकड़ी, लाठी।

लठैत—वि. [हिं. लट्ठ] लाठी बाँधने, चलाने या उसको लेकर लड़नेवाला।

लड़ंत—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़ाई] (१) भिड़ंत। (२) मुकाबला, सामना।

लड़—संज्ञा स्त्री. [सं. यष्ठि, प्रा. लट्ठि] (१) माला। (२) पंक्ति, कतार।

मुहा०—लड़ मिलाना—मित्रता करना। लड़ में रहना—दल या पक्ष में रहना।

(३) पंक्ति में गुंथी कलियों-मंजरियों की छड़ी की तरह की पंक्ति।

लड़इता, लड़इतो—वि. [हिं. लड़ैता] लाडले प्रियतम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—तब कित लाड़ लड़ाइ लड़इतो बेनी कुसुम गुहि गाढ़ी—पृ. ३५३ (९५)।

लड़क—संज्ञा स्त्री. [हिं. ललक] ललक, चाव।

लड़कइयाँ, लड़कई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़का+ई] (१) लड़कपन। (२) नादानी। (३) चिलबिल्लापन।

लड़कना, लड़कनो—क्रि. अ. [हिं. ललकना] ललकना।

लड़कपन—संज्ञा पुं. [हिं. लड़का+पन] (१) बाल्यावस्था। (२) चिलबिल्लापन, चंचलता।

लड़का—संज्ञा पुं. [हिं. लाड़] (१) बालक। (२) पुत्र।

मुहा०—राह-बाट का लड़का-लड़का जिसके माता-पिता का पता न हो। लड़का-लड़की—संतान। लड़का-बाला—(१) संतान। (२) परिवार, कुटुंब।

लड़काइ, लड़काई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़का+ई] (१) बाल्यावस्था। (२) नादानी। (३) चिलबिल्लापन।

लड़कानि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़का] लड़कपन।

लड़किनि, लड़किनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़की] (१) बालिका। (२) पुत्री।

लड़कीला—वि.[हिं. लड़का+ईला] मोह-ममता से युक्त।

लड़कैयाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़का+ऐयाँ] लड़कपन।

लड़कौरी—वि. स्त्री. [हिं. लड़का+औरी] (स्त्री.) जिसकी गोद में बच्चा हो।

लड़खड़ाना, लड़खड़ानो—क्रि. अ. [सं. लड=डोलना +हिं. खड़ा] (१) डगमगाना। (२) झोंका खाकर गिरना। (३) ठीक-ठीक न चलना।

मुहा०—जीभ लड़खड़ाना—टूटे-फूटे शब्द या वाक्य निकलना।

लड़खड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़खड़ाना] डगमगाहट।

लड़ना, लड़नो—क्रि. अ. [सं. रणन] (१) युद्ध या लड़ाई करना। (२) मल्लयुद्ध करना। (३) तकरार या हुज्जत करना। (४) वादविवाद करना। (५) टकराना। (६) विरुद्ध प्रयत्न करना। (७) मेल मिल जाना।

मुहा०—हिसाब लड़ना—(१) लेखा-जोखा ठीक होना। (२) कार्य या बात का सुभीता हो जाना।

(८) अनुकूल या ठीक होना। (९) लक्ष्य पर पहुँचना।

लड़बड़ाना—क्रि. अ. [हिं. लड़खड़ाना] लड़खड़ाना।

लड़बावर, लड़बावला—वि. [हिं. लड़का+बावरा] (१) अल्हड़। (२) अनाड़ी। (३) (कार्य) जिससे मूर्खता प्रकट हो।

लड़बौरा—वि. [हिं. लड़बावरा] लड़बावरा।

लड़बौरी—वि. स्त्री. [हिं. लड़बौरी] अल्हड़, अनाड़ी।

उ.—सुन री राधा अति लड़बौरी जमुन गई तब संग कौन री।

लड़ाइ, लड़ाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़ना, लड़ाई] (१) भिड़ंत। (२) संग्राम, युद्ध। (३) कुश्ती। (४) तकरार, हुज्जत। (५) बहस, वादविवाद। (६) टक्कर। (७) विरुद्ध प्रयत्न या चाल। (८) बैर, अनबन।

क्रि. स. [हिं. लाड़] प्यार-दुलार करके, प्यार-दुलार किया। उ.—(क) तब कित लाड़ लड़ाइ लड़इते बेनी कुसुम गुहि गाढ़ी—पृ. ३५३ (९५)। (ख) एक तौ लालन लाड़नि लड़ाइ, दूजे यौवन बावरी—२०४९। (ग) कहिए कहा नंद नंदन सो, जैसे लाड़ लड़ाई—२२७५। (घ) अरु कत लाड़ लड़ाइ राग रस हँसि हँसि कंठ लगावै—३०९८।

लड़ाए—क्रि. स. [हिं. लाड़] प्यार-दुलार किया। उ.—लालन तुम ऐसे लाड़ लड़ाए—७९४।

लड़ाका, लड़ाकू—वि. [हिं. लड़ना] (१) झगड़ालू। (२) वीर, योद्धा।

लड़ाना, लड़ानो—क्रि. स. [हिं. लड़ना का प्रेर.] (१) लड़ने को प्रवृत्त करना। (२) झगड़ने को प्रवृत्त करना। (३) टक्कर खिलाना, भिड़ाना। (४) लक्ष्य पर पहुँचाना। (५) परस्पर उलझाना। (६) सफलता के लिए व्यवहार में लाना।

क्रि. स. [हिं. लाड़] प्यार-दुलार करना।

लड़ायतो, लड़ायतौ—वि. [हिं. लड़ैता] प्यारा-दुलारा।

लड़ायौ—क्रि. स. [हिं. लाड़] (१) लाड़-प्यार या दुलार किया। उ.—(क) भाँति भाँति करि मोहिं लड़ायौ सघन कुंज में जाय—सारा. ३२५। (ख) आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड़ लड़ायौ—२-३०। (ग) बालक प्रतिपालक तुम दोऊ, दसरथ लाड़ लड़ायौ—९-५५। (२) लाड़-प्यार करके ढीठ बना दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—सुनि सुनि री तैं महरि जसोदा तैं सुत बड़ौ लड़ायौ—१०-३३९।

लड़ावत—क्रि. स. [हिं. लाड़] लाड़-प्यार करता है। उ.—फिरि बसुदेव बसे अपने गृह परम रुचिर सुख धाम। राम-कृष्न को लाड़ लड़ावत जानत नहिं दिन जाम—सारा. ५३६।

लड़ावतिं—क्रि. स. [हिं. लाड़] प्यार-दुलार करती हैं। उ.—सौमित्रा-कैकइ सुख पावति बहु बिधि लाड़ लड़ावतिं—सारा. १९५।

लड़ावति—क्रि. स. [हिं. लाड़] (१) प्यार-दुलार करती है। (२) आदर-प्रेम करती है। उ.—जनक-सुता बहु लाड़-लड़ावति निपट निकट सुख दीन्हों—सारा. ३०८।

लड़ावै—क्रि. स. [हिं. लाड़] लाड़-प्यार करती है। उ.—भूषन-बसन आदि सब रचि रचि माता लाड़ लड़ावै—सारा. १८२।

लड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़] (१) माला। (२) पंक्ति, कतार। (३) गुंथी हुई कलियों या मंजरियों की छड़ी की तरह की पंक्ति।

लड़ीला—वि. [हिं. लाड़] (१) लाड़ला, दुलारा। (२) लाड़-प्यार से ढीठ हो जानेवाला। (३) प्रिय।

वि. [हिं. लड़नेवाला] योद्धा।

लड़ुआ, लडुवा—संज्ञा पुं. [सं. लड्डुक] लड्डू, मोदक। उ.—मृदु मुसुकनि मनो ठग-लडुआ मिषि गति-मति सुध बिसरे—पृ. ३३१ (५)।

लड़ैता—वि. [हिं. लाड़+ऐता] (१) दुलारा, लाड़ला। (२) अधिक लाड़ प्यार के कारण धृष्ट हो जानेवाला। (३) प्रिय, प्यारा।

वि. [हिं. लड़ना] वीर, योद्धा।

लड़ैती—वि. स्त्री. [हिं. लड़ैता] प्यारी। उ.—जितहिं जितहिं रुख करै लड़ैती तितहीं आपुन आवै—२२७५।

लड़ैते—वि. [हिं. लड़ैता] दुलारे, लाड़ले। उ.—(क) बहु जतननि व्रजराज लड़ैते तुम कारन राख्यौ बल-भैया—१०-२२९। (ख) कहा कहौं मेरे लाल लड़ैते जब तू बिदा कियौ—२६९८।

लड़ैतो, लड़ैतौ—वि. [हिं. लड़ैता] दुलारा, लाड़ला। उ.—(क) मेरो अलक लड़ैतो मोहन ह्वैहै करत संकोच—२७०७। (ख) पठै देहु मेरो लाल लड़ैतो, वारौं ऐसी हाँसी—२७१०।

लड़ैहौं—क्रि. स. [हिं. लाड़] लाड़-दुलार करूँगी। उ.—हौं अपने गोपाल लड़ैहौं, मौन-चाड़ सब रहौ घरी—१०-८०।

लड्डू—संज्ञा पुं. [सं. लडडुक] मोदक।

मुहा०—लड्डू खिलाना—आनंदोत्सव करना। लड्डू मिलना—कोई लाभ होना। लड्डू बँटना—लाभ या प्राप्ति होना। ठग के लड्डू खाना—होश-हवास में न रहना। मन के लड्डू उड़ाना, खाना या फोड़ना—किसी लाभ या प्राप्ति की व्यर्थ कल्पना करना।

लड़्याना, लड़्यानो—क्रि. स. [हिं. लाड़] प्यार-दुलार करना।

लढ़ा—संज्ञा पुं. [हिं. लढ़िया] बैलगाड़ी।

लढ़िया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुढ़कना] बैलगाड़ी।

लत—संज्ञा स्त्री. [सं. रति] बुरी आदत, दुर्व्यसन।

लतखोर, लतखोरा—वि. [हिं. लात+फ़ा. खोर] (१) लात या मार खाने का काम करनेवाला। (२) नीच।

लतपत—वि. [हिं. लथपथ] लथपथ।

लतर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लता] बेल, लता।

लतहा—वि. [हिं. लात+हा] लात मारनेवाला (पशु)।

लता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बेल, बल्ली। उ.—इंद्रिय-मूल-किसान, महातृन-अग्रज बीज बई। जन्म-जन्म की विषय-बासना उपजत लता नई—१-१८५। (२) कोमल शाखा। उ.—नाना भाँति पाँति सुंदर मनो कंचन की है लता बनाई।

लताई—संज्ञा स्त्री. [सं. लता] कोमल शाखा। उ.—कंबु कपोत कंठ निसिबासर बाहु बली कटि कंज लताई—१८८७।

लताकुंज—संज्ञा पुं. [सं.] स्थान जो लताओं से छाया हो।

लतागृह—संज्ञा पुं. [सं.] स्थान जो लताओं से छाया हो।

लताड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. लताड़ना] लताड़ने की क्रिया या भाव, भर्त्सना।

लताड़ना, लताड़नो—क्रि. स. [हिं. लात] (१) पैरों से रौंदना। (२) लातों से मारना। (३) हैरान करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लतापता—संज्ञा पुं. [सं. लतापत्र] (१) पेड़-पत्ते। (२) जड़ी-बूटी।

लताभवन—संज्ञा पुं. [सं.] स्थान जो लताओं से छाया हो।

लतामंडप—संज्ञा पुं. [सं.] स्थान जो लताओं से छाया हो।

लतिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बेल। (२) कोमल शाखा।

लतियर, लतियल—वि. [हिं. लात] लतखोरा।

लतियाना, लतियानो—क्रि. स. [हिं. लात+आना] (१) पैरों से रौंदना। (२) लातों से मारना।

क्रि. स. [हिं. लत्ती] लट्टू को नचाने के लिए उसमें डोरी या लत्ती लपेटना।

लतिहर, लतिहल—वि. [हिं. लात] लतखोरा।

लतीफा—संज्ञा पुं. [अ. लतीफ़ा] हँसी की बात, चुटकुला।

लत्ता—संज्ञा पुं. [सं. लक्तक] (१) चिथड़ा। (२) कपड़ा।

मुहा०—लत्ता (लत्ते) लेना (ले डालना) किसी को खूब आड़े हाथों लेना।

लत्ती—संज्ञा स्त्री. [हिं. लात] (१) (पशु की) लात। (२) (पशु की) लात मारने की क्रिया।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लत्ता] (१) कपड़े की धज्जी। (२) लट्टू नचाने की डोरी।

लथपथ—वि. [अनु.] (१) भीगा हुआ, तराबोर। (२) (कीचड़, रक्त आदि में) सना हुआ।

लथाड़—संज्ञा स्त्री. [अनु. लथपथ] (१) पटककर घसीटने की क्रिया। (२) पराजय। (३) हानि। (४) डाँट-डपट, झिड़की।

मुहा०—लथाड़ पड़ना—डाँटा-डपटा जाना।

लथाड़ना, लथाड़नो, लथेड़ना, लथेड़नो—क्रि. स. [अनु. लथपथ] (१) (कीचड़ आदि में) सान लेना या सानकर गंदा करना। (२) पटक कर घसीटना। (३) कुश्ती में पछाड़ना। (४) हैरान करना। (५) डाँटना-डपटना।

लदना, लदनो—क्रि. अ. [हिं. लादना] (१) बोझ से भरा जाना। (२) आच्छादित होना। (३) किसी भारी चीज का दूसरी पर रखा जाना। (४) जेल जाना। (५) मर जाना।

लदलद—क्रि. वि. [अनु.] किसी गीली-जैसी चीज के ऊपर से गिरने का शब्द।

लदवाना, लदवानो—क्रि. स. [हिं. लादना का प्रेर.] लादने का काम दूसरे से कराना।

लदाइ—क्रि. स. [हिं. लदाना] बोझ या भार आदि रखवाकर। उ.—गयी पताल उरग गहि आन्यौ, ल्यायौ तापर कमल लदाइ—६००।

लदाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] लादने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लदाऊ—वि. [हिं. लदना] लदने का भाव, भराव।

लदाए—क्रि. स. [हिं. लदाना] बोझ या भार आदि रखवाये। उ.—ताही पर धरि कमल लदाए, सहस सकट भरि ब्याल पठाए—५८५।

लदान—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] लादने की क्रिया या भाव।

लदाना, लदानो—क्रि. स. [हिं. लादना का प्रेर.] लादने का काम दूसरे से कराना।

लदाफँदा—वि. [हिं. लदना+फँदना] भार से लदा हुआ।

लदाव—संज्ञा पुं. [हिं. लादना] (१) लादने की क्रिया या भाव। (२) भार, बोझ।

लदुआ, लदुवा—वि. [हिं. लादना] बोझ ढोनेवाला।

लद्दू—वि. [हिं. लादना] बोझ ढोनेवाला।

लद्धड़—वि. [हिं. लादना] जो फुर्तीला न हो।

लद्धड़पन—संज्ञा पुं. [हिं. लद्धड़] सुस्ती, ढिलाई।

लद्धना, लद्धनो—क्रि. स. [सं. लब्ध, प्रा. लद्ध=प्राप्त] पाना, प्राप्त करना।

लद्यो, लद्यौ—वि. [हिं. लदना] भार या बोझ से लदा या दबा हुआ। उ.—सुत-धन-धाम-त्रिया-हित औरै लद्यौ बहुत बिधि भारौ—१-२१३।

लप—संज्ञा पुं. [अनु.] (१) लचीली चीज को हिलाने का शब्द या कार्य। (२) छुरी जैसी लचीली चीज की चमक की गति।

मुहा०—लप लप करना—(१) लचीली चीज के हिलाने से होनेवाला शब्द। (२) चमाचम करना, चमकना। लप से—झट से, तुरंत।

संज्ञा पुं. [देश.] (१) अँजुली। (२) अँजुली भर कोई वस्तु।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लपक—संज्ञा स्त्री. [अनु. लप] (१) ज्वाला, लपट, लौ। (२) चमक, लपलपाहट। (३) तेजी, वेग।

मुहा०—लपककर—(१) तेजी से जाकर। (२) झट से, तुरंत।

लपकत—क्रि. अ. [हिं. लपकना] तेजी से चलता है। उ.—कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत, गिरत उठत पुनि धावै री—१०-९८।

लपकना, लपकनो—क्रि. अ. [हिं. लपक] (१) तुरंत दौड़ पड़ना। (२) तेजी से चलना। (३) आक्रमण के लिए झपटना। (४) कोई वस्तु लेने को तेजी से बढ़ना या हाथ बढ़ाना।

लपका—संज्ञा पुं. [हिं. लपकना] लत, चस्का।

लपकि—क्रि. अ. [हिं. लपकना] झपटकर। उ.—ग्राज सों टूटि गजराज हांकत परयो मनो गिरि चरन धरि लपकि लीन्हो—२५९०।

लपझप—वि. [अनु. लप+हिं. झपट] (१) चुपचाप न बैठनेवाला। (२) तेज, फुरतीला।

मुहा०—लपझप चाल—तेज पर बेढंगी चाल।

संज्ञा स्त्री. छीना-झपटी।

लपट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौ+पट=विस्तार] (१) ज्वाला, लौ। उ.—(क) झपटि झपटत लपट—५९६। (ख) उचटत अति अंगार, फुटत फर, झपटत लपट कराल—६१५। (२) तपी हुई वायु, आंच की तेजी। (३) सुगंधित वायु का झोंका। (४) सुगंध, महक। उ.—सूरदास प्रभु की बानक देखे गोपी ग्वाल टारे न टरत निपट आवै सौंधे की लपट—८३९।

संज्ञा स्त्री.—[हिं. लिपट] लिपटने की क्रिया या भाव।

लपटना, लपटनो—क्रि. अ. [हिं. लिपटना] (१) आलिंगित होना। (२) सूत, डोरी आदि का किसी वस्तु के चारो ओर लपेटा जाना। (३) सट जाना। (४) उलझना, फँसना। (५) घिर जाना। (६) लगा या रत रहना।

लपटा—संज्ञा पुं. [हिं. लपटना] संबंध, लगाव।

लपटाइ—क्रि. स. [हिं. लपटाना] (१) सटाकर, लिपटाकर। उ.—(क) पूतना के प्रान सोखे आपु उर लपटाइ—४९८। (ख) यौं लपटाइ रहे उर-उर ज्यों मरकत मनि कंचन मैं जरिया—६८८। (२) कई फेरों से घेर लेना। उ.—उरग लियौ हरि कौं लपटाइ—५५५।

क्रि. अ. [हिं. लपटना] लगकर, सन कर।

प्र०—रही लपटाय—लग गयी थी। उ.—आपुहिं जाइ बाँह गहि ल्याई खेह रही लपटाइ—१०-२२६।

लपटाई—क्रि. अ. [हिं. लपटना] चिपटकर।

प्र०—रहे लपटाई—चिपट गये। उ.—अति आनंद सहित सुत पायौ, हिरदै मांझ रहे लपटाई—१०-५१।

लपटाए—क्रि. अ. [हिं. लपटना] चिपट गये।

प्र०—रहे लपटाए—चिपटे रहे। उ.—(क) उत्तर कहत कछू नहिं आयौ, रहे चरन लपटाए—९-३७। (ख) तब वह देह धरी जोजन लौं स्याम रहे लपटाए—१०-५३।

क्रि. स. [हिं. लपटाना] लगाये या धारे हुए। उ.—संध्या समय सांवरे मुख पर गो-पद-रज लपटाए—४१७।

लपटात—क्रि. अ. [हिं. लपटना] (१) चिपटता या लिपटता है। उ.—(क) जम के फंद परयो नहिं जब लगि चरननि किन लपटात—१-३१३। (ख) ऐसे अंध जानि निधि लूटत, पर-तिय सँग लपटात—२-२४। (ग) ज्यों पतंग हित जानि आपनो दीपक सौं लपटात—३३८६। (२) घेर लेता है। उ.—तउ कुटुँब कौ मोह न जात। तन-धन-लोभ आइ लपटात—१-३४२।

क्रि. स. [हिं. लपटना] मलता, लगाता या पोतता है। उ.—जेंवत कान्ह नंद इकठौरे। कछुक खात लपटात दोउ कर बाल केलि अति भोरे—१०-२२४।

लपटाति—क्रि. अ. [हिं. लपटना] लिपटी है, घेरे हुए है। उ.—तनक कटि पर कनक करधनि छीन छवि चमकाति। मनौ कनक कसौटिया पर लीक सी लपटाति—१०-१८४।

लपटाते—क्रि. अ. [हिं. लपटना] लिपट जाते। उ.—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब उठि दान माँगते हँसि कै संग गात लपटाते—२५२८ ।

लपटान—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपटना] लिपटने का भाव या क्रिया ।

प्र०—लागी लपटान— लिपटने लगी । उ.—तब मैं कह्यौ, ठग्यौ कब तुमकौं, हँसि लागी लपटान —७०९ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लपटाना] लिपटने की क्रिया या भाव ।

प्र०—लपटान दै—मलने, पोतने या लगाने दे । उ.—गोपालहिं माखन खान दै । सुनि री सखी, मौन ह्वै रहिए, बदन दही लपटान दै—१०-२७४ ।

लपटाना—क्रि. स. [हिं. लपटना] (१) लिपटाना, आलिंगन करना । (२) लपेटना । (३) घेरना । (४) मलना, पोतना, लगाना ।

क्रि. अ.—(१) सटना, संलग्न होना । (२) फँसना, उलझना ।

लपटानि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपटना] लिपटने या लगने की क्रिया या भाव । उ.—रथ तैं उतरि चलनि आतुर ह्वै, कच रज की लपटानि—१-२७९ ।

लपटानी—क्रि. स. [हिं. लपटाना] (१) लिपट गयी, लिपटा लिया । उ.—(क) रोवति जननि कंठ लपटानी सूर स्याम गुन राई—७४३ । (ख) ब्रज जुवतिनि उपवन मैं पाए लगी उठाय कंठ लपटानी—१०-७८ । (ग) मैं तो चरन-कमल लपटानी जो भावै सो होई री—१२०३ । (घ) सूरदास प्रभु कवन काज को माखी मधु लपटानी—३३७५ ।

क्रि. अ. व्यस्त थी, लगी थी । उ.— मैं गृह-काज रहौं लपटानी—१००१ ।

लपटाने—वि. [हिं. लपटाना] मले या सने हुए, भरे या लगाये हुए । उ.—(क) सो मुख चूमति महरि जसोदा दूध लार लपटाने (हो)—१०-१२८ । (ख) जे पद-कमल धूरि लपटाने, गहि गोपिनि उर लाए—५७१ ।

लपटानो, लपटानौ—वि. [हिं. लपटाना] लगा, लिपटा या सना हुआ । उ.—माखन कर, दधि मुख लपटानौ देखि रही नँदलाल—१०-२७० ।

क्रि. स. (१) लिपटाना, आलिंगन करना । (२) लपेटना । (३) घेरना ।

क्रि. अ.—(१) सटना, संलग्न होना । (२) उलझना, फँसना । (३) व्यस्त होना ।

क्रि. अ. भूत. लिपटा रहा, छोड़ न सका । उ.—हिंसा-मद-ममता रस भूल्यौ, आसा ही लपटानौ—१-४७ ।

लपटान्यो, लपटान्यौ—क्रि. स. [हिं. लपटाना] मला, लगाया, सान लिया । उ.—कहुँ आए ब्रज-बालक सँग लै माखन मुख लपटान्यौ—१०-२७० ।

लपटायो, लपटायौ—क्रि. स. [हिं. लपटाना] मला, साना, लगाया । उ.—तैं जु गँवारि पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायौ—१०-३३९ ।

लपटावतिं—क्रि. स. [हिं. लपटाना] चिपटाती या आलिंगन करती हैं । उ.—सूरदास प्रभु अति रति नागर, गोपी हरषि हृदय लपटावतिं—३९० ।

लपटावै—क्रि. स. [हिं. लपटाना] लगाता या मलता है । उ.—(क) निंदत मूढ़ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै—२१३ । (ख) मूत्र पुरीष अंग लपटावै—५-२ ।

लपटाहीं—क्रि. अ. [हिं. लपटाना] लिपटते या आलिंगन करते हैं । उ.—सूर स्याम देखत नारिनि कौं रीझि-रीझि लपटाहीं—१८४३ ।

लपटि—क्रि. अ. [हिं. लपटना] लिपटकर ।

प्र०—लपटि गयौ – लिपट या चिपट गया, गुंडलों या फेरों से घेर लिया । उ.—अति बल करि करि काली हारचौ । लपटि गयौ सब अंग अंग प्रति, निर्बिष कियौ सकल बल झारचौ—५७४ ।

लपट्यौ—वि. [हिं. लपटना] लगाया, मला या पोता हुआ । उ.—बिष लपट्यौ अस्तन मुख नाई—१०-५१ ।

लपना, लपनो—क्रि. अ. [अनु. लप लप] (१) लचीली चीज का झोंक के साथ लचना । (२) झुकना, लचना । (३) लपकना, ललचना ।

लपलपाना, लपलपानो—क्रि. अ. [अनु लप लप] (१) लचीली चीज का झोंक के साथ इधर-उधर लचना । (२) किसी पतली और लंबी चीज का हिलना-डोलना या भीतर से बार-बार बाहर निकलना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुहा०—जीभ लपलपाना (लपलपानो)—चखने या पान की तीव्र इच्छा होना।

(३) छुरी, तलवार आदि का चमकना।

क्रि. स. (१) लचीली चीज को झोंक के साथ इधर-उधर लचाना। (२) किसी पतली और लंबी चीज को हिलाना-डोलाना या बार-बार भीतर से बाहर निकालना।

मुहा०—जीभ लपलपाना (लपलपानो)—चखने या पाने की तीव्र इच्छा करना।

(३) छुरी, तलवार आदि को चमकाना।

लपलपाहट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपलपाना + आहट] (१) लपलपाने की क्रिया या भाव। (२) चमक, झलक।

लपसी—संज्ञा स्त्री. [सं. लप्सिका] (१) भुने हुए आटे में शकर या गुड़ का शरबत डालकर पकायी गयी गाढ़ी वस्तु। उ.—(क) लुचुई लपसी सद्य जलेबी—१०-२२७। (ख) लुचुई लपसी घेवर खाजा—३९६।

लपाना, लपानो—क्रि. स. [अनु. लपलप] (१) लचीली चीज को झोंक के साथ इधर-उधर लचाना। (२) पतली और लंबी चीज को हिलाना-डोलाना। (३) आगे बढ़ाना।

लपिटना, लपिटनो—क्रि. अ. [हिं. लपटना] (१) लिपटना, आलिंगित होना। (२) गुंडलों या फेरों से घेरा जाना। (३) सटना, संलग्न होना। (४) फँसना, लिप्त होना। (५) लगा रहना, रत रहना।

लपिटाना—क्रि. स. [हिं. लपटाना] (१) लिपटाना, आलिंगन करना। (२) गुंडल या फेरों से बांधना। (३) चारों ओर से घेरना। (४) सटाना, संलग्न करना। (५) फँसाना, लिप्त करना।

क्रि. अ.—(१) सटना, संलग्न होना। (२) उलझना, फँसना। (३) लगना, रत होना।

लपिटाने—वि. [हिं. लपिटाना] उलझे हुए। उ.—बसन कुचील, चिहुर लपिटाने, बिपति जाति नहिं बरनी—९-७३।

लपिटानो—क्रि. अ., क्रि. स. [हिं. लिपटाना] लिपटना।

लपेट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिपटना] (१) लपेटने की क्रिया या भाव। (२) घुमाव, फेरा। (३) कपड़े की तह की मोड़। (४) ऐंठन, मरोड़। (५) उलझन, फँसाव, चक्कर। (६) घेरा, परिधि। (७) पकड़, बंधन।

लपेटत—क्रि. स. [हिं. लपेटना] घुमाव डालता है।

प्र०—लपेटत जात—गुंडल या फेरे डालकर बाँधता जाता है। उ.—सूर स्याम सौं दाउँ बतायो, काली अंग लपेटत जात—५५४।

लपेटन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपेटना] (१) लपेटने की क्रिया या भाव, लपेट। (२) फेरा, घुमाव। (३) ऐंठन, मरोड़। (४) फँसाव, चक्कर, उलझन।

संज्ञा पुं.—(१) लपेटने की वस्तु। (२) बाँधने की वस्तु। (३) बाँधने का कपड़ा, बेठन। (४) पेर में उलझने या अटकाव डालनेवाली वस्तु।

लपेटना, लपेटनो—क्रि. स. [हिं. लिपटना] (१) सूत-डोरी जैसी चीज लपेट कर बाँधना या घेरना। (२) कपड़ा, कागज आदि लपेटकर बाँधना। (३) हाथ, पैर आदि की पकड़ में लेना। (४) पकड़ में लाना। (५) झंझट या उलझन में फँसाना। (६) गीली वस्तु लेपना या पोतना। (७) धूल आदि मलना या लगाना।

लपेटवाँ—वि. [हिं. लपेटना] (१) जो लपेटकर बनाया गया हो। (२) जिसका अर्थ छिपा हुआ हो। (३) घुमाव-फिराव या चक्कर का।

लपेटि—क्रि. स. [हिं. लपेटना] हाथ-पैरों की पकड़ में लेकर। उ.—लकुट लपेटि लटकि भए ठाढ़े—६३२।

लपोटना, लपोटनो—क्रि. स. [हिं. लिपटना] सानना, लगाना या लिपटा देना।

लपोटी—वि. [हिं. लपोटना] सनी हुई। उ.—सूरज प्रभु की लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४।

लप्प—संज्ञा पुं. [हिं. लप] (१) अँजुली। (२) अँजुली भर कोई वस्तु।

लप्पड़—संज्ञा पुं. [हिं. थप्पड़] थप्पड़।

लप्पा—संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का गोटा।

लफंगा—वि. [फ़ा. लफ़ंगा] लंपट, आवारा।

लफना, लफनो—क्रि. अ. [हिं. लपना] (१) लचीली चीज का झोंक के साथ इधर-उधर लचना। (२) झुकना, लचना। (३) ललचना, लपकना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लफलफान, लफलफानि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपलपाना] (१) लपलपाने की क्रिया या भाव। (२) चमक, झलक।

लफाना, लफानो—क्रि. स. [हिं. लपाना] (१) लचीली चीज को फटकारना। (२) लचाना, झुकाना।

लफ्ज—संज्ञा पुं. [अ. लफ़्ज़] (१) शब्द। (२) बात।

लब—संज्ञा पुं. [फ़ा.] ओंठ।

लबझना, लबझनो—क्रि. अ. [देश.] फँसना, उलझना।

लबड़धोंधों—संज्ञा स्त्री. [हिं. लबाड़+धूम] (१) व्यर्थ का गुल-गपाड़ा। (२) प्रबंध की गड़बड़ी। (३) अनीति। (४) बेईमानी की चाल।

लबड़ना, लबड़नो—क्रि. अ. [सं. लपन] (१) झूठ बोलना। (२) गप हांकना।

लबधि—संज्ञा स्त्री. [सं. लब्धि] प्राप्ति।

लबनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लभनी] लभनी।

लबरा—वि. [सं. लपन] (१) झूठ बोलनेवाला। (२) गप हांकनेवाला, गप्पी।

लबराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लबारी] बढ़-बढ़कर झूठी बातें करने की क्रिया, भाव या रीति।

लबरी—वि. स्त्री. [हिं. लबरा] (१) झूठी। (२) गप्पिन।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लिबड़ी] कपड़ा-लत्ता।

लबलहका—वि. [हिं. लपना+लहकना] (१) लोभी, लालची। (२) चपल, चंचल।

लबादा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) चोगा, रुईदार चोगा। (२) ढीला-ढाला और भारी वस्त्र।

लबार—वि. [हिं. लबड़ा] (१) झूठा। उ.—आजु गए औरहिं काहू के, रिस पावति गहि बड़े लबार—१९२७। (२) गप्पी।

लबारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लबार] झूठ बोलने का काम।

वि. (१) झूठा। (२) गप्पी। (३) चुगुलखोर।

लबालब—क्रि. वि. [फ़ा.] ऊपर तक।

लबासी—वि. [हिं. लबार] झूठी और व्यर्थ की बातें गढ़नेवाला, गप्पी। उ.—कपटी कान्ह लबासी।

संज्ञा स्त्री.—झूठी और व्यर्थ की बात, गप्प।

लबेद—संज्ञा पुं. [सं. वेद का अनु.] वेद का खंडन करनेवाला प्रसंग या दंतकथा।

लब्ध—वि. [सं.](१) मिला हुआ। (२) कमाया हुआ। (३) भाग करने से आया हुआ (गणित)।

लब्धकाम—वि. [सं.] जिसकी इच्छा पूरी हो गयी हो।

लब्धकीर्ति—वि. [सं. लब्ध+कीर्ति] प्रसिद्ध, विख्यात।

लब्धनाम—वि. [सं. लब्धनामन्] प्रसिद्ध।

लब्धप्रतिष्ठ—वि. [सं.] सम्मानित, प्रतिष्ठित।

लब्धि—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्राप्ति, लाभ।

लभनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लभन] हांडी जो ताड़ी भरने के लिए ताड़ में बांधी जाती है।

लभ्य—वि. [सं.] (१) पाने योग्य। (२) उचित।

लमकु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उपपति। (२) विलासी।

लमकना, लमकनो—क्रि. अ. [हिं. लपकना] (१) लपकना। (२) उत्कंठित होना।

लमछड़—वि. [हिं. लंबा+छड़] बहुत लंबा।

संज्ञा पुं.—भाला, बरछा।

लमधी—संज्ञा पुं. [देश.] (१) समधी का बाप। (२) समधी का दूसरा समधी।

लमहा—संज्ञा पुं. [अ.] क्षण, पल।

लमाना, लमानो—क्रि. स. [हिं. लंबा+ना] (१) लंबा करना। (२) दूर तक आगे बढ़ाना।

क्रि. अ.—चलते-चलते दूर निकल जाना।

लय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विलीन होना, प्रवेश करना। (२) चित्तवृत्ति का एकाग्र होना। (३) प्रलय। (४) विनाश, लोप। उ.—ज्ञान, छमादिक सब लय भयो—१-२९०। (५) नृत्य, गीत और वाद्य का मेल। (६) वह समय जो स्वर निकालने में लगता है।

संज्ञा स्त्री. (१) गाने का स्वर। (२) गीत की धुन।

लयन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विश्राम, शांति। (२) विश्रामस्थल। (३) आश्रय लेना।

लयलीन—वि. [हिं. लवलीन] तल्लीन, लवलीन।

लयिक—वि. [हिं. लय+क] लय-संबंधी।

लयो, लयौ—क्रि. स. [हिं. लिया] (१) धारण की। उ.—जब जब जनम तुम्हारौ भयौ, तब तब मुंडमाल मैं लयौ—१-२२६। (२)चुकाया। उ.—ताहि सूल पर सूली दयौ। ताकौ बदलौ तुमसौं लयौ—३-५। (३) पाया। उ.—चक्र सुदरसन सीतल भयौ, अभयदान दुरबासा लयौ—९-५। (४) पीछा किया। उ.—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धायौ घर सर-सैल बिदिसि दिसि; चक्र तहाँ हूँ जाइ लयौ—९-६ । (५) ग्रहण या अंगीकार किया । उ.—लघु सुत नृपति बुढ़ापौ लयौ—९-१७४ । (६) मनाया । उ.—जसुमति-गृह आनंद लयौ—१०-२५० । (७) स्वागत किया । उ.—तब ब्रजराज सहित सब गोपिनि आगे ह्वै जो लयो—३४४४ ।

लर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़] लड़, लड़ी । उ.—(क) मोतिनि लर ग्रीवा—४५१ । (ख) इक इक करि बिथराइ कै मोतिनि लर तोरचौ—१०५४ । (ग) टूटैगी मोतिनि लर मोरी—१२०९ । (घ) हौं बैठी पोवति मोतिनि लर—१४४७ ।

लरकइ, लरकई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लरिकाई] (१) बाल्यावस्था । (२) नादानी । (३) चिलबिल्लापन ।

लरकत—क्रि. अ. [हिं. लरकना] खिसककर । उ.—बिहरत गोपालराइ, मनिमय रचे अंगनाइ, लरकत परिंगनाइ घुटुरुनि डोलै—१०-१०१ ।

लरकना, लरकनो—क्रि. अ. [सं. लड़न=झूलना] (१) लटकना । (२) झुकना । (३) खिसकना, खिसककर नीचे आना ।

लरका—संज्ञा पुं. [हिं. लड़का] (१) बालक । (२) पुत्र ।

लरकाना, लरकानो—क्रि. स. [हिं. लरकना] (१) लटकाना । (२) झुकाना । (३) खिसकाना, नीचे बढ़ाना ।

लरकिनि, लरकिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़की] (१) बालिका । (२) पुत्री ।

लरखत—क्रि. अ. [हिं. लरखना] झूमता या लचकता है । उ.—एक हरषत एक लरखत एक करत घातहिं को लोचन गुलाल डारि सौंधे ढरकावै—२४२५ ।

लरखना, लरखनो—क्रि. अ. [हिं. लड़खड़ाना] (१) डगमगाना । (२) झुकना, झूमना, लचकना ।

लरखर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़खड़ाना] लड़खड़ाने की क्रिया या भाव । उ.—सूर कहा न्योछावर करिऐ अपने लाल ललित लरखर पर—१०-९३ ।

लरखरना—क्रि. अ. [हिं. लड़खड़ाना] (१) लड़खड़ाना । (२) झोंका खाकर गिरना । (३) ठीक से काम न कर पाना ।

लरखरनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़खड़ाना] (१) डगमगाहट । (२) चलने या खड़े होने में ठीक से पैर न जमने का भाव । उ.—सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि—१०-१०९ ।

लरखरनो—क्रि. अ. [हिं. लड़खड़ाना] (१) डगमगाना । (२) झोंका खाकर गिरना । (३) ठीक से काम न कर पाना ।

लरखरात—क्रि. अ. [हिं. लरखराना] डगमगाकर । उ.—लरखरात गिरि परत हैं, चलि घुटुरुनि धावैं—१०-११२ ।

लरखराना, लरखरानो—क्रि. अ. [हिं. लड़खड़ाना] (१) डगमगाना । (२) झोंका खाकर गिरना । (३) ठीक से काम न कर पाना ।

लरजना, लरजनो—क्रि. अ. [फ़ा. लरज़ा] (१) काँपना, हिलना । (२) डरना, भयभीत होना ।

लरजा—संज्ञा पुं. [फ़ा. लरज़ा] (१) कँपकँपी । (२) भूचाल । (३) जूड़ी (रोग) जिसमें कँपकँपी लगती है ।
क्रि. अ. [हिं. लरजना](१) काँपा । (२) डरा ।

लरजि—क्रि. अ. [हिं. लरजना] भयभीत होकर ।
प्र०—लरजि गईं—भयभीत हो गयीं । उ.—घटा आई गरजि, जुवति गईं मन लरजि, बीजु चमकति तरजि डरत गाता—९५५ ।

लरझर—वि. [हिं. लड़+झड़ना] अधिक, प्रचुर ।

लरत—वि. [हिं. लरना] जो लड़ रहे हों । उ.—निकसि सर तैं मीन मानौ लरत कीर छुराइ—३५२ ।

लरती—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़ती-झगड़ती । उ.—सूर तबहिं हमसों जो' कहती तेरी घां ह्वै लरती—१२७१ ।

लरतौ—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़ाई-झगड़ा करता । उ.—उदर-अर्थ चोरी हिंसा करि मित्र-बंधु सौं लरतौ—१-२०३ ।

लरन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लरना] लड़ने की क्रिया या भाव, लड़ने-झगड़ने । 'उ.—लै किन जाहि भवन आपने हयाँ लरन कौन सौं आई—२२७५ ।

लरना—क्रि. अ. [हिं. लड़ना] लड़ना-झगड़ना ।

लरनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़ना] (१) लड़ाई (में) । उ.—(क) भुज भुजंग, सरोज नैननि बदन बिधु जित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लरनि—१०-१०९ । (ख) कुटिल कुंतल, मधुप मिलि मनु कियौ चाहत लरनि —३५१ । (२) लड़ने का ढंग । उ.—मोसौं बैर प्रीति करि हरि सौं ऐसी लरनि लरयौ ।

लरनो—क्रि. अ. [हिं. लड़ना] लड़ना-झगड़ना ।

लराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़ाई] (१)युद्ध, संग्राम । उ.—(क) तहँ भिल्लिनि सौं भई लराई —१-२८६ । (ख) बांबी पर अहि करत लराई—३९ । (ग) खंजन जुग मानो लरत लराई कीर बुझावत रार

मुहा०—माँड़ी लराई—लड़ाई ठानी । उ.—रुद्र भगवान अरु सांबुक भिरे राम कुंभाउ माँड़ी लराई—१० उ०-३५ ।

(२) झगड़ा । उ.—(क) लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौं बांटि, मेटी लराई—८-८ । (ख) उलटि जाहि अपने पुर माहीं, बादिहिं करत लराई—३२१० । (३) बैर, वैमस्य । उ.—तुम तौ द्विज कुल-पूज्य हमारे, हम तुम कौन लराई—९-२८ ।

लराका—वि. [हिं. लड़ाका] झगड़ालू ।

लरि—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़कर । उ.—अर्जुन कह्यौ, सबै लरि मुए—१-२८८ ।

लरिकइ, लरिकई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लरिका] (१) बाल्यावस्था । (२) नादानी । (३) चिलबिल्लापन ।

लरिक-सलोरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लरिका+लोल] बालकों का खेल, खिलवाड़ का सुख । उ.—सूरदास प्रभु देत दिनहिं दिन ऐसिऐ लरिक सलोरी —१०-२८६ ।

लरिका—संज्ञा पुं. [हिं, लड़का] (१) बालक । उ.—कहा भयौ जौ घर कैं लरिका चोरी माखन खायौ —३५६ । (२) पुत्र । उ.–वा घट मैं काहू कैं लरिका, मेरौ माखन खायौ—१०-१५६ ।

लरिकनि—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. लड़का+नि] लड़कों को । उ.—(क) गोरस खाइ खवावै लरिकनि—१०-२७९ । (ख) छिरकि लरिकनि मही सौं—१०-२८९ ।

लरिकहिं—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. लरिका] लड़के को । उ.—काहू के लरिकहिं हरि मारयौ—३६९ ।

लरिकाइ, लरिकाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़का+आई] (१) बाल्यावस्था । उ.—लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसैं छूटत—३४०७ । (२) नादानी, अज्ञानता । उ.—कंस कहा लरिकाई कीनी, कहि नारद समुझायौ—१०-४ । (३) चिलबिल्लापन, चंचलता । उ.—(क) लरिकाई कहुँ नैंकु न छांड़त—१०-२४६ । लरिकाई तब हीं लौं नीकी चारि बरष कै पांच—७७० ।

लरिकिनि, लरिकिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़की] (१) बालिका, बालिकाएँ । उ.—उ.—(क) संग लरिकिनी चलि इह आवति दिन थोरी अति छबि तन गोरी—६७२ । (ख) खेलन को मैं जाउँ नहीं । और लरिकिनी घर-घर खेलति मोहीं को पै कहति तुहीं—१२४८ । (२) पुत्री ।

लरिहैं—क्रि. अ. [हि. लरना] लड़ेंगे, लड़ाई करेंगे । उ.—अब लौं कीन्ही कानि कान्ह अब तुम सौं लरिहैं—११३१ ।

लरिहौं—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़ूँगा, लड़ाई करूँगा । उ.—कै तुमहीं कै हमहीं माधौ, अपने भरोसैं लरिहौं—१-१३४ ।

लरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लड़ी] लड़, लड़ी । उ.—चंपक बरन चरन करि कमलनि दाड़िम दसन लरी ।

लरे—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़े, युद्ध में प्रवृत्त हुए । उ.—एक समय सुर-असुर प्रचारि लरे, भई असुरनि की हार—७-७ ।

लरै—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़ता है । उ.—(क) सूर सुभट हठ छांड़त नाहीं, काटो सीस लरै—२७७० । (ख) कापर बकै लोभ ते भागै, लरै सो सूर बखानै—३३३७ ।

लरैया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लराई] लड़ाई, झगड़ा, वाद-विवाद । उ.—दिन दिन देन उरहनौ आवतिं, ढुकि-ढुकि करहिं लरैया – ३७१ ।

लरौ—क्रि. अ. [हिं. लरना] लड़ो, युद्ध करो । उ.—करिकै जज्ञ सुरनि सों लरौ—११-२ ।

लल—संज्ञा स्त्री. [सं. लालसा] प्रबल कामना ।

संज्ञा स्त्री. [हिं· लल्लो=जीभ] धोखे की बात ।

संज्ञा पुं. [देश.] सार, तत्व । उ.—अष्टसिद्धि नवनिधि सुर संपति तुम बिन तुसकन, कहूँ का कछु लल—१-२०४ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ललक, ललकन—संज्ञा स्त्री. [सं. ललन, हिं. ललक] ललकने की क्रिया या भाव, प्रबल कामना।

ललकत—क्रि. अ. [हिं. ललकना] पाने की बड़ी इच्छा से लपकता है। उ.—ललकत स्याम, मन ललचात।

ललकना, ललकनो—क्रि. अ. [हिं. ललक] (१) पाने की कामना से लपकना। (२) कामना से पूर्ण होना।

ललकार—संज्ञा स्त्री. [हिं. ले ले से अनु.+कार] (१) युद्ध की चुनौती, प्रचारण, (२) लड़ने का बढ़ावा या प्रोत्साहन।

ललकारना, ललकारनो—क्रि. स. [हिं. ललकार] (१) युद्ध की चुनौती देना, प्रचारणा। (२) लड़ने को बढ़ावा या प्रोत्साहन देना।

ललकित—वि. [हिं. ललक] गहरी चाह से युक्त।

ललचना, ललचनो—क्रि. अ. [हिं. लालच] (१) पाने की प्रबल कामना होना। (२) लालसा से अधीर होना। (३) मोहित होना।

मुहा०—जी ललचना—कुछ पाने की प्रबल इच्छा या कामना होना।

ललचहा—वि. [हिं. लालच] लोभी, लालची।

ललचाइ—क्रि. अ. [हिं. ललचना] लालच या पाने के लोभ से अधीर होकर। उ.—यह मनि अति अनुपम है सो सुनि, रहि न सक्यो ललचाइ—१० उ०-२६।

ललचात—क्रि. अ. [हिं. ललचना] ललचाता है।

मुहा०—मन ललचात—पाने की प्रबल इच्छा होती है। उ.—वार वार ललचात साध करि—१०७४।

ललचाना—क्रि. स. [हिं. ललचना] (१) पाने की प्रबल कामना करना। (२) लुभानेवाली वस्तु प्रस्तुत करके लालच उत्पन्न करना। (३) लुभाना, मोहित करना।

मुहा०—जी या मन ललचाना—मन लुभाना।

क्रि. अ.—पाने की प्रबल कामना होना।

ललचाने—क्रि. अ. [हिं. ललचाना] मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—(क) हरि छबि देखि नैन ललचाने—पृ. ३२२ (१५)। (ख) नारायण धुनि सुनि ललचाने—पृ. ३४७ (५५)।

ललचानो—क्रि. स. [हिं. ललचना] (१) पाने की प्रबल कामना करना। (२) लालच उत्पन्न करना। (३) लुभाना, मोहित करना।

क्रि. अ. पाने की प्रबल कामना होना।

ललचावै—क्रि. अ. [हिं. ललचना] पाने की प्रबल कामना करता है। उ.—मृगतृष्ना आचार जगत-जल, ता सँग मन ललचावै—२-१३।

क्रि. स.—मुग्ध करता है। उ.—नंदलाल ललना ललचि ललचावै री—६२९।

ललचि—क्रि. अ. [हिं. ललचना] मुग्ध होकर। उ.—नंदलाल ललना ललचि ललचावै री—६२९।

ललचौहाँ—वि. [हिं. लालच+औहाँ] ललचाया हुआ।

ललन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्यारा-दुलारा बेटा। उ.—ललन, हौं या छबि ऊपर वारी—१०-९१। (ख) गहे अँगुरिया ललन की नँद चलत सिखावत—१०-१२२। (२) प्रिय नायक या पति। उ.— ललन, तुम ऐसे लाड़ लड़ाए। लै करि चीर कदम पर बैठे किन ऐसे ढँग लाए—७९४।

ललना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्त्री, नारी। उ.—(क) ललना लै लै उछंग अधिक लोभ लागैं—१०-९०। (ख) व्रज ललना देखति गिरिधर कौं—६४६। (२) पत्नी। उ.—अंबर थके अमर ललना सँग—५६५। (३) राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहिं राधा किन हार चुरायो।.........। रत्ना कुमदा मोहा करुना ललना लोभा नूप—१५८०।

संज्ञा पुं.—(१) प्यारा बच्चा। (२) प्रियतम।

लला—संज्ञा पुं. [हिं. लाल] (१) प्यारा-दुलारा लड़का या उसके लिए संबोधन। उ.—(क) दूरि खेलन जनि जाहु लला रे—१०-१५५। (ख) कीजै पान लला रे, यह लै आई दूध जसोदा—१०-२२९। (२) प्रिय के लिए प्यार का शब्द।

ललाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाल+आई] लाली, लालिमा। उ.—अधर अंजन दाग मिटचो है पीक और मिटी बंदन की ललाई—२००७।

ललाट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) माथा, भाल। उ.—लोचन ललित ललाट भृकुटि बिच तकि मृगमद की रेख बनाई—६१६। (२) भाग्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुहा०—ललाट का लिखा—जो भाग्य में बदा हो।
ललाट-पलट, ललाट-फलक—संज्ञा पुं. [सं.] माथे या ललाट का तल।
ललाट-रेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] भाग्य का लेख।
ललाना, ललानो—क्रि. अ. [सं. ललन] ललचना।
ललाम—वि. [सं.] (१) सुन्दर, श्रेष्ठ। (२) लाल।
संज्ञा पुं.—(१) भूषण, अलंकार। (२) रत्न।
ललामी—संज्ञा स्त्री. [सं. ललाम+ई] (१) सुन्दरता, श्रेष्ठता। (२) लाली, लालिमा।
ललित—वि. [सं.] (१) सुन्दर, मनोहर। उ.—(क) ललित गति राजत अति रघुबीर—९-२६। (ख) ललित श्रीगोपाल लोचन लोल—३५१। (२) हिलता-डोलता हुआ।
संज्ञा पुं.—श्रृंगार-रस का हाव-विशेष।
ललितई—संज्ञा स्त्री. [हिं. ललित+ई] सुन्दरता।
ललिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राधा की प्रधान आठ सखियों में एक। उ.—ललिता चंद्रावली सहित राधा सँग कीरति महतारि—९२१।
ललिताई—संज्ञा स्त्री. [सं. ललित+आई] सुन्दरता।
लली—संज्ञा स्त्री. [हिं. लला] (१) दुलारी बेटी या उसके लिए दुलार का संबोधन (२) नायिका के लिए प्यार का शब्द।
ललौहाँ—वि. [हिं. लाल+औहाँ] जिसमें लाली हो।
लल्ला—संज्ञा पुं. [हिं. लाल] दुलारा-प्यारा लड़का या उसके लिए दुलार का संबोधन।
लल्लाट—संज्ञा पुं. [हिं. ललाट] माथा, ललाट।
लल्लो—संज्ञा स्त्री [सं. ललना] जीभ, जिह्वा।
लल्लो चप्पो, लल्लो पत्तो—संज्ञा स्त्री. [हिं. लल्लो+अनु. चप्पो या पत्तो] चिकनी-चुपड़ी बात।
लवंग—संज्ञा पुं. [सं.] लौंग।
लवंगलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लौंग का पेड़ या उसकी शाखा। उ.—(क) फूले हीन चंपक चारु चमेली फूले मलयज लवंगलता बेलि सरस रस ही फूलडोल—२४०५। (ख) कनक बेलि सतदल सर मंडित दृढ़तर लता लवंग—३३२७। (२) राधा की एक सखी का नाम।

लव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बहुत थोड़ी मात्रा।
मुहा०—लव भर—जरा भी, थोड़ा सा।
(२) समय का एक मान। (३) श्रीराम का एक पुत्र।
संज्ञा स्त्री. [हिं. लौ] (१) चाह, लाग, राग। उ.—(क) सदा सँघाती श्रीजदुराइ, भजिए ताहि सदा लव लाइ—७-२। (ख) केवल स्यामहिं सों लव लाई—१०२०। (ग) सूरदास प्रभु प्रकट मिलन को चातक ज्यौं लव लागी—२७२५। (२) आशा, कामना। उ.—बारंहिबार इहै लव लागी गहे पथिक के पाइँ—२७०४।
लवका—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौकना] बिजली।
लवण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नमक। (२) एक असुर जिसे शत्रुघ्न ने मारा था। (३) सात समुद्रों में एक जिसका पानी खारी है।
लवणासुर—संज्ञा पुं. [सं.] मधु दैत्य का पुत्र जो मथुरा में रहता था और जिसे शत्रुघ्न ने मारा था।
लवन—संज्ञा पुं. [सं.] खेत काटने का कार्य या उसका वेतन।
संज्ञा पुं. [सं. लवण] नमक।
लवन-सिंधु—संज्ञा पुं. [सं.] सात समुद्रों में एक। उ.—अगम सुपंथ दूरि दच्छिन दिसि तहँ सुनियत सखि सिंधु लवन—१०. उ.-९१।
लवना—क्रि. स. [हिं. लुनना] पके अन्न के पौधों को काटकर एकत्र करना, लुनना।
क्रि. अ. चमकना।
वि. [हिं. लोना] (१) नमकीन। (२) सुंदर।
लवनाई—संज्ञा स्त्री. [सं. लावण्य] सुंदरता।
लवनि, लवनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लवन] फसल की कटाई या उसकी मजदूरी।
संज्ञा स्त्री. [सं. नवनीत] मक्खन, माखन।
लवनो—क्रि. स. [हिं. लुनना] लूनना।
क्रि. अ. चमकना।
लवर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपट] ज्वाला, लौ, लपट।
लवलासी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लव+लसी] प्रीति की लगावट, प्रेम की तीव्रता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लवलीन—वि. [हिं. लय+लीन] तन्मय, तल्लीन, मग्न। उ.—(क) जय जय धुनि सुनि करत अमरगन नर-नारी लवलीन—९-२६। (ख) सूरदास जहँ दृष्टि परति है होति तहीं लवलीन—४७८। (ग) स्याम बारि बिधि लई बिरद तजि हम जु मरति लवलीन—२८६६।

लवलेश, लवलेस—संज्ञा पुं. [सं. लवलेश] (१) थोड़ी मात्रा। (२) बहुत थोड़ा लगाव या संपर्क।

लवा—संज्ञा पुं. [सं. लावा] भुने हुए धान या ज्वार की खील, लावा।

संज्ञा पुं. [सं. लावक] तीतर की जाति का एक पक्षी।

वि. [हिं. लाना=लगाना] लगानेवाला।

लवाई—संज्ञा स्त्री. [देश.] हाल की ब्याई गाय।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लवना+आई] फसल की कटाई या उसकी मजदूरी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाना+आई] लाने का कार्य या उसकी मजदूरी।

लवाजमा—संज्ञा पुं. [अ. लवाज़िम] (१) दल-बल और साज-सामान। (२) आवश्यक सामग्री।

लवारा—संज्ञा पुं. [हिं. लवाई] गाय का बछड़ा।

वि. [हिं. आवारा] आवारा।

लवासी—वि. [हिं. लव+आसी] (१) बकवादी, गप्पी। (२) लंपट। उ.—काहे दियो सूर सुख में दुख कपटी कान्ह लवासी—३४३९।

लवैया—वि. [हिं. लाना+ऐया] लानेवाला।

लशकर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) दल, सेना। (२) भीड़-भाड़। (३) सेना टिकने का स्थान।

लशकारना—क्रि. अ. [हिं. लशकर] शिकार करने को बढ़ावा देना, लहकारना।

लषन—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण। उ.—कनक-मृग मारीच मारयौ, गिरयौ लषन सुनाइ—९-६०।

लषना—क्रि. स. [हिं. लखना] देखता, ताड़ना।

लक्षन, लष्पन—संज्ञा पुं. [सं. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण।

लस—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चिपचिपाहट। (२) लासा। (३) चित्त लगने की बात, आकर्षण।

लसकर—संज्ञा पुं. [फ़ा. लशकर] भीड़भाड़, समूह। उ—घेरचौ आइ कुटुम लसकर मैं—१-६४।

लसत—क्रि. अ. [हिं. लसना] (१) शोभित होता है। उ.—मंद मृदु हँसत अति लसत भारी—२५९६। (२) बिराजता है। उ.—(क) लसत चारु कपोल दुहुँ बिच सजल लोचन चारु। (ख) दसरथ-कौसल्या के आगैं, लसत सुमन की छहियाँ—९-१९।

लसति—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. लसना] (१) बिराजती है। उ.—बरह-मुकुट कैं निकट लसति लट—४१७ (२) शोभित होती है। उ.—स्याम-देह दुकूल-दुति मिलि लसति तुलसी-माल—६२७।

लसदार—वि. [हिं. लस+फ़ा दार] जिसमें लस हो।

लसन—संज्ञा स्त्री. [सं.] शोभित होने की क्रिया या भाव।

लसना—कि. स. [सं. लसन] चिपकाना।

क्रि. अ. (१) (आकर्षण के स्थान में) हर समय चिपके रहना। (२) शोभित होना, फबना। (३) बिराजना, विद्यमान होना।

लसनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लसना] (१) विद्यमानता। (२) शोभा, छटा।

लसम—वि. [देश.] खोटा, दूषित।

लसलसा—वि. [हिं. लस] लसदार।

लसलसाना, लसलसानो—क्रि. अ. [हिं. लस] चिपचिपाना, चिपचिपा होना।

लसलसाहट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लसलसा] चिपचिपाहट।

लसि—क्रि. अ. [हिं. लसना] स्थित होकर।

प्र.—रहे लसि—विद्यमान या सुशोभित हैं। उ.—सुबरन थार रहे हाथनि लसि, कमलनि चढ़ि आए मानौ ससि—१०-३२।

लसित—वि. [सं.] सुशोभित।

लसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लस] (१) चिपचिपाहट। (२) आकर्षण। (३) लाभ का डौल। (४) लगाव, संबंध।

क्रि. अ. [हिं. लसना] शोभित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लसीला—वि. [हिं. लस+ईला] (१) लसदार। (२) सुंदर।

लस्टम पस्टम—क्रि. वि. [देश.] (१) धीरे-धीरे। (२) किसी न किसी तरह से।

लस्त—वि. [हिं. लटना] (१) थका हुआ। (२) अशक्त।

लस्त-पस्त—वि. [हिं. लस्त+फ़ा. पस्त] हारा-थका।

लस्सी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लस] (१) छाछ, मठा। (२) पतले दही में शक्कर या नमक डालकर बनने वाला पेय।

लहँगा—संज्ञा पुं. [हिं. लंक+अंगा] स्त्रियों का एक घेरदार पहनावा। उ.—(क) कटि लहँगा नीलौ बन्यौ —१-४४। (ख) पगनि जेहरि लाल लहँगा—पृ. ३४४ (२९)। (ग) कटि नील लहँगा—१० उ०-२४।

लहँडा, लहँड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] झुंड, समूह।

लहकना, लहकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) हवा में लहरना। (२) हवा का बहना। (३) आग का दहकना। (४) चाह से भरना, ललकना। (५) पाने को ललचना। (६) भड़कना, उत्तेजित होना।

लहकाना, लहकानो—क्रि. स. [हिं. लहकना] (१) हवा में लहराना, झोंका खिलाना। (२) आग दहकाना। (३) चाह से भर देना, ललकाना। (४) पाने को प्रेरित करना, ललचाना। (५) भड़काना। (६) शिकार करने को उत्तेजित करना।

लहकौर, लहकौरि, लहकौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहना+कौर] विवाह की वह रीति जिसमें वर और बधू परस्पर कौर खिलाते हैं।

लहजा—संज्ञा पुं. [अ. लहजः] बोलने का ढंग।

संज्ञा पुं. पल, क्षण।

मुहा० लहजा—क्षण भर, पल भर।

लहटना—क्रि. अ. [हिं. लहना+रटना] चसका लगना।

लहति—क्रि. स. [हिं. लहना] पाती है। उ.—दासी तृष्ना भ्रमति टहल-हित लहति न छिन बिस्राम—१-१४१।

लहन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहना] प्राप्त करने की क्रिया या भाव।

लहनदार—वि. [हिं. लहना+फ़ा. दार] पानेवाला।

लहना—क्रि. स. [सं. लभन, प्रा. लहन] प्राप्त करना।

संज्ञा पुं. (१) ऋण वसूल करना।

मुहा०—लहना चुकाना या साफ करना—ऋण अदा करना।

(२) मिलनेवाला धन। (३) भाग्य।

क्रि. स. [सं. लवन] फसल काटना।

लहनि, लहनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहना] (१) प्राप्ति। (२) भाग्यफल, फलभोग। उ.—लहनी काम के पाछे। दियौ आपनो लैहै सोई मिलै नहीं पाछे—१४०९।

लहनो, लहनौ—संज्ञा पुं. [हिं. लहना] (१) प्राप्त करने का भाव। उ.—सबके भाव दरस हरि लहनो —१०-२०। (२) सौभाग्य। उ.—लहनो ताको जाके आवै मैं बड़भागिनि पाए री—पृ० ३१९। (८३)।

क्रि. स. प्राप्त करना।

क्रि. स. [सं. लवन] फसल काटना।

लहबर—संज्ञा पुं. [हिं. लहर] ऊँचा झंडा।

लहमा—संज्ञा पुं. [अ. लहमः] पल, क्षण।

लहर—संज्ञा स्त्री. [सं. लहरी] (१) हवा के झोंके से जल में उठनेवाली हिलोर।

मुहा०—लहर लेना—समुद्र के किनारे लहरों से स्नान करना।

(२) उमंग, जोश। उ.—फूले फरे तरुवर आनँद लहर के—१०-३४। (३) मन की मौज या तरंग। (४) शारीरिक पीड़ा का बार-बार उठनेवाला झोंका। उ.—सूर सुरति तनु की कछु आई उतरत काम लहर (लहरि) के।

मुहा०—लहर देना या मारना—शरीर के किसी अंग में रह-रह कर पीड़ा उठना।

(५) प्रेमोन्माद। उ.—लहर उतारि राधिका-सिर तैं दई तरुनिनि पै डारि—७६४। (६) आनन्दातिरेक।

यौ०—लहर-बहर—अत्यन्त सुख और आनन्द।

मुहा०—लहर आना—आनन्द आना। लहर लेना या मारना—सुख भोगना।

(७) स्वर-कंप। (८) टेढ़ी या वक्र गति।

मुहा०—लहर देना या मारना—टेढ़े-टेढ़े चलना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(९) टेढ़ी-मेढ़ी रेखा। (१०) हवा का झोंका। (११) गंध भरी वायु का झोंका।

लहरदार—वि. [हिं. लहर+फ़ा. दार] टेढ़ा, वक्र।

लहरना, लहरनो—क्रि. अ. [हिं. लहराना] (१) हवा से हिलना-डोलना। (२) पानी का हिलोर मारना। (३) उमंग होना। (४) पाने की इच्छा होना। (५) लपट निकलना। (६) शोभित होना।

लहर-पटोर—संज्ञा पुं. [हिं. लहर+पट] एक प्रकार का धारीदार रेशमी कपड़ा।

लहरा—संज्ञा पुं. [हिं. लहर] (१) तरंग। (२) आनन्द।

लहराना, लहरानो—क्रि. अ. [हिं. लहर+आना] (१) हवा के झोंके सेहिलना-डोलना। (२) पानी का हिलोर मारना। (३) मुड़ते या झोंका खाते चलना। (४) उमंग या उल्लास होना। (५) प्राप्ति की इच्छा होना। (६) आग दहकना। (७) शोभित होना।

क्रि. स. (१) हवा के झोंके से हिलाना-डोलाना। (२) पानी में हिलोर उठाना। (३) वक्र गति से चलाना। (४) हिलाना-डोलाना।

लहरि—संज्ञा स्त्री. [सं. लहरी] (१) पानी की हिलोर या तरंग। (२) उमंग, जोश। (३) पीड़ा का रह रहकर उठना। उ.—(क) सूर सुरति तनु की कछु आई उतरत काम लहरि कै—११६८। (ख)आवति लहरि मदन बिरहा की को हरि वेद हँकारे—३२५४।

मुहा०—लहर आना, देना या मारना—रह-रहकर पीड़ा होना। साँप काटने की लहर—साँप काटे प्राणी की वह स्थिति जब वह बेहोशी के बीच जाग-जाग पड़ता है। उ.—ल्यावौ गुनी जाइ गोविंद कौं, बाढ़ी अतिहिं लहरि—७५०।

(४) आनन्द की उमंग। (५) भावना, उठान, वेग। उ.—स्याम उलटे परे देखे बढ़ी सोभा लहरि—१०-६७। (६) स्वर की गूंज। (७) वक्र गति या रेखा। (८) गंध-भरी वायु का झोंका।

लहरिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहर] (१) लहरदार चिह्न। (२) एक तरह का कपड़ा जिसमें लहरियाँ पड़ी होती हैं। (३) लहरियाँ पड़ी साड़ी। (४) लहर, हिलोर।

लहरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लहर। (२) मौज।

वि. आनंदी, मनमौजी।

लहलह, लहलहा—वि. [हिं. लहलहाना] (१) लहलहाता हुआ। (२) हर्षित, प्रफुल्लित।

लहलहाना, लहलहानो—क्रि. अ. [हिं. लहरना] (१) हरी-भरी पत्तियों से युक्त होना। (२) आनन्द से पूर्ण होना। (३) सूखे पेड़ में फिर से पत्तियाँ निकलना। (४) दुर्बल शरीर में पुनः शक्ति आना।

लहलही—वि. स्त्री. [हिं. लहलहा] (१) हरी-भरी। (२) हर्षित, प्रफुल्लित।

लहसुन—संज्ञा पुं. [सं. लशुन] एक पौधा जिसकी जड़ गोल गाँठ के रूप में होती है और जिसमें बहुत तीक्ष्ण और उग्र गंध होती है। उ.—जैसे काग-हंस की संगति लहसुन संग कपूर—२६८३।

लहसुनिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहसुन] एक रत्न।

लहा—संज्ञा पुं. [सं. लाभ] नफा, फायदा, लाभ।

लहाछेह—संज्ञा पुं. [देश.] नाचने की तेजी या झपट।

लहाना, लहानो—क्रि. स. [सं. लभना] प्राप्त कराना, मिलाना।

क्रि. स. [हिं. लहन] कौशल से बात करके अभिप्राय सिद्ध कराना।

लहालह—वि. [हिं. लहलहा](१) हरा-भरा। (२) प्रफुल्ल।

लहालोट—वि. [हिं. लाभ+लोटना] (१) बहुत हर्षित या प्रफुल्लित। (२) मुग्ध, मोहित।

लहास—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाश] मृत शरीर।

लहिं—अव्य. [हिं. लहना] तक, पर्यन्त।

क्रि. स. (१) प्राप्त करो। उ.—सूर पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार—१-६८। (२) प्राप्त करके। उ.—रिषि-प्रसाद तैं तिन सुत जायौ, सुत लहि दंपति अति सुख पायौ—६-५।

लहिए, लहिऐ—क्रि. स. [हिं. लहना] (१) अनुभव कीजिए। उ.—कानन भवन रैनि अरु बासर कहूँ न सचु लहिए—२८९२। (२) प्राप्त कीजिए। उ.—प्रेम बँध्यो संसार प्रेम परमारथ लहिए—३४४३।

प्र०—अंत नहिं लहिए—समाप्त न कर सकिए, समाप्त करने में समर्थ न होइए। उ.—ऐसैं कहौं कहाँ लगि गुन-गन, लिखत अंत नहिं लहिए—१-११२।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहियत—क्रि. स. [हिं. लहना] पाता है।
प्र०—पार न लहियत —पार या अंत नहीं पाता है। उ.—वासरहू या विरह सिंधु को कैसेहुँ पार न लहियत—३३०० ।

लहियै—क्रि. स. [हिं. लहना] पाइए, प्राप्त कीजिए। उ.—(क) सूरदास भगवंत-भजन करि अंत बार कछु लहियै—१-६२ । (ख) हरि-रस तौऽब जाइ कहुँ लहियै —२-१८ (ग) जातैं हरि-पुर बासा लहियै—३-१३ ।

लहियौ—क्रि. स. [हिं. लहना] गतिविधि लक्ष्य करना, सावधान रहना। उ.—मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ, मेरे घर कौ द्वार सखी री, तब लौं देखति रहियौ। ।........। और नहीं या ब्रज मैं काऊ, नंद-सुवन सखि लहियौ—१०-३१३ ।

लही—क्रि. स. [हिं. लहना] (१) अनुभव की, मान ली। उ.—पूरे चीर अंत नहिं पायौ, दुरमति हारि लही—१-२५८ । (२) जान या समझ सका। उ.—तैं सिव की महिमा नहिं लही—४-५ । (३) पायी, प्राप्त की। उ.—अहो नँदरानि, सीख कौन पै लही री—३४८ ।

लहु—अव्य. [हिं. लौं] (१) तक, पर्यन्त। (२) समान।
क्रि. स. [हिं. लहना] लहो, प्राप्त करो।
वि. [सं. लघु] छोटा, लघु।

लहुर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लहुरा] छोटाई, छोटापन। उ.—अरस-परस चुटिया गहैं, बरजति है माई। महा ढीठ मानैं नहीं कछु लहुर-बड़ाई—१०-१६२ ।

लहुरा वि. [सं. लघु, प्रा. लहु + रा] छोटा, कनिष्ठ।

लहुरी—वि. स्त्री. [हिं. लहुर] छोटी, कनिष्ठा।

लहू—संज्ञा पुं. [हिं. लोहू] रक्त, रुधिर।
मुहा०—लहूलुहान होना—रक्त से लथपथ होना।

लहे—क्रि. स. [हिं. लहना] पाये, प्राप्त किये। उ.—ब्रह्मा सो नारद सौं कहे, ब्यास सोइ नारद सौं लहे—२-३७ ।

लहेरा—संज्ञा पुं. [हिं. लाह = लाख + एरा] (१) लाख का पक्का रंग चढ़ानेवाला। (२) पक्का रेशम रँगनेवाला रँगरेज।

लहैंगे—क्रि. स. [हिं. लहना] पायँगे, प्राप्त करेंगे। उ.—सूरदास प्रभु जसुमति को तजि मथुरा कहा लहैंगे—२५०० ।

लहै—क्रि. स. [हिं. लहना] पा जाय, प्राप्त करे। उ.—(क) निर्गुन मुक्तिहुँ कौं नहिं चहै, मम दर्सन ही तैं सुख लहै—३-१३ । (ख) सूरज प्रभु की लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४ ।
यौ०—लहै-बहै—उचित, उपयुक्त या न्यायसंगत हो, समझ में आ सके और समझायी जा सके। उ.—बात कहै जो लहै, बहै री—७७३ ।

लहौं—क्रि. स. [हिं. लहना] (१) पाऊँ, प्राप्त करूँ। उ.—(क) नरक कि सरग लहौं—१-१५१ । (ख) मैं यह ज्ञान छलीं ब्रजबनिता, दियौ सु क्यौं न लहौं—३-२ । (२) पाता हूँ, प्राप्त करता हूँ। उ.—कबहुँक भोजन लहौं कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौं--१-१६१ ।

लहौंगौ—क्रि. स. [हिं. लहना] प्राप्त कर सकूँगा, पकड़ सकूँगा। उ.—यह तौ झलमलात झकझोरत, कैसैं कै जु लहौंगौ—१०-१९४ ।

लह्यौ—क्रि. स. [हिं. लहना] (१) (जन्म) पाया। उ.—पुरबलौ धौं पुन्य प्रगट्यौ, लह्यौ नर-अवतार—१-८८ । (२) पहुँच सका, प्राप्त कर सका। उ.—सुरति-सरित-भ्रम भौंर लोल मैं मन परि, तट न लह्यौ—१-१६२ । (३) समझा, प्राप्त किया। उ.—सूत सौनकनि सौं पुनि कह्यौ, बिदुर सो मैत्रेय सौं लह्यौ—१-२२७ । (४) (वास) ग्रहण किया। उ.—हारि सकल भंडार-भूमि, आपुन बन-बास लह्यौ—१-२४७ । (५) पाया, (प्राप्त) किया। उ.—प्रभु मैं तुम्हरौ दरसन लह्यौ, माँगन कौं पाछैं कहा रह्यौ—४-९ । (६) अनुभव किया। उ.—पुर कौं देखि परम सुख लह्यौ—४-१२ । (७) धारण किया, धरा। उ.—कहा जानि तुम मोसौं कह्यौ, यह सुनि रिषि-स्वरूप नृप लह्यौ—५-४ ।

लाँक—संज्ञा स्त्री. [हिं. लंक] कमर, कटि।

लाँग—संज्ञा स्त्री. [सं. लांगूल] धोती का वह भाग जो पीछे की ओर कमर में खोंसा जाता है, काछ।

लांगूल—संज्ञा पुं. [सं.] दुम, पूँछ।
वि. [हिं. लंगर] ढीठ।

लाँगूली—संज्ञा पुं. [सं. लांगूलिन्] बंदर, बानर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाँघ—संज्ञा स्त्री. [सं. लंघन्] बाधा, रुकावट ।
लाँघना, लाँघनो—क्रि. स. [सं. लंघन] नाँघना ।
लाँच, लाँची—संज्ञा स्त्री. [देश.] घूस, रिशवत ।
लांछन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चिह्न । (२) दोष, कलंक ।
लांछना—संज्ञा स्त्री. [सं. लांछन] दोष, कलंक ।
लांछनित, लांछित—वि. [सं. लांछन] जिसे दोष लगा हो, कलंकित ।
लाँझ—संज्ञा स्त्री. [देश.] रुकावट, बाधा ।
लाँबा—वि. [हिं. लंबा] लंबा ।
लाँबी—वि. स्त्री. [हिं. लंबी] लंबी । उ.—तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं ह्वैहै लाँबी-मोटी—१०-१७५ ।
लाइ—संज्ञा स्त्री. [सं. अलात, प्रा. अलाय] अग्नि ।

क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) लगाकर ।

प्र०—दौ दीनी लाइ—आग लगा दी । उ.—पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ—४-१२ ।

(२) मलकर, पोतकर, चिह्नित करके । उ.—(क) देहीं लाइ तिलक केसरि कौ जोबन-मद इतराति—१०-२९४ । (ख) कियौ स्नान मृत्तिका लाइ—१-३४१ । (३) व्यस्त करके ।

प्र०—लई लाइ—व्यस्त कर लिया । उ.—बातनि लई राधा लाइ—६८३ ।

(४) पकड़कर । उ.—कबहुँक हरि कौं लाइ आँगुरी चलन सिखावति ग्वारि—१०-११८ । (५) (चित्त-वृत्ति) एकाग्र कर या करके, ध्यान लगा या लगाकर । उ.—(क) अजहूँ तू हरि-पद चित लाइ—४-६ । (ख) करन लगे सुमिरन चित लाइ—५-३ । (ग) कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ—९-९ । (घ) जो यह कथा सुनै चित लाइ—९-१०२ ।

लाइक—वि. [हिं. लायक] (१) उचित । (२) सुयोग्य ।
लाई—संज्ञा स्त्री. [सं. लाजा] लावा, खीलें ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाना, लगाना] चुगली ।

यौ०—लाई-लुतरी—(१) चुगली । (२) चुगली खानेवाला, चुगलखोर ।

क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाकर ।

प्र०—हियैं लियौ लाई—छाती से लगा लिया । उ.—अपनौ जानि हियैं लियौ लाई—७-४ । छाती सौं लाई—छाती से लगाकर । उ.—निसि-बासर छाती सौं लाई बालक लीला गाई—३४३५ ।

(२) प्रज्वलित करके, आग लगाकर । उ.—सूरदास प्रभु बिरह जरी है बिनु पावक दौ लाइ—३३२२ । (३) प्रभावित करके ।

प्र०—मोहनी लाई—मुग्ध या मोहित किया है । उ.—हृदय ते टरति नाहिंन ऐसी मोहिनी लाई री—८८१ ।

(४) विलंब या देर की । उ.—(क) खेलत बड़ी बार कहुँ लाई—१०-२३५ । (ख) बिप्र भवन रथ चढ़यौ चलत तब बार न लाई—१० उ०-८ ।

लाऊँ—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) लगाऊँ । उ.—कुमकुम को लेप मेटि, काजर मुख लाऊँ—१-१६३ । (२) देर या विलंब करूँ । उ.—अब विलंब नहिं लाऊँ—३८२ । (३) चिपटाऊँ । उ.—अंकम भरि सबकौं उर लाऊँ—७९७ ।

लाऊ—संज्ञा पुं. [हिं. अलावू] लौकी, कद्दू, घिया ।
लाए—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) लगाकर, लगाये । उ.—अति सुरूप बिष अस्तन लाए राजा कंस पठाई—१०-५२ । (२) चिपटा लिये, (छाती से) लगा लिये । उ.—हरषवंत जुवती सब लै लै मुख चूमति उर लाए—१०-९३ । (३) (विलंब या देर) की, (दिन) लगा दिये । उ.—(क) समुझत नहिं चूक सखी अपनी बहुतै दिन हरि लाए—२८२२ । (ख) आवन कह्यौ बहुत दिन लाए करी पाछिली गाह—२८६८ ।

लाकड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लकड़ी] लकड़ी ।
लाक्षणिक—वि. [सं.] लक्षणा-संबंधी ।
लाक्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] लाख, लाह ।
लाक्षागृह—संज्ञा पुं. [सं.] लाख का घर जो दुर्योधन ने पाण्डवों के लिए बनवाया था, परन्तु जिसके जला देने पर भी वे बचकर निकल गये थे ।
लाख—वि. [सं. लक्ष, प्रा. लक्ख] (१) सौ हजार । उ.—(क) सब दै लेउ लाख लोचन कहे जो कोउ करत नये री—१३४८ । (ख) लाख मुँदरियाँ जायँगी कान्ह तुम्हारौ मोल—पृ० २५३ (२७) । (२) बहुत अधिक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—लाख जतन करि देखौ, तैसैं बार-बार बिष घूँटै—१-६३ ।

मुहा०—लाख टके की बात—अत्यंत उपयोगी सीख, या सलाह ।

क्रि. वि. बहुत, अधिक, कितना भी ।

मुहा०—लाख से लीख होना—जहाँ सब कुछ हो, वहां कुछ न रह जाना । लाख का घर नाश होना—जहाँ लाखों का कार-बार या धन-वैभव हो, वहाँ कुछ न रह जाना ।

संज्ञा स्त्री. [सं.] एक लाल पदार्थ जो कई वृक्षों की शाखाओं पर कीड़ों से बनता है, लाह । उ.—आल मजीठ लाख सेंदुर कहुँ ऐसेहिं बुधि अवरेखत—११०८ ।

लाखना, लाखनो—क्रि. अ. [हिं. लाख] लाख लगाकर किसी धातु के पात्र का छेद बन्द करना ।

क्रि. स. [हिं. लखना] समझ-बूझ लेना ।

लाखामंदिर—संज्ञा पुं. [हिं. लाख + सं. मंदिर] लाक्षा-गृह । उ.—लाखामंदिर कौरव रचियौ ।

लाखपति, लाखपती—वि. [हिं. लखपती] जिसके पास लाखों की संपत्ति हो, लखपती ।

लाखा—संज्ञा पुं. [हिं. लाख] लाख का बना रंग जो स्त्रियाँ होंठों पर लगाती हैं ।

लाखागृह—संज्ञा पुं. [सं. लाक्षागृह] लाख का बना वह घर जो दुर्योधन ने पाण्डवों को जला देने के लिए बनवाया था; परन्तु जहाँ से वे सुरक्षित ही निकल गये थे । उ.—(क) लाखागृह तैं, सत्रु-सैन तैं, पांडव-बिपति निवारी—१-१७ । (ख) लाखागृह पांडवनि उबारे—१-३१ ।

लाखी—वि. [हिं. लाख] मटमैले लाल रंग का ।

लाखों—वि. [हिं. लाख] (१) कई लाख । (२) बहुत अधिक ।

लाग—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] (१) लगाव, संबंध । (२) प्रेम, प्रीति । (३) लगन, तत्परता । (४) युक्ति, उपाय । (५) विशेष कौशल का स्वांग । (६) होड़, स्पर्धा । (७) बैर, शत्रुता । (८) जादू, टोना । (९) शुभ कार्य में ब्राह्मण, नाई आदि को दिया जानेवाला नेग । (१०) लगान, भूमिकर । उ.—अपनो लाग लेहु लेखो करि जो कछु राज अंस को दाम—२५०५ । (११) नृत्य-विशेष ।

अव्य. [हिं. लग] वास्ते, लिए । उ.—खोयौ जन्म विषय-सुख लाग—१-२९० ।

क्रि. वि. [हिं. लौं] तक, पर्यन्त ।

लागडाँट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाग + डांट] (१) होड़, स्पर्धा । (२) बैर, शत्रुता ।

लागत—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] वह धन जो किसी वस्तु को तैयार करने में व्यय हो ।

क्रि. अ. (१) लागू या चरितार्थ होते हैं । उ.—जेते अपराध जगत लागत सब मोहीं—१-१२४ । (२) चोट या आघात होते (ही) । उ.—लागत बान देव-गति पाई—९-५९ । (३) अनुभव करता है । उ.—ग्वाल-बाल गाइनि के भीतर नैंकहुँ डर नहिं लागत—४२० । (४) उपयुक्त है, फबती है, ठीक जान पड़ती है । उ.—यह उपमा कछु लागत—६४५ । (५) सफल या कारगर होता है । उ.—सूर गारुड़ी गुन करि थाके, मंत्र न लागत थर तैं—७४४ । (६) स्थिर या एकाग्र होता है, चैन या शांति पाता है । उ.—नैंकहुँ कहुँ मन न लागत काम-धाम बिसारि—७७७ ।

लागति - क्रि. अ. [हिं. लगना] लगती है । उ.—(क) मुख मुसकाति महा छबि लागति—६३० । (ख) स्रवननि सुनत अधिक रुचि लागति—७१२ ।

लागन—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] लगने की क्रिया या भाव । उ.—लग लागन नहिं पावत स्याम —८७८ ।

लागना, लागनो—क्रि. अ. [हिं. लगना] लगना ।

लागि—अव्य. [हिं. लगना] (१) कारण, हेतु । उ.—(क) माखन लागि उलूखल बाँध्यौ—३४७ । (ख) बचन लागि मैं है कियौ जसुमति को पय पान-११४० । (२) वास्ते, लिए । उ.—धन-सुत-दारा काम न आवैं, जिनहिं लागि आपुनपौ हारौ—१-८० ।

क्रि. अ. [हिं. लगना] सटकर ।

मुहा०—कानि लागि कह्यौ—कान के पास मुंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले जाकर बहुत धीरे से कहा। उ.—कान लागि कह्यौ जननि जसोदा वा घर मैं बलराम—१०-२४०।

लागी—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) लगी, पहुँची। उ. —कहुँ धौं चोट न लागी—१०-७९। (२) आरोपित हो गयी। उ.—तब तैं हत्या मद कौं लागी। यहै जानि सब सुर-मुनि त्यागी—९-१७३।

लागु—संज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] लगान, राजकर। उ. —लीजै लागु यहाँ तें अपनो जो कछु राज को अंस —२५०७।

लागू—वि. [हिं. लगना] (१) जो लगने योग्य हो। (२) जो चरितार्थ हो सके।

लागे—अव्य. [हिं. लगना] (१) कारण। (२) वास्ते।

क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) चोट पहुँचायी, आघात किया। उ.—सुरुचि के बचन बान सम लागे —४-६। (२) लग गये, संपादित करने लगे।

प्र०—कहन लागे—कहने में समर्थ हो गये। उ.—कहन लागे मोहन मैया-मैया—१०-१५५। लागे खान—खाने लगे। उ.—बन फल लए मँगाइ कैं, रुचि करि लागे खान—४३८।

लागै—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) सफल या कारगर होता है। उ.—तंत्र न फुरै मंत्र नहिं लागै, चले गुनी गुन हारे—३२५४। (२) लगे, हो। उ.—तुमरे कुल कौं बेर न लागै होत भस्म संघात—९-७७।

लागौं—क्रि. अ. [हिं. लगना] लगती हूँ।

प्र०—लागौं पाउँ—पैर छूती हूँ, विनम्र निवेदन करती हूँ। उ.—अरि अरि सुंदर नारि सुहागिनि लागौं तेरैं पाउँ—९-४४।

लाग्यो, लाग्यौ—क्रि. अ. [हिं. लगना] (१) लगा, जान पड़ा। उ.—अँचवत पय तातो जब लाग्यौ रोवत जीभि डढ़ै—१०-१७४। (२) लग गया।

मुहा०—मन लाग्यौ—प्रीति हो गयी। उ.—(क) जाकौ मन लाग्यौ नँदलालहिं ताहि और नहिं भावै (हो)—२-१०। (ख) सूरदास चित ठौर नहीं कहुँ मन लाग्यौ नँदलालहिं सौं—११८०।

लाघव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लघु होने का भाव, लघुता। (२) थोड़ा होने का भाव, कमी। (३) हाथ की सफाई या फुर्ती।

लाघवी—संज्ञा स्त्री. [सं. लाघव+ई] फुर्ती, शीघ्रता।

लाचार—वि. [फ़ा.] मजबूर, विवश।

क्रि. वि. मजबूर या विवश होकर।

लाचारी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] मजबूरी, विवशता।

लाची—संज्ञा स्त्री. [हिं. इलायची] इलायची।

संज्ञा पुं.—एक तरह का धान।

लाछी—संज्ञा स्त्री. [सं. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लाज—संज्ञा स्त्री. [सं. लज्जा] (१) शर्म, लज्जा। उ.—(क) माधौ जू, मोहिं काहे की लाज—१-१५०। (ख) सूर पतित पावन करि लीजै बाँह गहे की लाज—१-२१९।

मुहा०—लाज गए—मर्यादा नष्ट हो जाने पर। उ.—लाज गए कछु काज न सरिहै बिछुरत नंद के तात—२५३१। लाज लगाई—मर्यादा या प्रतिष्ठा नष्ट की। उ.—ग्वालनि कैं सँग भोजन कीन्हौं, कुल कौं लाज लगाई—१-२४४। लाज रखना—प्रतिष्ठा बचाना।

(२) चिंता, ध्यान। उ.—हरि कह्यौ, मोहिं बिरद की लाज—७-२।

लाजति—क्रि. अ. [हिं. लाजना] लज्जित होती है। उ.—(क) तड़ित दसन-छबि लाजति—६३८। (ख) कोटि मदन-छवि लाजति - ६४५।

लाजना, लाजनो—क्रि. अ. [हिं. लाज+ना] लज्जित होना।

क्रि. स. लज्जित करना।

लाजनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. लाज+नि] लाज से, लज्जा के कारण। उ.—(क) निरखि कुरुँख उन बालनि की दिसि लाजनि अँखियनि गोवै - ३४७। (ख) मोहिं कहति आनि जब नारी, बोलि जाति नहिं, लाजनि मारी—३९१। (ग) ब्रज बनिता सब चोर कहति, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ—३९९।

लाजवंत—वि. [हिं. लाज+वंत] शर्मदार।

लाजवाब—वि. [फ़ा.] (१) अनुपम। (२) निरुत्तर।

लाजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चावल। (२) खील, लावा।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाज] शर्म, लज्जा। उ.—(क)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनतैं कछू भयौ नहिं काजा। यह सुनि-सुनि मोहिं आवत लाजा—५२१। (ख) बालक सुनत होइ जिय लाजा—२४५९।

लाजिम, लाजिमी—[अ. लाज़िम] (१) **उचित**। (२) **आवश्यक**। (३) **अनिवार्य**।

लाजी—क्रि. स. [हिं. लाजना] **लज्जित किया**। उ.—कुल कुठार, जननी कत लाजी—२६६५।

लाजैं—क्रि. अ. [हिं. लाजना] **लज्जित होते हैं**। उ.—अंबर गहत द्रौपदी राखी, पलटि अंध-सुत लाजैं—१-३६।

लाजै—क्रि. अ. [हिं. लाजना] **लज्जित होता है**। उ.—तेरौ मुख देखत ससि लाजै—७१८।

लाजौं—क्रि. स. [हिं. लाजना] **लज्जित करूँ, लाज लगाऊँ**। उ.—तौ लाजौं गंगा जननी कौं, सांतनुसुत न कहाऊँ—१-२७०।

लाज्यो, लाज्यौ—क्रि. अ. [हिं. लाजना] **लज्जित हुआ**। उ.—स्यामा बदन देखि हरि लाज्यौ—२३००।

लाट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **एक प्राचीन देश जो गुजरात का भाग-विशेष था**। (२) **एक अनुप्रास**।

संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) **मोटा-ऊँचा खंभा**। (२) **वैसी बनावट या इमारत**।

लाटानुप्रास—संज्ञा पुं. [सं.] **एक शब्दालंकार**।

लाटी—संज्ञा स्त्री. [अनु. लट लट] **वह स्थिति जिसमें मुँह का थूक और होंठ सूख जाते हैं**।

लाठी—संज्ञा स्त्री. [सं. यष्टि, प्रा० लट्ठी] **डंडा, लकड़ी**।

मुहा०—लाठी चलना—**मार-पीट होना**।

लाड, लाड़—संज्ञा पुं. [सं. लालन] **प्यार, दुलार**। उ.—(क) आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड़ लड़ायौ—२-३०। (ख) प्रभु कै लाड़ बदति नहिं काहू—२९७७।

मुहा०—लाड़ उतारना या उतार कर धर देना—**मारपीट कर ढिठाई दूर कर देना**। धरिहैं लाड़ उतारि—**उचित दंड देकर ढिठाई दूर कर देंगी**। उ.—करि लरकनि के बर करत यह पुनि धरिहैं लाड़ उतारि—११२५।

लाड़लड़ैता, लाड़लड़ैतो, लाड़लड़ैतौ · वि. [हिं. लाड़ + लड़ाना] **प्यारा, दुलारा, लाड़ला**। उ.—पठै देहु मेरौ लाड़लड़ैतो वारौं ऐसी हाँसी।

लाड़ला, लाडला—वि. [हिं. लाड़] **प्यारा-दुलारा**।

लाड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. लाड़] **दूल्हा, वर**।

लाड़िली, लाडिली—वि. स्त्री. [हिं. लाड़ला, लाडला] **प्यारी, दुलारी**।

संज्ञा स्त्री. **प्यारी, दुलारी बेटी**। उ.—व्याकुल भई लाड़िली मेरी, मोहन देहु जिवाइ—७५९।

लाड़िले, लाडिले—वि. [हिं. लाड़ला, लाडला] **प्यारे, दुलारे**। उ.—तुम जागौ मेरे लाड़िले गोकुल सुख-दाई—१०-२०९।

संज्ञा पुं.—**प्यारा-दुलारा पुत्र**।

लाड़िलो, लाड़िलौ, लाडिलो, लाडिलौ—वि. [हिं. लाड़ला, लाडला] **प्यारा, दुलारा**।

संज्ञा पुं. **प्यारा-दुलारा पुत्र**। उ.—नंदराइ कौ लाड़िलौ जीवै कोटि बरीस—१०-२७।

लाड़ू—संज्ञा पुं. [हिं. लड्डू] **लड्डू, मोदक**। उ.—(क) खीर खाँड़ घृत लावनि लाड़ू—३९६। (ख) स्याम दरस लाड़ू करि दीन्हो, प्रेम ठगौरी लाइ—पृ. ३२६ (५७)।

लात—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) **पैर, पद**।

मुहा०—लात देना—**लात रखना**। दै लात—**पैर रखकर**। उ.—कैसैं कहति लियौ छीकें तैं ग्वाल-कंध दै लात—१०-२९०। लात फटकना—**पैर से आघात करना**। फटक्यौ लात—**पैर से आघात किया**। उ.—नैंकु फटक्यौ लात, सबद भयौ आघात, गिरयौ भहरात सकटा सँहारयौ—१०-६२। लात पसारना—(१) **पैर फैलाना**। (२) **(स्थिति या हैसियत देख-कर) व्यय आदि करना**। (अपनो पट देखि) पसारहिं लात—(१) **अपना वस्त्र देखकर पैर फैलाता है**। (२) **अपनी हैसियत या स्थिति को देखकर काम करता है**। उ.—हम तन हेरि चितै अपनौ पट देखि पसारहि लात—३२८२।

(२) **पैर से किया गया प्रहार या आघात**।

मुहा०—लात खाना—(१) **पैर की ठोकर सहना**। (२) **मार खाना**। लात चलाना—**लात से**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठोकर देना । लात मारना—तुच्छ या निरर्थक समझकर लेने या पाने की इच्छा न करना । लात मार कर खड़ा होना—बहुत अस्वस्थता के पश्चात् स्वस्थ होना ।

लाता—संज्ञा पुं. [हिं. लात] पैर, पद । उ.—गौतम की नारि तरी नैंकु परसि लाता—१-१२३ ।

लाद—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] (१) लादन की क्रिया। (२) आंत, अँतड़ी । (३) पेट ।

मुहा०—लाद निकलना—तोंद निकलना ।

लादत—क्रि. स. [हिं. लादना] लादता है ।

यौ०—लादत-जोतत—लादने और जोतने के अवसर पर । उ.- लादत-जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूंड़ दुरैहौ—१-३३१ ।

लादना, लादनो—क्रि. स. [सं. लब्ध, प्रा. लद्ध+ना] (१) किसी पर बहुत सी चीजें रखना । (२) (वाहन आदि को) भार से युक्त करना । (३) कर्तव्य या दायित्व का भार रखना ।

लादि—क्रि. स. [हिं. लादना] (भार या सामान) रखकर या लादकर । उ.—करि हियाव यह सौंज लादि कै हरि कै पुर लै जाहि—१-३१० ।

लादी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] लादने की गठरी ।

लाध—संज्ञा पुं. [सं. लाभ] प्राप्ति, लाभ ।

लाधना, लाधनो—क्रि. स. [सं. लब्ध, प्रा. लद्ध+ना] पाना, प्राप्त करना ।

लाधो, लाधौ—क्रि. स. [हिं. लाधना] पाया, प्राप्त किया। उ.—(क) छिन छिन परसत अंग मिलावत प्रेम प्रगट ह्वै लाधौ—२५०८ । (ख) सो सुख सिव सनकादि न पावत जो सुख गोपिन लाधो—२७५८ ।

लानत—संज्ञा स्त्री. [अ. लअनत] धिक्कार ।

लाना—क्रि. अ. [हिं. लेना+आना] (१) ले आना । (२) सामने रखना । (३) पैदा करना ।

क्रि. स. [सं. लाय=आग+ना] आग लगाना ।

क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाना ।

लाने—अव्य. [हिं. लाना=लगाना] लिए, वास्ते ।

लानो—क्रि. अ. [हिं. लाना] (१) ले आना । (२) सामने रखना । (३) पैदा या उत्पन्न करना ।

क्रि. स. [हिं. लाय+ना] आग लगाना

क्रि. स. [हिं. लगाना] लगाना ।

लाप—संज्ञा पुं. [सं. आलाप] आलाप ।

लापता—वि. [अ. ला+पता] (१) जिसका पता न चल रहा हो, खोया हुआ । (२) गायब ।

लापरवा, लापरवाह—वि. [अ. ला+फ़ा. परवाह] (१) जिसे किसी बात की चिंता न हो । (२) जो सावधान न हो ।

लापरवाही—संज्ञा स्त्री. [हिं. लापरवाह] (१) बेफिक्री, निश्चितता । (२) असावधानी ।

लापसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपसी] भुने हुए आटे में शरबत डालकर बनाया गया मीठा खाद्य । उ.—लुचुई ललित लापसी सोहै—२३२१ ।

लाबर—वि. [हिं. लबार] (१) झूठा । (२) गप्पी ।

लाभ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्राप्ति। (२) नफा, फायदा। उ.—(क) लाभ हानि कछु समुझत नाहीं—१-४६। (ख) दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम, कतहिं मरत हौ रोई—१-२६२ । (३) भलाई, उपकार ।

लाभकर, लाभकारी—वि. [सं.] गुणकारक ।

लाभदायक—वि. [सं.] जिससे लाभ हो ।

लाभा—संज्ञा पुं. [सं. लाभ] नफा, फायदा । उ.—जुगल कमल-पद नख मनि-आभा । संतनि मन संतत यह लाभा—६२५ ।

लाम—संज्ञा पुं. [फ़ा. लाम] (१) फौज, सेना ।

मुहा०—लाम बांधना—चढ़ाई, आक्रमण या युद्ध के लिए सेना सजाना ।

(२) भीड़-भाड़, समूह ।

मुहा०—लाम बांधना—(१) बहुत सा मजमा इकट्ठा कर लेना । (२) बहुत सा सामान जमा कर लेना । (३) खूब लंबी-चौड़ी बातें करना ।

क्रि. वि. [सं. लंब] दूर, फासले पर ।

लामन—संज्ञा पुं. [देश.] (१) लँहगा । (२) स्त्रियों की धोती या साड़ी का निचला भाग ।

लामा—वि. [हिं. लंबा] जो लंबाई में बड़ा हो ।

संज्ञा पुं. [तिब्बती] बौद्धों का तिब्बती धर्माचार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लामी—वि. स्त्री. [हिं. लंबा] लंबी । उ.—अजहुँ न आइ मिले इहिं औसर अवधि बतावत लामी—३०८० ।

लामैं—क्रि. वि. [हिं. लाम = दूर] फासले पर ।

लाय—संज्ञा स्त्री. [सं. अलात, प्रा० अलाय] (१) ज्वाला, लपट । (२) आग, अग्नि ।

लायक—वि. [अ. लायक़] (१) उचित, ठीक । (२) उपयुक्त । उ.—(क) तुम लायक भोजन नहिं गृह मैं—१-२४१ । (ख) उपमा काहि देउँ, को लायक—६८८ । (ग) जा लायक जो बात होइ सो तैसियै तासों कहिये—३२१७ । (३) सुयोग्य, सत्पात्र । उ.—सूर स्याम रति पति के नायक सब लायक बनवारी—१९५८ । (४) समर्थ । उ.—तुम बिनु ऐसो कौन नंद-सुत यह दुख दुसह मिटावन लायक—९५४ ।

लायकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लायक + ई] (१) लायक होने का भाव । (२) सुयोग्यता, सत्पात्रता ।

लायचा—संज्ञा पुं. [देश.] एक बढ़िया रेशमी कपड़ा ।

लायची—संज्ञा स्त्री. [हिं. इलायची] इलायची ।

लायो, लायौ—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) (ध्यान, चित्त या मन) लगाया । उ.—(क) हठी प्रहलाद चित चरन लायौ—१-५ । (ख) जिन जिन हरि चर-ननि चित लायौ—४-८ । (ग) हरि-पद अंबरीष चित लायौ—९-५ । (२) (भाव) उत्पन्न या अनुभव किया । उ.—इंद्र देखि इरषा मन लायौ—५-२ । (३) लगाया, जड़ा । उ.—लोह तरैं, मधि रूपा लायौ—७-७ । (४) लगाया, छिड़का, स्पर्श कराया । उ.—काम पावक जरत छाती लोन लायौ आनि—३३५५ । (५) आच-रण या व्यवहार किया । उ.—सूर स्याम भुज गही नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनैं ढँग लायौ—१०-३४० ।

लार—संज्ञा स्त्री. [सं. लाला] (१) वह पतला थूक जो कभी-कभी तार के रूप में मुंह से निकलता है ।

मुहा०—मुँह से लार टपकना—पाने की बहुत इच्छा होना ।

(२) पतला थूक जो प्रायः बच्चों और बूढ़ों के मुँह से तार के रूप में बहता है । उ.—सो मुख चूमति महरि जसोदा दूध लार लपटाने (हो)—१०-१२८ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. तार अनु.] कतार, पंक्ति ।

अव्य. [मारवाड़ी लैर] (१) संग, साथ । उ.—जन्म-जन्म के दूत तिरोवन को नहिं लार लगाए—२९९६ । (२) पीछे ।

मुहा०—लार लगाना—फँसाना ।

लारनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. लार] लार से । उ.—सूरज प्रभु को लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४ ।

लाल—संज्ञा पुं. [सं. लालक] (१) प्यारा-दुलारा बालक । उ.—चलत लाल पैंजनि के चाइ—१०-१३३ । (२) पुत्र, बेटा । उ.—लाल, हौं वारी तेरे मुख पर ।....। सूर कहा न्यौछावर करियै अपने लाल ललित लरखर पर—१०-९३ । (३) प्रिय व्यक्ति या प्रियतम के लिए संबोधन ।

संज्ञा पुं. [सं. लालन] प्यार-दुलार ।

संज्ञा स्त्री. [सं. लालसा] चाह, इच्छा ।

संज्ञा पुं. [फ़ा.] मानिक, माणिक्य (रत्न) ।

मुहा०—लाल उगलना—प्यारी-प्यारी बातें करना ।

वि.—(१) सुर्ख, अरुण, रक्त वर्ण । उ.—खेलत फिरत कनकमय आँगन पहिरे लाल पनहियाँ—९-१९ ।

यौ०—लाल अंगारा या लाल भभूका—बहुत ज्यादा लाल ।

(२) बहुत अधिक क्रुद्ध ।

मुहा०—लाल आँखें करना, दिखाना या निकालना—बहुत क्रोध से देखना । लाल पड़ना—क्रुद्ध होना । लाल-पीला होना—गुस्सा होना । लाल हो जाना या होना—क्रोध में भर जाना ।

(३) (चौसर की) जो (गोटी) सब चालें चलकर बीच के घर में पहुँच जाय । (४) जो (खिलाड़ी) सबसे पहले जीत जाय ।

संज्ञा पुं.—एक प्रसिद्ध छोटी चिड़िया जिसकी मादा 'मुनिया' कहलाती है ।

लालच—संज्ञा पुं. [सं. लालसा] (१) लोभ, लोलुपता । उ.—(क) तिहिं लालच कबहूँ कैसैंहूँ, तृप्ति न पावत प्रान—१-१०३ । (ख) लोह गहैं लालच करि जिय को, औरौ सुभट लजावै—९-१५२ । (ग) मनो भुजंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमी-रस-लालच फिरि फिरि चाहत सुभग सुचंदहि—१०-१०७।

मुहा०—लालच देना—लोभ या लालसा उत्पन्न करना, प्रलोभन देना। लालच निकालना—लोभ के लिए दंड देने को प्रस्तुत होना।

लालचहा—वि. [हिं. लालच] लालची, लोभी।

लालची—वि. [हिं. लालच+ई] लोभी। उ.—लोचन लालची भारी—पृ. ३३४ (३८)।

लालड़ी—संज्ञा पुं. [हिं. लाल+ड़ी] लाल या अरुण रंग का एक नग।

लालन—संज्ञा पुं. [सं.] लाड़-प्यार।

संज्ञा पुं. [हिं. लाला] (१) बालक, कुमार। (२) प्यारा-दुलारा पुत्र। उ.—(क) लालन, वारी या मुख ऊपर—१०-९१। (ख) अब कहा करौं निछावरि, सूरज सोचति अपनैं लालन जू पर—१०-९२।

लालना, लालनो—क्रि. स. [सं. लालन] दुलार करना।

लाल-बुझक्कड़—संज्ञा पुं. [हिं. लाल+बूझना] किसी बात का अट्कलपच्चू मतलब या कारण बतानेवाला।

लालमन, लालमनि, लालमनी—संज्ञा पुं. [हिं. लाल+मणि] (१) श्रीकृष्ण। (२)एक तरह का तोता।

लालमुनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाल+मुनियाँ] 'लाल' पक्षी की मादा।

लालमुनैयनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. लालमुनियाँ] 'लालों' (मादाओं) की। उ.—मनु लाल मुनैयनि पाँति पिंजरा तोरि चली—१०-२५।

लालरि, लालरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लालड़ी] एक तरह का लाल नग।

लालस—वि. [सं.] ललचाया हुआ, लोलुप।

लालसा, लालसाई—संज्ञा स्त्री. [सं. लालसा] (१) चाह। उ.—निसि दिन इनि नैननि को री नँदलाल की लागी रहै लालसाई—१४१०। (२) उत्सुकता।

लाल सिखी—संज्ञा पुं. [हिं. लाल+शिखा] मुर्गा।

लालसी—वि. [हिं. लालसा] (१) इच्छुक। (२) उत्सुक।

लाला—संज्ञा पुं. [सं. लालक] (१) सम्मानसूचक संबोधन या शब्द।

मुहा०—लाला-भइया करना—(१) सम्मान के साथ संबोधन या बात करना। (२) प्रेम या स्नेह के साथ संबोधन या बात करना।

(२) छोटों के लिए प्यार-दुलार सूचक संबोधन।

मुहा०—लाला-मुनुआँ करना—दुलार-प्यार के साथ बात या संबोधन करना।

(३) प्रिय व्यक्ति, विशेषतः नायक, के लिए संबोधन। उ.—मैं तो लाला की छबि नेकहु न जोही—८३८।

संज्ञा स्त्री. [सं.] लार, थूक।

संज्ञा पुं. [फ़ा.] पोस्त का लाल रंग का फूल।

वि. [हिं. लाल] लाल रंग का।

लालायित—वि. [सं.] ललचाया हुआ, उत्सुक।

लालिची—वि. [हिं. लालच] लोभी। उ.—सूरदास प्रभु की सोभा को अति लालिची रहे ललचाने—१६९७।

लालित—वि. [सं.] पाला-पोसा हुआ।

लालित्य—संज्ञा पुं. [सं.] सौंदर्य।

लालिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] लाली, ललाई, अरुणिमा।

लालीं—वि. स्त्री. [हिं. लालना] पाली-पोसी या दुलार की हुईं। उ.—काहे न दूध देहिं ब्रज-पोषन हस्त-कमल की लालीं—६१३।

लाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. लाल+ई] (१) ललाई, लालिमा उ.—अपनी लाली खोइ पीक की लाली पलकनि पायौ—१९६३। (२) मान-मर्यादा।

लाले—संज्ञा पुं. [सं. लाला] अरमान, अभिलाषा।

मुहा०—लाले पड़ना—देखने या पाने को तरस जाना।

लाल्हा—संज्ञा पुं. [हिं. लाल+साग] 'मरसा' का साग। उ.—चौलाई, लाल्हा अरु पोई—३९६।

लाव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लवा पक्षी। (२) लौंग।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाय=आग] आँच, अग्नि।

संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) रस्सा। डोरी।

क्रि. स. [हिं. लाना] लाओ, लाने का अभ्यास करो। उ.—सूरदास सोइ समष्टि करि व्यष्टि दृष्टि मन लाव—२-३८।

लावक—संज्ञा पुं. [सं.] लवा पक्षी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लावण्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लवण का भाव या धर्म। (२) सौंदर्य, सलोनापन।

लावत—क्रि. स. [हिं. लाना] (१) आरोपित करता है। उ.—हारि-जीति कछु नैंकु न समुझत लरिकनि लावत पाप—१०-२१४। (२) स्पर्श करता है।

मुहा०—रसना तारू सौं नहिं लावत—बराबर रट लगाये जाता है, जरा चुप नहीं होता। उ.—रसना तारू सों नहिं लावत पीवै पीव पुकारत—पृ० ३३० (९८)।

(३) चिपटाता है। उ.—झुलत झुलावत कंठ लावत बढ़ी आनँद बेलि—२२७८।

लावति—क्रि. स. [हिं. लाना] (१) करती है। उ.—परसहु बेगि, बेर कत लावति भूखे सारँग पानि—३९५। (२) लगाती या स्पर्श करती है। उ.—निरखत अंक स्याम सुंदर के बार-बार लावति लै छाती—२९७७।

लवदार—वि. [हिं. लाव = आग + फ़ा. दार] (१) तोप में बत्ती लगाने वाला। (२) (तोप) जो छोड़ी जाने को तैयार हो।

लावन—संज्ञा पुं. [सं. लावण्य] सौंदर्य।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लावना] 'लाने' की क्रिया या भाव।

लावनता—संज्ञा स्त्री. [सं. लावण्य + ता] सुंदरता।

लावना—क्रि. स. [हिं. लाना] लाना।

क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) स्पर्श कराना। (२) जलाना।

लावनि—संज्ञा स्त्री. [सं. लावण्य] सौंदर्य, सलोनापन। उ.—सुन्दर मुख की बलि-बलि जाऊँ।....। लावनि-निधि गुन निधि सोभा-निधि निरखि निरखि जीवन सब गाऊँ—६६३।

लावनी—संज्ञा स्त्री. [देश.] एक प्रकार का लोक-गीत।

लावनो—क्रि. स. [हिं. लावना] लाना।

क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) स्पर्श कराना। (२) जलाना।

लाव-लश्कर—संज्ञा पुं. [फ़ा] सेना और उसके साथ रहनेवाले लोग तथा सबका सामान।

लावहिंगे—क्रि. स. [हिं. लावना] चिमटायेंगे। उ.—रति-सुख अंत भरौंगी आलस अंकम भरि उर लावहिंगे—२१५८।

लावहि—क्रि. स. [हिं. लावना] (१) या स्पर्श कराता है।

मुहा०—जरे ऊपर लोन लावहि—जो पीड़ित या दुखी है, उसकी पीड़ा या दुख और भी बढ़ाने का उपक्रम करता है। उ.—जरे ऊपर लोन लावहि को है उनते बावरे—३२६०। (२) आरोपित करता है। उ.—लावहि साँचेन को खोर—१०-३।

लावहु—क्रि. स. [हिं. लावना] (१) सटाते हो। उ.—कैसैं बछरा थन लै लावहु—४०१। (२) लगाओ या स्पर्श कराओ।

मुहा०—जिनि लोन लावहु—नमक मत लगाओ, दुखी और पीड़ित का दुख या पीड़ा बढ़ाने वाले कार्य न करो और बात मत कहो। उ.—जाहु जिनि अब लोन लावहु देखि तुमही डरी—३३१८।

लावा—संज्ञा पुं. [सं.] 'लवा' पक्षी।

संज्ञा पुं. [सं. लाजा] खील, लाई।

मुहा०—लावा मेलना—(१) जादू-टोना करना। लावा मेलि दए हैं—जादू-टोना कर दिया है, जादू फेर दिया है। उ.—लावा मेलि दए हैं तुमकौं बकत रहो दिन-आखो—३०२१।

संज्ञा पुं. [हिं. लवना] खेत काटने वाला मजदूर।

लावा परछन—संज्ञा पुं. [हिं. लावा + परछना] विवाह की एक रीति जिसमें सप्तपदी के पूर्व कन्या के हाथ की डलिया में उसका भाई धान का लावा डालता है।

लावारिस—वि. [अ.] (१) जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो। (२) जिसका कोई मालिक न हो।

लावै—क्रि. स. [हिं. लाना] (१) करता है। उ.—(क) देवै कौं बड़ौ महर, देत न लावै गहर—१०-३९। (ख) हरत बिलंब न लावै—१०-१२६। (२) (एकटक) देखता है। उ०—लटकति बेसरि जननि की इकटक चख लावै—१०-७२। (३) लगाये, मले। उ.—कोढ़ी लावै केसरि—३०२६।

लाश—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] मृतक देह, शव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाष—संज्ञा पुं. [सं. लाक्षा] लाख, लाह। उ.—लाष भवन बैठार दुष्ट ने भोजन में विष दीन्हो—सारा. ७७७।

लाषना, लाषनो—क्रि. स. [हिं. लखना] देखना, ताड़ना।

लास—संज्ञा पुं. [फ़ा. लाश] मुरदा, शव।

संज्ञा पुं.[सं. लास्य] (१) नृत्य-विशेष। (२) मटक।

लासक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नाचनेवाला। (२) मयूर।

लासकी—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाचनेवाली, नर्तकी।

लासा—संज्ञा पुं. [हिं. लस] (१) लसदार चीज। (१) वह लसदार पदार्थ जिसे बाँस या डाली पर लगाकर बहेलिया पक्षी पकड़ता है। उ.—चितवन ललित लकुट लासा लट काँपै अलक तरंग—पृ. ३२५ (३९)।

मुहा०—लासा लगाना—(फँसाने के लिए) लालच या प्रलोभन देना। लासा होना—हमेशा साथ लगे रहना।

लासानी—वि. [अ.] बेजोड़, अनुपम।

लासि—संज्ञा स्त्री. [सं. लास्य] नृत्य-विशेष।

लासु,लासू, लास्य—संज्ञा पुं. [सं. लास्य] (१) नृत्य। (२) (विशेषतया स्त्रियों का) नृत्य-विशेष।

लाह—संज्ञा स्त्री. [सं. लाक्षा] लाख, चपड़ा।

संज्ञा पुं. [सं. लाभ] नफा, फायदा, लाभ।

संज्ञा स्त्री. [देश.] चमक, कांति।

लाहक—वि. [हि. लहना+क] लहने या चाहनेवाले। उ.—प्रेम-प्रीति के लाहक—१-१९।

लाहन—संज्ञा पुं. [देश.] ढोने की मजदूरी।

लाहल—संज्ञा पुं. [अ. लाहौल] लाहौल।

लाहा—संज्ञा पुं. [सं. लाभ] फायदा, लाभ। उ.—और बनिज मैं नाहीं लाहा, होति मूल मैं हानि—१-३१०।

लाही—संज्ञा स्त्री [हिं. लाख, लाह] एक कीड़ा जो लाख उत्पन्न करता है।

वि. मटमैले लाल रंग का।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लावा] खील, लाजा, लावा।

लाहु, लाहो, लाहौ—संज्ञा पुं. [सं.लाभ] नफा, फायदा। उ.—(क) सूर पाइ यह समौ, लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार—१-६८। (ख) जनि कछु प्रिया सोच मन करिहौ, मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु—९-३४। (ग) यहै मोहिं लाहौ, नैननि दिखरावौ—१०-९५।

लाहौल—संज्ञा पुं. [अ.] एक वाक्य का पहला शब्द जिसका प्रयोग प्रायः घृणा सूचित करने के लिए किया जाता है।

लिंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चिह्न, लक्षण। (२) साधन-हेतु। (३) मूल प्रकृति। (४) पुरुष की गुप्त इंद्रिय। (५) शिव की मूर्ति-विशेष। (६) व्याकरण में वह भेद जिससे शब्द के स्त्री-पुरुष-वर्ग का ज्ञान होता है। (७) एक पुराण।

लिंगदेह—संज्ञा पुं. [सं] वह सूक्ष्म शरीर जो स्थूल के नष्ट होने पर भी कर्म-फल भोगने के लिए जीवात्मा के साथ रहता है। उ.—लिंग-देह नृप कौ निज गेह, दस इंद्रिय दासी सौं नेह—४-१२।

लिंगनाश—संज्ञा पुं. [सं.] अंधकार।

लिंगांकि—संज्ञा पुं. [सं.] एक शैव संप्रदाय।

लिंगायत—संज्ञा पुं. [सं.] एक शैव संप्रदाय।

लिंगी—संज्ञा पुं. [सं. लिंगिन्] (१) चिह्नवाला। (२) आडंबर करनेवाला।

संज्ञा स्त्री. [सं. लिंग] छोटा लिंग या पिंड।

लिए—अव्य.—संप्रदान कारकीय चिह्न, के वास्ते। उ.—धन-मद-मूढ़नि अभिमानिनि मिलि लोभ लिए दुर्बचन सहै—१-५३।

क्रि. स. [हिं. लेना] (१) (गोद में) लेकर या लिये हुए। उ.—(क) जसुमति तब नंद बुलावति लाल लिए कनियाँ दिखरावति—१०-९५। (ख) गोद लिए जसुदा नंद-नंदहिं—१०-१०७। (ग) सूरदास प्रभु कौं लिए जसुदा चितै-चितै मुसुकानी—१०-१५३। (२) (साथ) लेकर या लिये हुए। उ.—सखा लिए तहँ गये—४३७।

प्र०—लाइ-लिए—चिपटा लिया। उ.—मोहन कत खिझत अयानी, लिए लाइ हिऐं नंदरानी—१०-१८३। बोलि लिए—बुला लिया। उ.—जागे नंद जसोदा जागी बोलि लिए हरि पास—५१७।

लिक्खाड़—वि. [हिं. लिखना] बहुत लिखनेवाला।

लिखत—संज्ञा स्त्री. [सं. लिखित] लिखी हुई बात।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौ.—लिखत-पढ़त—लिखा-पढ़ी।

क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) लिखता है। (क) चित्रगुप्त जम-द्वार लिखत हैं मेरे पातक झारि—१-१९७। (ख) बरस दिवस करि होत पुरातन फिरि-फिरि लिखत नयौ—१-२९८। (२) लिख लिखकर, लिखते-लिखते। उ.—सुर-तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारैं—१-१८३।

लिखति—क्रि. स. [हिं. लिखना] चित्रित करती हो। उ.—भीति बिना तुम चित्र लिखति हौ, सो कैसैं निबहै री—७७३।

लिखधार—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना + धार] लिखनेवाला, मुंशी। उ.—साँचौ सो लिखधार (लिखहार) कहावै। काया-ग्राम मसाहत करि कै, जमा बाँधि ठहरावै—१-१४२।

लिखन—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लिखावट, लिखा हुआ लेख। (२) भाग्य-लेखा।

लिखना—क्रि. स. [सं. लिखन] (१) चिह्न अंकित करना। (२) लिपिबद्ध करना। (३) चित्रित करना। (४) रचना, बनाना।

लिखनि—संज्ञा स्त्री. [सं. लिखन] (१) लिखावट, लिखा हुआ लेख। (२) कर्म का लेख।

लिखनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लेखनी] कलम।

लिखनो—क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) अंकित करना। (२) लिपि-बद्ध करना। (३) चित्रित करना। (४) रचना।

लिखवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिखाई] (१) लिखावट। (२) लिखने का कार्य या मजदूरी।

लिखवाना, लिखवानो—क्रि. स. [हिं. लिखाना] लिखने का काम दूसरे से कराना।

लिखहार—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना + हार] लिखनेवाला, मुंशी। उ.—साँचौ सो लिखहार कहावै। काया-ग्राम मसाहत करि कै जमा बाँधि ठहरावै—१-१४२।

लिखा—वि. पुं. [हिं. लिखना] (१) लिपिबद्ध। (२) अंकित, चित्रित।

लिखाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिखना] (१) लिखावट।

यौ०—लिखाई-पढ़ाई—विद्याभ्यास, अध्ययन।

(२) लिखने का कार्य या मजदूरी।

लिखाना, लिखानो—क्रि. स. [सं. लिखन] लिखने का काम दूसरे से कराना।

यौ०—लिखाना-पढ़ाना, लिखानो-पढ़ानो—शिक्षा देना।

लिखा-पढ़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिखना-पढ़ना] (१) पत्र-व्यवहार, चिट्ठी-पत्री। (२) कोई बात लिखकर पक्की करना।

लिखार—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना + आर] लिखनेवाला।

लिखावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिखना + आवट] (१) लेख, लिपि। (२) लिखने का ढंग या रीति।

लिखि—क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) लिखकर।

मुहा०—लिखि राखी—भाग्य में लिख दिया है। उ.—जो कछु लिखि राखी नँदनंदन मेटि सकै नहिं कोइ—१-२६२।

(२) अंकित या चित्रित करके। उ.—(क) मनौं चितेरैं लिखि-लिखि काढ़ी—३९१। (ख) मनौ चित्र की सी लिखि काढ़ी—६४७। (ग) हरि के चलत देखियत ऐसी मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी—२५३५। (घ) नँदनंदन ब्रज छाँड़ि कै को लिखि पूजै भीति—३४४३। (ङ) चित्ररेखा सकल जगत के नृपन की छिनिक में मुरति तब लिखि दिखाई—१० उ०-३४।

लिखित—वि. स्त्री. पुं. [सं.] लिपिबद्ध की हुई।

संज्ञा पुं.—(१) लिखी हुई बात। (२) प्रमाणपत्र।

लिखी—वि. स्त्री. [हिं. लिखना] चित्रित, अंकित। उ.—मनहुँ चित्र की सी लिखी मुखहिं न आवै बोल —१००८।

लिखेरा—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना] लिखनेवाला।

लिखै—क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) लिपिबद्ध करे। उ.—लिखै गनेस जनम भरि मम कृत—१-१२५। (२) चित्रित या अंकित करता है। उ.—तेरो चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह गँवावै—२०३२।

लिख्यो, लिख्यौ—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना] (भाग्य में) लिखा हुआ लेख, भाग्य-लेख। उ.—(क) अखिल लोकनि भटकि आयौ, लिख्यौ मेटि न जाई—१-३१६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) मैं अपराध कियौ सिसु मारे लिख्यौ न मेटचौ जाई—१०-४।

क्रि. स. अंकित या चित्रित किया। उ.—लिख्यौ काजर नाग द्वारैं, स्याम देखि डराई—४९८।

लिच्छिवि, लिच्छिवी—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन राजवंश।

लिटाना—क्रि. स. [हिं. लेटना] दूसरे को लेटने में प्रवृत्त करना।

लिट्‌ट—संज्ञा पुं. [देश.] मोटी रोटी जो केवल आग पर ही सेंकी जाती है।

लिडार—वि. [देश.] डरपोक, कायर।

लिपट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिपटना] लिपटने की क्रिया या भाव।

लिपटना, लिपटनो—क्रि. अ. [सं. लिप्त] (१) चिमटना, चिपटना। (२) गले लगना। (३) (कार्य में) जी-जान से जुट जाना।

लिपटाना, लिपटानो—क्रि. स. [हिं. लिपटना] (१) चिपटाना, चिमटाना। (२) गले लगाना। (३) (कार्य में) जी-जान से जुटा देना।

लिपना, लिपनो—क्रि. अ. [हिं. लीपना] (१) पोता जाना। (२) स्याही जैसी चीज का फैल जाना।

लिपवाना, लिपवानो—क्रि. स. [हिं. लीपना] लीपने का काम दूसरे से कराना।

लिपाइ—क्रि. स. [हिं. लिपाना] (फर्श आदि पर किसी चीज का) लेप करवा कर। उ.—चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौक पुराइ—१०-९५।

लिपाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लीपना] लीपने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लिपाऊँ—क्रि. स. [हिं. लिपाना] लीपने का काम दूसरे से करा दूँ। उ.—चंदन भवन लिपाऊँ—८७६।

लिपाना, लिपानो—क्रि. स. [हिं. लीपना] तह चढ़वाना, लेप कराना, पुता देना।

लिपायो, लिपायौ—क्रि. स. [हिं. लिपाया] (गच-विशेष को) पुता-लिपा दिया या लेप करा दिया। उ.—(क) चंदन भवन लिपायौ—१०-४। (ख) भोजन कौं निज भवन लिपायौ—१०-२४८।

लिपावो, लिपावौ—क्रि. स. [हिं. लिपाना] (गच-विशेष को) पुता-लिपा लो, या लेप करा दो। उ.—ललिता बिसाखा अंगना लिपावो—२३९५।

लिपि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) अक्षर लिखने की पद्धति। (२) लिखा हुआ लेख। (३) लिखावट।

लिपिक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लिखनेवाला। (२) मुंशी।

लिपिकार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लिखनेवाला। (२) प्रतिलिपि करनेवाला।

लिपिबद्ध—वि. [सं.] लिखा हुआ, लिखित।

लिप्त—वि. [सं.] (१) लिपा-पुता। (२) लीन।

लिप्सा—संज्ञा स्त्री. [सं.] इच्छा, चाह।

लिबड़ना, लिबड़नो—क्रि. अ. [अनु] कीचड़ आदि से लथपथ होना।

क्रि. स. कीचड़ आदि से लथपथ करना।

लिबास—संज्ञा पुं. [अ.] पोशाक, पहनावा।

लियाकत—संज्ञा स्त्री. [अ. लियाक़त] (१) योग्यता। (२) गुण। (३) शिष्टता, शील।

लियो, लियौ—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) उठाया, धरा। उ.—गाइ-गोप-गोपीजन-कारन गिरि कर-कमल लियौ—१-१२१। (२) (जन्म) धारण किया। उ.—जब तैं जग जनम लियौ, जीव नाम पायौ—१-१२४। (३) ठाना, निश्चित किया। उ.—अत्रि पुत्र-हित बहु तप कियौ, तासु नारिहूँ यह ब्रत लियौ—४-३। (४) अपनाया। उ.—असी-इक कर्म बिप्र कौ लियौ—५-२। (५) हाथ में रक्खा। उ.—स्नान करि अंजली जल जबै नृप लियौ—८-१६।

प्र०—अँचल लियौ—अंचल से कुछ मूँह ढक लिया। उ.—रुद्र कौं देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अँचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ—८-१०।

(६) (अंक या गोद में) उठा लिया। उ.—बालक लियौ उछंग दुष्टमति—१०-५०। (७) (चुराकर या छिपाकर) उतार लिया। उ.—कैसैं कहति लियौ छींकें तैं, ग्वाल-कंध दै लात—१०-२९०।

लिलाट, लिलाटा, लिलार लिलारा—संज्ञा पुं. [सं. ललाट] (१) माथा, मस्तक। उ.—(क) तिलक लिलार—१०-२४। (ख) मुकुलित अलक लिलार—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११८२। (२) भाग्य। उ.—सुनहु सखी री दोष न काहू जो बिधि लिखो लिलार—२६८७।

लिलारे—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. लिलार] माथे पर। उ.—हृदय हार बिन ही गुन लंकृत मृगमद मिल्यौ लिलारे—२०८८।

लिलोही—वि. [सं. लल] लालची, लोभी।

लिव—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौ] लगन।

लिवाइ, लिवाई—क्रि. स. [हिं. लिवाना] लेकर।

प्र०—गई लिवाइ—साथ ले गयी। उ.—स्याम कौं भीतर गई लिवाइ—१०-२२६। जाहु लिवाइ—साथ ले जाओ। उ.—जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं—४२५। चलौ लिवाइ—साथ ले चलो। उ.—(क) धेनु बन चलौ लिवाइ—६१९। (ख) ऊधो, संगहि चलौ लिवाइ—३१३४। ल्याए लिवाई—साथ ले आये। उ.—भरत दया ता ऊपर आई। ल्याये आस्रम ताहि लिवाई—५-३।

लिवाऊँ—क्रि. स. [हिं. लिवाना] थमाऊँ, पकड़ाऊँ। उ.—सूरदास भीषम परतिज्ञा अस्त्र लिवाऊँ (गहावन) पैज करी—१-२६८।

लिवाना, लिवानो—क्रि. स. [हिं. लेना का प्रेर०] (१) लेने का काम दूसरे से कराना। (२) थमाना, पकड़ाना।

क्रि. स. [हिं. लाना का प्रेर.] लाने का काम दूसरे से कराना।

लिवाल—वि. [हिं. लेना + वाला] लेने या खरीदनेवाला।

लिवावन—संज्ञा पुं. [हिं. लिवाना] साथ ले जाने। उ. कीरति महरि लिवावन आई—७५७।

लिवैया—वि. [हिं. लेना] लेने या खरीदनेवाला।

वि. [हिं. लाना] लानेवाला।

लिहाज—संज्ञा पुं. [अ. लिहाज़] (१) व्यवहार में किसी बात का ख्याल या ध्यान। (२) कृपादृष्टि। (३) मुरव्वत, संकोच। (४) पक्षपात। (५) पद, सम्मान, संबंध आदि का ध्यान। (६) शर्म, लाज।

मुहा०—लिहाज उठना, टूटना या न रहना—(१) पद-मर्यादा आदि का ध्यान न रह जाना। (२) हया-शर्म न रह जाना।

लिहाड़ा—वि. [देश.] बेकार, खराब, निकम्मा।

लिहाड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिहाड़ा] निंदा, उपहास।

मुहा०—लिहाड़ी लेना—निंदा या उपहास करना।

लिहाफ—संज्ञा पुं. [अ. लिहाफ़] भारी रजाई।

लिहित—वि. [हिं. लेह] चाटता हुआ।

लीक—संज्ञा स्त्री. [सं .लिख्] (१) चिह्न, लकीर, रेखा।

मुहा०—लीक करके—निश्चयपूर्वक। लीक खिंचना—(१) अटल और दृढ़ होना। (२) व्यवहार की मर्यादा बँधना। (३) साख बँधना। लीक खाँची—साख बँध गयी है। उ.—सूरदास भगवंत भजत जे तिनकी लीक चहूँ दिसि (जुग) खाँची—१-१८। लीक खींचकर—जोर देकर, दृढ़तापूर्वक। कहति लीक मैं खाँची—प्रतिज्ञा करके अथवा निश्चयपूर्वक कहती हूँ। उ.—सूर स्याम तेरे बस राधा, कहति लीक मैं खाँची—१४७५।

(२) गहरी पड़ी हुई लकीर या रेखा। उ.—मनौ कनक कसौरिया पर लीक सी लपटाति—१०-१८४। (३) गाड़ी का पहिया चलने से बननेवाली रेखा। (४) (पगडंडी जैसा) मार्ग का पड़ जाने वाला चिह्न।

मुहा०—लीक चलना या लीक पकड़ना—पगडंडी के सहारे आगे बढ़ाना। लीक पीटना—चली आने वाली प्रथा का किसी न किसी तरह निर्वाह करना।

(५) मर्यादा, महिमा। (६) लोक-व्यवहार की बँधी हुई परंपरा। उ.—नँदनंदन के नेह-मेह जिनि लोक लीक लोपी—३४८७। (७) प्रथा, रीति। (८) सीमा, प्रतिबंध। (९) कलंक, लांछन। उ.—तिन देखत मेरौ पट काढ़त लीक लगै तुम लाज—१-२२५। (१०) गिनती, गणना।

लीकति—संज्ञा स्त्री. [हिं. लीक] लीक।

लीके—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. लीक] रेखा को।

मुहा०—करे कहति हौं लीके—निश्चय या प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूँ। उ.—और अंग की सुधि नहिं जानै करे कहति हौं लीके—१४००

लीकौ—संज्ञा स्त्री. [हिं. लीक] लकीर, रेखा।

मुहा०—खैंचि कहति हौं लीकौ—निश्चय या प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ। उ.—कोउ न समरथ अघ करिबे कौं, खैंचि कहत हौं लीकौ—१-१३८।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीख—संज्ञा स्त्री. [सं. लिक्षा] जूँ का अंडा।

लीचड़—वि. [देश.] (१) निकम्मा। (२) पिंड या पीछा न छोड़नेवाला।

लीची—संज्ञा स्त्री. [चीनी लीचू] एक पेड़ या उसका फल।

लीझी—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) उबटन के साथ छूटा हुआ मैल। (२) रस निचुड़ा चीफुर, सीठी।

वि.—(१) रस-रहित। (२) निकम्मा।

लीजतु—क्रि. स. [हिं. लेना] लेता है। उ.—(क) रवि, ससि, राहु सँजोग बिना ज्यौं, लीजतु है मन मानि—२-३८। (ख) जदपि मोहिं बहुतै समुझावत सकुचन लीजतु मानि—२७४७।

लीजै—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) बचा लीजिए। उ.—मोह-समुद्र सूर बूड़त है, लीजै भुजा पसारि—१-१११।

प्र०—राखि लीजै—बचा लीजिए, रक्षा कीजिए। उ.—(क) नाथ सारंगधर, कृपा करि दीन पर डरत भव-त्रास तैं राखि लीजै—१-१२०। (ख) सूर स्याम अबके इहिं औसर आनि राखि व्रज लीजै—२८१९।

(२) (आक्रमण या सामना करके अथवा घेरकर) नष्ट कर दीजिए। उ.—जा सहाइ पांडव-दल जीतैं अर्जुन कौं रथ लीजै—१-२६९। (३) ग्रहण कीजिए, अपनाइए। उ.—राजा कह्यौ, कहा अब कीजै, द्विजनि कह्यौ, चरनोदक लीजै—९-५। (४) ठानिए, निश्चित कीजिए। उ.—महाराज दसरथ मन धारी। अवध-पुरी कौ राज राम दै, लीजै व्रत बनचारी—९-३०। (५) माँग लीजिए, ले लीजिए। उ.—कान्हा बलि आरि न कीजै, जोइ-जोइ भावै सोइ-सोइ लीजै—१०-१८३।

लीजौ—क्रि. स. [हिं. लेना] कहना, बताना। उ.—मेरौ नाम नृपति सौं लीजौ, स्याम कमल लै आए—५८३।

प्र०—टेरि लीजै—बुला लेना, पुकार लेना। उ.—सूरदास प्रभु कहत सौंह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि—४०१।

लीद—संज्ञा स्त्री. [देश.] पशुओं का मल।

लीन—वि. [सं.] (१) जो किसी चीज में समा गया हो। (२) कार्य आदि में रत, संलग्न या तत्पर। (३) ध्यान-मग्न। (४) तन्मय, मग्न। उ.—सूरदास प्रभु प्रान न छूटत अवधि आस में लीन - ३२०६।

लीनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) समा जाने की क्रिया या भाव। (२) कार्य आदि में संलग्नता या तत्परता। (३) मग्नता, तन्मयता। (४) ध्यान-मग्नता।

लीना—वि. स्त्री. [सं. लीन] ध्यानमग्न, अनुरक्त। उ.—अति ही चतुर सुजान जानमनि वा छवि पै भई मैं लीना—१४९१।

लीनी—क्रि. स. स्त्री. [हिं. लेना] ले ली।

प्र०—गोद करि लीनी—गोद में उठा लिया। उ.—देखी परी जोगमाया, बसुदेव गोद करि लीनी—१०-४।

लीने—क्रि. स. [हिं.] लिये (हुए)। उ.—पैठि गए मुख ग्वाल धेनु-बछरा सँग लीने—४३१।

लीनो, लीनौ—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) भजा, जपा, उच्चारण किया। उ.—जो कबहुँ नर-जन्म पाइ, नहिं नाम तुम्हारौ लीनौ—१-१२९। (२) (जन्म आदि) धारण किया। उ.—परशुराम जमदग्नि-गेह लीनौ अवतारा—९-१३।

प्र०—धरि लीनौ—(१) रूप या वेश बनाया या धारण किया। उ.—अति मोहिनी रूप धरि लीनौ—१०-५१। (२) धारण या स्थापित कर लिया, रख लिया। उ.—छिन इक मैं भृगुपति प्रताप बल करषि हृदय धरि लीनौ—९-११५।

लीन्यो, लीन्यौ—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) पाया, प्राप्त किया। उ.—हरि, तुम बलि कौं छलि कहा लीन्यौ ८-१४। (२) लिया, पकड़ा, उठाया। उ.—तरुवर तब इक उपारि हनुमत कर लीन्यौ—९-९६।

लीन्ही—क्रि. स. [हिं. लेना] ली, ले ली। उ.—देह जमानति लीन्ही—१-१९६।

प्र०—हरि लीन्ही—हरण कर लिया। उ.—तहाँ बसत सीता हरि लीन्ही रजनीचर अभिमानी—९-१९९। सहि लीन्ही—सहन कर लिया। उ.—सुनहु सूर चोरी सहि लीन्ही—१०-३०३। लीन्हीं फेंट छुड़ाइ—फेंट छुड़ा ली। उ.—रिस करि लीन्हीं फेंट छुड़ाइ—५३९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीन्हें—अव्य. [हिं. लीन्ह = लिया] (१) लिए, वास्ते। (२) के कारण, फेर या चक्कर में पड़कर। उ.—कंचन मनि तनि काँचहिं सैंतत या माया के लीन्हें।

लीन्हे—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) ले लिया, लिये (हुए)। उ. - हाथ धनुष लीन्हे – ९-६२।

प्र०—लीन्हे साथ-साथ ले लिया, (किसी के) साथ चलना स्वीकार कर लिया। उ.—अंतरजामी प्रीति जानिकैं लछिमन लीन्हे साथ—९-३७। लीन्हे गोद – गोद में ले लिया, गोद में लेने को उठा लिया। उ.—जननि उबटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सौं लीन्हे गोद –१०-४२। गाढ़ै करि लीन्हे – मजबूती से पकड़ लिया। उ.—दोउ भुज धरि गाढ़ैं करि लीन्हे –३०-३१७। लीन्हे रोग—रोग-धोग (अपने ऊपर) ले लिये या लेकर (शिशु की) कल्याण-कामना की। उ.—सूर स्याम गाइनि सँग आए मैया लीन्हे रोग—४९३।

लीन्हैं—अव्य. [हिं. लिए या लेना] के लिए, (में फँसे होने) के कारण। उ.—माया-मोह-लोभ के लीन्हैं, जानी न बृंदाबन रजधानी—१-१४९।

लीन्हों, लीन्हौं—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) ग्रहण किया। उ.—कछु दिन पत्र भच्छ करि बीते, कछु दिन लीन्हो पानी—सारा. ७५। (२) ठाना, (प्रण आदि का) निश्चय किया। उ.—धर्म-पुत्र जब जग्य उपायौ, द्विज मुख ह्वै पन लीन्हौं—१-२९।

लीन्हो, लीन्हौ—क्रि. स. [हिं. लिया] (१) भार ग्रहण किया, उठाया। उ.—(क) सात दिवस गिरि लीन्हो —१-१७। (२) (वार करने को) उठाया। उ.—(क) रथ तैं उतरि चक्र कर लीन्हौ—१-२७१। (ख) श्री रघुनाथ धनुष कर लीन्हौ—९-५९। (३) (आचमन या पान) किया। उ.—भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ—१०-२३८। (४) पकड़ा, थाम लिया। उ.—अटपट आसन बैठि कै गो-धन कर लीन्हौ—४०९।

प्र०—गहि लीन्हौ—पकड़ लिया। उ.—पग सौं चाँपि घींच बल तोरयौ, नाक फोरि गहि लीन्हौ—५५८। झपि जल लीन्हौ—पानी में कूद पड़े। उ.—खेलत खेलत जाइ कदम चढ़ि झपि जमुना जल लीन्हौ—५७६।

लीपना—क्रि. स. [सं. लेपन] गोबर, मिट्टी आदि का गाढ़ा या पतला लेप या घोल दीवार या फर्श पर चढ़ाना या पोतना।

मुहा०—लीपना-पोतना—(१) सफाई करना। (२) सारा काम बिगाड़ देना।

लीपि—क्रि. स. [हिं. लीपना] (किसी चीज का) घोल फर्श आदि पर चढ़ाकर। उ.—(क) चौक चंदन लीपि क धरि आरती सँजोइ—१०-२६। (ख) अस्थल लीपि पात्र सब धोए—१०-२६०।

लीवड़, लीबर—वि. [हिं. लिबड़ना] कीचड़ आदि से लथपथ।

लीबे—संज्ञा पुं. [हिं. लेना] (गोद में) लेन की क्रिया या भाव। उ.—ऐसो भाग होइगो कबहूँ स्याम गोद में लीबे—२९६६।

लीयो, लीयौ—क्रि. स. [हिं. लेना] लिया।

प्र०—माँगि लीयौ—माँग लिया। उ.—कान्ह माँगि सीतल जल लीयौ—३९६।

लीर—संज्ञा स्त्री. [सं. चीर] धज्जी, चिथड़ा।

लील—वि. [सं. नील] नीले रंग का, नीला। उ.—लीलांबुज तनु लील बसन मनि चितयो न जात घूम के भोरे—३२४८।

लीलकंठ—संज्ञा पुं. [सं. नीलकंठ] नीलकंठ पक्षी।

लीलत—क्रि. स. [हिं. लीलना] लीलता है, लीलते (ही)। उ.—जैसे मीन अहार लोभ ते लीलत परे गरे—पृ. ३२८ (७४)।

लीलना, लीलनो – क्रि. स. [हिं. निगलना] निगलना।

लीलम—संज्ञा पुं. [हिं. नीलम] नीलमणि, नीलम।

लीलया—क्रि. वि. [सं.] (१) खेल ही खेल में। (२) सहज ही में, अनायास।

लीलांबर—संज्ञा पुं. [सं. नीलांबर] नीला अंबर या वस्त्र।

लीलांबुज—संज्ञा पुं. [सं. नीलांबुज] नीला कमल। उ.—लीलांबुज तनु लील बसन मनि चितयो न जात धूम के भोरे—३२४८।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) खेल, क्रीड़ा। उ.—लीला करत कनक मृग मारचौ—९-११५। (२) प्रेम-विनोद। (३) अद्भुत् या रहस्यमय व्यापार। उ.—लीला सुभग सूर के प्रभु की व्रज में गाइ जियौ—४८६। (४) ईश्वरावतारों के चरित्रों का अभिनय।

संज्ञा पुं. [सं. नील] काले रंग का घोड़ा।

वि.—नीले रंग का, नीला।

लीलाधर—संज्ञा पुं. [सं.] लीलावतारी, विष्णु या उनके प्रमुख अवतार, राम और कृष्ण। उ.–निर्गुन ब्रह्म सगुन लीलाधर सोई सुत करि मान्यौ—१०-२६३।

लीलापुरुषोत्तम—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

लीलामय—वि. [सं.] (१) विनोद या क्रीड़ायुक्त। (२) रहस्यपूर्ण।

लीली—वि. स्त्री. [सं. नील] नीले रंग की, नीली। उ.—बंदन सिर ताटंक गंड पर रतन जटित मनि लीली—१८४६।

लीले—संज्ञा पुं. [सं. नील] काले रंग का घोड़ा। उ. —लीले सुरंग कुमैत स्याम तोहि परदे सब मन रंग —१० उ०-६।

लीलैव—क्रि. वि. [सं. लीला+इव] (१) लीला-रूप में। (२) खिलवाड़ में। (३) बहुत सहज रूप में।

लीलो, लीलौ—वि. [हिं. नीला] नीले रंग का।

लीह—संज्ञा स्त्री. [देश.] जमीन, भूमि।

लुँगाड़ा—वि. [देश.] लुच्चा, लफंगा।

लुंचन—संज्ञा पुं. [सं.] नोचने या काटने की क्रिया।

लुंचित—वि. [सं.] नोचा या काटा हुआ।

लुंज, लुंजा, लुंजैं—वि. [सं. लुंचन] (१) लूला-लँगड़ा। उ.—ए ऊवौ कहियौ माधौ सों मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं—२७२१। (२) बिना पत्ते का (पेड़), ठूँठ।

लुंठक—वि. [सं.] लुटेरा।

लुंठना, लुंठनो—क्रि. स. [सं. लुंठन] (१) लुढ़कना। (२) लूटना।

लुंठित—वि. [सं.] (१) गिरा या लुढ़कता हुआ। (२) जो लूटा-खसोटा गया हो।

लुंड—संज्ञा पुं. [सं. रुंड] बिना सिर का धड़।

लुंडा—वि. [सं. रुंड] जिसके पूँछ और पंख न हों।

लुआठ, लुआठा—संज्ञा पुं. [सं. लोक+काष्ठ] जलती या सुलगती हुई लकड़ी।

लुआठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुआठा] जलती हुई लकड़ी।

लुआब—संज्ञा पुं. [अ.] लस, लासा।

लुआर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लू] तप्त वायु, लूक।

लुकंजन—संज्ञा पुं. [सं. लोकांजन] वह अंजन जिसको लगानेवाला तो सबको देखता है, पर उसे कोई नहीं देख सकता।

लुकंदर—वि. [हिं. लुकना] छिपनेवाला।

लुक—संज्ञा पुं. [सं. लोक] लपट, ज्वाला।

लुकना, लुकनो—क्रि. अ. [सं. लुक] छिपना।

लुकाई—क्रि. अ. [हिं. लुकना] छिपकर।

प्र०—रहे लुकाई—छिप गये। उ.—टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई—४६२।

लुकाए—क्रि. अ. [हिं. लुकना] छिपे।

प्र०—रहे लुकाए—छिप गये। उ.—डर तें तब हरि रहे लुकाए—२४३३।

लुकाट—संज्ञा पुं. [सं. लकुत्र] एक पेड़ या उसका फल।

संज्ञा पुं. [हिं. लुआठा] जलती हुई लकड़ी।

लुकाना—क्रि. स. [हिं. लुकना] छिपाना।

क्रि. अ.—लुकना, छिपना।

लुकाने—क्रि. अ. [हिं. लुकाना] छिपे, छिप गये। उ.—कोउ कहै ग्वाल-बाल सँग खेलत बन में जाइ लुकाने —३४७१।

प्र०—रहे लुकाने—छिप गये। उ.—यह बिपरीत जानि तुम जन की अंतर दै, बिच रहे लुकाने–१-२१७।

लुकानो—क्रि. स. [हिं. लुकना] छिपाना।

क्रि. अ. लुकना, छिपना।

लुकाय—क्रि. स. [हिं. लुकाना] छिपाकर।

प्र०—चाहति लेन लुकाय—छिपा लेना चाहती है। उ.—मनो जलद को दामिनीगन चाहति लेन लुकाय—२२८४।

लुकार—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुक+आर] लपट, ज्वाला।

लुकारी—संज्ञा स्त्री. [सं.] जलती लकड़ी या फूस।

लुकावत—क्रि. स. [हिं. लुकाना] छिपाता है। उ.— (क) सूर स्याम यह सुनि मुसक्याने, अंचल मुखहिं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुकावत—१०-२२२। (ख) चाँपी पूँछ लुकावत अपनी जुवतिनि कौं नहिं सकत दिखाय—५५५।

लुकावैं—क्रि. स. [हिं. लुकाना] छिपाती हैं। उ.—सकुचि अंग जल पैठि लुकावैं—७९९।

लुकावैगी—क्रि. स. [हिं. लुकाना] छिपायेगी, प्रकट न करेगी। उ.—मोहिं कहत नहिं, काहि कहैगी, कब लौं बातें लुकावैगी—२१७७।

लुके—क्रि. अ. [हिं. लुकना] छिप गये। उ.—टूटत धनु नृप लुके जहाँ तहँ—९-२३।

लुकेठा—संज्ञा पुं. [हिं. लुक] जलती लकड़ी या फूस।

लुक्क—संज्ञा पुं. [लुक] लपट, ज्वाला।

लुक्कायित—वि. [सं.] लुका या छिपा हुआ।

लुगदी—संज्ञा स्त्री. [देश.] गीली वस्तु की पिंडी।

लुगरा—संज्ञा पुं. [हिं. लूगा + ड़ा] (१) कपड़ा। (२) फटा-पुराना कपड़ा, लत्ता। (३) छोटी चादर, ओढ़नी।

वि. [देश.] चुगली खानेवाला।

लुगरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुगरा] फटी धोती या ओढ़नी।

संज्ञा स्त्री. [देश.] चुगली।

लुगाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोग] (१) स्त्री। (२) पत्नी।

लुगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूगा] (१) फटी-पुरानी धोती या ओढ़नी। (२) लहँगे का चौड़ा किनारा।

लुग्गा—संज्ञा पुं. [हिं. लूगा] (१) कपड़ा। (२) धोती।

लुचई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुचुई] मैंदे की पतली पूरी। उ.—लुचई ललित लापसी सोहै—२३२१।

लुचकना, लुचकनो—क्रि. स. [सं. लुंचन] छीनना।

लुचवाना, लुचवानो—क्रि. स. [सं. लुंचन] नोचवाना।

लुचुई—संज्ञा स्त्री. [सं. रुचि, मा० लुचि] मैंदे की पतली पूरी। उ.—(क) लुचुई लपसी सद्य जलेबी—१०-२२७। (ख) लुचुई लपसी घेवर खाजा—३९६।

लुच्चा—वि. [हिं. लुचकना] (१) छीन-झपट कर ले जाने वाला। (२) दुराचारी, लफंगा।

लुच्ची—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुचुई] मैंदे की पूरी।

वि. स्त्री. [हिं. लुच्चा] दुराचारिणी (स्त्री)।

लुटंत—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूट] लूट।

लुटकना, लुटकनो—क्रि. अ. [हिं. लटकना] इधर-उधर पड़ा होना।

लुटत—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूट] लूट।

लुटना, लुटनो—क्रि. अ. [सं. लुट्] (१) लूट लिया जाना। (२) सर्वस्व खो जाना।

क्रि. अ. [हिं. लुठना] (१) लोटना। (२) लुढ़कना।

लुटयो, लुटयौ—क्रि. स. [हिं. लुटाना] लुटा दिया। उ.—धर्म-सुधन लुटयौ—१-६४।

लुटाइ—क्रि. स. [हिं. लुटाना] उदारतापूर्वक फेंककर कि जो चाहे ले ले। उ.—कंस को भँडार सब देत हैं लुटाइ कै—२६२८।

लुटाऊँ—क्रि. स. [हिं. लुटाना] उदारता पूर्वक (मुट्ठी भर-भरकर) बाँटूँ या वितरण करूँ। उ.—जो मोहन मेरे बस होवहिं हीरा लाल लुटाऊँ—पृ. ३०६ (७६)।

लुटाए—क्रि. स. [हिं. लुटाना] उदारतापूर्वक फेंके कि जो चाहे ले ले। उ.—रजक मारि हरि प्रथम ही नृप बसन लुटाए—२५७९।

लुटाना, लुटानो—क्रि. स. [हिं. लूटना] (१) लूट या छीन लेने देना। (२) बिना मूल्य के दे देना। (३) व्यर्थ फेंकना या व्यय करना। (४) मुट्ठी भर-भरकर फेंकना।

लुटायो, लुटायौ—क्रि. स. [हिं. लुटाना] (१) दूसरे को लूटने या छीन लेने दिया, लुटा दिया। उ.—(क) कटक जात ही नगर ताको लुटायो—१० उ.-३५। (ख) काहू कौ दधि-दूध लुटायौ—१०-३४०।

लुटावत—क्रि. स. [हिं. लुटाना] (१) लुटाते या लूट लेने देते हैं। उ.—महर-महरि ब्रज-हाट लुटावत—१०-२२। (२) उदार होकर बाँटते या वितरण करते हैं। उ.—अति रस-रासि लुटावत-लूटत—६८६।

लुटावन—संज्ञा पुं. [हिं. लुटावना] लुटाने की क्रिया या भाव। उ.—गोकुल हाट-बजार करत जु लुटावन रे—१०-२८।

लुटावना, लुटावनो—क्रि. स. [हिं. लुटाना] (१) छीनने या लूटने देना। (२) बिना मूल्य देना। (३) व्यर्थ फेंकना या बरबाद करना। (४) उदारता से बाँटना।

लुटिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोटा] छोटा लोटा।

लुटेरा—वि. [हिं. लूटना] छीन या लूट लेनेवाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुठना, लुठनो—क्रि. अ. [सं. लुंठन] (१) (भूमि पर) लोटना। (२) लुढ़कना।

लुठाना, लुठानो—क्रि. स. [हिं. लुठना] (१) (भूमि पर) लोटाना। (२) लुढ़काना।

लुठायो, लुठायौ—क्रि. स. [हिं. लुठाना] लुढ़का दिया। उ.—बालक अजौं अजान, न जानै केतिक दह्यौ लुठायौ – ३५६।

लुढ़कना, लुढ़कनो—क्रि. अ. [हिं. लुठना] (१) (समतल या ढालू सतह पर) गेंद की तरह ऊपर-नीचे होते हुए बढ़ना। (२) गिर पड़ना।

लुढ़काना, लुढ़कानो–क्रि. स. [हिं. लुढ़कना] (१) (समतल या ढालू सतह से) इस तरह छोड़ना कि चक्कर खाते या ऊपर-नीचे होते आगे बढ़ जाय। (२) गिरा देना।

लुढ़त—क्रि. अ. [हिं. लुढ़ना] गिरता है। उ.—बरही मुकुट लुढ़त अवनी पर नाहिंन निज भुज भरतु—२२५३।

लुढ़ना, लुढ़नो—क्रि. अ. [हिं. लुढ़कना] (१) लुढ़कना। (२) गिरना।

लुढ़ाइ, लुढ़ाई—क्रि. स. [हिं. लुढ़ाना] ढरकाकर।

प्र०—दियौ लुढ़ाई—लुढ़का दिया। उ.—माखन खाइ खवायौ ग्वालनि जो उबरचौ सो दियौ लुढ़ाई —१०-३०३।

लुढ़ाना, लुढ़ानो—क्रि. स. [हिं. लुढ़काना] लुढ़काना।

लुढ़ाय—क्रि. स. [हिं. लुढ़ाना] लुढ़काकर।

प्र०—देत लुढ़ाय—लुढ़का देता है। उ.—बरजैं न माखन खात कबहूँ दह्यौ देत लुढ़ाय—२७५६।

लुतरा—वि. [देश.] (१) चुगलखोर। (२) दुष्ट।

लुत्थ—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोथ] लोथ।

लुत्फ—संज्ञा पुं. [अ. लुत्फ़] (१) मजा। (२) स्वाद।

लुनना, लुननो—क्रि. स. [सं. लवन] (१) फसल काटना। (२) दूर या नष्ट करना।

लुनाइ, लुनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोना+आई] सुंदरता।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लुनना] फसल काटने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लुनिए, लुनिऐ—क्रि. स. [हिं. लुनना] फसल काटिए। उ.—(क) जैसोइ बोइयै, तैसोइ लुनिऐ, कर्मन भोग अभागे—१-६१। (ख) जैसो बीज बोइए तैसो लुनिए—३३३१।

लुनेरा—वि. [हिं. लुनना] फसल काटनेवाला।

लुनैं—क्रि. स. [हिं. लुनना] (फसल) काटे। उ.—बालि छाँड़ि कै सूर हमारे अब नरवाई को लुनैं—३१५८।

लुन्यो, लुन्यौ—क्रि. स. [हिं. लुनना] (फसल) काटो। उ.—सूर सुरपति सुन्यो बयो जैसो लुन्यो प्रभु कहा गुन्यो गिरि सहित बैहै—९४४।

लुपना, लुपनो—क्रि. अ. [सं. लुप्त] छिप जाना।

लुप्त वि. [सं.] (१) गुप्त। (२) अदृश्य। (३) नष्ट।

लुबध, लुबुध—वि. [सं. लुब्ध] मुग्ध, मोहित।

लुबधत, लुबुधत—क्रि. स. [हिं. लुबुधना] मुग्ध होता है।

लुबधति, लुबुधति—क्रि. स. [हिं. लुबुधना] मुग्ध होती है। उ.—जैसे लुबधति कमलकोस मैं भ्रमरा की भ्रमरी—पृ. ३२८ (८२)।

लुबधना, लुबधनो, लुबुधना, लुबुधनो—क्रि. अ. [हिं. लुबुध+ना] मुग्ध या मोहित होना।

क्रि. स. मुग्ध या मोहित करना।

लुबधा, लुबुधा—वि. [सं. लुब्ध] मुग्ध, आसक्त।

वि. [सं. लोभ] लोभी।

लुबधीं, लुबुधीं—क्रि. अ. [हिं. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुईं। उ.—ब्रजललना देखतिं गिरिधर कौं। .... । लुबधी स्याम सुँदर कौं—६४७।

लुबधी, लुबुधी—क्रि. अ. [हिं. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुई। उ.—हौं लुबधी मोहन-मुख-बैन—७४२।

लुबधियो, लुबधियौ, लुबुधियो, लुबुधियौ क्रि. अ. [हिं. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुई। उ.—यहि ते जो नेकु लुबुधियो री—३३४५।

लुबध्यो, लुबध्यौ, लुबुध्यो, लुबुध्यौ - क्रि. अ. [हिं. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुआ। उ. - (क) लुबध्यौ स्वाद मीन आमिष ज्यौं—१-१०२। (ख) मनो मध्य खंजन सुक बैठचो लुबध्यो बिंब बिचार—पृ. ३०७ (८४)।

लुब्ध—वि. [सं.] (१) ललचाया या लुभाया हुआ। उ.—(क) अति रस-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौं—१-१११। (ख) इनहिं स्वाद जो लुब्ध सूर सोइ जानत चाखन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारौ—१०-१३५। (ग) लालच-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौं—१-३२८। (२) मुग्ध, मोहित।

लुब्धक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लालच दिखाकर पशु-पक्षियों को पकड़नेवाला, बहेलिया, शिकारी। उ.—सूरदास प्रभु सों मेरी गति जनु लुब्धक कर मीन तरयो—८९१। (२) लोभ या लालच में फँसा हुआ। उ.—ते कहा जानैं पीर पराई लुब्धक अपने कामहिं—३०८५।

लुब्धना, लुब्धनो—क्रि. अ. [हिं. लुबुधना] मुग्ध होना।

लुब्धि—क्रि. अ. [हिं. लुब्धना] लुभाकर।

प्र०—लुब्धि परे—लुभा गये। उ.—चपल नैन मृग मीन कुंज जित अलि ज्यों लुब्धि परे—पृ. ३३४ (३१)।

लुब्धे—क्रि. अ. [हिं. लुब्धना] मुग्ध या मोहित हुए। उ.—नैन बिमुख जन देखे जात न लुब्धे अरुन अधर को—१५७१।

लुब्ध्यो, लुब्ध्यौ—क्रि. अ. [हिं. लुब्धना] मुग्ध या मोहित हुआ। उ.—मन लुब्ध्यो हरि-रूप निहारि—१४१९।

लुभाइ—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझकर।

प्र०—रहे लुभाइ—रीझ गये, मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—(क) अमृत अलि मनु पिवए आए, आइ रहे लुभाइ—३५२। (ख) कूबरी के कौन गुन पै रहे कान्ह लुभाइ।

लुभाईं—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझ गयीं, मुग्ध या मोहित हो गयीं। उ.—निरखि हरि रूप सो सब लुभाईं—१० उ०-३१।

लुभाई—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझकर, रीझी।

प्र०-रहे लुभाई—रीझे, मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ देखि सुर-असुर रहे सब लुभाई—८-८।

लुभाए—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझे, मुग्ध या मोहित हुए। उ.—न ये देखि कै मोहिं लुभाए—८-८।

लुभाना—क्रि. अ. [हिं. लोभ+आना] (१) रीझना, मुग्ध या मोहित होना। (२) लालच या लोभ में पड़ना।

क्रि. स.—(१) रिझाना, मुग्ध या मोहित करना। (२) लोभ या लालच देना। (३) मोह या भ्रम में डालना।

लुभाने—वि. [हिं. लुभाना] मुग्ध, मोहित। उ.—यह उपदेस देहु लै कुबिजहिं जाके रूप लुभाने हो—३००५।

लुभानो—क्रि. अ. [हिं. लोभ+आना] (१) रीझना, मुग्ध या मोहित होना (२) रीझा, मुग्ध हुआ। उ.—सूर स्याम यन तुमहिं लुभानो हरद चून रँग रोचन—१५१७। (३) लोभ या लालच में पड़ना।

क्रि. स. (१) रिझाना, मुग्ध या मोहित करना। (२) लोभ या लालच देना। (३) भ्रम या मोह में डालना।

लुभान्यो, लुभान्यौ—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] लोभ या लालच में पड़ गया। उ.—मन-मधुकर पद-कमल लुभान्यो—१४१७।

लुभाय—क्रि. स. [हिं. लुभाना] भ्रम में डालकर।

प्र०—देति लुभाय—सुध-बुध भुला देती है, मोह या भ्रम में डाल देती है। उ.—सूर हरि की प्रबल माया देति मोहिं लुभाय।

लुभायो, लुभायौ—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] मुग्ध या मोहित हो गया। उ.—इंद्रानी कौं देखि लुभायौ—६-७।

लुभौहाँ—वि. [हिं. लुभाना+औंहा] (१) लुभाने या मोहित करनेवाला। (२) लुब्ध या मोहित होनेवाला।

लुरकना, लुरकनो—क्रि. अ. [सं. लुलन] लटकना।

लुरका—संज्ञा पुं. [हिं. लुरकना] झुमका।

लुरकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लुरका] कान की बाली।

लुरना, लुरनो क्रि. अ. [सं. लुलन] (१) लटकना, हिलना-डोलना। (२) झुक या टूट पड़ना। (३) एकाएक आ जाना। (४) रीझ या लुभा जाना।

लुरियाना, लुरियानो—क्रि. अ. [हिं. लुरना] सप्रेम छूना या स्पर्श करना।

लुरी—संज्ञा स्त्री. [देश.] हाल की ब्यायी गाय।

लुलना, लुलनो—क्रि. अ. [सं. लुलन] हिलना-डोलना।

लुआर, लुवार—संज्ञा पुं. [हिं. लू] लू, लूक।

लुहना, लुहनो—क्रि. अ. [सं. लुभन] लुभाना, रीझना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुहार—संज्ञा पुं. [प्रा० लोहार] लोहे की चीजें बनाने वाला।

लूँ—अव्य. [हिं. लौं] (१) तक। (२) तुल्य।

लू—संज्ञा स्त्री. [सं. लुक] गर्मी की तप्त वायु, लूक।

लूक—संज्ञा स्त्री. [सं. लुक] (१) ज्वाला, लपट। (२) जलती हुई लकड़ी। (३) गर्मी की तप्त वायु, लू। (४) टूटा तारा, उल्का।

लूकट—संज्ञा पुं. [हिं. लुआठा] जलती हुई लकड़ी।

लूकना, लूकनो—क्रि. स. [हिं. लूक + ना] आग लगाना।

क्रि. अ. [हिं. लुकना] छिपना, लुकना।

लूका—संज्ञा पुं. [हिं. लूक] (१) ज्वाला, लपट। (२) जलती हुई लकड़ी।

मुहा० —लूका लगाना—(१) आग लगाना। (२) झगड़ा कराना। मुँह में लूका लगाना मुँह में आग लगाना (गाली)।

लूकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूका] चिनगारी।

लूखा, लूखे—वि. [हिं. रूखा] (१) जिसमें चिकनाहट न हो, रूखा। (२) अप्रसन्न। उ.—कीधौं हमसों कहुँ तुम लूखे हो—२१४१।

लूगड़—संज्ञा पुं. [हिं. लूगा] (१) वस्त्र, अंबर। (२) ओढ़नी।

लूगा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) वस्त्र। (२) धोती।

लूट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूटना] (१) बलपूर्वक छीनना। (२) बल से छीनी गयी संपत्ति या माल।

लूटक—संज्ञा पुं. [हिं. लूट] (१) लूट-मार करनेवाला, डाकू, लुटेरा। (२) कांति या शोभा में बढ़ जाने-वाला।

लूट-खसोट—संज्ञा स्त्री. [हि. लूट + खसोट] माल लूटना और छीनना।

लूटत—क्रि. स. [हिं. लूटना] (१) अन्याय या अनुचित रीति से हरण करता है। उ.—ऐसे अंध, जानि निधि लूटत, परतिय सँग लपटात—२-२४। (२) (सुख या आनंद का) भोग करता है। उ.—अति रस रासि लुटावत लूटत लालचि लाल सभागे—६८६।

लूटति—क्रि. स. [हिं. लूटना] (सुख या आनंद) भोगती है। उ.—ब्रज-मोहन दोउ जेंवत रुचि सौं सुख लूटति नँदरानी—४४२।

लूटन—संज्ञा पुं. [हिं. लूटन] लूटने की क्रिया या भाव। उ.—तौ कत कलि-कलमष लूटन कौं, मेरी देह धरी —१-२११।

लूटना—क्रि. स. [सं. लुट्] (१) भय दिखाकर या बल पूर्वक छीन-झपट लेना। (२) धोखे से या अन्याय पूर्वक धन या माल हरण करना। (३) उचित से बहुत अधिक मूल्य लेना। (४) नष्ट करना। (५) मुग्ध या मोहित करना। (६) (सुख या आनंद) भोगना।

लूटनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूटना] लूटने की क्रिया या भाव। उ.—धनि यह अरस-परस छबि लूटनि महा चतुर मुख भोरे भोरी—पृ. ३१० (४)।

लूटनो—क्रि. स. [सं. लुट्] लूटना।

लूटहु—क्रि. स. [हिं. लूटना] (सुख या आनंद का) भोग करो। उ.—जे दिन गए सु ते गए अब सुख लूटहु मात—१९२५।

लूटा—वि. [हिं. लूट] लुटेरा। उ.—लोभी, लौंद, मुकरवा, झगरू, बड़ौ पढ़ैलौ, लूटा—१-१८६।

लूटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूट] लूटने की क्रिया या भाव, लूट। उ.—(क) गए कंचुकि बँद टूटि लूटि हिरदय सो पाई। (ख) परदा सूर बहुत दिन चलतो दुहुँनि फबती लूटि—२७०६।

क्रि. स. [हिं. लूटना] लूटकर। उ.—लूटि लूटि दधि खात - सारा. ८६४।

प्र०—लूटि लयौ—बलात अपहरण कर लिया। उ.—दगाबाज कुतवाल काम-रिपु सरबस लूटि लयौ —१-६४।

लूटीं—क्रि. स. [हिं. लूटना] माल आदि का अपहरण किया। उ.—बृंदाबन गोवर्धन कुंजनि लूटीं नारि पराई—सारा. ७४०।

लूटैं—क्रि. स. [हिं. लूटना] (सुख या आनंद) भोगती हैं। उ.—कौतुक निरखि सखी सुख लूटैं—२-२५।

लूटौ—क्रि. स. [हिं. लूटना] धन-संपत्ति का अपहरण कर लिया। उ.—धर्म-जमानत मिल्यौ न चाहै, तातैं ठाकुर लूटौ—१-१८५।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लूट्यो, लूट्यौ—क्रि स. [हिं. लूटना] (१) भ्रम या मोह में डालकर नष्ट कर दिया। उ.—इहिं माया सब लोगनि लूटचौ—१-२८४। (२) (सुख या आनंद) भोगा। उ.—सूर स्याम निसि को सुख लूटचो—१९५७।

लूता—संज्ञा पुं. [हिं. लूका] लुआठा।

संज्ञा पुं. [हिं. लूट] लुटेरा।

लूती—संज्ञा स्त्री. [हिं. लूका] जलती हुई लकड़ी।

संज्ञा स्त्री. [सं.] मकड़ी।

लूते—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. लूता] लुआठे से। उ.—बिरह-समुद्र सुखाय कौन बिधि किरचक जोग अगिनि के लूते—३२०५।

लून—संज्ञा पुं. [हिं. लोन] नमक, लवण।

लूनना, लूननो—क्रि. स. [हिं. लुनना] (१) फसल काटना। (२) दूर या नष्ट करना।

लूम संज्ञा पुं. [सं.] (१) (पशु की) पूँछ, दुम। (२) चक्कर, फेरा।

लूमड़—वि. [देश.] जवान, सयाना (व्यंग्य)।

लूमना, लूमनो—क्रि. अ. [सं. लंबन] लटक कर झूलना या हिलना-डोलना।

लूमर—वि. [हिं. लूमड़] सयाना, लंबा-तड़ंगा।

लूमरी—वि. [हिं. लूमर] लंबी-तड़ंगी (युवती)।

लूरना, लूरनो—क्रि. अ. [हिं. लुरना] (१) लटककर हिलना-डोलना। (२) झुक या टूट पड़ना। (३) सहसा आ जाना या उपस्थित हो जाना।

लूला—वि. [सं. लून] (१) बिना हाथ का, लुंजा। (२) बेकाम, असमर्थ।

लूलू—वि. [देश.] उजड्ड, मूर्ख।

लूसना, लूसनो—क्रि. स. [देश.] नाश करना।

लूह, लूहर—संज्ञा स्त्री. [हिं. लू] लूक, लू।

लेंगा—संज्ञा पुं. [हिं. लहँगा] लहँगा।

लेंहड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] दल, झुंड, समूह।

ले—अव्य. [हिं. लेना लेकर] आरंभ होकर।

अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत।

क्रि. स. [हिं. लेना] (१) ग्रहण कर। (२) खरीदकर।

मुहा०—ले देना—खरीद या माँगकर देना। (३) प्राप्त, एकत्र या संचय करके।

मुहा०—ले उड़ना—(१) प्राप्त या एकत्र करके भाग जाना। (२) किसी बात या प्रसंग का संकेत पाकर बहुत-कुछ कह-सुन डालना या अंदाज भिड़ाने लगना। ले चलना—थामकर, उठाकर या साथ करके चलना। ले डालना—(१) चौपट या नष्ट करना। (२) हराना। (३) समाप्त करना, निवटाना। ले-दे करना—(१) इज्जत या तकरार करना। (२) बहुत कोशिश करना। ले-देकर—(१) पाने और देने का हिसाब करके। (२) सब मिलाकर, जोड़-जाड़ करके। (३) बड़ी कठिनता से। ले निकलना—प्राप्त या एकत्र करके भाग जाना। ले पड़ना - अपने साथ जमीन पर गिरा देना। ले पालना—गोद लेना। ले बैठना—(१) बोझ से डूब जाना। (२) खराब या नष्ट करना। (३) कार्य-व्यापार का नष्ट होकर पूँजी समाप्त कर देना। ले भागना—(१) प्राप्त या ग्रहण करके भाग जाना। (२) थोड़ा संकेत या ज्ञान पाकर ही विषय-विशेष में उन्नति कर लेना। ले मरना—अपने साथ ही नष्ट करना।

सम्बोधन—(१) जैसी तेरी इच्छा है, वैसा ही होगा। (२) जो तू नहीं मानता (मानती) तो मैं यहीं तक करता (करती) हूँ। (३) देख, कैसा मजा चखा या (बुरा) फल मिला (व्यंग्य या आक्षेप)।

लेइ—अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत।

क्रि. स. [हिं. लेना] लेकर।

प्र०—लेइ जिवाइ—जीवित कर लेगा। उ.—जो यह संजीवनि पढ़ि जाय, तौ हम सत्रुनि लेइ जिवाइ—९-१७३।

लेई—संज्ञा स्त्री. [सं. लेही] (१) लपसी। (२) आटे या मैदा का पका हुआ लसदार घोल।

लेउ—क्रि. स. [हिं. लेना] लो, ग्रहण करो। उ.—जो भावै लेउ आनी—१०-२०८।

लेउगे—क्रि. स. [हिं. लेना] उच्चरित करोगे, कहोगे, बताओगे। उ. - अब तुम काको नाउँ लेउगे, नाहिन कोऊ साथ—१०-२७९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेऊ—वि. [हिं. लेना] लेने वाला।

लेख—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लिपि। (२) लिखी हुई बात। (३) लिखावट। (४) लेखा।

वि. [सं. लेख्य] लिखने या लेखा करने योग्य।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लीक] पक्की बात।

ल —संज्ञा पुं. [सं.] (१) लिपिकार। (२) रचयिता।

लेखत—क्रि. स. [हिं. लेखना] सोचता-विचारता है। उ.—बड़ी बार भई कोऊ न आई सुर स्याम मन लेखत—८४१।

लेखन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लिखने का कार्य, भाव या विद्या। (३) चित्र खींचने का कार्य, भाव या कला। जल बिनु तरँग भीति बिन लेखन बिन चेतहिं चतुराई —३३१७। (३) हिसाब या लेखा लगाना।

लेखनहार, लेखनहारा—वि. [हिं. लिखना+हार] (१) लिखनेवाला। (२) चित्र खींचनेवाला।

लेखना—क्रि. स. [सं. लेखन] (१) लिखना। (२) चित्र बनाना। (३) हिसाब या लेखा लगाना।

मुहा०—लेखना-जोखना—(१) ठीक ठीक अंदाज लगाना। (२) जाँच-पड़ताल करना।

(४) सोचना, विचारना।

लेखनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] कलम, लिखनी।

लेखनो—क्रि. स. [सं. लेखन] (१) लिखना। (२)सोंचना।

लेखा—संज्ञा पुं. [हिं. लिखना] (१) हिसाब-किताब। उ.—(क) अधिकारी जम लेखा माँगै—१-१८५। (२) आय-व्यय का विवरण। उ.—जमा खरच नीकैं करि राखै, लेखा समुझि बतावै—१-१४२। (३) ठीक ठीक अंदाज। (४) अनुमान।

संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लिखावट। (२) रेखा।

लेखिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लिखनेवाली। (२) रचना करनेवाली।

लेखिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लेखनी] कलम। उ.—सूर तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारैं—१-१८३।

लेखी—क्रि. स. [हिं. लेखना] मानी, ठहरायी, समझी। उ.—जीवनि-आस प्रबल स्रुति लेखी—१-२८४।

लेखैं—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. लेखा] विचार, समझ।

मुहा०—उनहीं के लेखैं—उन्हीं के अनुसार। उ.—कृपा सिंधु उन्हीं के लेखैं मम लज्जा निरबहिऐ —१-११२।

लेखो, लेखौ—संज्ञा पुं. [हिं. लेखा] हिसाब, गणना। उ.—(क) लेखौ करत लाख ही निकसत को गनि सकत अपार—१-१९६। (ख) बाढ़ैं गो-सुत गाइ दूध दधि को कहा लेखौ—९०६।

लेख्य—वि. [सं.] लिखने योग्य।

लेख्यो, लेख्यौ—क्रि. स. [हिं. लेखना] समझा, माना। उ.—पीतांबर अरु स्याम जलद बपु निरखि सुफल दिन लेख्यो—सारा. ३६६।

लेजर, लेजुरि, लेजुरी—संज्ञा स्त्री. [सं. रज्जु, माग० प्रा० लेज्जु] (१) डोरी। (२) कुएँ से पानी खींचने की रस्सी या डोरी।

लेटना, लेटनो—क्रि. अ. [हिं. लोटना] (१) पौढ़ना, लोटना। (२) झुककर गिरना। (३) मर जाना।

लेटाना, लेटानो—क्रि. स. [हिं. लेटना] (१) लेटने को प्रवृत्त करना। (२) मार डालना।

लेत—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) लेता है। उ.—सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ तातैं लेत सवाद—१०-६४। (२) उच्चारण करता है। उ.—दनुज-देव-पसु पच्छी को तू नाम लेत रघुराइ—९-८३। (३) पान करता है। उ.—इच्छा सौं मकरंद लेत मनु अति गोलक के बेष री—१०-१३६।

लेदी—संज्ञा स्त्री. [देश.] एक छोटी चिड़िया।

लेन—संज्ञा पुं. [हिं. लेना] (१) लेने की क्रिया या भाव। उ.—देवकि उर अवतार लेन कह्यो—१०-८५। (२) लहना, पावना, बाकी।

मुहा०—कछु लेन न देन में—कोई संबंध या प्रयोजन न होना। उ.—हम कछु लेन न देन मैं, ये बीर तिहारे—१-२८३।

लेन-देन—संज्ञा पुं. [हिं. लेना+देना] आदान-प्रदान।

लेनहार, लेनहारा—वि. [हिं. लेना+हार] लेनेवाला।

लेना—क्रि. स. [हिं. लहना] (१) प्राप्त या ग्रहण करना। (२) थामना, पकड़ना। (३) खरीदना। (४) जीतना। (५) उधार करना। (६) काम पूरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना। (७) गोद में थामना। (८) स्वागत या अगवानी करना। (९) पहुँचना। (१०) कार्य-भार या दायित्व ग्रहण करना। (११) पीना, पान करना। (१२) धारण या अंगीकार करना। (१३) काटकर अलग रखना। (१४) उपहास से लज्जित करना।

मुहा०—आड़े हाथ (हाथों) लेना—व्यंग्य या भर्त्सना द्वारा लज्जित करना।

(१५) एकत्र या संचय करना।

मुहा०—लेना-देना—रुपया उधार देने-लेने का व्यवसाय। लेना-देना होना—मतलब या सरोकार होना। लेना एक न देना दो—मतलब या सरोकार न होना।

लेनिहार, लेनिहारा—वि. [हिं. लेना+हार] लेनेवाला।

लेने—संज्ञा पुं. [हिं. लेना] पाने, ग्रहण या संचय करने की क्रिया या भाव।

मुहा०—लेने के देने पड़ना—(१) लाभ के बदले हानि होना। (२) कठिन समस्या या विपत्ति का पड़ना।

लेनो—क्रि. स. [हिं. लेना] लेना।

लेप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गाढ़ी गीली वस्तु। (२) उस वस्तु की किसी वस्तु या शरीर के अंग-विशेष पर फैलायी गयी पतली तह। उ.—(क) कुमकुम कौ लेप मेटि, काजर मुख लाऊँ—१-१६६। (ख) मुख दधि-लेप किए १०-९९। (ग) लिए चंदन बहुरि आनि कुबिजा मिली स्याम-अँग लेप कीयो बनाई—२५८४।

लेपत—क्रि. स. [हिं. लेपना] पोतता, मलता या चुपड़ता है। उ.—लेपत देह दही—१०-२९१।

लेपन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लेप की तह चढ़ाने की क्रिया या भाव। उ.—खर कौं कहा अरगजा-लेपन—१-३३२। (२) कोई भी गीली वस्तु पोतने या लगाने की क्रिया या भाव।

लेपना, लेपनो—क्रि. स. [सं. लेपन] (१) लेप की तह चढ़ाना। (२) कोई गीली वस्तु पोतना या लगाना।

लेरुवा—संज्ञा पुं. [सं. लेह] बछड़ा।

लेलिहान—संज्ञा पुं. [सं.] सांप, सर्प।

वि. (१) बार-बार चाटने या चखने वाला। (२) ललचाया या लुभाया हुआ।

लेव—संज्ञा पुं. [सं. लेप्य] (१) लेप। (२) मिट्टी आदि का गाढ़ा घोल। (३) दीवार पर पोतने का गिलावा।

मुहा०—लेव चढ़ना—चरबी बढ़ना, मोटा होना।

क्रि. स. [हिं. लेना] (१) लो, ग्रहण करो। (२) खरीद लो।

लवा—संज्ञा पुं. [सं. लेप्य] (१) लेप। (२) मिट्टी आदि का गाढ़ा घोल। (३) दीवार पर पोतने का गिलावा।

वि. [हिं. लेना] लेनेवाला।

यौ०—लेवा-दई, लेवादेई—लेनदेन, आदान-प्रदान। उ.—लेवादई (लेवादेई) बराबर में है, कौन रंक को भूप—३१८२।

लेवाल—वि. [हिं. लेना+वाला] लेने या खरीदनेवाला।

लेश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अणु। (२) सूक्ष्मता। (३) चिह्न। (४) लगाव, संबंध।

वि. थोड़ा, अल्प।

लेष—संज्ञा पुं. [सं. लेश] लेश।

संज्ञा पुं. [सं. लेख] लेख।

लेषना—क्रि. सं. [हिं. लखना] देखना, ताड़ लेना।

क्रि. स. [हिं. लिखना] लिखना।

लेषनी, लेषिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. लेखनी] कलम।

लेषे—संज्ञा पुं. [हिं. लेखे] अनुमान में, समझ में।

लेस—वि. [सं. लेश] (१) थोड़ा, अल्प। (२) तुच्छ, निकृष्ट उ.—हरि को भजन करौ सबही मिलि और जगत सब लेस।

संज्ञा पुं. अल्पांश, चिह्न। उ.—मोह-निशा को लेस रहचौ नहिं—२-३३।

संज्ञा पुं. [हिं. लासा] चस, चेप।

लेसदार—वि. [हिं. लेस+फ़ा. दार] लसीला, लसदार, चिपचिपा।

लेसना, लेसनो—क्रि. स. [सं. लेश्या] जलाना।

क्रि. स. [हिं. लेस, लस] (१) लगाना, पोतना। (२) चिपकाना, सटाना। (३) चुगली खाना। (४) उत्तेजित करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लह—संज्ञा पुं. [सं.] गाढ़ा घोल, अवलेह।

क्रि. स. [हिं. लेना] लेता है।

लेहन—संज्ञा पुं. [सं. लेहक] चखने या चाटने की क्रिया या भाव। उ.—अस्तुति कर मन हरष बढ़ायो लेहन जीभ कटाय—सारा. १३०।

लेहना, लेहनो—संज्ञा पुं. [हिं. लहना] (१) धन जो वसूल करना हो। (२) धन जो मिलने वाला हो। (३) तकदीर, भाग्य।

क्रि. स. पाना, प्राप्त करना।

क्रि. स. (१) फसल काटना। (२) छीलना, कतरना।

लेहिं—क्रि. स. [हिं. लेना] लेते हैं। उ.—अमृत प्याइ तिहिं लेहिं जिवाइ—७-७।

लेहिंगी—क्रि. स. [हिं. लेना] लेंगी, वसूल करेंगी। उ.—मोहन गए आजु तुम जाहु, दांव हम लेहिंगी हो—२४१६।

लेहि—क्रि. स. [हिं. लेना] ले, ग्रहण या प्राप्त कर।

प्र०—लेहि गाइ—गा ले, गुणगान कर ले। उ.—दिन दस लेहि गोबिंद गाइ—१-३१३।

लेहु—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) लो, प्राप्त या ग्रहण करो। उ.—(क) जज्ञ के हेतु अस्व यह लेहु—९-९। (ख) लेहु मातु सहदानि मुद्रिका—९-८३। (२) पकड़ो, रोको, थामो। उ.—लेहु लेहु सब करत बंदिजन—१० उ.-३८।

लेहुगे—क्रि. स. [हिं. लेना] लोगे।

प्र०—टेरि लेहुगे—बुला लोगे, पुकार लोगे। उ.—सोवत मोकौं टेरि लेहुगे—४१५।

लेहैं—क्रि. स. [हिं. लेना] लेंगे। उ.—सब लेहैं बरिआई—१-३।

लेहौ—क्रि. स. [हिं. लेना] पाओगे, प्राप्त करोगे। उ.—चरन-रेनु सिर धरि गोपिनि की तुमहुँ अभय-पद लेहौ—सारा. ५४८।

लेह्य—वि. [सं.] जो चाटा जा सके।

लैंगिक—संज्ञा पुं. [सं.] दर्शन में अनुमान प्रमाण।

वि.—लिंग-संबंधी।

लै—अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत।

क्रि. स. [हिं. लेना] (१) लेकर, ग्रहण करके, अपना कर। उ.—(क) लै लैं ते हथियार आपने सान धराए त्यौं—१-१५१। (ख) कंचन लै ज्यौं माटी तजै—७-२। (ग) बहुरि कर लै गदा असुर धायौ—७-६। (घ) तृन दसननि लै मिलि दसकंधर—९-११४।

प्र०—राखि लै—रक्षा कर ले, सहायता कर दे। उ.—सूर हरि की सरन आयौ, राखि लै भगवान—१-२३५। लै जाइ—साथ ले जाता। उ.—जहँ लै जाइ तहाँ वह जाइ—७-७। ल गयौ—लें गया। उ.—कामधेनु जमदग्नि की लै गयौ नृपति छिनाय—९-१४। लै जातौ—साथ ले जाता। उ.—रावन मारि तुम्हें लै जातौ—९-८८।

(२) पीकर, पान करके। उ.—लै चरनोदक निज व्रत साध्यौ—९-५। (३) उच्चारण करके। उ.—सजन प्रीतम नाम लै लै दै परस्पर गारि—१०-२६।

लैकै—क्रि. स. [हिं. लेना] लेकर। उ. गहि बहियाँ लैकै जैहौं—१०-२७४।

लैन—संज्ञा पुं. [हिं. लेना] (१) लेना, लेने के लिए। उ.—(क) कोऊ धाई जल लैन—७४९। (ख) आए मधुकर मधु ही लैन—२०८७। (२) अपनाने या हण करने को। उ.—द्वादस बर्ष सेए निसिबासर, तब संकर भाषी है लैन—९-१२।

मुहा०—लैन न देन—न लेना न देना, कोई सरोकार, मतलब या संबंध नहीं। उ.—(क) चलत कहाँ मन और पुरी तन, जहाँ कछु लैन न दैन—४९१। (ख) ए सीधे नहिं टरत वहाँ ते, मोसौं लैन न दैन—पृ. ३२३ (१८)।

लैनु—संज्ञा पुं. [हिं. लेना] लेने (को)।

प्र०—सुख लैनु—सुख भोगने को। उ.—सूर स्याम निज धाम बिसारत आवत यह सुख लैनु—४४८।

लैया—संज्ञा पुं. [देश.] अगहनी धान।

संज्ञा स्त्री. भुने हुए धान का लावा।

क्रि. स. [हिं. लाना] (१) लगा लिया।

प्र०—उर लैया—छाती से लगा लिया। उ.—पाछैं नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैयौ—१०-२१७।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) लेकर, लगाकर। उ.—हौं पय पियत पतूखिनि लैया—१०-३३५।

लैरू—संज्ञा पुं. [देश.] (१) बछड़ा। (२) बच्चा।

लैस—संज्ञा पुं. [देश.] नुकीली नोक का बाण।

लैहीं—क्रि. स. [हिं. लेना] लेते हैं, हरण करते हैं। उ.—ऐसनि कौ बल वै सब लैहीं—५२१।

लैहैं—क्रि. स. [हिं. लेना] ले लेंगे, अधिकार कर लेंगे। उ.—लैहैं लंक बीस भुज मानी—९-११६।

लैहौं—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) प्राप्त करूँगा। उ.—जीते जगत माहिं जस लैहौं—६-५। (२) (गोद आदि में) लूँगा। उ.—इहि आँगन गोपाल लाल को कबहुँक कनियाँ लैहौं।

लैहौ—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) (चित्त या ध्यान) लगाओगे। उ.—अजहूँ जौ हरि-पद चित लैहौ—४-९। (२) पाओगे, प्राप्त करोगे। उ.—जगत में कहा उपहास लैहौ—२६०५।

लौं—अव्य. [हिं. लौं] (१) तक। (२) तुल्य।

लौंदा—संज्ञा पुं. [सं. लुंठन] (१) गीले पदार्थ का डले की तरह बँधा कुछ अंश। (२) सुस्त और आलसी व्यक्ति (व्यंग्य)।

लौ—अव्य. [हिं. लेना] ध्यान आकर्षित करने का संबोधक एक अव्यय।

लोइ—संज्ञा पुं. [सं. लोक, प्रा. लोओ या लोयो] लोग। उ.—(क) ताहि असाधु कहत सब लोइ—३-१३। (ख) अपजस करिहैं लोइ—९-९९। (ग) ब्रजवासी मोहे सब लोइ—१०-२१०।

संज्ञा स्त्री. [सं. रोचि, प्रा. लोई] (१) प्रभा, दीप्ति। (२) लौ, ज्वाला।

लोइन—संज्ञा पुं. [सं. लावण्य] सलोनापन।

संज्ञा पुं. [सं. लोचन] नेत्र, आँख।

लोई—संज्ञा स्त्री. [सं. लोप्ती, प्रा० लोबी] गुँधे हुए आँटे की वह गोली जो रोटी बेलने के पहले तोड़ी जाती है।

संज्ञा स्त्री. [सं. लोमीय] पतले बढ़िया ऊन का बना कम्बल जो प्रायः सफेद होता है।

संज्ञा पुं. [सं. लोक, प्रा० लोओ या लोयो] लोग। उ.—(क) मारग मैं अटके सब लोई—१०३६। (ख) मात-पिता को डर को मानै, मानै सजन कुटुँब सब लोई—१२३०।

लोकंजन—संज्ञा पुं. [हिं. लुकना+अंजन] वह (कल्पित) अंजन जिसे लगाकर मनुष्य का अदृश्य हो जाना कहा जाता है।

लोकंदा—संज्ञा पुं. [देश.] विवाह में कन्या के साथ दासी भेजने की प्रथा या कार्य।

लोकंदी—संज्ञा स्त्री. [देश.] दासी जो किसी कन्या के डोले के साथ भेजी जाय।

लोक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मनुष्य द्वारा कल्पित स्थान जैसे दो लोक—इहलोक और परलोक; तीन लोक—पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्युलोक या भूः, भुव, स्वः; चौदह लोक—भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनर्लोक, तपलोक और सत्य लोक के साथ-साथ सात पाताल—अतल, नितल, वितल, गभस्तिमान्, तल, सुतल और पाताल (अथवा अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल अथवा अतल, वितल, नितल, गभस्ति-मान्, महातल, सुतल और पाताल)। उ.—(क) दुहुँ लोक सुखकरन—१-९०। (ख) सो मेरे इहि लोक बसौ जनि—७-४। (ग) नृप जग करि तिहिं लोक सिधायौ—९-२। (घ) सुन्दरता तिहुँ लोक की जसुमति ब्रज आनी—४७५। (२) संसार, जगत। उ.—जीव न तजै स्वभाव जीव कौ लोक-बिदित दृढ़ताई—१-२०७। (३) निवास स्थान। उ.—सूरदास प्रभु दरस-परस करि ततछन हरि कैं लोक सिधायौ—९-६६। (४) प्रदेश। (५) लोग, जन। (६) समाज। उ.—नँदनंदन के नेह मेह जिन लोक लीक लोपी। (७) प्राणी।

लोक-कंकट—वि. [सं.] दुखदायी, कष्टदायी।

लोकगाथा—संज्ञा स्त्री. [सं.] जनसाधारण में प्रचलित कहानियां।

लोकगीत—संज्ञा पुं. [सं.] जनसाधारण में प्रचलित गीत।

लोकधुनि, लोकध्वनि—संज्ञा स्त्री. [सं. लोकध्वनि] अफवाह, जन-रव।

लोकटी—संज्ञा स्त्री. [देश.] लोमड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकना – क्रि. स. [सं. लोपन] (१) गिरती हुई चीज को बीच में ही हाथों से पकड़ लेना। (२) बीच में ही ले लेना।

लोकनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रह्मा। (२) लोकपाल। (३) परब्रह्म।

लोकनायक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सकल लोक के स्वामी, परब्रह्म। उ.—सकल लोकनायक सुखदायक, अजन, जन्म धरि आयौ—१०-४। (२) ब्रह्मा। (३) लोकपाल।

लोकनो—क्रि. स. [सं. लोपन] (१) गिरती हुई चीज को बीच में ही हाथों से पकड़ लेना। (२) बीच में ही ले लेना।

लोकप, लोकपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लोक का पालन-कर्ता या स्वामी, परब्रह्म। उ.—तुम प्रभु अजित अनादि लोकपति, हौं अजान मतिहीन—१-१८१। (२) ब्रह्मा। (३) राजा। (४) लोकपाल।

लोकपाल—संज्ञा पुं. [सं.] दिक्पाल जो आठ हैं—पूर्व का इंद्र, दक्षिण-पूर्व का अग्नि, दक्षिण का यम, दक्षिण-पश्चिम का सूर्य या निर्ऋति, पश्चिम का वरुण, उत्तर-पश्चिम का वायु, उत्तर का कुबेर और उत्तर-पूर्व का सोम या ईशानी अथवा पृथ्वी।

लोकपितामह—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मा।

लोकप्रवाद— संज्ञा पुं. [सं.] अफवाह।

लोक-रव—संज्ञा पुं. [सं.] अफवाह, प्रवाद।

लोकप्रिय—वि. [सं.] (१) जिससे सब प्रेम करें। (२) जो सबको रुचे या प्रिय लगे।

लोकप्रियता—संज्ञा स्त्री. [सं.] लोकप्रिय होने का भाव या अवस्था।

लोकरा—संज्ञा पुं. [देश.] चिथड़ा, लत्ता।

लोक-लाज—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोक+लाज] लोक-मर्यादा। उ.—लोक-लाज कुल-कानि भुलानी, लुबधीं स्याम सुंदर कौं—६७४।

लोक-लीक—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोक + लीक] लोक या संसार की मर्यादा।

लोक-लोकन—संज्ञा पुं. बहु. [हिं. लोक+लोक] समस्त या अनेक लोकों या भुवनों (में)। उ.—लौक-लोकन विदित २६१८।

लोकवार्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] जन-साधारण में प्रचलित विश्वासों, धारणाओं, प्रथाओं आदि का कथन, विचार या विवेचन।

लोकविश्रुत—वि. [सं.] संसार में प्रसिद्ध।

लोकश्रुति—संज्ञा स्त्री. [सं.] अफवाह, जनश्रुति।

लोकसंग्रह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सबको प्रसन्न करना। (२) सबका कल्याण चाहना।

लोकांतर—संज्ञा पुं. [सं.] वह लोक जहाँ जीव का मरने के उपरांत जाना माना जाता है।

लोकांतरित—वि. [सं.] (१) जो दूसरे लोक को चला गया हो। (२) मृत, स्वर्गीय।

लोकाचार—संज्ञा पुं. [सं.] संसार का व्यवहार।

लोकाट—संज्ञा पुं. [चीनी लुः + क्यू] एक पौधा या उसका पीला फल।

लोकाधिप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। (३) लोकपाल।

लोकाना, लोकानो—क्रि. स. [हिं. लोकना] उछालना।

लोकपवाद—संज्ञा पुं. [सं.] जनसाधारण में फैलनेवाली बदनामी या निंदा।

लोकायत—संज्ञा पुं [सं.] (१) वह जो परलोक को न मानता हो। (२) चार्वाक का दर्शन जिसमें परलोक का खंडन है।

लोकेश, लोकेस—संज्ञा पुं. [सं. लोक+ईश] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। उ.—शेष महेश लोकेश शुक-दिक नारदादि मुनि की हैं स्वामिनी—पृ. ३४५ (४०)। (३) लोकपाल।

लोकेश्वर, लोकेस्वर—संज्ञा पुं. [सं. लोक+ईश्वर] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। उ.—बालक बच्छ हरे लोकेस्वर बार बार टेरत लै नाउँ—४३८। (३) लोकपाल।

लोकैषणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सांसारिक सुख-वैभव की कामना। (२) स्वर्गीय सुख-वैभव की कामना।

लोकोक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] कहावत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकोत्तर—वि. [सं.] जो इस लोक के पदार्थों से बढ़कर हो, अत्यंत अद्‌भुत।

लोग – संज्ञा पुं. [सं. लोक] आदमी, मनुष्य, जन। उ.—(क) सूरदास आपुहिं समुझावै लोग बुरौ जिनि मानौ—१-६३। (ख) झूठैं लोग लगावत मोकौं—१०-२५३। (ग) अब ये झूठहु बोलत लोग—१०-२९२।

लोगाइ, लोगाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोक] (१) स्त्री, नारी। उ.—पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ, जरन लगे पुर लोग-लोगाइ (लुगाइ)—४-१२। (२) पत्नी।

लोच – संज्ञा स्त्री. पुं. [हिं. लचक] (१) लचलचाहट, लचक। (२) कोमलता, सुकुमारता। (३) अच्छी रीति या ढंग।

संज्ञा पुं. [सं. रुचि] अभिलाषा

संज्ञा पुं. [सं. लुंचन] जैन-साधु का सिर के बाल नोचना।

लोचन—संज्ञा पुं. [सं.] आँख, नयन, नेत्र। उ.—मोह मगन लोचन जल-धारा बिपति न हृदय समाइ—९-५२।

मुहा०—लोचन भर आना—आँखों में आँसू आ जाना। लोचन भरि-भरि—आँखों में आँसू भरकर। उ.—(क) लोचन भरि भरि दोऊ माता कनछेदन देखत जिय मुरकी—१०-१७९। (ख) कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत—३४९।

लोचना, लोचनो—क्रि. स. [हिं. लोचन] (१) प्रकाशित करना। (२) रुचि उत्पन्न करना। (३) इच्छा या कामना करना।

क्रि. अ. शोभित होना।

क्रि. अ. (१) इच्छा, लालसा या कामना होना। (२) तरसना, ललचना।

संज्ञा पुं. [सं. लुंचन] नाई, नाऊ।

लोचहिंगे—क्रि. अ. [हिं. लोचना] तरसेंगे। उ.—दरस बिना पुनि हम लोचहिंगे—११६१।

लोट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोटना] लोटने या लेट जाने की क्रिया या भाव।

मुहा०—लोट जाना—(१) बेहोश होना। (२) मर जाना। लोट पोट करना – लेटकर विश्राम करना। लोट-पोट हो जाना या होना। (१) बार-बार लोटने लगना। (२) बेसुध हो जाना। लोट मारना—(१) सोना, लोटना। (२) किसी के प्रेम में बेसुध होना। लोट-पोट होना या हो जाना–(१) रीझना, आसक्त होना। (२) व्याकुल होना।

लोटक-पोटो—संज्ञा पुं. [हिं. लौटना + पलटना] उलट-पलट, अस्तव्यस्त, नष्टभ्रष्ट। उ.—बिरद आपनौ और तिहारो करिहौं लोटक-पोटो—१-१७९।

लोटत—क्रि. अ. [हिं. लोटना] (१) भूमि पर लेटता फिरता है। उ.—दीन के दयाल हरि कृपा मोकौं करि यह कहि-कहि लोटत बार-बार—१०-२५२। (२) भूमि पर गिरकर या लेटकर विरोध सूचित करता है। उ.—(क) लोटत सूर स्याम पुहुमी पर—१०-१५९। (ख) जसुमति जबहिं कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत री—१०-१८६। (३) विकल होकर भूमि पर गिरता पड़ता है। उ.—निरखत सून भवन जड़ ह्वै रहे, खिन लोटत धर बपु न सँभारत–९-६२। (४) लुढ़कता है। उ.—रावन-सीस पुहुमि पर लोटत मंदोदरि बिलखाइ—९-८६।

लोटन—संज्ञा पुं. [हिं. लोटना] (१) लोटने की क्रिया या भाव। (२) कबूतर जो चोंच पकड़कर भूमि पर लुढ़का दिये जाने पर, जब तक उठाया न जाय, लोटता ही रहता है। (३) छोटी कंकड़ियाँ जो वायु के झोंके से इधर-उधर लुढ़कती हैं।

लोटना – क्रि. अ. [सं. लुंठन] (१) सीधे-उलटे लेटकर जाना। (२) लुढ़कना। (३) तड़पना, कष्ट से करवट बदलना। (४) लेटकर विश्राम करना। (५) चकित या मुग्ध होना।

लोटनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोटना] लोटने की क्रिया, भाव या रीति। उ.—देखौ माई, हरि जू की लोटनि—१०-१८७।

लोटनो—क्रि. अ. [सं. लुंठन] (१) सीधे-उलटे लेटकर जाना। (२) लुढ़कना। (३) तड़पना, कष्ट से करवट बदलना। (४) लेटकर विश्राम करना। (५) चकित या मुग्ध होना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोटपटा—संज्ञा पुं. [हिं. लौटना + पाटा] (१) विवाह की एक रीति जिसमें वर के आसन पर बधू और बधू के आसन पर वर को बैठाया जाता है। (२) बाजी या दांव का उलट-फेर।

लोटा—संज्ञा पुं. [हिं. लोटना] बड़ी लुटिया।

मुहा०—लोटा डुबोना या डोब देना—(१) सारा काम चौपट कर देना। (२) कलंक लगा देना।

लोटि—क्रि. अ. [हिं. लोटना] (१) भूमि पर उलटे-सीधे लेटकर। उ.—कुंज-कुंज प्रति लोटि-लोटि ब्रज-रज लागैं रँग-रीतिनि - ४९०। (२) विरोध सूचित करने के लिए भूमि पर लेटकर।

प्र०—जैहौं लोटि—विरोध सूचित करने के लिए (भूमि पर) लेट जाऊँगा उ.—जैहौं लोटि धरन पर अबहीं तेरी गोद न ऐहौं—१०-१९३।

लोटी—क्रि. अ. [हिं. लोटना] भूमि पर लेटकर।

प्र०—जात हैं लोटी—भूमि पर लेट जाते हैं, लोट-पोट हो जाते हैं। उ.—यह छवि देखि नंद मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी—१०-१६५।

लोटै—क्रि. अ. [हिं. लोटना] (१) विरोध सूचित करने के लिए भूमि पर लेटता है। उ.—कर धरत धरनि पर लोटै—१०-३८३। (२) व्याकुल होकर (पृथ्वी पर) लेटता है। उ.—पटकि पूंछ माथो धुनि लोटै—९-७५।

लोड़ना, लोड़नो—क्रि. स. [पं. लोड़] दरकार होना।

लोढ़कना, लोढ़कनो—क्रि. अ. [हिं. लुढ़कना] लुढ़कना।

लोढ़ना, लोढ़नो—क्रि. स. [सं. लुंचन] (१) तोड़ना, चुनना। (२) ओटना।

लोढ़ा—संज्ञा पुं. [सं. लोष्ठ] (सिल का) बट्टा।

लोढ़िया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोढ़ा] छोटा लोढ़ा।

लोण—संज्ञा पुं. [सं. लवण] नमक।

लोथ—संज्ञा स्त्री. [सं. लोष्ठ] (१) शव, लाश।

मुहा०—लोथ गिरना-मारा जाना। लोथ डालना—मार गिराना। लोथपोथ—थकान से चूर। (२) मांस का लोथड़ा, मांसपिंड।

लोथड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. लोथ + ड़ा] मांसपिंड।

लोध, लोध्र—संज्ञा पुं. [सं. लोध्र] एक जाति।

लोन—संज्ञा पुं. [सं. लवण] (१) नमक।

मुहा०—(किसी का) लोन खाना—अन्न खाना, दास होना। (किसी का) लोन निकलना—उपकार न मानने का फल पाना। लोन न मानना - उपकार न मानना, अकृतज्ञ होना। लोन मानना—किया हुआ उपकार मानना। लोन मान्यो —उपकार माना। उ.—जैसे लोन हमारो मान्यो कहा कहौं, कहि काहि सुनाऊँ—पृ० ३२३ (२६)। जरे दाधे या दाहे पर लोन लाना या लगाना—दुखी को और दुख देना। दाधे पर लोन लगावै—दुखी को और दुखी करता है। उ.—सूरदास प्रभु हमहिं निदरि दाधे पर लोन लगावै—३०८८। लोन लगावत अनल के दाहि—दुखी को और दुखी करता है। उ.—अब काहे को लोन लगावत बिरह-अनल के दाहि - ३१४५। जरे ऊपर लोन लावहि—दुखी को और दुखी करता है। उ.—जरे ऊपर लोन लावहि को है उनतें बावरे—३२६०। जिनि अब लोन लावहु—दुखी को और दुख न दो। उ.—जाहु जिनि अब लोन लावहु, देखि तुमहीं डरी—३३१८। जरत (छाती) लोन लायो—दुखी को और दुख दिया। उ.—काम पावक जरत छाती, लोन लायो आनि—३३५५। राई-लोन उतारना—नजर से बचाने के लिए सिर पर से सात बार राई-लोन उतार कर आग में डालने का टोटका करना। उ.—कबहुँक अँग भूषन बनावति राई-लोन उतारि—१०-११८। (किसी बात का) लोन-सा लगना—बहुत अप्रिय या अरुचिकर होना।

(२) सौंदर्य, लावण्य।

लोनहरानी—वि. [हिं. लोन + अ. हरामी] नमक-हराम, कृतघ्न। उ.—(क) मन भयो ढीठ इनहिं के कीन्हें ऐसे लोन हरामी री—पृ० ३२३ (१९)। (ख) नैना लोन हरामी ए—पृ० ३२६ (५२)।

लोना - वि. [हिं. लोन] (१) सलोना। (२) सुंदर। संज्ञा पुं. (१) नमकीन मिट्टी। (२) क्षार जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चने की पत्तियों पर जमा हो जाता है। (३) वह क्षार जो दीवार पर लग कर उसे कमजोर बना देता है।

क्रि. स. [सं. लवण] फसल काटना।

लोनाइ, लोनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोना + ई] लावण्य, सुंदरता। उ.—देखौ री देखौ अंग-अंग की लोनाई —२५९६।

लोनिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोन] 'लोनी' साग।

वि. स्त्री. नमकीन, सलोनी।—

लोनिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोन] 'लोनी' साग।

संज्ञा पुं. 'नोनिया' नामक शूद्र जाति जो नमक बनाने का कार्य-व्यवसाय करती है।

लोनिये—क्रि. स. [हिं. लोना] (फसल) काटिए। उ. —(क) अपनो बोयो आप लोनिये तुम आपहिं निरुवारो—३३९४। (ख) बीज बोइये जोइ अंत लोनिये सोइ—३४२१।

लोनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोन] (१) 'लोनी' साग। (२) क्षार जो चने के साग पर इकट्ठा हो जाता है। (३) क्षार से युक्त मिट्टी जिससे नमक, शोरा आदि बनता है।

वि. स्त्री. [हिं. लोना] सुंदर। उ.—नासिका परम लोनी बिंबाधर तरै री—२४२३।

संज्ञा पुं. [सं. नवनीत] मक्खन, माखन। उ.— उ.—लै आई बृषभानु-सुता हँसि सद लोनी है मेरौ —११७८।

लोप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नाश। (२) विच्छेद। (३) अभाव। (४) छिपना, अंतर्द्धान होना। (५) (वर्ण आदि का) लुप्त होना।

लोपन—संज्ञा पुं. [सं.] लुप्त या नाश करने की क्रिया या भाव।

लोपना, लोपनो—कि. स. [सं. लोपन] (१) मिटाना, लुप्त करना। (२) छिपाना, अंतर्द्धान करना।

क्रि. अ. (१) मिटना, लुप्त होना। (२) छिपना।

लोपांजन—संज्ञा पुं. [सं.] एक कल्पित अंजन जिसके लगाने से व्यक्ति का अदृश्य हो जाना माना जाता है।

लोपामुद्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] अगस्त्य ऋषि की पत्नी।

लोपी—क्रि. स. [हिं. लोपना] मिटायी, लुप्त की। उ.— नँदनंदन के नेह-मेह जिनि लोक-लीक लोपी—३४८७।

लोबान—संज्ञा पुं. [अ.] एक वृक्ष का सुगंधित गोंद।

लोबिया—संज्ञा पुं. [सं. लोभ्य] एक पौधा जिसकी फली के बीज खाये जाते हैं।

लोभ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लालच। उ.—दर-दर लोभ लागि लिये डोलत नाना स्वाँग बनावै—१-४२। (२) कंजूसी, कृपणता।

लोभना, लोभनो—क्रि. अ. [सं. लोभ] मुग्ध होना, ललचना, लुब्ध होना।

क्रि. स. ललचाना, लुभाना, मुग्ध करना।

लोभनीय—वि. [सं. लोभ] (१) जिसे देखकर लोभ हो। (२) सुंदर, मनोहर।

लोभा—संज्ञा पुं. [सं. लोभ] लालच, लोभ। उ.–योगयज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा—२५६६।

लोभाई—क्रि. अ. [हिं. लोभना] मोहित या मुग्ध हुई। उ.—कुँवर तन स्याम मानो काम है दूसरो, सपन मैं देखि ऊषा लोभाई—३४३४।

लोभातुर—वि. [सं. लोभ + हिं. आतुर] अत्यंत लोभ से विकल होकर। उ.—लोभातुर ह्वै काम मनोरथ, तहाँ सुनत उठि धाई—१-२९५।

लोभाना—क्रि. स. [हिं. लोभाना] मुग्ध करना।

क्रि. अ. (१) मुग्ध या मोहित होना। (२) लालच में पड़ना।

लोभानी—क्रि. अ. [हिं. लोभाना] मुग्ध या मोहित हुईं। उ.—(क) यशोमति सुत सुन्दर तनु निरखि हो लोभानी—१४६५। (ख) अँखियाँ हरि के रूप लोभानी—३४४२।

लोभाने—क्रि. अ. [हिं. लोभाना] मुग्ध या आसक्त हुए। उ.—(क) सूर स्याम हौ बहुत लोभाने बन देख्यौ धौं सूनौ—११२१। (ख) सूर स्याम मृदु हँसनि लोभाने—पृ० ३३४ (३१)। (ग) की काहू के अनत लोभाने—१९३२। (घ) सूर प्रभु दासी लोभाने, ब्रज बधू अनखात—२६८०। (२) लालच या लोभ में पड़ गए। उ.—मनहुँ कंज ऊपर बैठे अलि उड़ि न सकत मकरंद लोभाने—२०८६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोभानो—क्रि. स. [हिं. लोभना] मुग्ध करना ।
क्रि. अ. (१) मुग्ध या मोहित होना । (२) लोभ या लालच में पड़ना ।

लोभार—वि. [हिं. लोभ+आर] लुभानेवाला ।

लोभावै—क्रि. अ. [हिं. लोभाना] मुग्ध या आसक्त होता है । उ.—कहूँ त्रिया के रूप लुभावै—१० उ.-१०५ ।

लोभित—वि. [हिं. लोभ] (१) मुग्ध, आसक्त । उ.—कदंब मुनि मन मधुप सदा रस-लोभित सेवत अज सिव अंब । (२) लालची ।

लोभिनी—वि. स्त्री. [हिं. लोभी] (१) बहुत लोभ करने वाली, लालचिनी । (२) लुभायी हुई । उ.—ए कैसी हैं लोभिनी छवि धरति चुराइ–पृ. ३३७ (७०) । (३) जो (स्त्री) मुग्ध या आसक्त हो ।

लोभी—वि. [हिं. लोभ] (१) लालची । उ.—(क) लोभी, लौंद मुकरवा झगरू—१-१८६ । (ख) इन लोभी नैनन के काजे परवश भई जो रहौं—२७७४ । (२) मुग्ध, आसक्त ।

लोभ्यो, लोभ्यौ—क्रि. अ. [हिं. लोभाना] लुभाया, मुग्ध या आसक्त हुआ । उ.—नारि-रस-लोभ्यौ—१-२१६ ।

लोम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रोवाँ, रोम । उ.—शत शत इंद्र लोम प्रति लोमनि—१०१२ । (२) बाल ।
संज्ञा पुं. [सं. लोमश] लोमड़ी ।

लोमकूप—संज्ञा पुं. [सं.] रोएँ की जड़ का छिद्र ।

लोमड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. लोमश] एक प्रसिद्ध जंतु ।

लोमनि—संज्ञा पुं. सवि. [सं. लोम+नि] शरीर के प्रत्येक रोम में । उ.—शत शत इंद्र लोम प्रति लोमनि—१०-१२ ।

लोमश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक ऋषि । (२) भेड़ा ।
वि. अधिक और बड़े बड़े रोएँवाला ।

लोमहर्षण—वि. [सं.] बहुत भीषण या भयानक ।

लोय—संज्ञा पुं. [सं. लोक] लोग ।
संज्ञा स्त्री. [हिं. लव] लौ, लपट ।
संज्ञा पुं. [हिं. लोयन] आँख, नेत्र ।
अव्य. [हिं. लौं] तक, पर्यंत ।

लोयन—संज्ञा पुं. [सं. लोचन] आँख, नेत्र, नयन ।

लोर—वि. [सं. लोल] (१) चंचल । उ.—(क) सूर स्याम मुख निरखि चली घर आनँद लोचन लोर—७७६ । (ख) चारु आनन लोर धारा बरनि कापै जाइ—पृ. ३४२ (१८) । (२) (दर्शन के) इच्छुक या उत्सुक । उ.—बोलि ढिग बैठारि ताको पोंछि लोचन लोर—२१६१ ।
संज्ञा पुं. (१) कुंडल । (२) लटकन । (३) आँसू ।

लोरना, लोरनो—क्रि. अ. [हिं. लोर+ना] (१) चंचल होना । (२) ललकना, लपकना । (३) लिपटना । (४) झुकना । (५) लोटना ।

लोरी—संज्ञा स्त्री. [सं. लाल] (१) (बच्चों को सुलाने के लिए गाया जाने वाला) गीत ।

लोरैं—क्रि. अ. [हिं. लोरना] लकलते या झपटते हैं । उ.—देखो री मल्ल इनहिं मारन को लोरैं—२६०४ ।

लोरै—क्रि. अ. [हिं. लोरना] ललकता या लपकता है । उ.—पुनि उठत जागि देखै मुकुर नारि कर ललचात अंग भरि लैन लोरै—पृ. ३१७ (६४) ।

लोल—वि. [सं.] (१) हिलता-डोलता । उ.—कुंडल लोल कपोलनि की छवि—६१६ । (२) चंचल । उ.—(क) ललित श्रीगोपाल-लोचन लोल—३५१ । (ख) बैन बिसाल अति लोचन लोल—६३० । (३) परिवर्तनशील । (४) क्षणभंगुर । (५) इच्छुक, उत्सुक ।

लोलक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) (नथ या बाली का) लटकन । (२) कान की लव, लोलकी ।

लोलकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोलक] कान की लव ।

लोलत—क्रि. अ. [हिं. लोलना] हिलता-डोलता या चंचल होता है । उ.—ग्रीवा डोलत लोचन लोलत हरि के चितहिं चुरावै—८७६ ।

लोलदिनेश—संज्ञा पुं. [सं.] लोलार्क नामक सूर्य ।

लोलन—संज्ञा पुं. [सं.] हिलने-डुलने या हिलने-डुलाने की क्रिया या भाव ।

लोलना, लोलनो—क्रि. अ. [सं. लोल] (१) हिलना-डोलना । (२) चंचल होना ।

लोला—संज्ञा स्त्री. [सं.] जीभ, जिह्वा ।
संज्ञा पुं. [देश.] एक खिलौना जिसमें डंडे के सिरों पर दो लट्टू होते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोलार्क—संज्ञा पुं. [सं.] काशी का एक तीर्थ ।

लोलुप—वि. [सं.] (१) लालची, लोभी । (२) चटोरा । (३) परम उत्सुक ।

लोलै—क्रि. अ. [हिं. लोलना] हिलती-डोलती है । उ.—कुटिल अलक बदन की छवि अवनि परि लोलै—१०-१०१ ।

लोवा—संज्ञा स्त्री. [सं. लोमश] लोमड़ी ।

संज्ञा पुं. लवा या गुरगा पक्षी ।

लोष्ठ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पत्थर । (२) ढेला ।

लोहँड़ा—संज्ञा पुं. [सं. लौहभांड] (१) लोहे का एक पात्र । (२) तसला ।

लोह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लोहा (धातु) । उ.—(क) सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट—१-२३२ । (ख) लोह तरैं, मधि रूपा लायौ—७-७ । (ग) आगर इक लोहजटित लीन्हीं बरिबंड—९-९६ । (२) हथियार, अस्त्र । उ.—लोह गहै लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै—९-१५२ ।

लोहकार—संज्ञा पुं. [सं.] लोहार ।

लोहपन, लोहपना, लोहपनो—संज्ञा पुं. [हिं. लोहा+पन] 'लोहा' होने का भाव या उसका बोध । उ.—पारस परसि होत ज्यौं कंचन लोहपनो मिटि जाई—१० उ.-१३१ ।

लोहा—संज्ञा पुं. [सं. लोह] (१) 'लोह' नामक प्रसिद्ध धातु । उ.—जैसैं लोहा कंचन होय—१-२३० ।

मुहा०—लोहे के चने—बहुत कठिन काम । लोहे के चने चबाना—बहुत कठिन काम करना ।

(२) हथियार, अस्त्र ।

मुहा०—लोहा गहना—(युद्ध करने को) हथियार उठाना । लोहा बजना—(युद्ध में परस्पर) अस्त्र चलना । लोहा बरसना—(युद्ध में)तलवार या अस्त्र चलना । (किसी का) लोहा मानना—(१) (किसी की) विद्वता, प्रभुता आदि की श्रेष्ठता स्वीकार करना । (२) हार या पराजय मानना । लोहा लेना—सामना या युद्ध करना ।

(३) लोहे का बना कोई उपकरण ।

वि. बहुत कड़ा या कठोर ।

लोहाना, लोहानो—क्रि. अ. [हिं. लोहा+आना] (किसी पदार्थ में लोहे के संसर्ग से) लोहे का रंग या स्वाद आ जाना ।

लोहार—संज्ञा पुं. [सं. लोहकार] एक जाति जो लोहे की चीजें बनाने का काम करती है ।

लोहारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लोहार+ई] लोहार का काम ।

लोहित—वि. [सं.] लाल (रंग का) । उ.—अति लोहित दृग रँगमगे—२४०२ ।

संज्ञा पुं. [सं. लोहितक] मंगल ग्रह ।

लोहित्य—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मपुत्र नद ।

लोहिया—वि. [हिं. लोहा] लोहे का ।

लोही—संज्ञा स्त्री. [सं. लोहित] उषा की लाली ।

लोहू—संज्ञा पुं. [सं. लोहित] रक्त, रुधिर ।

लौं—अव्य. [हिं. लग] (१) तक, पर्यंत । उ.—(क) करौ मन्वंतर लौं तुम लाज—७-२ । (ख) द्वितीय सिंधु सिय-नैन नीर ह्वै जब लौं मिलै न आइ—९-११० । (ग) भीतर तैं बाहर लौं आवत—१०-१२५ । (२) बराबर, समान, तुल्य । उ.—(क) हरि कौ नाम दाम खोटे लौं झकि झकि डारि दियौ—१-६४ । (ख) उदर भरचौ कूकर सूकर लौं—१-६५ । (ग) अब सबहीं कौं बदन स्वान लौं चितवत दूरि भयौ—१-२९८ ।

लौंकना, लौंकनो—क्रि. अ. [सं. लोकना] (१) दिखायी देना, दृष्टि-गोचर होना । (२) चमकना । (३) आंखों में चकाचौंध होना ।

लौंग—संज्ञा पुं. [सं. लवंग] (१) एक झाड़ की कली जिसकी गिनती 'मसालों' में की जाती है । उ.—लौंग नारियर दाख सुपारी कहा लादे हम आवैं—११०८ । (२) नाक का एक आभूषण जो लौंग के आकार का ही होता है ।

लौंडा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) सुंदर लड़का । (२) पुत्र ।

वि. (१) अबोध, नासमझ । (२) छिछोरा ।

लौंडापन—संज्ञा पुं. [हिं. लौंडा+पन] (१) लड़कपन, नासमझी । (२) छिछोरापन ।

लौंडी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौंडा] दासी । उ.—लौंडी की डौंडी बाजी जब बढ़चो स्याम अनुराग—३०९५ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौंद—संज्ञा पुं. [देश.] मलमास, अधिमास ।

वि. [हिं. लोंदा] मूर्ख, नासमझ। उ.—लोभी लौंद मुकरवा झगरू—१-१८६ ।

लौंदरा—संज्ञा पुं. [देश.] पानी जो वर्षारंभ से पहले ही बरस जाता है, लवँद, दौंगरा, लवँदरा ।

लौंध, लौंन—संज्ञा पुं. [हिं. लौंद] मलमास ।

लौं—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपट] (१) आग की लपट, ज्वाला । (२) दीपशिखा ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. लाग] (१) चाह, लगन, राग । (२) आशा, कामना । (३) चित्त-वृत्ति ।

लौआ—संज्ञा पुं. [सं. लावुक] घीआ, कद्दू ।

लौकना, लौकनो—क्रि. अ. [हिं. लौ] (१) दिखायी पड़ना । (२) चमकना ।

लौकिक—वि. [सं.] (१) सांसारिक। (२) व्यावहारिक।

लौकी—संज्ञा स्त्री. [सं. लावुक] घीआ (तरकारी) ।

लौटना—क्रि. अ. [हिं. उलटना] (१) पलटना, वापस आना । (२) पीछे की ओर मुँह करना ।

क्रि. स. उलटना, पलटना ।

लौटनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौटना] उलटने की क्रिया या भाव ।

लौटनो—क्रि. अ. [हिं. उलटना] (१) वापस आना । (२) पीछे की ओर मुँह करना ।

क्रि. स. उलटना, पलटना ।

लौट-पौट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौटना+अनु. पौटना] (१) उलटने-पलटने की क्रिया या भाव । (२) तहस-नहस करने की क्रिया या भाव ।

लौट-फेर—संज्ञा पुं. [हिं. लौटना+फेरना] उलट-फेर, भारी परिवर्तन ।

लौटान—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौटना] लौटने की क्रिया या भाव ।

लौटाना, लौटानो—क्रि. स. [हिं. लौटना] (१) वापस करना । (२) फेरना, पलटना । (३) ऊपर-नीचे या उलट-पुलट करना ।

लौन—संज्ञा पुं. [सं. लवण] नमक। उ.—खेलत मैं कोउ दीठि लगाई लै लै राई-लौन उतारति—१०-२०० ।

मुहा०—पजरे पर लोन—जो स्वयं दुखी है, उसे और दुखाने वाली बात से अधिक पीड़ा होना । उ. बचन दुसह लागत अलि तेरे ज्यौं पजरे पर लौन—३१२२ ।

लौनहार, लौनहारा—वि. [हिं. लौना+हार] खेत काटने वाला ।

लौना—संज्ञा पुं. [सं. ज्वलन] ईंधन ।

संज्ञा पुं [हिं. लुनना] फसल की कटाई ।

वि. [हिं. लौन, लोन] सुंदर ।

लौनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लौना] फसल की कटाई ।

संज्ञा स्त्री. [सं. नवनीत] माखन, नैनू । उ.—(क) लौनी कर आनन परसत हैं कछुक खाइ कछु लग्यौ कपोलनि । (ख) नैंकु रहौ, माखन द्यौं तुमकौ । ठाढ़ी मथति जननि दधि आतुर, लौनी नंद-सुवन कौं—१०-१६७ ।

वि. स्त्री. [हिं. लौन, लोन] सुंदरी ।

लौरि, लौरी—संज्ञा स्त्री. [देश.] (गाय की) बछिया ।

लौलीन—वि. [हिं. लौ+लीन] (किसी के) ध्यान में लीन या मग्न ।

लौह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लोहा । (२) अस्त्र-शस्त्र ।

लौहित—संज्ञा पुं. [सं.] महादेव का त्रिशूल ।

लौहित्य—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मपुत्र नद ।

ल्याइ—क्रि. स. [हिं. लाना] लाकर। उ.—अतिहिं पुरुषारथ कियौ उन कमल दह के ल्याइ—५८६ ।

ल्याइयै—क्रि. स. [हिं. लाना] लाने का प्रबंध, आयोजन या कार्य कीजिए । उ.—कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै—८-८ ।

ल्याइहै—क्रि. स. [हिं. लाना] लाने का प्रबंध, आयोजन या कार्य करेगा, लायेगा । उ.—वहै ल्याइहै सिय-सुधि छिन मैं ९-७४ ।

ल्याई—क्रि. स. स्त्री. [हिं. लाना] ले आयी हूँ । उ.—खाटे फल तजि मीठे ल्याई – ९-६७ ।

ल्याउँगी—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आऊँगी ।

प्र०— ल्याउँगी धरि—पकड़कर ले आऊँगी । उ.—मोहिं छाँड़ि जो कहूँ जाहुगे, ल्याउँगी तुमकौं धरि—६८१ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ल्याउ—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आओ । उ.—हलधर कहत, ल्याउ री मैया—३९६ ।

ल्याऊ—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आऊँगी, ले आऊँ। उ.—हौंस होइ तौ ल्याऊँ पूआ—३९६ ।

ल्याए—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आए। उ.—पारथ-सीस सोधि अष्टाकुल तब जदुनंदन ल्याए—१-२९ ।

ल्याना, ल्यानो—क्रि. स. [हिं. लाना] लाना ।

ल्यायो, ल्यायौ—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आया । उ. —ह्वै बराह पृथ्वी ज्यौं ल्यायौ—३-१० ।

ल्यारि, ल्यारी—संज्ञा पुं. [देश.] भेड़िया ।

संज्ञा स्त्री. [देश.] लू, लूक ।

ल्यावना, ल्यावनो—क्रि. स. [हिं. लाना] लाना ।

ल्यावहु—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आओ । उ.—ल्यावहु जाइ जनक-तनया-सुधि—९-७४ ।

ल्यावैं—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आयें उ.—कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तैं—३५४ ।

ल्याव—क्रि. स. [हिं. लाना] ले आये । उ.—लाच्छागृह तैं काढ़ि कैं पांडव गृह ल्यावै—१-४ ।

प्र०—मन में ल्यावै—इच्छा करे । उ.—मुक्ति-मनोरथ मन मैं ल्यावै—३-१३ ।

ल्हेसना, ल्येसनो—क्रि. अ. [हिं. लसना] (१) चिपकना, सटना । (२) ऊपर होना ।

क्रि. स. (१) चिपकाना, सटाना । (२) ऊपर रखना ।

ल्हेसित—वि. [सं. लसित] सजन या शोभा देनेवाला, शोभित ।

व

व—देवनागरी वर्णमाला का उन्तीसवाँ वर्ण जो अंतस्थ अर्द्धव्यंजन माना जाता है और जिसका-उच्चारण स्थान दंत्योष्ठ है ।

वंक—वि. [सं.] कुछ झुका हुआ, टेढ़ा ।

वंकट—वि. [सं. वंक] (१) झुका हुआ, टेढ़ा । (२) जो सीधा न हो, कुटिल । (३) दुर्गम, विकट । उ.—रही दै घूँघट-पट की ओट । मानौ कियौ फिरि मान मवासौ मन्मथ बंकट कोट—२७६९ ।

वंकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] टेढ़ापन ।

वंकनाल, वंकनाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. वंक+नाल] सुषुम्ना नाड़ी ।

वंकिम—वि. [सं.] कुछ झुका हुआ, टेढ़ा ।

वंग—संज्ञा पुं. [सं.] बंगाल (प्रदेश) ।

वंगीय—वि. [सं.] वंग देश का।

वंचक—वि. [सं.] (१) ठग । (२) दुष्ट ।

वंचकता—संज्ञा स्त्री. [सं. वंचक] ठगी ।

वंचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ठगी । (२) दुष्टता ।

वंचना—संज्ञा स्त्री. [सं.] धोखा, ठगी, छल ।

वंचना, वंचनो—क्रि. स. [सं. वंचन] धोखा देना ।

क्रि. स. [सं. वाचन] पढ़ना, बाँचना ।

वंचित—वि. [सं.] (१) जो ठगा गया हो । (२) अलग किया हुआ । (३) हीन, रहित ।

वंदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) स्तुति और प्रणाम, जो षोड़शोपचार पूजन का एक अंग है । (२) नवधा भक्ति का एक अंग । उ.—स्रवन कीरतन, स्मरन, पादरत, अरचन, वंदन, दास । सख्य और आतमा-निवेदन प्रेम-लच्छना जास—सारा. ११६ । (३) शरीर पर बनाये गये तिलक आदि चिह्न । उ.—वंदन चित्रविचित्र अंग सिर कुसुम सुवास धरे नंदनंदन—२५७३ ।

वि. पूज्य, पूजित (जैसे जगबंदन) ।

वंदनमाल, वंदनमाला—संज्ञा स्त्री. [सं. वंदनमाल] वंदनवार ।

वंदनवार—संज्ञा स्त्री. [सं. वंदनमाल] फूल-पत्तियों की माला जो उत्सव के समय द्वार या मंडप के चारो ओर बाँधी जाती है ।

वंदना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्तुति और प्रणाम । (२) शरीर पर बनाये गये तिलक आदि चिह्न ।

वंदनीय—वि. [सं.] प्रणाम या सम्मान के योग्य ।

वंदारु—वि. [सं.] वंदनीय ।

वंदित—वि. [सं.] (१) जिसकी वंदना की जाय । (२) पूज्य, माननीय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वंदिता—वि. स्त्री. [सं. वंदित] (१) जिसकी वंदना की जाय। (२) पूजनीया।

वंदी—संज्ञा पुं. [सं. वंदिन्] कैदी, बंदी।

वंदीगृह—संज्ञा पुं. [सं.] कैदखाना।

वंदीजन—संज्ञा पुं. [सं.] एक यश-गायक जाति।

वंद्य—वि. [सं.] वंदना-योग्य, वंदनीय।

वंश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बांस। (२) बांसुरी। (३) कुल।

वंशज—संज्ञा पुं. [सं.] कुल में उत्पन्न, संतान।

वंशजा—संज्ञा पुं. [सं.] कन्या, पुत्री।

वंशतिलक—संज्ञा पुं. [सं.] एक छंद।

वंशधर—संज्ञा पुं. [सं.] वंशज।

वंशस्थ—संज्ञा पुं. [सं.] एक वर्णवृत्त।

वंशहीन—वि. [सं.] जिसके वंश में कोई न हो।

वंशावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] किसी वंश के पुरुषों की कालक्रमानुसार सूची।

वंशी—संज्ञा स्त्री. [सं.] बांसुरी, मुरली। इसका जो छोर बचानेवाले के मुँह में रहता है, 'फूत्काररंध्र' कहलाता है और सुर निकालनेवाले सात छेदों को 'ताररंध्र' कहते हैं।

वंशीधर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

वंशीय—वि. [सं.] कुल में उत्पन्न, वंशज।

वंशीवट—संज्ञा पुं. [सं.] वृन्दावन का वह वट वृक्ष जिसके नीचे श्रीकृष्ण वंशी बजाया करते थे।

वंशीवादन—संज्ञा पुं. [सं.] वंशी बजाना।

वंशोद्भव—वि. [सं.] कुल में उत्पन्न, वंशज।

व—अव्य. [फा.] और।

वक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बगला पक्षी। (२) अगस्त का वृक्ष या फूल। (३) एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। (४) एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था।

वकवृत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] छल-कपट से काम निकालने की वृत्ति।

वकव्रती—संज्ञा पुं. [सं.] छली-कपटी व्यक्ति।

वकालत—संज्ञा स्त्री. [अ. वक़ालत] वकील का काम।

वकासुर—संज्ञा पुं. [सं] (१) एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। (२) एक राक्षस जिसे भीमसेन ने मारा था।

वकी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूतना जो वकासुर की बहन थी।

वकील—संज्ञा पुं. [अ. वक़ील] दूसरे के पक्ष का समर्थन करने वाला।

वकुल संज्ञा पुं. [सं.] अगस्त का पेड़ या फूल।

वकुली—संज्ञा स्त्री. [सं.] मौलसिरी।

वक्त—संज्ञा पुं. [अ. वक्त] (१) समय, काल।

मुहा०—वक्त काटना—(१) कठिनता से समय बिताना। (२) जी बहलाना। वक्त की चीज—(१) समय या ऋतु विशेष में मिलनेवाली चीज। (२) अवसर-विशेष के उपयुक्त चीज या गीत।

(२) अवसर। (३) अवकाश। (४) मृत्युकाल।

वक्तव्य संज्ञा पुं. [सं.] (१) कथन, भाषण (२) किसी विषय में कही गयी बात।

वक्ता—वि. [सं. वक्ता] (१) बोलनेवाला। (२) भाषण-पटु।

संज्ञा पुं. कथा कहनेवाला, व्यास। उ.—सूत तहँ कथा भागवत की कहत हे रिषि अठासी सहस हुते स्रोता। राम को देखि सनमान सब ही कियौ सूत नहिं उठयो निज जानि वक्ता—१० उ०-५८।

वक्तृता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वाक्पटुता, वाक्कौशल। (२) व्याख्यान, भाषण।

वक्तृत्व—संज्ञा पुं. [सं.](१) व्याख्यान। (२) कथन।

वक्र—वि. [सं.] (१) झुका हुआ, टेढ़ा, तिरछा। (२) दाँव-पेंच खेलनेवाला।

वक्रगामी—वि. [सं. वक्रगामिन्] टेढ़ी चाल चलनेवाला।

वक्रदृष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] क्रोध की दृष्टि।

वक्रोक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) व्यंग्य भरी बात। (२) एक काव्यालंकार।

वक्ष—संज्ञा पुं. [सं. वक्षस्] छाती, उरस्थल।

वक्षस्थल—संज्ञा पुं. [सं. वक्षःस्थल] छाती, उर।

वक्षोज, वक्षोरुह—संज्ञा पुं. [सं.] स्तन, कुच।

वगलामुखी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दस महाविद्याओं में एक।

वगैरह—अव्य. [अ. वग़ैरह] आदि, इत्यादि।

वच—संज्ञा पुं. [सं. वच्] वचन, वाक्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वाणी, वाक्य । (२) कही हुई बात, कथन । उ.—तुम्हरो वचन न मेट्यो जाइ —१० उ०-१०१ । (३) शब्द का वह रूप-विधान जिससे एकत्व या बहुत्व सूचित होता है (व्याकरण) ।

वचनकारी—वि. [सं.] आज्ञाकारी ।

वचनलक्षिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जिसकी बात से उपपति के प्रति उसका प्रेम लक्षित हो ।

वचनविदग्धा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जो वचन की चतुरता से नायक की प्रीति का साधन करे ।

वचनीय—वि. [सं.] कथनीय ।

वच्छ—संज्ञा पुं. [हिं. वक्ष] छाती, उर ।

वजन—संज्ञा पुं. [अ. वज़न] (१) बोझ । (२) तौल ।

वजनी—वि. [हिं. वजन+ई] (१) अधिक भार वाला, भारी । (२) प्रभावशाली ।

वजह—संज्ञा स्त्री. [अ.] कारण, हेतु ।

वज़ा—संज्ञा स्त्री. [अ. वज़अ] (१) रचना, बनावट । (२) सजधज । (३) आकृति । (४) दशा, अवस्था । (५) रीति, प्रणाली ।

वजीफा—संज्ञा पुं. [अ. वज़ीफ़ा] वृत्ति ।

वजीर—संज्ञा पुं. [अ. वज़ीर] (१) मंत्री । (२) शतरंज की एक गोटी जो आगे, पीछे, दायें, बायें, सब ओर चलती है ।

वजू—संज्ञा पुं. [अ. वुज़ू] नमाज के पूर्व हाथ-पैर धोना ।

वजूद—संज्ञा पुं. [अ.] अस्तित्व ।

वज्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भाले के फल के समान एक शस्त्र जो इंद्र का प्रधान शस्त्र माना गया है । (२) बिजली, विद्युत । (३) हीरा । उ.—दसन एकन वज्र वारौं—१४१५ । (४) भाला, बरछा । उ.—हरन रुक्मिनी होत है दुहूँ ओर भइ भीर । अति अघात कछु नाहिन सूझत वज्र चलहिं ज्यौं नीर—१० उ० -६१ । (५) श्रीकृष्ण का एक प्रपौत्र जो अनिरुद्ध का पुत्र था ।

वि. (१) बहुत कड़ा । (२) भीषण ।

वज्रधर—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र ।

वज्रपाणि—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र ।

वज्रपात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बिजली गिरना । (२) घोर अनर्थ या अनिष्ट होना ।

वज्रांगी—वि. [सं.] वज्र के समान कठोर अंग या शरीरवाला । उ.—काल-रूप वज्रांगी जोधा—२६०६ ।

वज्रायुध—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र । उ.—वज्रायुध जल वर्षि सिराने—१०७० ।

वज्रावर्त—संज्ञा पुं. [सं.] एक मेघ का नाम । उ.—सुनत मेघ वर्तक सजि सैन लै आये । जलवर्त, वारि-वर्त, पवनवर्त, वज्रावर्त, आगिवर्तक जलद संग लाये ।

वज्रासन—संज्ञा पुं. [सं.] चौरासी आसनों में एक ।

वज्री—संज्ञा पुं. [सं. वज्रिन] इंद्र ।

वट—संज्ञा पुं. [सं.] बरगद का पेड़ । उ.—कहि धौं कुंद कदम बकुल वट चंपक लता तमाल—१८०८ ।

वाटिका, वटी—संज्ञा स्त्री. [सं.] गोली, टिकिया ।

वटु, वटुक—संज्ञा पुं.[सं.] (१) बालक । (२)ब्रह्मचारी ।

वणिक—संज्ञा पुं. [सं. वणिक्] व्यापारी, बनिया ।

वत—अव्य. [सं. वत्] समान, सदृश । उ.—एक याम नृप को निशि युग वत भई भारी—२४७४ ।

वतन—संज्ञा पुं. [अ.] (१) जन्मभूमि । (२) वासस्थान ।

वत्स—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गाय का बछड़ा । (२) शिशु । (३) वत्सासुर जो कंस का सेवक था और जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।

वत्सर—संज्ञा पुं. [सं.] साल, वर्ष ।

वत्सल—वि. [सं.] (१) संतान-प्रेम से युक्त । (२) छोटों के प्रति कृपालु ।

वत्सला—वि. [सं. वत्सल] स्नेह-भाव रखनेवाले । उ.—गाइ-गाउँ के वत्सला मेरे आदि सहाई—१-२३८ ।

वि.स्त्री. (१) जो (नारी) संतान-प्रेम से युक्त हो । (२) जो (नारी) छोटों के प्रति कृपालु हो ।

वत्सासुर—संज्ञा पुं. [सं.] कंस का अनुचर एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था । उ.—वत्सासुर को इहाँ निपात्यो—३४०९० ।

वदंती—संज्ञा स्त्री. [सं.] बात, कथा ।

वदक—संज्ञा पुं. [सं.] कहनेवाला, वक्ता ।

वदत—क्रि. अ. [हिं. वदना] बोलता है । उ.—चातक मोर चकोर वदत पिक मनहु मदन चटसार पढ़ावत—१० उ०-५ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रि. स. बरजता या रोकता है, मना करता है। उ०—बारन नहिं छाँड़ि दै, वदत बलराम तोहिं बार बारी—३४९०।

वदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुँह, मुख। उ.—हौं वारी तव इंदु-वदन पर अति छवि अलस भरोइ—१०-५६। (२) कथन।

वदना, वदनो—क्रि. अ. [सं. वदन] कहना, बोलना।

क्रि. स. रोकना, मना करना।

वदान्य—वि. [सं.] (१) उदार। (२) मधुरभाषी।

वदि—संज्ञा पुं. [सं. अवदिन्] कृष्ण पक्ष।

वदुसाते—क्रि. स. [हिं. वदुसाना] भला-बुरा कहते या दोष देते। उ.—सूर स्याम यहि भाँति सयाने हमहीं को वदुसाते—३३३८।

वदुसाना, वदुसानो—क्रि. स. [सं. विदूषण] भला-बुरा कहना, दोष या अपराध लगाना।

वध—संज्ञा पुं. [सं.] नाश, मारण।

वधक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हिंसक, घातक। (२) व्याध। (३) मृत्यु। (४) यमराज।

वधत्र—संज्ञा पुं. [सं.] हथियार, अस्त्र।

वधन—संज्ञा पुं. [सं. वध] नाश। उ.—कंस बधन ऐहीं करिहैं।

संज्ञा पुं. सवि. मारने के लिए। उ.—वदरिआ बधन बिरहिनी आई—२८२१।

बधिक—संज्ञा पुं. [सं.] वध करनेवाला।

वधुका—संज्ञा.स्त्री. [सं.] (१) पुत्रवधू, पतोहू। (२) नववधू, दुलहिन।

वधू—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दुलहिन। (२) पतोहू। (३) पत्नी। उ.—जौ यह वधू (बधू) होइ काहू की दारु-स्वरूप धरे—९-४१।

वधूटी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दुलहिन। (२) पतोहू। (३) पत्नी, भार्या।

वधूत—संज्ञा पुं. [सं. अवधूत] साधु, संन्यासी।

वध्य—वि. [सं.] (१) जहाँ वध किया जाय। (२) वध करने योग्य।

वन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जंगल। (२) वाटिका। (३) जल। (४) घर, आलय।

वनचर, वनचारी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन में रहने-बसनेवाला। (२) जंगली प्राणी।

वनज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जो वन (जंगल या पानी) से जन्मा हो। (२) कमल।

वनद—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वनदेव—संज्ञा पुं. [सं.] वन का अधिष्ठाता देवता।

वनदेवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन की अधिष्ठात्री देवी।

वनमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वन के फूलों की बनी माला। (२) अनेक प्रकार के वन-पुष्पों की बनी, घुटनों तक लंबी वह माला जो श्रीकृष्ण धारण करते थे। उ.—वनमाला (बनमाला) पीतांबर काछे—५०७।

वनमाली—संज्ञा पुं. [सं.] वनमाला धारण करने वाले श्रीकृष्ण।

वनराज—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह।

वनराजि, वनराजी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वन या वृक्ष-समूह। (२) वन की पगडंडी।

वनरुह, वनरूह—संज्ञा पुं. [सं. वनरुह] कमल।

वनलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन की शोभा या श्री।

वनवास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन में निवास (करना)। (२) बस्ती छोड़कर वन में बसने की व्यवस्था।

मुहा०—वनवास देना—(सुख-साधनों और बंधु-बांधवों का साथ छोड़कर) वन में रहने-बसने की आज्ञा देना। वनवास लेना—(१) (सुख-साधनों और बंधु-बांधनों को छोड़कर) वन में रहने-बसने का निश्चय करना। (२) संन्यास लेना।

वि. वन में रहने-बसनेवाला, वनवासी।

वनवासी—वि. [सं. वनवासिन्] वन में रहने-बसने वाला।

वनस्थली—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन प्रदेश।

वनस्पति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वृक्ष जिसमें फूल न दिखायी दे, केवल फल ही हों। (२) पेड़-पौधे।

वनांत—संज्ञा पुं. [सं.] वन प्रदेश।

वनिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रियतमा। (२) नारी।

वनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] छोटावन।

संज्ञा पुं. [सं. वनिन्] वानप्रस्थ।

वन्तिका—संज्ञा स्त्री. [सं. अवन्तिका] अंवतिका नगरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—कहो विप्र हम गये वंतिका गुरु के सदन विख्यात —सारा. ८११।

वन्य—वि. [सं.] (१) वन में रहने-बसने या उत्पन्न होनेवाला। (२) वन-संबंधी।

वन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सघन वन। (२) वन-समूह। (३) जल-प्लावन। (४) जल-राशि। (५) बेल, लता।

वपन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) केशों का मुंडन। (२) बीज बोना।

वपनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह स्थान जहां नाई क्षौर-कर्म करता है।

वपनीय—वि. [सं.] बोने योग्य।

वपु—संज्ञा पुं. [सं. वपुस्] (१) शरीर, देह। (२) रूप।

वपुष्टमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] परीक्षित के पुत्र जन्मेजय की पत्नी जो काशीराज की पुत्री थी।

वफा—संज्ञा स्त्री. [अ. वफ़ा.] (१) वादा पूरा करना। (२) पूर्णता, निर्वाह। (३) मुरौव्वत, शालीनता।

वफादार—वि. [अ. वफ़ा.+फ़ा. दार] (१) बात निबाहने वाला। (२) निबाहनेवाला। (३) सच्चा।

वफात—संज्ञा स्त्री. [अ. वफ़ात] मृत्यु।

वमन—संज्ञा पुं. [सं.] कै, उलटी।

वमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जी मचलाने का रोग। (२) आग, अग्नि।

वयं सर्व. [सं.] हम।

वयःक्रम—संज्ञा पुं. [सं.] अवस्था, आयु।

वयःसंधि—संज्ञा स्त्री. [सं.] बाल्य और यौवनावस्था के बीच की स्थिति, अवस्था या समय।

वय - संज्ञा स्त्री. [सं. वयस्] आयु, अवस्था।

वयक्रम – संज्ञा पुं. [सं. वयःक्रम] आयु, अवस्था। उ. —एक वयक्रम एकहि बानक रूप गुन की सींव—२०७२।

वयन—संज्ञा पुं. [सं.] बुनने का काम।

वयस्—संज्ञा पुं. [सं.] आयु, अवस्था।

वयस्क—वि. [सं.] (१) जो बालक न हो, सयाना। (२) अवस्था का।

वयस्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हमजोली, समवयस्क। (२) मित्र।

वयोवृद्ध—वि. [सं.] बड़ा-बूढ़ा।

वरंच—अव्य. [सं.] (१) ऐसा न होकर ऐसा, बल्कि, अपितु। (२) लेकिन, परंतु।

वर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह बात या मनोरथ जिसकी पूर्ति के लिए किसी बड़े या देवी-देवता से प्रार्थना की जाय। (२) किसी बड़े या देवी-देवता से प्राप्त फल या सिद्धि। (३) दूल्हा।

वि. श्रेष्ठ, उत्तम। उ.—मन के मनोज फूले हलधर वर के—१०-३४।

वरक—संज्ञा पुं. [अ. वरक़] (१) पत्र, पन्ना, सफा। (२) सोने, चाँदी आदि का बहुत महीन पत्तर जो मिठाइयों आदि पर लगाया जाता है।

वरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कन्या के विवाह में वर को स्वीकारने की रीति। (२) पूजा, अर्चना।

वरणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] काशी के उत्तर में बहनेवाली एक छोटी नदी।

वरणीय—वि. [सं.] (१) पूज्य। (२) श्रेष्ठ।

वरद—वि. [सं.] मनोरथ पूर्ण करनेवाला।

वरदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कन्या।

वरदान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी बड़े या देवी-देवता का प्रसन्न होकर (दूसरे का) अभीष्ट सिद्ध करना। (२) किसी की प्रसन्नता से होनेवाला लाभ।

वरदानी—वि. [सं.] मनोरथ पूर्ण करनेवाला।

वरन्—अव्य. [सं. वरम्] ऐसा नहीं, बल्कि।

वरना—संज्ञा पुं. [सं. वरण] ऊँट। उ.—वरना-भख कर में अवलोकत केस पास कृत बंद। अवर समुद्र सदल जो सहसा ध्वनि उपजत सुख-कंद।

अव्य. [फ़ा. वर्नः] नहीं तो, ऐसा न हुआ तो।

वरम—संज्ञा पुं. [फ़ा.] सूजन।

वरयात्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] विवाह के लिए वर का बंधु-बांधवों सहित वधू के यहां जाना।

वरही—संज्ञा पुं. [हिं. वर] सोने की 'टीका' नामक पट्टी जो विवाह में वधू को पहनायी जाती है।

संज्ञा पुं. [हिं. वर्ही] मोर, मयूर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरांगना—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुंदरी नारी।

वराक—वि. [सं.] (१) दरिद्र। (२) दयनीय। (३) अभागा, दीनहीन। (४) नीच।

वराट, वराटक—संज्ञा पुं. [सं.] कौड़ी।

वराटिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] कौड़ी।

वरानना—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुंदरी नारी।

वरासन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रेष्ठ आसन। (२) विवाह में वर का आसन।

वराह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शूकर। (२) विष्णु।

वराही—संज्ञा स्त्री. [सं.] शूकरी, सूअरी।

वरिष्ठ—वि. [सं.] श्रेष्ठ, पूज्य।

वरीयता—संज्ञा स्त्री. [सं.] किसी को औरों से श्रेष्ठ मानना, समझना या कहना।

वरु—संज्ञा पुं. [सं. वर] वर, दूलह। उ.-मोर मुकुट रवि मौर बनायो माथे पर धरि हरि वरु आयो—पृ० ३४८ (२)।

वरुण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक वैदिक देवता जो जल के अधिपति कहे गये हैं। पुराण इन्हें पश्चिम दिशा का दिक्पाल कहते हैं। साहित्य में इन्हें करुण रस का अधिष्ठाता माना गया है। इनका प्रसिद्ध अस्त्र पाश है। (२) जल।

वरुणपाश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वरुण का अस्त्र पाश। (२) 'नाक' या 'नक्र' नामक जल-जंतु।

वरुणालय—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वरुथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बख्तर, कवच। (२) ढाल। (३) फौज, दल, सेना।

वरुथिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सेना, सैन्य।

वरेण्य—वि. [सं.] (१) मुख्य। (२) पूजनीय।

वर्ग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक ही प्रकार की अनेक वस्तुओं का समूह। (२) रीति-नीति या आचार-विचार में समान भाव रखनेवाले व्यक्तियों या पदार्थों का समूह। (३) विभाग, परिच्छेद। (४) बराबर लंबाई-चौड़ाई वाला चौखूँटा क्षेत्र जिसके चारों कोण समकोण हों।

वर्चस्—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रूप। (२) कांति, प्रभा।

वर्चस्व—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तेज। (२) श्रेष्ठता।

वर्जन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) त्याग। (२) निषेध, मनाही।

वर्जना—क्रि. स. [सं. वर्जन] मना करना।

वर्जित—वि. [सं.] (१) त्यागा हुआ। (२) जो ग्रहण के अयोग्य हो, निषिद्ध।

वर्ण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रंग। (२) प्राचीन आर्यों द्वारा जन-समुदाय के किये गये चार विभाग—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। (३) भेद, प्रकार। (४) अक्षर। (५) गुण।

वर्णन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चित्रण। (२) सविस्तार कथन। उ.—सो चौबीस रूप निज कहियत वर्णन करत विचार। (३) गुण कथन, प्रशंसा।

वर्णनातीत—वि. [सं.] जिसका वर्णन न हो सके।

वर्णमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] किसी लिपि के अक्षरों की क्रमानुसार सूची।

वर्णविकार—संज्ञा पुं. [सं.] शब्द के एक वर्ण का परिवर्तित होकर दूसरा हो जाना।

वर्णविचार—संज्ञा पुं. [सं.] व्याकरण का वह अंग जिसमें वर्णों के आकार, उच्चारण, संधि-नियम आदि का वर्णन हो।

वर्णविपर्यय—संज्ञा पुं. [सं. वर्ण + विपर्य्यय] शब्द में वर्णों का उलटफेर।

वर्णवृत्त—संज्ञा पुं. [सं.] वह छंद जिसके चरणों में वर्णों की संख्या और लघु-गुरु-क्रम में समानता हो।

वर्णसंकर—वि. [सं.] जो भिन्न जातियों के स्त्री-पुरुष के संयोग से जन्मा हो।

वर्णिक—वि. [सं.] जिस (छंद) के चरणों में अक्षरों की संख्या और लघु-गुरु-क्रम में समानता हो।

वर्णित—वि. [सं.] (१) कहा हुआ। (२) वर्णन किया हुआ।

वर्णना—क्रि. स. [सं. वर्णन] वर्णन करना।

वर्णिये—क्रि. स. [हिं. वर्णना] वर्णन कीजिए। उ.—और कहाँ लगि वर्णिये पर-पुरुष न उबरन पावै—पृ० ३४९ (५९)।

वर्ण्य—वि. [सं.] (१) जो वर्णन का विषय हो। (२) जो वर्णन करने के उपयुक्त हो।

वर्तन—संज्ञा पुं. [सं. वर्त्तन] (१) व्यवहार बर्ताव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) व्यवसाय, जीवन-वृत्ति। (३) बटना, घुमाना। (४) फेरफार, परिवर्तन। (५) सिल-बट्टे से पीसना।

वर्तमान—वि. [सं. वर्त्तमान] (१) जो चल रहा हो। (२) उपस्थित, विद्यमान। (३) हाल का।

संज्ञा पुं. (१) व्याकरण में क्रिया का वह काल जिससे उसका चलता रहना (समाप्त न होना) सूचित हो। (२) समाचार, वृत्तांत। (३) चलता व्यवहार।

वर्ति—संज्ञा स्त्री. [सं. वर्त्ति] बत्ती।

वर्तिका—संज्ञा स्त्री. [सं. वर्त्तिका] सलाई, शलाका।

वर्तित—वि. [सं.] (१) चलाया या जारी किया हुआ। (२) किया हुआ, संपादित।

वर्ती—संज्ञा स्त्री. [सं. वर्त्तिन्] (१) बत्ती। (२) सलाई।

वर्तुल—वि. [सं. वर्त्तुल] गोल, वृत्ताकार।

वर्त्म—संज्ञा पुं. [सं.] गाड़ी के पहिए का मार्ग, लीक।

वर्द्धक—वि. [सं.] बढ़ानेवाला।

वर्द्धन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बढ़ाने की क्रिया या भाव। (२) वृद्धि, बढ़ती, उन्नति।

वर्द्धमान—वि. [सं.] (१) बढ़ता हुआ। (२) बढ़नेवाला।

संज्ञा पुं. जैनियों के २४ वें जिन, महावीर।

वर्द्धित—वि. [सं.] बढ़ा हुआ।

वर्म—संज्ञा पुं. [सं. वर्म्मन] कवच।

वर्य्य—वि. [सं.] (१) श्रेष्ठ। (२) प्रधान।

वर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] साल, संवत्सर।

वर्षगाँठ—संज्ञा स्त्री. [सं. वर्ष + हिं. गाँठ] पूरे वर्ष के बाद आनेवाला जन्म दिन, सालगिरह।

वर्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वह ऋतु जब खूब पानी बरसता है। (२) पानी बरसने की क्रिया या भाव।

मुहा०—(किसी चीज की) वर्षा होना - (मेघ की तरह ऊपर से) बहुत अधिक बरसना। (२) बहुत अधिक संख्या में मिलना।

वर्षागम—संज्ञा पुं. [सं.] वर्षा ऋतु का प्रारंभ।

वर्ही—संज्ञा पुं. [सं. वर्हिन्] मोर, मयूर।

वलभी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) घर के ऊपरी शिखर पर बना मंडप। (२) कठियावाड़ की एक प्राचीन नगरी।

वलय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मंडल। (२) चूड़ी।

वलाहक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेघ, बादल। (२) पर्वत। (३) श्रीकृष्ण के रथ के एक घोड़े का नाम।

वलि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लकीर, रेखा। (२) झुर्री। (३) दैत्यराज प्रहलाद का पौत्र जिसे विष्णु ने वामन अवतार लेकर छला था।

वलित—वि. [सं.] (१) लचक या बल खाया हुआ। (२) मोड़ा या झुकाया हुआ। (३) घेरा हुआ। (४) जिसमें सिकुड़न या झुर्रियाँ पड़ी हों। (५) लगा या लिपटा हुआ। (६) ढका हुआ। (७) युक्त, सहित।

वली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) झुर्री, सिकुड़न। (२) लकीर, रेखा। (३) पेटी के सिकुड़ने से पेट के दोनों ओर पड़ जानेवाली रेखा।

संज्ञा पुं. [अ.] (१) स्वामी। (२) साधु, फकीर।

वल्कल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेड़ की छाल। (२) पेड़ की छाल का बना वस्त्र जिसे तपस्वी पहना करते थे।

वल्कली—वि. [सं. वल्कलिन्] वल्कल का वस्त्रधारी।

वल्गा—संज्ञा स्त्री. [सं.] घोड़े की बाग, लगाम।

वल्द—संज्ञा पुं. [अ.] बेटा, पुत्र।

वल्दियत—संज्ञा स्त्री. [अ.] पिता के नाम का पता।

वल्मीक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दीमकों की बाँबी। (२) वाल्मीकि मुनि।

वल्लभ—वि. [सं.] अत्यंत प्रिय, प्रियतम।

संज्ञा पुं. (१) नायक। (२) पति। (३) स्वामी। (४) एक प्रसिद्ध आचार्य जिनका जीवनकाल सन् १४७९ से १५३१ तक माना जाता है। ये वैष्णव संप्रदाय के प्रवर्तक थे और इनका संप्रदाय 'वल्लभ-संप्रदाय' कहलाता है। सूरदास इन्हीं के शिष्य थे।

वल्लभा, वल्लभी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रियतमा। (२) पत्नी।

वि. स्त्री. अत्यंत प्रिय।

वल्लभिनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [सं. वल्लभी] प्रियतमाओं (का)। उ.—सुरति सँदेस सुनाइ मेटौ वल्लभिनि को दाहु—२९२०।

वल्लरि, वल्लरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लता, बेल। (२) मंजरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वल्ली—संज्ञा स्त्री. [सं.] लता। उ.—द्रुमनि वर वल्ली वियोगिनि मिलति हैं पहिचानि—२८२८।

वल्वल—संज्ञा पुं. [सं.] एक दैत्य जिसे बलराम ने मारा था। उ.—राम दिन कइक ता ठौर औरहू रहे, आइ वल्वल तहाँ दियौ दिखाई। रुधिर अरु मांस की लग्यौ वर्षा करन ऋषि सकल देखि कै गये डराई।

वशंवद—वि. [सं.] आज्ञाकारी।

वश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) इच्छा। (२) अधिकार।

मुहा०—(किसी के) वश में होना—(१) अधीन होना। (२) कहे में होना। (किसी पर) वश होना—(१) अधिकार होना। (२) कहे के अनुसार काम करा लेना। वश का—(१) जिस पर अधिकार हो। (२) जिससे इच्छानुसार काम कराया जा सके।

(३) शक्ति, सामर्थ्य।

मुहा०—वश का—जिसका पूरा करना शक्ति या सामर्थ्य में हो। वश चलना—कुछ कर सकने की शक्ति या सामर्थ्य होना।

(४) अधिकार या प्रभुत्व में लाने का भाव। उ.—हरि कछु ऐसो टोना जानत। सबके मन अपने वश आनत।

वशवर्त्ती—वि. [सं. वशवर्त्तिन्] अधीन, आज्ञानुवर्त्ती।

वशित्व—संज्ञा पुं. [स.] आठ सिद्धियों में एक जिससे सबको वश में किया जा सकता है।

वशी—वि. [सं. वशिन्] (१) वश में रखनेवाला। (२) अधीन किया हुआ।

वशीकरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वश में करने की क्रिया। (२) मंत्रादि से किसी को वश में करने का प्रयोग।

वशीकृत—वि. [सं.] (१) वश में किया हुआ। (२) मंत्रादि से वश में किया हुआ। (३) मोहित, मुग्ध।

वशीभूत—वि. [सं.] (१) अधीन। (२) इच्छानुसार कार्य करने को विवश।

वश्य—वि. [सं.] अधीन, वशीभूत। उ.—लूटत रूप अखूट दाम को स्याम वश्य यों मोर—पृ. ३२४ (३३)।

वश्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अधीनता।

वसंत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भारतीय वर्ष की सर्वप्रथम ऋतु जो चैत और बैसाख में होती है। उ.—ब्रज बनितनि के नैन प्रान बिच तुमहीं स्याम वसंत—सारा. ५८१। (२) छह रागों में दूसरा।

वसंततिलका—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक वर्ण वृत्त।

वसंतपंचमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] माघ के शुक्ल पक्ष की पंचमी जिसे 'श्रीपंचमी' भी कहते हैं। इस दिन वसंत और रति सहित काम की पूजा का विधान है। उ.—प्रथम वसंतपंचमी लीला सूरदास यश गायौ—२३९१।

वसंत महोत्सव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वसंत पंचमी के दूसरे दिन वसंत और काम की पूजा के उपलक्ष में मनाया जाने वाला उत्सव। (२) होलिकोत्सव।

वसंतसखा—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

वसंती—संज्ञा पुं. [सं. वसंत] हलका पीला रंग।

वि. सरसों के फूल जैसे हल्के पीले रंग का।

वसंतोत्सव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वसंत पंचमी के दूसरे दिन वसंत और कामदेव की पूजा का उत्सव जिसे 'मदनोत्सव' भी कहते हैं। (२) होलिकोत्सव।

वसन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वस्त्र। उ.—रजक मारि हरि प्रथम ही नृप वसन लुटाए—२५७९। (२) ढकने की वस्तु, आवरण।

वसना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (स्त्री की) कमर या कटि का एक भूषण।

वसवास—संज्ञा पुं. [अ.] (१) भ्रम, संदेह। (२) भुलावा, बहकावा, प्रलोभन।

वसवासी—वि. [अ. वसवास] (१) संदेह में पड़ने वाला। (२) भुलावे में डालने वाला।

वसह—संज्ञा पुं. [सं. वृषभ, प्रा. बसह] बैल। उ.—अमरा सिव रवि ससि चतुरानन हय गय वसह हंस मृग जावत—९७८।

वसा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मेद, चरबी।

वसिष्ठ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन ऋषि जो ऋग्वेद के अनेक मंत्रों के द्रष्टा माने जाते हैं। कामधेनु के लिए वसिष्ठ और विश्वामित्र का बहुत समय तक झगड़ा होता रहा। अपनी अनेक पत्नियों में वसिष्ठ को अरुंधती विशेष प्रिय थी। (२) सप्तर्षि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंडल का एक तारा जिसके पास का छोटा तारा 'अरुंधती' कहा जाता है।

वसीका—संज्ञा पुं. [अ. वसीक़ा] वह धन जो सरकारी खजाने में इसलिए जमा किया जाय कि उसका ब्याज जमा करनेवाले के संबंधियों को मिलता रहे।

वसीयत—संज्ञा स्त्री. [अ.] मरणासन्न व्यक्ति द्वारा अपनी संपत्ति-संबंधी लिखी गयी व्यवस्था।

वसीला—संज्ञा पुं. [अ.] (१) सहारा। (२) सिद्धि का उपाय।

वसुंधरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी।

वसु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक देव-गण जिसमें आठ देवता हैं। (२) आठ की संख्या।

वसुदेव—संज्ञा पुं. [सं.] शूर कुल के एक यदुवंशी राजा जिनके पिता का नाम देवमीढ़ और माता का मारिषा था। इनकी बारह पत्नियों में रोहिणी के गर्भ से बलराम और देवकी से श्रीकृष्ण जन्मे थे। इनकी बहन कुंती पांडवों की माता थी।

वसुधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी।

वसुमति, वसुमती—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी।

वसुहंस—संज्ञा पुं. [सं.] वसुदेव का पुत्र और श्रीकृष्ण का भाई एक यादव।

वसूल—वि. [अ.] प्राप्त, लब्ध।

वसूली—संज्ञा स्त्री. [अ. वसूल] रुपया वसूलने या चुकता कराने की क्रिया।

वस्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नाभि के नीचे का भाग, पेड़ू। (२) पिचकारी।

वस्तिकर्म—संज्ञा पुं. [सं.] गुदा मार्ग आदि में पिचकारी देने की क्रिया।

वस्तु—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वह जिसका अस्तित्व हो। (२) चीज, पदार्थ।

वस्तुज्ञान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी वस्तु की पहचान। (२) तथ्य-बोध, तत्वज्ञान।

वस्तुतः—अव्य. [सं.] वास्तव में, यथार्थतः।

वस्तुवाद—संज्ञा पुं. [सं.] एक दार्शनिक सिद्धांत जिसमें जगत जैसा दृश्य है उसी रूप में उसकी सत्ता मानी जाती है।

वस्त्र—संज्ञा पुं. [सं.] कपड़ा।

वस्फ—संज्ञा पुं. [अ. वस्फ़](१) प्रशंसा। (२) विशेषता।

वह—सर्व. [सं. सः] (१) वक्ता द्वारा श्रोता से तीसरे व्यक्ति या पदार्थ की ओर संकेत करनेवाला एक सर्वनाम। (२) दूर या परोक्ष की वस्तु की ओर संकेत करनेवाला एक सर्वनाम।

वहन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खींच या लादकर ले जाना। (२) ऊपर लेना, उठाना।

वहना—क्रि. स. [सं. वहन] (१) ढोना। (२) अपने ऊपर लेना।

वहम—संज्ञा पुं. [अ.] (१) मिथ्या धारणा। (२) भ्रम। (३) व्यर्थ की शंका या संदेह।

वहमी—वि. [अ. वहम] (१) मिथ्या धारणा-जनित। (२) जो वहम करता हो।

वहशत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) जंगलीपन। (२) पागलपन। (३) उदासी, सन्नाटा।

वहशी—वि. [अ.] (१) जंगली। (२) असभ्य।

वहाँ—अव्य. [हिं. वह] उस स्थान पर।

वहिः अव्य. [सं.] जो अंदर या भीतर न हो, बाहर।

वहिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाव, नौका।

वहिरंग—संज्ञा पुं. [सं.] ऊपरी या बाहरी भाग। वि. (१) ऊपरी, बाहरी। (२) जो सार-रूप न हो। (३) अनावश्यक।

वहिर्गत—वि. [सं.] बाहर या ऊपर की ओर निकला या गया हुआ।

वहिर्लापिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] पहेली।

वहिष्कृत—वि. [सं.] निकाला या त्यागा हुआ।

वहीं—अव्य. [हिं. वहाँ+ही] उसी स्थान पर।

वही—सर्व. [हिं. वह+ही] (१) पूर्वोक्त ही। (२) निर्दिष्ट ही, अन्य नहीं।

वहै—सर्व. [हिं. वह+ही] (१) वैसा ही। उ.—ज्यौं गयंद अन्हाइ सरिता बहुरि वहै सुभाइ—१-४५। (२) वह ही। उ.—उलटि जाहु नृप-चरन-सरन सुनि वहै राखिहै भाई—९-७।

वह्नि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अग्नि। उ.—ज्यौं घृत होम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह्नि की महिमा सूर प्रगट या माहीं—१६९२। (२) श्रीकृष्ण का मित्रविंदा से उत्पन्न एक पुत्र।

वह्निमित्र—संज्ञा पुं. [सं.] हवा, वायु।

वह्निमुख—संज्ञा पुं. [सं.] देवता।

वाँ—अव्य. [हिं. वहाँ] उस स्थान पर।

वांछना—संज्ञा स्त्री. [हिं. वांछा] इच्छा, चाह। उ.—यह वांछना होइ क्यों पूरन दासी ह्वै बरु ब्रज रहिए —पृ० ३४४ (३२)।

वांछनीय—वि. [सं.] (१) चाह या इच्छा के योग्य। (२) जिसकी चाह या इच्छा हो।

वांछा—संज्ञा स्त्री. [सं. वाञ्छा] चाह, इच्छा।

वांछित—वि. [सं.] चाहा हुआ, इच्छित। उ.—(क) सो निज गोपी चरण-रज वांछित हो तुम देव—१८६१। (ख) घर-घर नगर अनंद बधाई मनवांछित फल सबनि लहो—२६४४।

वांति—संज्ञा स्त्री. [सं.] कै, उलटी, वमन।

वा—अव्य. [सं.] या, अथवा।

सर्व. [हिं. वह] (१) व्रजभाषा में प्रथम पुरुष का कारक चिह्न लगने के पूर्व एकवचन रूप। (२) उस। उ.—(क) जाइ समाइ सूर वा निधि मैं, बहुरि जगत नहिं नाचै—१-८१। (ख) वा घट मैं काहू कैं लरिका मेरौ माखन खायौ—१०-१५६।

वाइ—सर्व. [हिं. वाहि] उसे ही।

संज्ञा स्त्री. [हिं. वायु] हवा, वायु। उ.—आसन ध्यान वाइ आराधन अलि मन चित तुम ताए—२९९१।

वाउ—संज्ञा स्त्री. [हिं. वायु] हवा, वायु। उ.—उठत बिरह धूम पावक जरि बरि वाउ बहो—३११९४।

वाकई—अव्य. [अ. वाक़ई] सचमुच, वास्तव में।

वाकया—संज्ञा पुं. [अ. वाक़या] (१) घटना। (२) समाचार।

वाकि—सर्व. [हिं. वा+की] उसकी। उ.—एते पर मन हरत है री कहा कहौं गति वाकि—२४१३।

वाकिफ—वि. [अ. वाक़िफ़] (१) जानकार। (२) अनुभवी।

वाकी—सर्व. [हिं. वा+की] उसकी। उ.—(क) संपति दै वाकी पतिनी को—१-७। (ख) वाकी पैज सरै—१-८२।

वाके—सर्व. [हिं. वा+के] उसके। उ.—कपट-लीभ वाके दोउ भैया—१-१७३।

वाको, वाकौ—सर्व. [हिं. वा+को, कौ] उसको। उ.—मैया री, मैं जानत वाकौ—६९४।

वाक्—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वाणी, वाक्य। (२) बोलने की इंद्रिय। (३) सरस्वती।

वाक्चपल—वि. [सं.] (१) बहुत बातें करनेवाला। (२) कोरी बातें करनेवाला, भड़भड़िया।

वाक्छल—संज्ञा पुं. [सं.] धोखा देने के लिए श्लिष्ट या भ्रामक शब्दों का प्रयोग।

वाक्पटु—वि. [सं.] बात करने में चतुर।

वाक्फियत—संज्ञा स्त्री. [अ. वाक़िफ़यत] जानकारी।

वाक्य—संज्ञा पुं. [सं.] कर्त्ता-क्रिया से युक्त सार्थक पद-समूह जो वक्ता के अभिप्राय का बोधक हो।

वाक्यविन्यास—संज्ञा पुं. [सं.] वाक्य-रचना।

वाक्संयम—संज्ञा पुं. [सं.] वाणी पर नियंत्रण रखकर व्यर्थ बातें न करना।

वाक्सिद्धि—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह सिद्धि जिससे कही हुई बात ठीक उतरे।

वाक्यांश—संज्ञा पुं. [सं.] वाक्य का कुछ अंश।

वागा—संज्ञा स्त्री. [सं.] लगाम, वल्गा।

वागीश—वि. [सं.] अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता।

वागीशा—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती।

वागीश्वर—वि. [सं.] अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता।

वागीश्वरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती।

वाग्जाल—संज्ञा पुं. [सं.] बातों का आडंबर।

वाग्दंड—संज्ञा पुं. [सं.] मौखिक दंड, डाँट-डपट।

वाग्दत्त—वि. [सं.] जिसको देने की बात कही जा चुकी हो।

वाग्दत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह कन्या जिसके विवाह की बात मौखिक रूप से पूर्णतया निश्चित हो चुकी हो।

वाग्दान—संज्ञा पुं. [सं.] सुयोग्य पात्र के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने का मौखिक निश्चय।

वाग्देवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वाणी, सरस्वती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाग्दोष—संज्ञा पुं. [सं.] बोलने की उच्चारण-जैसी या व्याकरण-संबंधी त्रुटि ।

वाग्मी—वि. [सं.] अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता ।

वाग्विदग्ध—वि. [सं.] बातचीत में चतुर ।

वाग्विलास—संज्ञा पुं. [सं.] आनंददायी संभाषण ।

वाग्वैदग्ध्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बात करने का कौशल । (२) अलंकारों और चमत्कारपूर्ण उक्तियों के व्यवहार का कौशल ।

वाङ्मय—वि. [सं.] जो पठन-पाठन का विषय हो ।
संज्ञा पुं. साहित्य ।

वाङ्मयी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती ।

वाच्—संज्ञा स्त्री. [सं.] वाणी, वाक्य ।

वाचक—वि. [सं.] सूचक, बोधक, द्योतक ।
संज्ञा पुं. नाम, संज्ञा, संकेत ।

वाचन—संज्ञा पुं. [सं.] पढ़ना, बांचना ।

वाचयिता—वि. [सं. वाचयितृ] बांचनेवाला, वाचक ।

वाचस्पति—संज्ञा पुं. [सं.] वृहस्पति ।

वाचा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वाणी । (२) वचन ।

वाचाबंध—वि. [सं. वाचाबद्ध] प्रतिज्ञाबद्ध, वचनबद्ध । उ.—वाचाबंध कंस करि छाँड़्यो तब बसुदेव पतीजे हो । याके गर्भ अवतरे जे सुत सावधान ह्वै लीजे हो ।

वाचाबद्ध—वि. [सं.] वचन या प्रतिज्ञाबद्ध ।

वाचाल—वि. [सं.] (१) बकवादी । (२) वाक्पटु ।

वाचालता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बकवादीपन । (२) वाक्पटुता ।

वाचिक—वि. [सं.] (१) वाणी-संबंधी । (२) वाणी से किया हुआ । (३) संकेत द्वारा सूचित ।

वाची—वि. [सं. वाचिन्] बोधक, सूचक ।

वाच्य—वि. [सं.] जिसका बोध शब्द-संकेत अथवा अभिधा द्वारा हो, अभिधेय ।

वाच्यार्थ—संज्ञा पुं. [सं.] वह अभिप्राय जो शब्दों के सामान्य अर्थ द्वारा ही सूचित हो, मूल शब्दार्थ ।

वाजपेय—संज्ञा पुं. [सं.] यज्ञ-विशेष ।

वाजपेयी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वाजपेय यज्ञ करनेवाला । (२) अत्यंत कुलीन व्यक्ति । (२) कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की एक उपाधि ।

वाजिब—वि. [अ.] ठीक, उचित ।

वाजिबी—वि. [अ.] ठीक, उचित ।

वाजिमेध—संज्ञा पुं. [सं.] अश्वमेध ।

वाजिराज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उत्तम अश्व । (२) उच्चैःश्रवा ।

वाजी—संज्ञा पुं. [सं. वाजिन्] घोड़ा, अश्व ।

वाजीकरण—संज्ञा पुं. [सं.] अश्व के समान रति-शक्तिवाला प्रयोग ।

वाट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मार्ग । (२) मंडप ।

वाटिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] बाग, बगीचा ।

वाड़व—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्री आग ।

वाड़वागि, वाड़वाग्नि—संज्ञा स्त्री. [सं. वाड़वाग्नि] समुद्री आग ।

वाण—संज्ञा पुं. [सं.] तीर ।

वाणिज्य—संज्ञा पुं. [सं.] व्यापार ।

वाणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सरस्वती । (२) वाक्-शक्ति । उ.—इतनी कहत गरुण पर चढ़िकै तुरतहिं मधुबन आए । कंबु कपोल परसि बालक के वाणी प्रगट कराये । (३) मुँह से निकले शब्द, वचन । उ. —सबन सुनाइ कही यह वाणी इह नँदनंद कह्यौ—२५७८ । (४) जीभ, रसना । उ.—नैन निरखि चकित ह्वै गये, मन वाणी दोऊ थकित रये । (५) स्वर ।

वात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हवा, वायु । (२) शरीर के भीतर की वायु जो श्वास, प्रश्वास आदि कार्यों का मूल है और जिसके कुपित होने से अनेक रोग होते हैं ।

वातज—वि. [सं.] वायु द्वारा उत्पन्न ।

वातपट—संज्ञा पुं. [सं.] ध्वजा, पताका ।

वातपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान । (२) भीम ।

वातायन—संज्ञा पुं. [सं.] झरोखा, गवाक्ष ।

वातावरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह हवा जो पृथ्वी को घेरे है । (२) आसपास की परिस्थिति ।

वातुल—वि. [सं.] बावला, उन्मत्त ।

वातैं—सर्व. [हिं. वा + तैं] उससे । उ.—वातैं दूनी देह धरी, असुर न सक्यौ सम्हारि—४३१ ।

वात्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] बवंडर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात्सल्य – संज्ञा पुं. [सं.] वह स्नेह जो माता, पिता, गुरु आदि में पुत्र, पुत्री, शिष्य आदि छोटों के प्रति होता है।

वात्सल्य-भाजन—वि. [सं.] स्नेहपात्र।

वाद—संज्ञा पुं. [सं.] दलील, तर्क, शास्त्रार्थ।

वादक—वि. [सं.] (१) तर्क करनेवाला। (२) बाजा बजानेवाला।

वादग्रस्त—वि. [सं.] जिसके संबंध में मतभेद हो।

वादत—क्रि. अ. [हिं. वादना] कहना, बोलना। उ. वादत बड़े सूर की नाईं अबहिं लेत हौं प्रान तुम्हारो —२५९०।

वादन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बाजा। (२) बाजा बजाने की क्रिया।

वादना – क्रि. स. [सं. वादन] बाजा बजाना।

क्रि. अ. कहना, बोलना।

वादप्रतिवाद—संज्ञा पुं. [सं.] बहस, वादविवाद।

वादरायण—संज्ञा पुं. [सं.] वेदव्यास।

वादरायणि—संज्ञा पुं. [सं.] व्यास-पुत्र शुकदेव।

वादविवाद – संज्ञा पुं. [सं.] बहस, तर्क-वितर्क।

वादा—संज्ञा पुं. [अ. वाइदा] वचन, प्रतिज्ञा।

मुहा०—वादा करना—प्रतिज्ञा करना, वचन देना। वादा पूरा करना—वचन के अनुसार काम करना। वादा रखाना—प्रतिज्ञा करा लेना।

वादि—संज्ञा पुं. [सं.] विद्वान, पंडित।

अव्य. [हिं. बादि] व्यर्थ, निःप्रयोजन।

वादित—वि. [सं.] बजाया हुआ।

वादित्र—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा, वाद्य।

वादिहि— अव्य. [हिं. बादि+हि] व्यर्थ ही, निष्प्रयोजन। उ.—वादिहि मरि जैहै पल भीतर कहे देत नहिं दोष हमारो—२५९०।

वादी—संज्ञा पुं. [सं. वादिन्] (१) बोलनेवाला। (२) अभियोग चलानेवाला।

वाद्य—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा।

वाद्यक—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा-बजानेवाला।

वान—संज्ञा पुं. [सं. वाण] तीर, बाण।

वानप्रस्थ—संज्ञा पुं. [सं.] मनुष्य जीवन के चार आश्रमों में तीसरा आश्रम जो गार्हस्थ्य के पीछे और संन्यास के पहले पड़ता है। इसमें वैराग्य का अभ्यास किया जाता है। उ.—आपुहिं वानप्रस्थ ब्रह्मचारी—३४४२।

वानर—संज्ञा पुं. [सं.] बंदर।

वानरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] बँदरिया।

वाप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोना। (२) खेत।

वापक—संज्ञा पुं. [सं.] बीज बोनेवाला।

वापन—संज्ञा पुं. [सं.] बीज बोने का कार्य।

वापस—वि. [फ़ा.] लौटा हुआ।

वापसी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. वापस] लौटने या लौटाने की क्रिया या भाव।

वापिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] बावली, जलाशय, वापी।

वापी—संज्ञा स्त्री. [सं.] छोटा जलाशय, बावली।

वाम—वि. [सं.] (१) बायाँ। उ.—वाम भाग की छवि टरत न मन तैं—२३५३। (२) प्रतिकूल। (३) टेढ़ा, कुटिल। (४) दुष्ट, नीच, बुरा।

संज्ञा पुं. (१) कामदेव (२) श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।

संज्ञा स्त्री. [सं. वामा] स्त्री। उ.—ताही मान्यो हेत करि इन, हँसति ब्रज की वाम—२५८२।

वामदेव—संज्ञा पुँ. [सं.] शिव, महादेव।

वामदेवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

वामन—वि. [सं.] छोटे डील का, बौना।

संज्ञा पुं. विष्णु का पाँचवाँ अवतार जो राजा बलि को छलने के लिए अदिति के गर्भ से हुआ था।

वाममार्ग—संज्ञा पुं. [सं.] वेद-मार्ग के प्रतिकूल एक तांत्रिक मत जिसमें पंच मकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन जैसी वर्जित बातों का ही विधान रहता है।

वामांगिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पत्नी।

वामा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नारी। (२) दुर्गा।

वामाचार—संज्ञा पुं. [सं.] वेदमार्ग के प्रतिकूल एक तांत्रिक मत जिसमें पंच मकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन जैसी वर्जित बातों का विधान रहता है।

वामावर्त—वि. [सं.] जो (परिक्रमा आदि) बायीं ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न आरंभ हो। (२) जिसमें बायीं ओर घुमाव या भँवरी हो।

वाय—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] हवा।

वायन—संज्ञा पुं. [सं.] पकवान आदि जो विशेषोत्सव के लिए बनाया जाय।

वायविक—वि. [सं.] वायुसंबंधी।

वायवी, वायव्य—वि. [सं.] (१) वायु-संबंधी (२) वायु से बना हुआ। (३) जिसका देवता वायु हो।

संज्ञा पुं. पश्चिमोत्तर दिशा जिसका अधिपति वायु है।

वायस—संज्ञा पुं. [सं. वायस्] कौआ। उ.—(क) बाँह थकी वायस हीं उड़ावत कब देखौं उनहार—२७६९। (ख) काज सरे दुख गए कहो धौं का वायस की पीर—३१००।

वायु—संज्ञा स्त्री. [सं.] हवा, वात।

वायुपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान। (२) भीम।

वायुभक्ष्य—संज्ञा पुं. [सं.] साँप, सर्प।

वायुमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] आकाश।

वार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) द्वार। (२) रोक। (३) अवसर। (४) सप्ताह का दिन। (५) दाँव, बारी। (६) आघात। उ.—जहाँ बरन-बरन बादर बानैत अरु दामिनि करि करि वार—१० उ-२१। (७) (नदी, समुद्र आदि का) किनारा।

वारक—वि. [सं.] निषेध करनेवाला।

वारण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मनाही, निषेध। (२) रुकावट, बाधा। (३) अंकुश। (४) हाथी।

वारत—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करता है।

वारति—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करती है। उ.—(क) छुद्रावली उतारति कटि तैं सैंति धरति मन ही मन वारति—५११। (ख) छवि निरखति तनु वारति अपनो—८७७। (ग) चितै रही मुख इंदु मनोहर या छवि पर वारति तन को।

वारतिय—संज्ञा स्त्री. [सं. वारस्त्री] वेश्या।

वारद—संज्ञा पुं. [सं. वारिद] बादल, मेघ।

वारदात—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) दुर्घटना। (२) दंगा-फसाद। (३) घटना-संबंधी समाचार।

वारन—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना] निछावर।

संज्ञा पुं. [सं. वंदन] बंदनवार। उ.—घर घर धुजा पताका बानी। तोरन वारन वासर ठानी।

संज्ञा पुं. [सं.वारण] हाथी। उ.—बारबार संकर्षण भाषत वारन वनि वारन करि न्यारो—२५९०।

वारना—क्रि. स. [हिं. उतारना] निछावर करना।

संज्ञा पुं. निछावर।

वारनारी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारने—संज्ञा पुं. [हिं. वारना] निछावर। उ.– लटकन सीस कंठ मनि भ्राजत''' कोटि वारने गै री।

प्र०—वारने करिया—निछावर कर दिये। उ.—उपमा काहि देउँ को लायक मन्मथ कोटि वारने करिया—६८८। वारने जाऊँ—निछावर हो जाऊँ बलि जाऊँ। उ.—कान्ह प्यारे वारने जाऊँ स्यामसुंदर मूरति पर—१५७६। जैए वारने—निछावर होइए, बलि जाइए। उ.—स्याम वरन घन सुंदर ऐसे नट-नागर के जैए री वारने—पृ. ३४५ (३७)।

वारनो—क्रि. स. [हिं. उतारना] निछावर करना।

संज्ञा पुं. निछावर।

वारपार—संज्ञा पुं. [सं. अवर+पार] (१) (नदी आदि का) इस किनारे से उस किनारे तक पूरा विस्तार। (२) यह छोर और वह छोर, अंत। उ.—(क) यह छवि नहिं वार-पार–६१९। (ख) सूर स्याम अँखियनि देखति जाको वार न पार—१३११।

अव्य. (१) इस किनारे से उस किनारे तक। (२) एक ओर से दूसरी ओर तक।

वारफेर—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना+फेरना] (१) वह धन जो विशेष अवसरों पर वर-वधू या अन्य प्रियजनों के सिर से उतार कर नाई, डोम आदि को दिया जाय। (२) निछावर।

वारमुखी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारवधु, वारवधू संज्ञा स्त्री. [सं. वारवधू] वेश्या।

वारस्त्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारांगणा, वारांगना—संज्ञा स्त्री. [सं. वारांगणा] वेश्या।

वारांनिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारा—संज्ञा पुं. [सं. वारण] बचत, लाभ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संज्ञा पुं. [हिं. वार] इधर का किनारा। उ.—सिंधु समान पार ना वारा—१०१८।

वि. [हिं. वारना] जो निछावर हुआ हो।

मुहा०—वारा जाना या होना—निछावर होना।

वाराणसी—संज्ञा स्त्री. [सं.] काशी का एक नाम जिसकी व्युत्पत्ति कुछ लोग वरुणा और असी नदियों के नाम पर, कुछ (वर+अनस्=जल) 'पवित्र जलवाली पुरी' और कुछ 'उत्तम रथोंवाली पुरी' बतलाते हैं।

वारान्यारा—संज्ञा पुं. [हिं. वार+न्यारा] (१) निर्णय, निश्चय। (२) निबटेरा, अंत।

बाराह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शूकर। (२) विष्णु का तीसरा अवतार।

वारि—संज्ञा पुं. [सं.] पानी, जल।

क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करके। उ.—देति अभूषन वारि वारि सब—१०-७८।

वारिए—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर कीजिए। उ.—सूर ऐसे बदन ऊपर वारिए तन प्रान—३५०।

वारिचर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जलजंतु। (२) मछली।

वारिज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कमल। (२) मछली। (३) शंख। (४) घोंघा। (५) कौड़ी। (६) खरा सोना।

वारिजात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कमल। (२) शंख।

वारित—वि. [सं.] जो रोका गया हो, निवारित।

वारिद—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिधर—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारिनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेघ। (२) समुद्र। (३) वरुण।

वारिनिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारी] निछावर।

वारिरुह—संज्ञा पुं. [सं.] कमल।

वारिवर्त संज्ञा पुं. [सं. वारि+वर्त्त] एक मेघ का नाम। उ.—सुनत मेघवर्तक साजि सैन लाए। जलवर्त वारिवर्त पवनवर्त बज्रवर्त आगिवर्तक जलद संग ल्याए—९४४।

वारिवाह—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिस—संज्ञा पुं. [अ.] उत्तराधिकारी।

वारींद्र—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारी वि. स्त्री. [हिं. वारा] निछावर। उ.—मोहन के मुख ऊपर वारी—१०-३०।

संज्ञा पुं. [सं. वारि] पानी, जल। उ.—अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खार कूप कौ वारी - ३३४०।

वारीफेरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना + फेरना] (१) विशेष अवसरों पर दूल्हा-दुलहिन अथवा अन्य प्रियजनों के ऊपर से कुछ धन उतार कर नाई डोम आदि को देना। (२) निछावर।

वारीश—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारुणी - संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मदिरा। (२) वरुण की स्त्री, वरुणानी। (३) पश्चिम दिशा। (४) वृंदावन के एक कदंब का रस जो वरुण की कृपा से बलराम को मिला था। उ.—वारुणी बलराम पियारी—१० उ०-३९।

वारौं—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर कर दूँ।

वार्त्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जनश्रुति। (२) वृत्तांत। (३) विषय, प्रसंग। (४) बातचीत।

वार्तालाप—संज्ञा पुं. [सं.] बातचीत।

वार्तिक—संज्ञा पुं. [सं. वार्त्तिक] किसी ग्रंथ के क्लिष्ट अंश को स्पष्ट करने को लिखा गया भाष्य।

वार्द्धक्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बुढ़ापा। (२) वृद्धि।

वार्षिक—वि. [सं.] (१) वर्ष संबंधी। (२) वर्ष भर का। (३) प्रति वर्ष होनेवाला। (४) वर्षाकाल में होनेवाला।

वार्ष्णेय—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

वालिकुमार—संज्ञा पुं. [हिं. वाली+कुमार] अंगद।

वालदन—संज्ञा पुं. [अ.] माता-पिता।

वाला—प्रत्य. [देश.] स्वामित्व, संबंध, अधिकार आदि का सूचक एक प्रत्यय।

वालिद—संज्ञा पुं. [अ.] पिता।

वालिदा—संज्ञा स्त्री. [अ.] माता।

वाली—संज्ञा पुं. [सं. वालिन्] वानरराज जो सुग्रीव का बड़ा भाई और अंगद का पिता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्य. स्त्री. [हिं. वाला] स्वामित्व, संबंध, अधिकार आदि सूचक एक स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय।
वालुका—संज्ञा स्त्री. [सं.] रेत, बालू।
वाल्मीकि—संज्ञा पुं. [सं.] एक मुनि जो संस्कृत रामायण के रचयिता और आदि कवि कहे जाते हैं। इनका आश्रम तमसा नदी के किनारे था।
वावैला—संज्ञा पुं. [अ.] (१) रोना-पीटना। (२) शोरगुल, कोलाहल। (३) झगड़ा।
वाष्प—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आंसू। (२) भाप।
वासंती—वि. [सं. वसंत] वसंत-संबंधी।
वास - संज्ञा पुं. [सं.] (१) निवास। (२) घर।
वासकसज्जा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जो नायक से मिलने को घर आदि सजाकर और स्वयं भी सज-धज कर बैठी हो।
वासना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) इच्छा। (२) भावना।
वासर - संज्ञा पुं. [सं.] (१) दिन, दिवस। उ.— आगम सुख उपचार विरह ज्वर वासर ताप नसावते—२७-३५। (२) वह घर जिसमें नवदंपति पहली रात को सोते हैं।
वासव—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र।
वासा संज्ञा पुं. [सं. वास] निवास-स्थान।
वासित—वि. [सं.] (१) सुगंधित किया हुआ। (२) जो ताजा न हो, बासी।
वासिल—वि. [अ.] (१) पहुँचाया हुआ। (२) मिला हुआ।

यौ.—वासिल बाकी—वसूल और बाकी रकम। उ.—वासिल बाकी स्याहा मुजमिल सब अधरम की बाकी। चित्रगुप्त सु होत मुस्तौफी सरन गहूँ मैं काकी —१-१४३।

वासी—वि. [सं. वासिन्] रहने-बसनेवाला।
वासु—संज्ञा पुं. [सं. वास] रहना, निवास। उ.—विरहिनी वासु क्यों करै पावस काल प्रतीत—२८७६।
वासुकी—संज्ञा पुं. [सं.] आठ नागराजों में दूसरा जिसकी नेति बना कर सागर मथा गया था। उ.—वासुकी (बासुकी) नेति अरु मंदराचल रई कमठ मैं आपनी पीठि धारीं—८-८।
वासुदेव—संज्ञा पुं. [सं.] वसुदेव-पुत्र श्रीकृष्ण।
वासुदेवक—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण का उपासक।
वासौं – सर्व. [हिं. वा+सौं] उससे। उ.—पै वासौं उत्तर नहिं लह्यौ—१-२९०।
वास्तव वि. [सं.] प्रकृत, यथार्थ, सत्य।

यौ०—वास्तव में— सचमुच।

वास्तविक—वि. [सं.] (१) सत्य। (२) ठीक।
वास्तविकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] यथार्थता।
वास्ता—संज्ञा पुं. [अ.] लगाव, संबंध।
वास्तु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) घर। (२) इमारत।
वास्ते— अव्य. [अ.] (१) लिए निमित्त। (२) हेतु।
वाह—संज्ञा पुं. [सं.] वाहन, सवारी।

अव्य. [फ़ा.] (१) प्रशंसासूचक शब्द। (२) आश्चर्यसूचक शब्द। (३) आनंदसूचक शब्द। (४) घृणासूचक शब्द।

वाहक— संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोझ ढोनेवाला। (२) सारथी।
वाहन— संज्ञा पुं. [सं.] सवारी।
वाहवाही—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] प्रशंसा, स्तुति।
वाहि—सर्व. [हिं. वा+हि] उसे। उ.—सोवैं तब जब वाहि सुवावै—५-३।
वाहिनी – संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सेना जिसमें ८१ हाथी ८१ रथ, २४३ घोड़े और ४०५ पैदल हों। (२) सेना।
वाहिनीपति संज्ञा पुं. [सं.] सेनापति।
वाहियात—वि. [अ. वाही+फ़ा. यात] (१) बेकार, व्यर्थ। (२) बुरा।
वाहीं—सर्व. [हिं. वा+हीं] उसही में, उसमें ही। उ.—लख चौरासी जोनि भरमिकै फिरि वाहीं मन दीनौ—१-६५।
वाही – वि. [हिं. वा+ही] उस ही। उ. (क) बरु वाही दिन काहैं न मारी—१०-११। (ख) वाही भाँति बरन-बपु वैसैंहि - ४३८।

वि. [अ.] (१) सुस्त। (२) निकम्मा। (३) मूर्ख। (४) आवारा। (५) बे ठिकाने का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाहीतवाही—संज्ञा स्त्री. [अ. वाही + तवाही] अंडबंड बातें, गाली-गलौज ।

वाहु—संज्ञा स्त्री. [सं.] भुजदंड ।

वाहुमूल—संज्ञा पुं. [सं.] काँख, बगल ।

वाहुल्य – संज्ञा पुं. [सं.] अधिकता ।

वाह्य—क्रि. वि. [सं.] (१) बाहर । (२) अलग ।

वाह्यांतर—क्रि. वि. [सं.] भीतर और बाहर ।

वाह्लीक—संज्ञा पुं. [सं.] गांधार के निकट एक प्रदेश ।

विंद—संज्ञा पुं. [सं. वृंद] समूह ।
संज्ञा पुं. [सं. विंदु] बुंदा ।

विंदक – वि. [सं.] (१) पानेवाला । (२) जाननेवाला ।

विंदु– संज्ञा पुं. [सं. बिंदु] (१) बूँद । (२) बिंदी । (३) अनुस्वार । (४) शून्य । (५) कण ।

विंदुमाधव—संज्ञा पुं. [सं.] काशी की एक विष्णु मूर्ति जिसके नाम का पूर्वार्द्ध अग्निविंदु ऋषि के नाम का है ।

विंदुर—संज्ञा पुं. [सं. विंदु] बुंदकी ।

विंद्य, विंध्य—संज्ञा पुं. [सं. विंध्य] विंध्य पर्वत ।

विंध्यवासिनी – संज्ञा स्त्री. [सं.] एक प्रसिद्ध देवी मूर्ति जो मिर्जापुर में विंध्य के एक टीले पर अवस्थित है ।

विंध्याचल—संज्ञा पुं. [सं.] विंध्य पर्वत ।

विंश—वि. [सं.] बीसवाँ ।

विंशत—वि. [सं.] बीस ।

विंशति—संज्ञा स्त्री. [सं.] बीस की संख्या ।

वि—उप [सं.] (१) विशेष । (२) वैरूप्य । (३) निषेध, हीनता ।

विकच—वि. [सं.] (१) खिला हुआ, विकसित । (२) बिना बाल का, केशरहित ।

विकट—वि. [सं.] (१) विकराल, भयंकर । (२) टेढ़ा, वक्र । उ.—भृकुटी विकट निकट नैननि के राजति अति वर नारि । (३) मुश्किल, कठिन । उ.—अन-समुझे अपराध लगावति विकट बनावति बात । (४) दुर्गम । (५) दुस्साध्य ।

विकरार—वि. [सं. विकराल] भयंकर, भीषण । उ.—कियौ युद्ध अति ही विकरार ।
वि. [फ़ा. बेकरार] बेचैन व्याकुल ।

विकराल—वि. [सं.] भीषण, भयानक ।

विकर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] तीर, वाण ।

विकर्षण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खींचना । (२) विभाग । (३) एक शास्त्र जिसमें आकर्षण करने की विद्या का वर्णन है ।

विकल – वि. [सं.] (१) बेचैन, व्याकुल । (२) कलाहीन । (३) खंडित । (४) असमर्थ । (५) अस्वाभाविक ।

विकलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] बेचैनी, व्याकुलता ।

विकलांग—वि. [सं.] जिसका कोई अंग खंडित हो ।

विकलाना—क्रि. अ. [सं. विकल + हिं. आना] व्याकुल होना ।

विकलानी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. विकलाना] व्याकुल हुई । उ.– निठुर बचन सुनि स्याम के युवती विक-लानी ।

विकलानो – क्रि. अ. [सं. विकल + हिं. आना] व्याकुल होना ।

विकलाहीं—क्रि. अ. [हिं. विकलाना] व्याकुल हुईं । उ —एक एक ह्वै ढूँढ़हीं तरुनी विकलाहीं ।

विकलित—वि. [सं.] (१) व्याकुल । (२) दुखी ।

विकल्प—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भ्रम, धोखा । (२) निश्चय के विरुद्ध सोच-विचार । (३) विपरीत या विरुद्ध कल्पना । (४) कई विधियों का मिलना । (५) चित्त वृत्ति-विशेष । (६) समाधि-विशेष ।

विकल्पित—वि. [सं.] (१) संदिग्ध । (२) अनियमित ।

विकल्मष – वि. [सं.] पापरहित, निष्पाप ।

विकसन—संज्ञा पुं. [सं.] खिलना, प्रस्फुटन ।

विकसना, विकसनो—क्रि. अ. [सं. विकास] विकसित होना ।

विकसाना, विकसानो – क्रि. स. [हिं. विकसना] विक-सित करना, खिलाना ।

विकसित—वि. [सं.] खिला हुआ ।

विकार - संज्ञा पुं. [सं.] (१) रूप, रंग आदि का बदलना । (२) एक वर्ण के स्थान में दूसरा हो जाना । (३) बिग-ड़ना । (४) दोष । उ.—(क) हौं पतित अपराध-पूरन, भर्‌यौ कर्म-विकार —१-१२६ । (ख) सब बिसरि गए मन-बुधि-विकार—९-१६६ । (५) वृत्ति-विशेष,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वासना। उ.—कह्यौ तुमको ब्रह्म ध्यावो छाँड़ि विषै विकार—२९७५। (६) परिणाम। (७) उपद्रव। (८) हानि।

वि. दोषयुक्त, अनुचित, असंगत। उ.—बोलहिं वचन विकार अहो हरि होरी है—२४२३।

विकारि, विकारी—वि. [सं. विकारिन्] (१) जिसमें विकार हो। (२) क्रोधादि दुष्ट वासनाओं से युक्त। उ.—रे रे अंध बीसहूँ लोचन पर-तिय-हरन विकारी (बिकारी)—९-१३२। (३) जिसमें विकार या परिवर्तन हुआ हो, परिवर्तित।

विकाश, विकास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विस्तार, वृद्धि। (२) खिलना, प्रस्फुटन।

विकासना, विकासनो—क्रि. स. [सं. विकास] (१) निकालना, प्रकट करना। (२) खिलाना, विकसित या प्रस्फुटित करना।

क्रि. अ. (१) प्रकट होना। (२) विकसित होना।

विकास्यो, विकास्यौ—क्रि स. [हिं. विकासना] खिलाया, विकसित या प्रस्फुटित किया। उ.—जंगम जड़ थावर चर कीन्हे पाहन कमल विकास्यो—पृ. ३४७ (५२)।

विकीर्ण—वि. [सं.] (१) चारों ओर बिखरा, फैला या छितराया हुआ। (२) प्रसिद्ध, विख्यात।

विकुंठ—संज्ञा पुं [सं. वैकुंठ] बैकुंठ लोक।

वि. [सं.] जो कुंठित न हो, तेज धारवाला।

विकुक्षि वि. [सं.] तोंदवाला, तोंदियल।

विकृत—वि. [सं.] (१) बिगड़ा हुआ। (२) बुरा, कुरूप। (३) अस्वाभाविक। (४) अपूर्ण।

विकृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बिगाड़, खराबी। (२) बिगड़ा हुआ रूप। (३) विकार (४) क्षोभ।

विक्रम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विष्णु का एक नाम। (२) बल, पराक्रम। (३) विक्रमादित्य।

वि. श्रेष्ठ, उत्तम।

विक्रमादित्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उज्जयिनी का एक प्रतापी राजा। (२) शकों को पराजित करनेवाला वह राजा जिसकी विजय की स्मृति में ईसा पूर्व ५७ वर्ष से विक्रम संवत् चलना माना जाता है।

विक्रमाब्द—संज्ञा पुं. [सं.] विक्रम संवत्।

विक्रमी—वि. [सं.] (१) विक्रम-संबंधी। (२) पराक्रमी।

विक्रय—संज्ञा पुं. [सं] बेचना, बिक्री।

विक्रयी—वि. [सं.] बेचनेवाला।

विक्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बेचने की क्रिया या भाव। (२) बेचने से मिलनेवाला धन।

विक्रेता—वि. [सं.] बेचनेवाला।

विक्षत—वि. [सं.] जिसके क्षत लगा हो, घायल।

विक्षिप्त—वि. [सं.] (१) फेंका या बिखराया हुआ। (२) त्यागा हुआ, त्यक्त। (३) पागल। (४) घबराया हुआ।

विक्षिप्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] पागलपन।

विक्षुब्ध—वि. [सं.] जो क्षुब्ध हो।

विक्षेप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फेंकने या बिखरने की क्रिया या भाव। (२) झटका देने की क्रिया या भाव। (३) चंचल करने की क्रिया या भाव। (४) धनुष चढ़ाने की क्रिया या भाव। (५) एक अस्त्र। (६) बाधा, विघ्न।

विक्षोभ—संज्ञा पुं. [सं.] चित्त की उद्विग्नता।

विक्षोभी—वि. [सं. विक्षोभिन्] जो क्षोभ उत्पन्न करे।

विख—संज्ञा पुं. [सं. विष] जहर, विष।

विखाण, विखान—संज्ञा पुं. [सं. विषाण] सींग।

विखायँध—संज्ञा स्त्री. [सं. विष + हिं. आयँध] जहर की सी कड़वी गंध।

विख्यात—वि. [सं.] प्रसिद्ध। उ.—यक्ष प्रबल ब ढ़े. भुव मंडल तिन मारचो निज भ्रात। तिनके काज अंस हरि प्रगटे ध्रुव जगत विख्यात—सारा. ८१।

विख्याति—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रसिद्धि।

विख्यापन—संज्ञा पुं. [सं.] प्रसिद्ध करने की क्रिया या भाव।

विगंध—वि. [सं.] (१) जिसमें गंध न हो। (२) जिसमें बुरी गंध हो, दुर्गंधयुक्त।

विगत—वि. [सं.] (१) बीता हुआ। (२) बीते हुए से पहले का। (३) जो कहीं चला गया हो। (४) कांतिहीन। (५) रहित, विहीन। उ.—प्रमुदित जनक निरखि अंबुज मुख विगत नयन मन पीर।

विगति—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गति, दुर्दशा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विगलित—वि. [सं.] (१) जो गिर गया हो। (२) जो टपक या चूकर बह गया हो। (३) जो ढीला, शिथिल या बिखरा हुआ हो। उ.—(क) चौरी डोरी विगलित केस—१८२२। (ख) कच विगलित माला गिरी—१८२८। (४) बिगड़ा हुआ।

विगुण—वि. [सं.] गुण रहित।

विग्रह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विभाग। (२) यौगिक अथवा समस्त पदों के शब्दों को अलग करना। (३) कलह, झगड़ा। (४) युद्ध, समर। उ.—निसि वासर कै विग्रह आयो—२८२६। (५) विपक्षियों में फूट डालना। (६) आकृति। (७) शरीर। (८) मूर्ति। (९) शृंगार।

विग्रहण—संज्ञा पुं. [सं.] रूप धारण करना।

विग्रही—वि. [सं. विग्रहिन्] (१) झगड़ा करनेवाला। (२) युद्ध या समर करनेवाला।

विघटन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संयोजित भाग या अंग को अलग करना। (२) तोड़ना-फोड़ना। (३) नष्ट करना।

विघटित—वि. [सं.] (१) अलग किया हुआ। (२) तोड़ा-फोड़ा हुआ। (३) नष्ट-भ्रष्ट।

विघ्घन—संज्ञा पुं. [सं. विघ्न] बाधा।

विघात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आघात, प्रहार। (२) नाश। (३) बाधा, विघ्न। (४) विफलता।

विघातक—वि. [सं.] विघ्न डालनेवाला, बाधक।

विघाती—वि. [सं.] (१) बाधक। (२) घातक।

विघ्न—संज्ञा पुं. [सं.] बाधा, रुकावट, अंतराय।

विघ्नकारी—वि. [सं.] बाधा डालनेवाला।

विघ्ननाशक—संज्ञा पुं. [सं.] गणेश।

विचक्षण—वि. [सं.] (१) प्रकाशमान। (२) निपुण, कुशल। (३) पंडित, विद्वान। (४) बुद्धिमान।

विचच्छन—संज्ञा पुं. [सं. विचक्षण] चतुर, बुद्धिमान।

विचरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चलना। (२) पर्यटन।

विचरत—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमता-फिरता है। उ.—रामचरन धरि हृदय मुदित मन विचरत फिरत निसंक।

विचरति—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमती-फिरती है। उ.—विचरति है आन गृह-गृह तरे—२५३०।

विचरत—संज्ञा पुं. [सं. विचारना] (१) चलना। (२) घूमना-फिरना, पर्यटन।

प्र.—विचरन लागे—घूमने-फिरने लगे। उ.—भोग समग्री जुरी अपार। विचरन लागे सुख संसार।

विचरना—क्रि. अ. [सं. विचरण] (१) चलना। (२) घूमना-फिरना, पर्यटन करना।

विचरनि—संज्ञा स्त्री. [सं. विचरण] चलने या घूमने-फिरने की क्रिया या भाव।

विचरे—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमे-फिरे जीवन बिताया, काल-यापन किया। उ.—पाछे करि संन्यास जगत में विचरे परम उदार—सारा. ८७।

विचल—वि. [सं.] (१) हिलता हुआ। (२) अस्थिर। (३) स्थान से डिगा हुआ। (४) प्रतिज्ञा या निश्चय या हटा हुआ।

मुहा०—मन का चल-विचल होना—चित्त का चंचल या अस्थिर होना।

विचलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चंचलता, अस्थिरता। (२) व्याकुलता, घबराहट।

विचलना, विचलनो—क्रि अ. [सं. विचलन] (१) स्थान से हट जाना। (२) अधीर होना, घबराना। (३) वचन या संकल्प पर दृढ़ न रहना।

विचलाना, विचलानो—क्रि. स. [सं. विचलन] (१) विचलित या चंचल करना। (२) घबरा देना, स्थिर न रहने देना।

विचलित—वि. [सं.] (१) अस्थिर, चंचल। (२) वचन या निश्चय से डिगा हुआ।

विचार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) निश्चय, सोची हुई बात। (२) ख्याल, भावना। (३) अभियोग की सुनवाई और निर्णय।

विचारक—वि. [सं.] (१) विचार करनेवाला। (२) निर्णायक, न्यायकर्ता।

विचारणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] विचार करने की क्रिया।

विचारणीय—वि. [सं.] (१) जिस पर विचार करने की आवश्यकता हो। (२) जो सिद्ध या प्रमाणित न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारना—क्रि. अ. [सं. विचार] (१) सोचना-समझना। (२) पता लगाना।

विचारी - वि. [सं. विचारिन्] (१) विचार करनेवाला। (२) विचरण करनेवाला।

विचि—संज्ञा स्त्री. [सं.] तरंग, लहर।

विचित्र—वि. [सं.] (१) कई रंगोंवाला। (२) विचक्षण, असाधारण। (३) चकित करनेवाला। (४) सुंदर। उ.—भूषन भवन विचित्र देखियत सोभित सुन्दर अंग—२५६१।

विचित्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अद्भुत होने का भाव।

विचित्रवीर्य—संज्ञा पुं. [सं.] राजा शांतनु का एक पुत्र जिसका विवाह काशिराज की दो पुत्रियों अंबिका और अंबालिका के साथ हुआ था। विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात् उसकी विधवा पत्नियों से द्वैपायन ने नियोग करके धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर नामक तीन पुत्र उत्पन्न किये थे।

विच्छित्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विच्छेद। (२) कमी। (३) एक हाव जिसमें नारी सहज श्रृंगार से ही पुरुष को मोहने की चेष्टा करती है।

विच्छिन्न—वि. [सं.] (१) विभक्त। (२) जुदा, अलग। (३) जिसका विच्छेद हुआ हो।

विच्छेद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अलग करने की क्रिया। (२) क्रम का टूट जाना। (३) नाश। (४) वियोग।

विछलना, विछलनो—क्रि. अ. [हिं. फिसलना] (१) फिसलना। (२) अस्थिर, चंचल या विचलित होना।

विछेद—संज्ञा पुं. [सं. विच्छेद] विछोह, वियोग, विरह। उ.—सूर स्याम के परम भावती पलक न होत विछेद —पृ. ३३७ (६६)।

विछोई—वि. [हिं. विछोह + ई] विरही, वियोगी।

विछोह—संज्ञा पुं. [सं. विच्छेद] वियोग, विरह।

विजन—वि. [सं.] जनरहित, निर्जन।

संज्ञा पुं. [सं. व्यजन] पंखा, बीजन।

विजनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] निर्जनता।

विजना—संज्ञा पुं. [सं. विजन] पंखा।

विजय—संज्ञा स्त्री. [सं.] जय, जीत।

संज्ञा पुं. विष्णु का एक द्वारपाल जो सनकादि के शाप से हिरण्याक्ष, कुंभकर्ण आदि असुर योनियों में जन्मा था। उ.—जय अरु विजय असुर योनि को भए तीनि अवतार—सारा. ४४।

विजया—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भाँग। (२) श्रीकृष्ण की माला का नाम। (३) विजयादशमी।

विजयादशमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] आश्विन, शुक्ला दशमी जो क्षत्रियों का प्रसिद्ध त्योहार है।

विजयी—वि. [सं. विजयिन्] जीतनेवाला।

विजाति, विजातीय—वि. [सं.] दूसरी जाति का।

विजित—वि. [सं.] जो जीत लिया गया हो।

विजेता—वि. [सं. विजेतृ] जीतनेवाला।

विजै—संज्ञा पुं. [सं. विजय] जीत, विजय।

विजोग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] विरह, वियोग।

विजोगी—वि. [हिं. वियोगी] विरही, वियोगी।

विजोर—वि. [सं. वि + हिं. जोर] निर्बल। उ.—जीव को सुख दुख तनु सँग होई। जोर विजोर तन के सँग सोई।

विज्जु—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युत] बिजली, विद्युत।

विज्जुलता—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युल्लता] बिजली।

विज्ञ—वि. [सं.] (१) जानकार। (२) पंडित।

विज्ञता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जानकारी। (२) पांडित्य।

विज्ञप्त—वि. [सं.] सूचित किया हुआ।

विज्ञप्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सूचित करने की क्रिया। (२) विज्ञापन।

विज्ञाता—वि. [सं. विज्ञातृ] जो जानता-बूझता हो।

विज्ञान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विशिष्ट ज्ञान। (२) विशिष्ट तत्वों का विशिष्ट ज्ञान।

विज्ञानी—वि. [सं. विज्ञानिन्] (१) विशिष्ट ज्ञान रखनेवाला। (२) वैज्ञानिक। (३) आत्मा, ईश्वर आदि के स्वरूपों का ज्ञाता।

विज्ञापक—वि. [सं.] (१) सूचित करनेवाला। (२) विज्ञापन करनेवाला।

विज्ञापन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूचना देना। (२) सूचनापत्र, विज्ञप्ति।

विज्ञापना—संज्ञा स्त्री. [सं.] ज्ञात करने की क्रिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञापित—वि. [सं.] (१) जिसकी सूचना दी गयी हो। (२) जिसका विज्ञापन निकला गया हो।

विट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामी, कामुक। (२) वह नायक जो विषय-भोग में सारी संपत्ति नष्ट कर दे और बात बनाने में कुशल हो।

विटप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेड़, वृक्ष। (२) झाड़ी।

विटपी—संज्ञा पुं. [सं.] पेड़, वृक्ष।

विट्ठल—संज्ञा पुं. [?] विष्णु की एक मूर्ति का नाम।

विडंबना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) किसी को चिढ़ाने के लिए उसकी नकल उतारना। (२) हँसी उड़ाना। (३) डाँटना-डपटना। (४) भाग्य का खिलवाड़।

विडरत—क्रि. अ. [हिं. विड़रना] इधर-उधर हो जाता है, भागता है। उ.—(क) विडरत बिझुकि जानि रथ तें मृग जनु ससंकि ससि लंगर सारे। (ख) मन गह्यो वै विडरत नाहीं, थकित प्रगट पुकारि - २०२८।

विडरति—क्रि. अ. [हिं. विड़रना] भागती फिरती हैं। उ.—द्रुम चढ़ि काहे न टेरौ कान्हा गैयाँ दूरि गईं।....। विडरतिं फिरतिं सकल बन महियाँ एकै एक भईं—६१२।

विडरना, विडरनो—क्रि. अ. [सं. वि.+हिं. डरना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर हो जाना। (२) दौड़-भाग मचाना।

विडराना, विडरानो—क्रि. स. [हिं. विड़ारना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर करना। (२) दौड़ाना, भगाना। (३) नष्ट करना।

विडरी—क्रि. अ. [हिं. विडरना] इधर-उधर हो गयी, (उचित मार्ग से) हट गयी। उ.—इतने मान व्याकुल भई सजनी आरज पंथहु तें विडरी—२५४४।

विडरे—क्रि. अ. [हिं. विडरना] इधर-उधर या तितर-बितर हो गये। उ.—जानत नहीं कौन गुन यहि तन जाते सब विडरे।

विडारना, विडारनो—क्रि. स. [हिं.विडरना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर कर देना। (२) दौड़ाना, भगाना। (३) नष्ट करना।

विडारे—क्रि. स. [हिं. विडारना] नष्ट कर दिये। उ. असुर मारि सब तुरत विडारे दीन्हे रुद्र निकेत।

विड़ाल—संज्ञा पुं. [सं.] बिल्ली, मार्जार।

वितंड—संज्ञा पुं. [सं.] हाथी।

वितंडा—संज्ञा पुं. [सं.] व्यर्थ का झगड़ा।

वितंत—संज्ञा पुं. [सं.] बिना तार का बाजा।

वित—वि. [सं. विद्] (१) जाननेवाला। (२) चतुर।

विततान—क्रि. अ. [सं. व्यथा] व्याकुल होना।

विततानी—क्रि. अ. [हिं. विततान] व्याकुल हुई। उ. (क) देखे आइ तहाँ हरि नाहीं, चितवति जहाँ तहाँ विततानी—८४७। (ख) कहि धौं बात हृदय की मोसों ऐसी तू काहे विततानी—१६५३।

वितताहीं—क्रि. अ. [हिं. विततान] व्याकुल होती हैं। उ.—सूर स्याम रस भरी गोपिका बन में यों वितताहीं—११६४।

वितन, वितनु—वि. [सं. वितनु] जो बहुत सूक्ष्म हो। संज्ञा पुं. कामदेव।

वितपन्न—वि. [सं. व्युत्पन्न] (१) दक्ष, प्रवीण, कुशल। उ.—(क) सूरज प्रभु वितपन्न कोक गुन ताते हरि-हरि ध्यावति। (ख) कोक कला वितपन्न भई ही कान्ह रूप तनु आधा—१४३७। (ग) कोक कला वितपन्न परस्पर देखत लज्जित काम—पृ. ३५१ (७१)। (२) विकल, व्याकुल। उ.—उनहिं मिले वितपन्न भई तिनु वै बिन गये भुलाइ—१२३९।

वितरक—वि. [सं. वितरण] बाँटनेवाला।

वितरण—संज्ञा पुं. [सं.] बाँटने का कार्य।

वितरन—संज्ञा पुं. [सं. वितरण] (१) बाँटने का काम। (२) बाँटनेवाला व्यक्ति।

वितरना, वितरनो—क्रि. स. [सं. वितरण] बाँटना।

वितरिक्त—अव्य. [सं. व्यतिरिक्त] अतिरिक्त।

वितरित—वि. [सं.] बाँटा हुआ।

वितरेक—क्रि. वि. [सं. व्यतिरिक्त] अतिरिक्त।

वितर्क—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तर्क से उत्पन्न तर्क। (२) संदेह। (३) अनुमान। उ.—सपनो अहि कि सत्य ईस इहि बुद्धि वितर्क बनावति—१६९४।

वितल—संज्ञा पुं. [सं.] सात पातालों में एक। उ.—अतल वितल अरु सुतल तलातल और महातल जान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाताल और रसातल मिलिकै सातों भुवन प्रमान—सारा. ३१।

वितलिन—संज्ञा पुं. [सं. वितलिन्] वितल लोक को धारण करनेवाले बलदेव।

वितस्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] पंजाब की झेलम नदी।

वितान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विस्तार, फैलाव। (२) बड़ा चँदोवा या खेमा। (३) समूह।

वितानना, विताननो—क्रि. स. [सं. वितान] (१) तंबू तानना। (२) कोई चीज तानना।

वितिक्रम—संज्ञा पुं. [सं. व्यतिक्रम] क्रम-भंग।

वितीत—वि. [सं. व्यतीत] बीता हुआ।

वितुंड—संज्ञा पुं, [सं. वि+तुंड] हाथी।

वितु—संज्ञा पुं. [सं. वित्त] धन-संपत्ति।

वितृष्णा—संज्ञा स्त्री. [सं.] तृष्णा का अभाव।

वित्त—संज्ञा पुं. [सं.] धन-संपत्ति।

वित्तपति—संज्ञा पुं. [सं.] कुबेर।

वित्तहीन—वि. [सं.] निर्धन, दरिद्र।

वित्तप—वि. [सं.] धन-संबंधी।

विथकना, विथकनो—क्रि. अ. [हिं. थकना] (१) शिथिल होना। (२) मुग्ध होकर स्तब्ध रह जाना।

विथकित—वि. [हिं. विथकना] (१) थका हुआ, शिथिल। (२) जो चकित या मुग्ध होकर स्तब्ध रह जाय। उ.—(क) गोपीजन विथकित ह्वै चितवति सब ठाढ़ी। (ख) पसु मोहे सुरभी विथकित तृन दंतनि टेकि रहत—६२०।

विथके—वि. [हिं. विथकना] मुग्ध या चकित होकर स्तब्ध रह गये। उ.—देखत सुर विथके अमरन जहाँ—१०२३।

विथराना, विथरानो—क्रि. स. [सं. वितरण] (१) फैलाना, बिखेरना। (२) इधर-उधर करना।

विथा—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यथा] (१) पीड़ा। (२) रोग।

विथारना, विथारनो—क्रि. स. [सं. वितरण] (१) फैलाना, बिखेरना। (२) इधर-उधर करना।

विथित—वि. [सं. व्यथित] (१) पीड़ित। (२) रोगी।

विद—वि. [सं. विद्] (१) जानकार। (२) पंडित।

विदग्ध—वि. [सं.] (१) रसिक, रसज्ञ। (२) पंडित, विद्वान। (३) चालाक, चतुर। (४) जला हुआ।

विदग्धता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कुशलता। (२) विद्वता।

विदग्धा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह परकीया नायिका जो वचन अथवा क्रिया से पर-पुरुष के प्रति अपना प्रेम-भाव प्रकट कर दे।

विदमान—अव्य. [सं. विद्यमान] सामने, सम्मुख, प्रत्यक्ष। उ.—(क) फोरचो नयन काग नहिं छाड़चो सुरपति के विदमान। (ख) ताको बध न कियो इहिं रघुपति तो देखत विदमान। (ग) बिन पावस पावस रितु आई देखत हैं विदमान—३०४३।

विदरण—संज्ञा पुं. [सं.] फाड़ना, विदारण करना।

विदरत—क्रि. अ. [हिं. विदरना] फटता है। उ.—(क) विदरत नहीं वज्र को हृदय हरि-वियोग क्यों सहिए—२६९९। (ख) उर पाषाण विदरत न विदारे—३०७५।

विदरति—क्रि. अ. [हिं. विदरना] फटती है। उ.—विदरति नाहिं वज्र की छाती—३४३५।

विदरन—संज्ञा पुं. [सं.] फटने की क्रिया।

प्र.—विदरन चाहत—फटना चाहता है। उ.—यहै कहत नँद गोप सखा सब विदरन चाहत हियो—२६५४।

विदरना, विदरनो—क्रि. अ. [सं. विदरण] फटना।

क्रि. स. फाड़ना, विदीर्ण करना।

विदर्भ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आधुनिक बरार प्रदेश का प्राचीन नाम। (२) एक राजा जिसके नाम पर 'विदर्भ' प्रदेश का नाम पड़ना कहा जाता है।

विदर्भजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दमयंती का एक नाम। (२) रुक्मिणी का एक नाम।

विदलन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दलने-मलने की क्रिया। (२) फाड़ने की क्रिया।

विदलना, विदलनो—क्रि. स. [सं. विदलन] दलित या नष्ट करना।

विदलित—वि. [सं.] (१) दला-मला, कुचला हुआ। (२) फाड़ा हुआ। (३) नष्ट किया हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदा—संज्ञा स्त्री. [अ. विदाअ] (१) प्रस्थान। (२) प्रस्थान की आज्ञा या अनुमति।

विदाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. विदा+ई] (१) प्रस्थान। (२) प्रस्थान की आज्ञा या अनुमति। (२) वह धन जो विदा के समय किसी को दिया जाय।

विदार—क्रि. स. [हिं. विदारना] फाड़कर। उ.—घन घटा अटा मंद छटको दै उदित चंद्र बादर विदार—२४३२।

प्र.—दीन्हो विदार—फाड़ दिया। उ.—सोरहकला चंद्र ज्यों प्रगटे दीन्हों तिमिर विदार—सारा. ३६३।

विदारक—वि. [सं.] फाड़नेवाला।

विदारण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फाड़ने की क्रिया। (२) मार डालना। (३) युद्ध।

विदारन—वि. [सं. विदारण] फाड़नेवाले। उ.—अघ मर्दन वक वदन विदारन—९५४।

विदारना, विदारनो—क्रि. स. [हिं. विदरना] फाड़ना।

विदारित—वि. [सं.] फाड़ा हुआ, विदीर्ण किया हुआ।

विदारी—वि. [सं. विदारिन्] फाड़नेवाला।

क्रि. स. [हिं. विदारना] फाड़कर। उ.—मानो अरुन किरनि दिनकर की पसरी तिमिर विदारी—१६८४।

प्र.—डारो विदारी—फाड़ डाला। उ.—पकरि लियो छिन माँझ असुर बल डारो नखन विदारी—सारा. १२४।

विदारे—क्रि. स. [हिं. विदारना] फाड़ने (से)। उ.—उर पाषाण विदरत न विदारे—३०७५।

विदाह—संज्ञा पुं. [सं.] जलन।

विदाही—वि. [सं.] जलन पैदा करनेवाला।

विदित—वि. [सं.] जाना हुआ, ज्ञात।

विदिश—संज्ञा स्त्री. [सं. विदिश्] (१) दो दिशाओं का कोना। (२) दिशा। उ.—उड़त गुलाल अबीर जोर तहँ विदिश दीप उजियारी—२३९१।

विदिशा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वर्तमान भेलसा का प्राचीन नाम। (२) दिशा-कोण, दिशा।

विदीर्ण—वि. [सं.] (१) फाड़ा हुआ। (२) टूटा हुआ। (३) मार डाला हुआ, निहत।

विदुर—वि. [सं.] (१) ज्ञाता। (२) ज्ञानी। (३) कौरवों-पांडवों के चाचा।

विदुष—वि. [सं.] पंडित, विद्वान। उ.—विदुष जननि विराट प्रभु दीखे अति मन में सुख पायो—सारा. ५१७।

विदुषी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पंडिता, विद्वान स्त्री।

विदूखी—वि. [सं.] बहुत दुखी। उ.—कहा करौं लै निर्गुण तुम्हरो विरहिनि विरह विदूखी—३११७।

विदूर—वि. [सं.] जो बहुत दूर हो।

विदूषक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामुक, विषयी। (२) मसखरा। (३) निंदक। (४) भांड़। (५) प्राचीन नाटकों का एक विनोदी और हँसोड़ पात्र।

विदूषण—संज्ञा पुं. [सं.] दोष लगाने का कार्य।

विदूषना, विदूषनो—क्रि. स. [सं. विदूषण] (१) दुख देना। (२) दोष लगाना।

क्रि. अ. दुखी होना।

विदेश—संज्ञा पुं. [सं.] परदेश। उ.—कहा करौं मोपै रहो न जाई छिन सब सुखदायक बसत विदेश—३२२५।

विदेशी—वि. [सं.] परदेशी।

विदेह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह जो शरीर से रहित हो। (२) राजा जनक का एक नाम।

विदेहपुर—संज्ञा पुं. [सं.] राजा जनक की राजधानी, जनकपुर।

विदोष—वि. [सं.] दोषरहित, निर्दोष।

विद्—वि. [सं.] (१) ज्ञाता। (२) पंडित।

विद्ध—वि. [सं.] (१) छिदा हुआ। (२) जिसमें बाधा पड़ी हो। (३) मिला हुआ।

विद्यमान—वि. [सं.] उपस्थित, वर्तमान। उ.—यह परयो विद्यमान नैन अपने किन देखो—९०६।

विद्यमानता—संज्ञा स्त्री. [सं.] उपस्थिति।

विद्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] शिक्षा द्वारा उपार्जित ज्ञान। उ.—(क) विद्या बेंचि जीविका करिहौ—४-५। (ख) जेहि गोपाल मेरे वश होते सो विद्या न पढ़ी—२७९४।

विद्याधर—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्रकार की देवयोनि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ.—(क) विद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति—१०-६ । (ख) विद्याधर को रूप धरि कह्यो नाथ करै को तुम्हरी होड़—२१९२।

विद्याधरी संज्ञा स्त्री. [सं.] विद्याधर की नारी ।

विद्यामणि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विद्या रूपी धन। (२) बहुत बड़ा विद्वान । उ.—ज्ञाननमणि, विद्यामणि गुनमणि चतुरनमणि चतुराई - २१७० ।

विद्यारंभ - संज्ञा पुं. [सं.] वह संस्कार जिसमें विद्या की पढ़ाई प्रारंभ होती है ।

विद्यार्थी—संज्ञा पुं. [सं.] छात्र, शिष्य ।

विद्यालय—संज्ञा पुं. [सं.] पाठशाला ।

विद्युत—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युत्] बिजली ।

विद्रुम—संज्ञा पुं. [सं.] मूँगा, प्रवाल । उ.—विद्रुम फटिक पची परदा छवि लाल रंध्र की रेख - २५६१ ।

विद्रोह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) द्वेष । (२) उपद्रव ।

विद्रोही—वि. [सं.] (१) द्वेष करनेवाला । (२) उपद्रवी ।

विद्वत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] पांडित्य ।

विद्वान—संज्ञा पुं. [सं. विद्वस्] (१) पंडित । (२) सर्वज्ञ ।

विद्वेष—संज्ञा पुं. [सं.] वैर, शत्रुता ।

विद्वेषी—वि. [सं. विद्वेषिन्] शत्रु, वैरी ।

विधंस—संज्ञा पुं. [सं. विध्वंस] नाश ।

विधंसना, विधंसनो—क्रि. स. [सं. विध्वंसन] बरबाद या नष्ट करना ।

विध - संज्ञा पुं. [सं. विधि] ब्रह्मा ।

विधए—क्रि. स. [हिं. विधना] साथ लगा लिये, फांस लिये । उ.—(क) लए फँदाइ विहंगम मानो मदन व्याध विधए—पृ. ३२७ (६५) । (ख) थाके सूर पथिक मग मानो मदन व्याध विधए री । (ग) वचन पासि विधए मृग मानो उन रथ नाइ लए—३०५० ।

विधनहिं—संज्ञा पुं. सवि, [हिं. विधना + हिं.] विधाता को । उ.—सूरदास यह कहति जसोदा, ना जानौं विधनहिं का भायौ—१०-७७ ।

विधना—संज्ञा स्त्री. [सं. विधि] होनी, होतव्यता ।

संज्ञा पुं. विधि, ब्रह्मा । उ.—मरै वह कंस निर्वंस विधना करै—२६२४ ।

विधना, विधनो - क्रि. स. [सं. विधि] अपने साथ लगाना, अपने ऊपर लेना, फांस लेना ।

विधर—क्रि. वि. [हिं. उधर] उस ओर, उधर ।

विधर्म—संज्ञा पुं. [सं. विधर्म्म] पराया धर्म ।

विधर्मी—वि. [सं. विधर्म्मिन्] (१) जो धर्म के विपरीत आचरण करता हो, धर्म-भ्रष्ट । (२) दूसरे धर्म का अनुयायी ।

विधवा—संज्ञा स्त्री. [सं.] जिसका पति मर गया हो ।

विधवापन—संज्ञा पुं. [सं. विधवा + हिं. पन] विधवा होने की स्थिति, रँड़ापा, वैधव्य ।

विधाँसना, विधाँसनो—क्रि. स. [सं. विध्वंसन्] (१) इधर-उधर या अस्तव्यस्त करना । (२) नष्ट करना ।

विधाता—संज्ञा पुं. [सं. विधातृ] (१) रचने या बनाने वाला । (२) प्रबंध या व्यवस्था करनेवाला । (३) उत्पन्न करनेवाला । (४) सृष्टि का रचयिता, ब्रह्मा । उ.—आजु विधाता मति मेरी गई, भौन काज विरमाई—२५३८ ।

विधातै—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. विधाता] विधाता ने । उ.—ए अहीर वह कंस की दासी जोरी करी विधातै —२६८४ ।

विधात्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रचने या बनानेवाली । (२) प्रबंध या व्यवस्था करनेवाली ।

विधान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कार्य का संपादन-क्रम । (२) प्रबंध, व्यवस्था । (३) विधि, प्रणाली । (४) रचना, निर्माण । (५) उपाय, युक्ति । (६) पूजा ।

विधायक—संज्ञा पुं. [सं.] कार्य-संपादन करनेवाला । (२) रचने या बनानेवाला । (३) व्यवस्था या प्रबंध करनेवाला ।

विधि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रीति, प्रणाली । (२) व्यवस्था, योजना ।

मुहा०—विधि बैठना—(१) मेल खाना या बैठना, व्यवहार निभना । (२) इच्छानुकूल व्यवस्था होना ।

(३) शास्त्रीय व्यवस्था या विधान । उ.—यज्ञोपवीत विधोक्त कियो विधि सब सुर भिक्षा दीनी—सारा. ३३२ । (४) कर्म या आचरण-संबंधी शास्त्रीय आज्ञा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौ०—विधि-निषेध—अमुक कार्य या आचरण करने और अमुक न करने की शास्त्रीय अनुमति।

(५) क्रिया का आदेशात्मक रूप। (६) चाल-ढाल, आचार-व्यवहार। (७) भाँति, प्रकार।

संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मा, विधाता।

विधिना—संज्ञा पुं. [सं. विधि+हिं. ना] ब्रह्मा, विधाता। उ.—ए अहीर वह दासी पुर की विधिना जोरी भली मिलाई—२६७९।

विधिपुर—संज्ञा पुं. [सं. विधि + पुर] ब्रह्मलोक।

विधिरानी—संज्ञा स्त्री. [सं. विधि+रानी] ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती।

विधिवत्—क्रि. वि. [सं.] (१) विधि या पद्धति के अनुसार। (२) उचित रूप से।

विधिवाहन—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मा का वाहन, हंस।

विधुंत, विधुंतुद—संज्ञा पुं. [सं. विधि+तु, तुद] चंद्रमा को दुख देनेवाला, राहु। उ.—मानो विधु जु विधुंत ग्रहण डर आयो तेरे सरन सखी री—२११३।

विधु—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा। उ.—अब विधु-वदन बिलोकि सुलोचन स्रवन सुनत ही आली—२५६७।

विधुदार, विधुदारा—संज्ञा स्त्री. [सं. विधु+दारा] चंद्रमा की पत्नी, रोहिणी।

विधुप्रिया—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रोहिणी। (२) कुमुदिनी।

विधुबंधु—संज्ञा पुं. [सं.] कुमुद।

विधुबैनी—वि. [सं. विधु+वदन, प्रा. वयन] चंद्रमुखी, सुंदरी (नारी)।

विधुर—वि. [सं.] (१) दुखी। (२) व्याकुल। (३) जिसकी स्त्री मर चुकी हो।

विधु-लेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] चंद्रमा की किरण।

विधुवदनी—वि. [सं.] चंद्रमुखी (नारी)।

विधूम—वि. [सं.] बिना धुएँ का, निर्धूम।

विधेय—वि. [सं.] (१) जिसका करना उचित हो। (२) जो किया जानेवाला हो। (३) जिसके करने का नियम हो। (४) जिस (शब्द या वाक्य) के द्वारा किसी के संबंध में कुछ कहा जाय।

विधोक्त—वि. [सं. विधि+उक्त] शास्त्रीय विधि या विधान के अनुसार। उ.—यज्ञोपवीत विधोक्त कियो विधि सब सुर भिक्षा दीनी—सारा. ३३२।

विध्वंस—संज्ञा पुं. [सं.] नाश, विनाश।

विध्वंसक—वि. [सं.] नाश करनेवाला।

विध्वंसज—संज्ञा पुं. [सं. विध्वंस+ज] मारा जाने पर भी जीवित रहनेवाला रा। उ.—विध्वंसज ग्रस्यो कलानिधि तजत नहीं बिनु दाने—२०५३।

विध्वंसित—वि. [सं.] नष्ट किया हुआ। उ.—जनु विध्वंसित व्याल बालक अमी की झकाझोर—१७०३।

विध्वंसी—वि. [सं.] नाशकारी।

विध्वस्त—वि. [सं.] नष्ट किया हुआ।

विन—सर्व. [हिं. वा] प्रथम पुरुष बहुवचन सर्वनाम का कारक चिह्न लगने के पूर्व रूप, उन।

अव्य. विना, रहित।

विनत—वि. [सं.] (१) झुका हुआ। (२) विनीत।

विनतड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. विनति] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना।

विनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] दक्ष प्रजापति की वह पुत्री जो कश्यप की पत्नी और गरुड़ की माता थी।

विनति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना।

विनती—संज्ञा स्त्री. [सं. विनति] प्रार्थना, अनुनय।

विनम्र—वि. [सं.] (१) झुका हुआ। (२) विनीत।

विनय—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना, अनुनय। (३) शिक्षा। (४) नीति।

विनयपिटक—संज्ञा पुं. [सं.] बौद्धशास्त्र-विशेष।

विनयी—वि. [सं. विनयिन्] नम्र, विनीत।

विनशन—संज्ञा पुं. [सं.] नाश।

विनशना क्रि. अ. [सं. विनशन] नष्ट होना।

विनशाना—क्रि. स. [सं. विनशन] नष्ट करना।

विनश्वर—वि. [सं.] नाशवान, अनित्य।

विनश्वरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अनित्यता।

विनष्ट—वि. [सं.] (१) जो नष्ट-ध्वस्त हो गया हो। (२) मरा हुआ। (३) बिगड़ा हुआ। (४) पतित।

विनसना, विनसनो—क्रि. अ. [सं. विनशन] नष्ट होना।

विनसाना, विनसानो—क्रि. स. [हिं. विनसना] (१) नष्ट करना। (२) बिगाड़ना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रि. अ. बरबाद या नष्ट होना।

विना—अव्य. [सं.] (१) बगैर। (२) अतिरिक्त।

विनाथ—वि. [सं.] अनाथ।

विनायक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गणेश। (२) बाधा, विघ्न। (३) गरुड़।

विनायक-केतु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गरुड़ध्वज। (२) विष्णु। (३) श्रीराम। (४) श्रीकृष्ण।

विनाश, विनास—संज्ञा पुं. [सं. विनाश] (१) अस्तित्व न रह जाना, ध्वंस। (२) लोप। (३) बिगड़ जाने का भाव। (४) बुरी दशा।

विनाशक, विनासक - वि. [सं. विनाशक] (१) नाश करनेवाला। (२) खराब करने या बिगाड़नेवाला।

विनाशन, विनासन—वि. [सं. विनाशन] (१) नाश करनेवाला। (२) मारने वाला। उ.—अध मर्दन वक वदन विदारन वकी विनाशन सब सुखदायक—९५४।

संज्ञा पुं. (१) नष्ट करना। (२) वध या संहार करना। (३) बिगाड़ना, खराब करना।

विनाशना, विनासना, विनासनो—क्रि. स. [सं. विनाशन] (१) नष्ट करना। (२) वध या संहार करना। (३) बिगाड़ना।

क्रि. अ. बरबाद या नष्ट होना।

विनाशी, विनासी—वि. [सं. विनाशिन्] (१) नष्ट करनेवाला। (२) मार डालनेवाला। (३) बिगाड़नेवाला।

विनिंदक—वि. [सं.] बहुत निंदा करनेवाला।

विनिंदित—वि. [सं.] जिसकी बहुत निंदा हुई हो।

विनिपात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ध्वंस, नाश। (२) वध, हत्या। (३) अपमान।

विनिमय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वस्तु के बदले में वस्तु देने का व्यवहार। (२) आदान-प्रदान।

विनियोग - संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रयोग, उपयोग। (२) भेजना, प्रेषण।

विनियोजित—वि. [सं.] (१) प्रयुक्त। (२) प्रेरित।

विनीत—वि. [सं.] नम्र, विनययुक्त, शिष्ट।

विनीतता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नम्रता, विनय।

विनु—अव्य. [सं. विना] (१) रहित। (२) अतिरिक्त।

विनूठा—वि. [हिं. अनूठा] बढ़िया, सुंदर।

विनोद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तमाशा, कौतूहल। (२) क्रीड़ा। (३) प्रमोद, परिहास।

विनोदी—वि. [सं. विनोदिन्] (१) कौतूहल करनेवाला। (२) क्रीड़ा करनेवाला। (३) हँसी-ठट्ठे में रस लेनेवाला। उ.—स्याम विनोदी (बिनोदी) रे मधुबनियाँ—ना. ३९९५।

विन्यास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यथास्थान रखना या स्थापना। (२) सजाना। (३) जड़ना।

विपंची—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) एक तरह की वीणा। (२) केलि, क्रीड़ा।

विपक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विरुद्ध पक्ष। (२) शत्रु पक्ष। (३) विरोध, खंडन।

वि. (१) विरुद्ध, प्रतिकूल। (२) जिसके पक्ष में कोई न हो। (३) पंखहीन।

विपक्षी—वि. [सं. विपक्षिन्] (१) विरुद्ध पक्ष का। (२) शत्रु। (३) बिना पंख का।

विपति, विपत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं. विपत्ति] (१) दुख, कष्ट। उ.—सूरदास अक्रूर कृपा तें सही विपति तनु गाढ़ी—२५३५। (२) दुर्दिन।

मुहा०—विपत्ति उठाना—कष्ट सहना। विपत्ति काटना—दुर्दिन बिताना। विपत्ति झेलना—कष्ट सहना। विपत्ति डालना—दुख या कष्ट पहुँचाना। विपत्ति ढहना—सहसा कष्ट आ पड़ना। विपत्ति ढहाना—सहसा कष्ट में डाल देना।

(३) झंझट, झगड़ा, कठिनाई।

मुहा०—विपत्ति मोल लेना—व्यर्थ झगड़े में पड़ना। विपत्ति सिर पर लेना—व्यर्थ झंझट में फँस जाना।

विपथ—संज्ञा पुं. [सं.] कुमार्ग।

विपद्—संज्ञा स्त्री. [सं.] संकट, विपत्ति।

विपदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] संकट, विपत्ति।

विपन्न – वि. [सं.] (१) जिस पर विपत्ति पड़ी हो। (२) दुखी। (३) कठिनाई या झंझट में पड़ा हुआ।

विपरीत—वि. [सं.] (१) उलटा, विरुद्ध। (२) इच्छा के प्रतिकूल। (३) रुष्ट, अनिष्टसाधक। उ.—तुना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्त विपरीत महाखल सो नृपराय पठायो—सारा. ४२८। (४) दुखद, कष्टदायी।

विपरीतता—संज्ञा स्त्री. [सं.] विपरीत होने का भाव।

विपरीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विपरीत होने का भाव। (२) कष्टदायी आचरण या व्यवहार, विरुद्धाचार, विरोध। उ.—(क) अब की वेर मिलो मनमोहन बहुत भई विपरीति—२७१६। (ख) मिल ही में विपरीति करी विधि होत दरस की बाधा—२७५८।

विपर्यय—संज्ञा पुं. [सं. विपर्य्यय] (१) उलट-पलट, अव्यवस्था। (२) और का और, विरुद्ध स्थिति। (३) भ्रम, मिथ्या ज्ञान।

विपाक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पकना। (२) कर्म-फल।

विपाशा, विपासा—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्यास नदी।

विपिन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन। (२) वाटिका।

विपिनपति—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह।

विपिनविहारी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन में विहार करनेवाला। (२) श्रीकृष्ण का एक नाम।

विपुल—वि. [सं.] (१) बहुत अधिक। उ.—श्रीविट्ठल विपुल विनोद विहारन व्रज को बसिवो छाजै--२६३२। (२) बहुत गहरा।

संज्ञा पुं. रोहिणी से उत्पन्न वसुदेव का एक पुत्र।

विपुलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अधिकता।

विपुला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पृथ्वी। (२) एक देवी।

विपुलाई—संज्ञा स्त्री. [सं. विपुल + हिं. आई] अधिकता।

विपोहना, विपोहनो—क्रि. स. [सं. वि + प्रोत] (१) लीपना, पोतना। (२) मिटाना, नाश करना। (३) अच्छी तरह पोहना।

विप्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्राह्मण। उ.—राजनीति अरु गुरु की सेवा, गाइ-विप्र प्रतिपारे—९-५४। (२) पुरोहित।

विप्रचरण, विप्रचरन—संज्ञा पुं. [सं. विप्र + चरण] (१) ब्राह्मण के चरण। (२) भृगु मुनि का चरण-चिह्न जो विष्णु के हृदय पर माना जाता है।

विप्रचित्ति—संज्ञा पुं. [सं.] एक दानव जिसकी सिंहिका नाम्नी पत्नी राहु की माता थी।

विप्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्राह्मणत्व।

विप्रत्व—संज्ञा पुं. [सं.] ब्राह्मणत्व।

विप्रबंधु—संज्ञा पुं. [सं.] कर्म-च्युत ब्राह्मण।

विप्रराम—संज्ञा पुं. [सं.] परशुराम।

विप्रलंभ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वियोग, विरह, विच्छेद। (२) धोखा, छल। (३) दुष्कर्म।

विप्रलंभी - वि. [सं. विप्रलंभिन्] धूर्त, छली, धोखेबाज।

विप्रलब्धा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जो संकेत स्थान पर प्रियतम को न पाकर निराश हो।

विप्रौ · संज्ञा पुं. सवि. [सं. विप्र + हिं. औ] विप्र या विप्रों को भी। उ.—ए कहा जानहिं सभा राज को ए गुरुजन विप्रौ न जुहारे—२५०४।

विप्लव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अशांति और हलचल, उपद्रव। (२) राज्य के भीतर अशांति और उपद्रव। (२) उथल-पुथल, अव्यवस्था।

विप्लवी, विप्लावी—वि. [सं. विप्लव] उपद्रव करनेवाला।

विफल—वि. [सं.] (१) जिसमें फल न लगता हो, फलरहित। उ.—मुरली सुनत अचल चले। थके चर, जल झरत पाहन, विफल बृच्छ फले—ना. १०६८। (२) निष्फल, व्यर्थ। (३) असफल। (४) निराश।

विफलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] असफलता।

विबुध—संज्ञा पुं. [सं. वि + बुध] (१) पंडित। (२) देवता। (३) चंद्रमा।

विबुधतटिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] आकाशगंगा।

विबुधतरु—संज्ञा पुं. [सं.] कल्पवृक्ष।

विबुधधेनु - संज्ञा स्त्री. [सं.] कामधेनु।

विबुधविलासिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] अप्सरा।

विबुधवेलि - संज्ञा स्त्री. [सं.] कल्पलता।

विबोध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जागरण। (२) ज्ञान।

विभंज—संज्ञा पुं. [सं. वि + भज्] (१) टूटना-फूटना। (२) नाश, ध्वंस।

विभंजन—वि. [हिं. विभंज] (१) तोड़नेवाले। उ.—रघुपति प्रबल पिनाक-विभंजन —९८२। (२) नाश करनेवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभक्त—वि. [सं. वि + भज्] (१) विभाजित। (२) अलग या पृथक् किया हुआ।

विभक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] अलग या विभक्त होने की क्रिया या भाव। (२) वह प्रत्यय या कारक चिह्न जो शब्द के आगे लगकर उसका क्रियापद से संबंध सूचित करता है। (संस्कृत में शब्द के अंत्य अक्षर के अनुसार विभक्ति-रूप भिन्न-भिन्न होते हैं; खड़ीबोली के कारकों में शुद्ध विभक्तियों के स्थान पर कारक चिह्नों का व्यवहार होता हैं।)

विभव—संज्ञा पुं. [सं.] धन-संपत्ति, ऐश्वर्य।

विभाँति—वि. [सं. वि+हिं. भाँति] अनेक प्रकार का। अव्य. अनेक प्रकार से।

विभा—संज्ञा स्त्री.[सं.](१) प्रभा, शोभा। (२) किरण।

विभाकर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूर्य। (२) मदार।

विभाग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बाँटने की क्रिया या भाव। (२) अंश, भाग, हिस्सा। उ.—अरध विभाग आजु तैं हम तुम भली बनी है जोरी—१०-२६७। (३) अध्याय, प्रकरण। (४) कार्यक्षेत्र।

विभागी—वि. [सं. विभागिन्] (१) विभाग करनेवाला। (२) विभाग या अंश पानेवाला।

विभाजक—वि. [सं.] (१) विभाग करनेवाला। (२) वह (संख्या) जो भाग दे।

विभाजन—संज्ञा पुं.[सं.] भाग करने की क्रिया या भाव।

विभाजित—वि. [सं.] जो बाँटा गया हो।

विभाज्य—वि. [सं.] जिसका विभाजन करना हो।

विभात—संज्ञा पुं. [सं.] सबेरा, प्रभात।

विभाति, विभाती संज्ञा स्त्री. [सं. विभाति] सुंदरता, शोभा।

विभाना, विभानो—क्रि. अ. [सं. विभा + हिं. ना, नो] (१) चमकना, झलकना। (२) शोभित होना।

विभारना, विभारनो—क्रि. अ. [हिं. विभाना] (१) चमकना, झलकना। (२) शोभा पाना।

विभाव—संज्ञा पुं. [सं.] (रस-विधान में) भाव को उद्दीप्त करनेवाला व्यक्ति, पदार्थ या वातावरण।

विभावन—संज्ञा पुं. [सं.] (रस-विधान में) वह मानसिक व्यापार जिससे (साधारणीकरण द्वारा] पात्र के भाव का भागी श्रोता या पाठक भी होता हैं।

विभावना—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक अर्थालंकार।

विभावरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] रात, तारों भरी रात।

विभावित—वि. [सं.] (१) कल्पित। (२) स्वीकृत।

विभास—संज्ञा पुं. [सं.] चमक, प्रभा, तेज। उ.—हँसनि प्रकास विभास देखिकै निकसत पुनि तहँ बैठत—पृ. ३२५ (४४)।

विभासना, विभासनो—क्रि. अ. [सं. विभास] चमकना।

विभासित—वि. [सं.] (१) चमकता हुआ। (२) प्रकट।

विभिन्न—वि. [सं.] (१) पृथक्। (२) अनेक प्रकार का।

विभिन्नता—संज्ञा स्त्री. [सं.] विभिन्न होने का भाव।

विभीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भय। (२) शंका।

विभीषण—संज्ञा पुं. [सं.] रावण का भाई जो उसके मारे जाने के बाद लंका का राजा हुआ था।

विभीषिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] भयानक कांड या दृश्य।

विभु—वि. [सं.] (१) जो सर्वत्र रम रहा हो। (२) जो सर्वत्र जा सकता हो। (३) सब काल में रहनेवाला। (४) चिरस्थायी। (५) ऐश्वर्य या शक्तिमान। संज्ञा पुं. (१) ब्रह्म। (२) आत्मा। (३) प्रभु।

विभुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सर्वव्यापकता। (२) प्रभुता, ईश्वरता। (३) ऐश्वर्य, शक्ति।

विभूत, विभूति—संज्ञा स्त्री. [सं. विभूति] (१) धन-संपत्ति, ऐश्वर्य। (२) दिव्य शक्ति जिसके अंतर्गत आठों सिद्धियाँ हैं। (३) राख, भस्म। उ.—चंदन छाँड़ि विभूति बतावत, यह दुख क्यों न जरौं—३०२७।

विभूषण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भूषित करने की क्रिया। (२) भूषण, अलंकार। वि. भूषित या अलंकृत करनेवाला।

विभूषना, विभूषनो—क्रि. स. [सं. विभूषण] (१) गहने या भूषण से सजाना। (२) सुशोभित करना। (३) शुभागमन या उपस्थिति से सुशोभित करना।

विभूषित—वि. [सं.] (१) सजा हुआ, अलंकृत। (२) युक्त,सहित। (३) शोभित।

विभेंटन—संज्ञा पुं. [सं. वि.+हिं. भेंट] गले लगाने या आलिंगन करने की क्रिया या भाव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभेद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अंतर, भिन्नता। (२) अनेक प्रकार या भेद। (३) विभाग।

विभेदना, विभेदनो—क्रि. स. [सं. विभेदन] (१) छेदना, काटना। (२) घुसना, प्रवेश करना। (३) अंतर या भेद डालना।

विभो—संज्ञा पुं. [सं. विधु का संबोधन] हे प्रभु।

विभोर—वि. [सं. विह्वल] (१) विकल, व्याकुल। (२) मग्न, लीन। (३) मस्त, मत्त।

विभौ—संज्ञा पुं. [सं. विभव] धन-संपत्ति, ऐश्वर्य।

विभ्रंश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विनाश। (२) पतन।

विभ्रम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चक्कर, भ्रमण। (२) धोखा। (३) संदेह। (४) घबराहट। (५) एक हाव जिसमें स्त्री उलटे-पुलटे वस्त्राभषण पहनकर विचित्र भाव प्रकट करती है।

विभ्राट—वि. [सं.] दीप्ति या प्रकाशमान।

संज्ञा पुं. (१) आपत्ति। (२) उपद्रव।

विमंडन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सजाना। (२) भूषण।

विमंडित—वि. [सं.] (१) सजा हुआ, अलंकृत। (२) युक्त, सहित। (३) सुशोभित।

विमत—संज्ञा पुं. [सं.] विपरीत या प्रतिकूल मति।

विमति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कुमति। (२) असम्मति।

विमत्सर—संज्ञा पुं. [सं.] बहुत अहंकार।

वि. अहंकार रहित।

विमन—वि. [सं. विमनस्] अनमना, उदास।

विमर्श—संज्ञा पुं. [सं.] विवेचन, विचार, तथ्यानुसंधान। (२) आलोचना, समीक्षा, परीक्षा।

विमर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विवेचन, विचार। (२) आलोचना, समीक्षा। (३) नाटक का अंग-विशेष जिसमें दोषकथन, क्रोधयुक्त वार्तालाप आदि का वर्णन होता है।

विमल—वि. [सं.] (१) स्वच्छ, निर्मल। (२) निर्दोष, शुद्ध। उ.—मिथ्यावाद-उपाधि रहित ह्वै विमल-विमल जस गावत—२-१७। (३) सुंदर, मनोहर।

विमलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्वच्छता। (२) पवित्रता। (३) शुद्धता। (४) मनोहरता।

विमला—वि. स्त्री. [सं.] (१) निर्मल, स्वच्छ। (२) दोषरहिता। (३) सुंदर, मनोहर।

संज्ञा स्त्री. (१) सरस्वती। (२) राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा किनि हार चुरायौ।....। कमला, तारा, विमला, चंदा चंद्रावलि सुकुमार—१५८०।

विमाता—संज्ञा स्त्री. [सं. विमातृ] सौतेली माँ।

विमान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वायुयान। (२) मृतक, वृद्ध या वृद्धा की सजी हुई अरथी।

विमुक्त—वि. [सं.] (१) अच्छी तरह मुक्त। (२) फेंका हुआ। (३) पूर्णतया स्वतंत्र।

विमुख—वि. [सं.] (१) जिसके मुख न हो। (२) जो किसी विषय में ध्यान न दे। (३) जो अनुरक्त न हो, उदासीन। उ.—ब्रज ही बसत विमुख भई हरि सों शूल न उर तें जाई—२५३८। (४) विरुद्ध, प्रतिकूल। (५) निराश, विफलमनोरथ।

विमुखता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विरति। (२) विरोध।

विमुग्ध—वि. [सं.] (१) मोहित। (२) बेसुध।

विमुग्धकारी—वि. [सं.] मोहित करनेवाला।

विमुद—वि. [सं.] उदास, खिन्न।

विमूढ़—वि. [सं.] (१) अत्यंत मुग्ध। (२) बेसुध। (३) भ्रम में पड़ा हुआ। (४) कर्तव्य-ज्ञान या बुद्धि रहित। (५) बहुत मूर्ख।

विमोचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बंधन आदि खोलना। (२) बंधन से छुड़ाना, मुक्त कराना। (३) बाहर करना, बहाना, निकालना। (४) फेंकना, छोड़ना। (५) गिराना।

विमोचना, विमोचनो—क्रि. स. [सं. विमोचन] (१) बंधन आदि खोलना। (२) मुक्त करना। (३) बाहर करना, निकालना, बहाना। (४) गिराना, टपकाना।

विमोह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अज्ञान, भ्रम। (२) बेसुध होना। (३) आसक्ति।

विमोहक—वि. [सं.] (१) मोहनेवाला। (२) बेसुध करनेवाला। (३) लालच उत्पन्न करनेवाला।

विमोहन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुग्ध या मोहित करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) मन वश में करना। (३) कामदेव के पाँच बाणों में एक। (४) सुध-बुध भुलाना।

विमोहनशील—वि. [सं. विमोहन + शील] (१) भ्रम में डालने या धोखा देनेवाला। (२) मुग्ध या मोहित करनेवाला।

विमोहना, विमोहनो—क्रि. अ. [सं. विमोहन] (१) मोहित या मुग्ध होना। (२) अचेत या बेसुध होना। (३) भ्रम या धोखे में पड़ना।

क्रि. स. (१) मोहित या मुग्ध करना। (२) बेसुध करना। (३) भ्रम या धोखे में डालना।

विमोहित—वि. [सं.] (१) मुग्ध, लुभाया हुआ। (२) भ्रांत। (३) मूर्छित।

विमोही—वि. [सं. विमोहिन्] (१) मुग्ध या मोहित करनेवाला। (२) बेसुध या अचेत करनेवाला। (३) भ्रम में डालनेवाला। (४) जिसमें मोह-ममता न हो, निर्मम, निष्ठुर।

विमोहे—क्रि. अ. [हिं. विमोहना] मुग्ध हो गये। उ.—सुर ललना सुर सहित विमोहे रच्यो मधुर सुर गान—पृ. ३५० (६९)।

विमोह्यो, विमोह्यौ—क्रि. अ. [हिं. विमोहना] सुध-बुध खो बैठा। उ.—सूर स्याम को मिलनि सुरति करि मनु निरधन धन पाइ विमोह्यो—२४७८।

विमौट—संज्ञा पुं. [सं. वल्मीक, हिं. बांबी + ओट] दीमकों का बनाया मिट्टी का ढूह, बाँबी।

वियंग—संज्ञा पुं. [हिं. बिय + अंग] दो अंगवाले शिव।

विय—वि. [सं. द्वि, द्वितीय; प्रा विय] (१) दो, जोड़ा। (२) दूसरा, अन्य।

वियत—संज्ञा पुं. [सं. वियत्] आकाश।

वियुत—वि. [सं.] (१) अलग। (२) हीन, रहित।

वियुक्त—वि. [सं.] (१) जो बिछुड़ा हुआ हो। (२) अलग, पृथक्। (३) हीन रहित।

वियो—वि. [प्रा. विय] (१) दो, जोड़ा। उ.—ऊधो, जा मन होत वियो—३१४७। (२) दूसरा, अन्य। उ.—उनतें प्रभु नहिं और वियो—२६२१।

वियोग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संयोग या मिलाप न होना, विच्छेद। (२) अलग होने का भाव, अलगाव। (३) जुदाई, विरह।

वियोगांत—वि. [सं.] जिस (नाटक आदि) की कथा का अंत दुख-पूर्ण हो।

वियोगिन, वियोगिनि, वियोगिनी—वि. स्त्री. [सं. वियोगिनी] जो प्रिय या पति से बिछुड़ी हो।

वियोगी—वि. [सं. वियोगिन्] जो प्रिया या पत्नी से बिछुड़ा हो, विरही।

विरंग—वि. [सं.] (१) बुरे रंग का, बदरंग। (२) अनेक रंगोंवाला।

विरंच, विरंचि—संज्ञा पुं. [सं. विरंचि] विधाता।

विरंचिसुत—संज्ञा पुं. [सं. विरंचि + सुत] नारद।

विरक्त—वि. [सं.] (१) जिसे चाह या अनुराग न हो, विमुख। (२) खिन्न, उदासीन।

विरक्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चाह का अभाव, विमुखता। (२) खिन्नता, उदासीनता।

विरक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चाह का अभाव, विराग। (२) खिन्नता, उदासीनता।

विरचन—संज्ञा पुं. [सं.] रचना, निर्माण।

विरचना, विरचनो—क्रि. स. [सं. विरचन] (१) रचना, बनाना। (२) सजाना, अलंकृत करना।

क्रि. अ. [सं. वि + रजन] विरक्त होना।

विरचि—क्रि. अ. [हिं. विरचना] विरक्त या उचाट होकर। उ.—विरचि मन बहुरि राच्यो आइ—३३३४।

विरचित—वि. [सं.] (१) बनाया हुआ। (२) लिखा हुआ।

विरज—वि. [सं. विरजस्] (१) धूल-वासना से रहित। (२) निर्मल, स्वच्छ। (३) निर्जीव।

विरजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] श्रीकृष्ण की एक प्रिया जिसने राधा के भय से नदी का रूप धारण कर लिया था।

विरत—वि. [सं.] (१) जिसे चाह न हो, विमुख। (२) जो लीन या तत्पर न हो, निवृत्त। (३) विरक्त, वैरागी। (४) विशेष रूप से रत या लीन।

विरति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चाह न होना, विमुखता। (२) निवृत्ति, उदासीनता। (३) वैराग्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरथ—वि. [सं.] (१) जिसके पास रथ न हो। (२) रथ से गिरा हुआ। (३) पैदल।

क्रि. वि. [सं. व्यर्थ] निरर्थक, व्यर्थ। उ.—सूर विरथ बकवाद करत है, यहि व्रज नंदकुमार—३२५३।

विरद—संज्ञा पुं. [सं. विरुद] (१) ख्याति, प्रसिद्धि। (२) यश, कीर्ति। उ.—यदुकुल विरद बोलावत—२८००।

वि. [सं.] बिना दाँत का।

विरदावली—संज्ञा स्त्री. [सं. विरुदावली] यश-गाथा।

विरदैत—वि. [हिं. विरद + ऐत] बड़ी कीर्तिवाला।

विरध—वि. [सं. वृद्ध] वृद्ध। उ.—(क) उमंगि अंग न मात कोऊ विरध, तरुन अरु बाल—२९५४। (ख) विरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाहीं—२४१८।

विरमना, विरमनो—क्रि. अ. [सं. विरमण] (१) मन लगाना, अनुरक्त हो जाना। (२) रुकना, ठहरना। (३) मोहित होकर रुकना। (४) वेग आदि का कम होना या थमना।

विरमाना, विरमानो—क्रि. स. [हिं. विरमना] (१) किसी का मन लगाना, अनुरक्त करना। (२) रोकना, ठहराना, फँसा रखना। (३) मुग्ध करके रोक लेना। (४) भ्रम या भुलावे में रखना।

क्रि. स. [हिं. विलबाना] (१) देर कराना। (२) लटकाना। (३) सहारा देना।

विरमि—क्रि. अ. [हिं. विरमना] मुग्ध या मोहित होने के कारण, रुककर।

प्र०—विरमि जात—रुक जाता है। उ.—नेकहूँ न रहत, विरमि जात तहाँ धाई री—पृ. ३३२ (१७)। विरमि रहे—मुग्ध या मोहित होकर रुक गये। उ.—(क) सूरदास कित विरमि रहे प्रभु आवत नाहिं चले। (ख) बहुत दिनन विरमि रहे हौ संग ते बिछोहि हमहिं गए बरजी—३१६२।

विरल—वि. [सं.] (१) जो घना न हो। (२) जो दूर-दूर हो। (३) दुर्लभ। (४) निर्जन। (५) थोड़ा, अल्प।

विरव—वि. [सं.] शब्दरहित, नीरव।

विरस—वि. [सं.] (१) रसहीन, नीरस, बिना स्वाद का। (२) अप्रिय, अरुचिकर। (३) रसहीन (काव्य)। (४) आनंदरहित, विरक्त, क्षुब्ध। उ.—(क) छिन-छिन विरस करति है सुंदरि क्यों बहरत मन मोर—२२१४। (ख) गए संग बिसारि रिस में, विरस कीन्हो बाल—पृ. ३५३ (११)।

संज्ञा पुं. (१) रस या आनन्द का अभाव। (२) रस के विपरीत स्थिति। (३) अनुराग, आनंद आदि के विपरीत दशा या स्थिति। उ.—रस में अंतर विरस जनायो—१८६०। (४) क्षोभ, अप्रसन्नता। (५) रस-भंग।

विरसता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नीरसता, स्वादहीनता। (२) रस-भंग, आनन्द न रह जाना।

विरह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी वस्तु का अभाव। (२) प्रिय जन का वियोग। (३) वियोग-दुख।

वि. हीन, बिना, रहित।

विरहा—संज्ञा पुं. [सं. विरह] (१) विरह, वियोग। उ.—(क) तन-मन-धन-यौवन-सुख संपति विरहा अनल दही—२७१४। (ख) सखा री विरहा यह बिपरीत—२८७६। (२) एक प्रकार का विरहगीत।

विरहिणी—वि. स्त्री. [सं.] प्रिय की वियोगिनी।

विरहित—वि. [सं.] हीन, बिना, रहित।

विरहिनि, विरहिनी—वि. [सं. विरहिणी] वियोगिनी। उ.—विरहिनि क्यों धीरज मन धरै—ना. ४२२०।

विरही—वि. [सं. विरहिन्] प्रिया के विरह से दुखी। उ.—(क) विरही कहँ लौं आपु सँभारै—ना. ४३९६। (ख) विरही कैसैं जिऐं बिचारे—ना. प. २०२।

विरहोत्कंठिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जिसे नायक के आने का विश्वास हो और कारणवश इसके न आने से जो दुखी हो।

विराग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अनुराग या लगन का अभाव। (२) उदासीन भाव। (३) सांसारिक बातों से विरक्ति।

विरागी—वि. [सं. विरागिन्] (१) जिसमें अनुराग या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) लगन न हो। (२) उदासीन, विमुख। (३) जो सांसारिक बातों या सुखों से विरक्त हो।

विराजत—क्रि. अ. [हिं. विराजना] उपस्थित या शोभित होता है। उ.—सबके ऊपर सदा विराजत ध्रुव सदा निस्सोक—सारा. ८२।

विराजना, विराजनो—क्रि. अ. [सं. विराजन] (१) सोहना, शोभित होना। (२) विद्यमान या उपस्थित होना। (३) बैठना।

विराजमान वि. [सं.] (१) शोभित। (२) विद्यमान, उपस्थित। (३) बैठा हुआ।

विराजित—वि. [सं.] (१) शोभित। (२) उपस्थित।

विराट—संज्ञा पुं. [सं. विराट्] (१) ब्रह्म का वह स्थूल रूप जिसके अन्दर अखिल विश्व है। (२) मत्स्य देश (वर्तमान अलवर और जयपुर का प्रदेश)। (३) मत्स्य देश का वह राजा जिसके यहाँ अज्ञातवास-काल में पांडव रहे थे।

वि. बहुत बड़ा और भारी। उ.—सम बल वैस विराट मैन से प्रगट भए हैं आइ—२५८०।

विराध—संज्ञा पुं. [सं.] एक राक्षस जिसे दंडकारण्य में लक्ष्मण ने मारा था। उ.—मारग में बहु मुनिजन तारे अरु विराध रिपु मारे—सारा. २५५।

वि. सताने या पीड़ित करनेवाला।

विराम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ठहराव। (२) विश्राम। (३) छंद में यति। (४) वाक्य में वह स्थान जहाँ ठहरना पड़े।

विराव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोली। (२) शोर।

वि. शब्दरहित, नीरव।

विरास—संज्ञा पुं. [सं. विलास] आनंद, भोग-विलास।

विरासी—वि. [सं. विलासी] सुख-भोग में लीन।

विरिंच, विरिंचन संज्ञा पुं. [सं. विरंचि] ब्रह्मा।

विरुज—वि. [सं.] रोगरहित, नीरोग।

विरुझना—क्रि. अ. [हिं. उलझना] (१) फँसना, अटकना। (२) लिपटना। (३) काम में लीन होना। (४) झपड़ना। (५) कठिनाई से पड़ना।

क्रि. अ. [हिं. विरुझना] झगड़ना।

विरुझैं—क्रि. अ. [हिं. विरुझना] झगड़ने लगें। उ.—तब न कछू बनि आइहै जब विरुझैं सब नारि—११२५।

विरुत—वि. [सं.] रव-युक्त, गूँजता हुआ।

विरुद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यश, कीर्ति। (२) यश-कीर्तन, प्रशस्ति। (३) यश-सूचक पदवी।

विरुदावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] यश-वर्णन, प्रशंसा।

विरुद्ध—वि. [सं.] (१) प्रतिकूल। (२) अप्रसन्न। (३) विपरीत। (४) अनुचित, नीति के प्रतिकूल।

विरुद्धता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विरुद्ध होने का भाव। (२) प्रतिकूलता, विपरीतता।

विरूप—वि. [सं.] (१) कुरूप। (२) परिवर्तित।

विरूपा—वि. स्त्री. [सं.] कुरूपा (नारी)।

विरूपाक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव। (२) रावण का एक सेनानायक जिसे हनुमान ने मारा था।

विरोचन—संज्ञा पुं. [सं.] प्रहलाद का पुत्र जो राजा बलि का पिता था।

विरोचन-सुत—संज्ञा पुं. [सं.] राजा बलि जिसे वामन ने छला था।

विरोध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भिन्नता, विपरीतता। (२) अनबन, शत्रुता। (३) दो बातों का साथ-साथ न हो सकना। (४) उलटी स्थिति।

विरोधना—क्रि. स. [सं. विरोधन] बैर करना।

विरोधाभास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दो बातों में दिखायी देन वाला विरोध। (२) एक अलंकार।

विरोधी—वि. [सं. विरोधिन्] बाधक, विपक्षी, शत्रु।

विलंब—वि. [सं. विलम्ब] देर, अतिकाल।

विलंबन—संज्ञा पुं. [सं.] देर करने का भाव।

विलंबना, विलंबनो—क्रि. अ. [सं. विलंबन] (१) देर करना। (२) मन लगने के कारण रम जाना। (३) लटकना। (४) अवलंब या सहारा देना।

विलंबाना, विलंबानो—क्रि. स. [हिं. विलंबना] (१) देर कराना। (२) मन लगाने के कारण रमने को प्रवृत्त करना। (३) लटकाना। (४) अवलंब या सहारा देना।

विलंबित—वि. [सं.] (१) झूलता या लटकता हुआ। (२) जिसमें देर हुई हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलक्षण—वि. [सं.] असाधारण, अनोखा।
विलक्षणता – संज्ञा स्त्री [सं.] अनोखापन।
विलखना, विलखनो – क्रि. अ. [सं. विकल] दुखी होना। क्रि. अ. [सं. वि+लक्ष] लक्ष्य करना, ताड़ना।
विलखाना, विलखानो—क्रि. स. [सं. विकल] दुखी या पीड़ित करना।
विलग – वि. [सं. वि.+हिं. लगना] (१) अलग, पृथक्। (२) अनुचित, बुरा। उ.—(क) विलग जनि मानौ हमरी बात—ना. ४१५१। (ख) विलग जनि मानौ ऊधौ कारे—ना ४३८०। (ग) विलग हम मानैं ऊधौ काको—ना. ४४७४। (घ) याको विलग बहुत हम मान्यो जब कहि पठयो धाइ—२९३१।
विलगाना, विलगानो – क्रि. अ. [हिं. विलग] अलग या पृथक् होना।
क्रि. स. अलग या पृथक् करना।
विलच्छन—वि. [सं. विलक्षण] अद्भुत, अनूठा।
विलपत—क्रि. अ. [हिं. विलपना] विलाप करते (हुए)। उ.—सीता सी ता विलपत डोलत—सारा. २७३।
विलपति—क्रि. अ. [हिं. विलपना] विलाप करती है। उ.—सूरदास राधा विलपति है, हरि को रूप अगाधो—२७५८।
विलपना, विलपनो—क्रि. अ. [सं. विलाप] रोना।
विलपाना, विलपानो—क्रि. स. [हिं. विलपना] रुलाना, विलाप करने को प्रवृत्त करना।
विलम—संज्ञा पुं. [सं. विलंब] देर, विलंब। उ.—(क) विलम करो जिनि नेकहूँ अबही व्रज जाइ—२४७६। (ख) गए पास तब विलम न करी— १० उ.—२८। (ग) राम-कृष्ण को लावौ मधुपुरि विलम करो जनि जात—सारा. २९९४।
विलय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लोप। (२) नाश।
विलसत—क्रि. स. [हिं. विलसना] सुख भोगते या आनन्द उठाते हैं। उ.—(क) इंद्रासन बैठे सुख विलसत दूर किये भुव-भार—सारा. ५०। (ख) पुटुपवास रस-रसिक हमारे विलसत मधुप गोपाल—३३४९।
विलसन—संज्ञा पुं. [सं.] क्रीड़ा, प्रमोद।
विलसनो, विलसनो—क्रि. अ. [सं. विलसन] (१) क्रीड़ा या विलास करना। (२) आनंद मनाना।
विलसाना, विलसानो—क्रि. स. [हिं. विलसना] (१) क्रीड़ा या विलास में प्रवृत्त करना। (२) आनंद मनाने को प्रवृत्त करना।
विलसियो, विलसियौ - क्रि. अ. [हिं. विलसना] सुख या आनंद भोगना। उ.—सुख दै कह्यो, लिये आवति हौं, संग विलसियो बाम —१८७६।
विलसी—क्रि. स. [हिं. विलसना] सुख उठाना। उ.—कौनैं रंक संपदा विलसी सोवत सपने पाई—३३४३।
विलाप—संज्ञा पुं. [सं.] क्रंदन, रुदन।
विलापना, विलापनो—क्रि. अ. [सं. विलाप] रुदन, क्रंदन या शोक करना।
विलायन—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन अस्त्र।
विलास – संज्ञा पुं. [सं.] (१) सुख-भोग। उ.—(क) स्यामा सुधा-सरोवर मानो क्रीड़त विविध विलास—पृ. ३५० (६४)। (ख) व्रजवासिनि सो करत विलास —१० उ.-३७। (२) हर्ष, आनंद। उ.—प्रभु मुकुंद कै हेत नूतन होंहि घोष विलास—१०-२६। (३) हाव-भाव, अंगों की मनोहर चेष्टा। उ.—सूरदास अब क्यों बिसरत हैं नख-सिख अंग-विलास—३२३२। (४) हिलना-डोलना। (५) अत्यंत विषय-भोग या काम-सुख।
विलासिनि, विलासिनी—संज्ञा स्त्री. [सं विलासिनी] (१) विलास करनेवाली, भोग-विलास में लिप्त रहने वाल, कामिनी। (२) वेश्या।
विलासी—वि. [सं. विलासिन्] (१) विषय-भोग में लिप्त, कामी। (२) आमोदप्रिय।
विलासै—क्रि. स. [हिं. विलासना] क्रीड़ा करता और आनन्द मनाता है। उ.—वृंदावन में रास विलासै मुरली मधुर बजावै—१० उ.-४३।
विलीक—वि. [सं. व्यलीक] अनुचित।
विलीन—वि. [सं.] (१) लुप्त, अदृश्य। (२) जो घुल-मिल गया हो। (३) छिपा हुआ। (४) नष्ट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलोकना, विलोकनो—क्रि. स. [सं. विलोकन] देखना, अवलोकन करना।

विलोकि—क्रि. स. [हिं. विलोकना] देखकर। उ.—अब विधु-वदन विलोकि सुलोचन—२५६७।

विलोचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नेत्र, नयन। (२) आँखें फोड़ने की क्रिया।

विलोपना, विलोपनो—क्रि. स. [सं. विलोपन] लुप्त या अदृश्य करना, नाश करना।

विलोम—वि. [सं.] (१) विपरीत, प्रतिकूल। (२) स्वर का उतार या अवरोह।

विलोल—वि. [सं.] (१) चंचल। (२) सुंदर।

विल्व -संज्ञा पुं. [सं.] बेल का पेड़।

विल्वमंगल—संज्ञा पुं. [सं.] सूरदास का समकालीन एक प्रसिद्ध भक्त।

विव—वि. [सं. द्वि] (१) दो। (२) दूसरा।

विवदना, विवदनो—क्रि. अ. [सं. विवाद] वाद-विवाद या तर्क-वितर्क करना।

विवर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छेद। (२) दरार। (३) गुफा।

विवरण—संज्ञा पुं. [सं.] वृत्तांत, विस्तृत वर्णन।

विवरन—संज्ञा पुं. [सं. विवरण] वृत्तांत।

वि. [सं. विवर्ण] कांतिहीन। उ.—विवरन भये जे दाधे वारिज ज्यौं जलहीन—२७६७।

विवर्ण—संज्ञा पुं. [सं.] वह भाव जिसमें भय, लज्जा आदि से मुख का रंग बदल जाता है।

वि. (१) जिसका रंग खराब हो गया हो, बदरंग। (२) रंग बदलनेवाला। (३) जिसके चेहरे का रंग उतरा हुआ हो, कांतिहीन।

विवर्तन —संज्ञा पुं. [सं.] (१) घूमना-फिरना। (२) नाच, नृत्य।

विवश, विवस—वि. [सं. विवश] (१) लाचार, मजबूर। (२) पराधीन, परवश। (३) शक्तिहीन।

विवसन, विवस्त्र—वि. [सं.] वस्त्रहीन।

विवाद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वाक्युद्ध, वितर्क। (२) झगड़ा। (३) मतभेद।

विवाह—संज्ञा पुं. [सं.] शादी, दांपत्य-सूत्र-बंधन का संस्कार। विवाह आठ प्रकार के माने गये हैं—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैशाच। उ.—करि विवाह ताही लै आयो—१०-उ.-२८।

विवाहना, विवाहनो—क्रि. स. [सं. विवाह] शादी या विवाह करना।

विवाहित—वि. [सं.] ब्याहा हुआ।

विवाहिता—वि. स्त्री. [सं.] ब्याही हुई।

विवाही—वि. स्त्री. [सं. विवाह] ब्याही हुई।

क्रि. स. [हिं. विवाहना] विवाह किया। उ.—तैसेहो लछमना विवाही पूरन परमानंद—सारा. ६५७।

विवि—वि. [सं. द्वि] (१) दो, दोनों। उ.—नैन कटाक्ष बिलोकन मधुरो सुभग भृकुटो विवि मोरत—१३५०। (ख) माना परनकुटी सिव कीन्ही विवि मूरति धरि न्यारे—२७६२। (२) दूसरा, अन्य।

विविध—वि. [सं.] अनेक प्रकार का। उ.—कनक दंड सारंग विविध रंव कीरति निगम सिद्ध सुर धाइ—२५५५।

विविर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गुफा। (२) बिल। (३) दरार।

विवुध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) देवता। (२) ज्ञानी।

विवृत्त—वि. [सं.] (१) विस्तृत। (२) खुला हुआ।

संज्ञा पुं. ऊष्म स्वर-उच्चारण का एक प्रयत्न।

विवेक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सत्-असत्-ज्ञान। (२) समझ, बुद्धि। (३) सत्य ज्ञान। (४) अच्छे बुरे को पहचानने की शक्ति।

विवेकी—वि. [सं.] (१) बुद्धिमान। (२) भले-बुरे का ज्ञान रखनेवाला। (३) ज्ञानी। (४) न्यायशील।

विवेचक—वि. [सं.] विवेचना करनेवाला।

विवेचन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जांचना, परीक्षा, मीमांसा। (२) व्याख्या, तर्क-वितर्क। (३) अनुसंधान। (४) सत्-असत्-विचार।

विवेचना—संज्ञा स्त्री. [सं.] विवेचन।

विशद—वि. [सं.] (१) स्पष्ट। (२) विस्तृत।

विशाखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सताईस नक्षत्रों में सोलहवां। (२) राधा की सखी एक गोपी। उ.—ललिता विसाखा ब्रजवधू बुलाईं—२२६०।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशारद—वि. [सं.] (१) विद्वान, पंडित। (२) दक्ष, कुशल। (३) श्रेष्ठ, उत्तम।

विशाल—वि. [सं.] (१) बड़ा, विस्तृत। उ.- रथ बैठे दूर ते देखे अंबुज नैन विशाल—२५३६। (२) सुंदर, भव्य। (३) प्रसिद्ध।

विशालता—संज्ञा स्त्री. [सं.] विशाल होने का भाव।

विशाली—वि. स्त्री. [सं. विशाल] बड़ा। उ.- धन तन स्याम सुदेह पीत पट सुंदर नैन विशाली—२५६७।

विशिख—संज्ञा पुं. [सं.] तीर, बाण।

विशिष्ट—वि. [सं.] विशेषतायुक्त।

विशिष्टता—संज्ञा स्त्री. [सं.] विशेषता।

विशिष्टाद्वैत—संज्ञा पुं. [सं.] रामानुजाचार्य का वह दार्शनिक सिद्धांत जिसके अनुसार जगत और जीवात्मा को ब्रह्म कार्य-रूप में एक दूसरे से भिन्न मानने पर भी वस्तुतः एक ही माना जाता है।

विशुद्ध—वि. [सं.] अत्यंत शुद्ध।

विशुद्धता—संज्ञा स्त्री. [सं.] विशुद्ध होने का भाव।

विशृंखल—वि. [सं.] कड़ी या शृंखलारहित।

विशेष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जिसमें कुछ खास या नयी बात हो। (२) विशिष्ट व्यक्ति, वस्तु आदि से संबंध रखनेवाला। (३) सामान्य से अधिक गुणवाला। (४) खास कामों के लिए रखा या लगाया हुआ।

संज्ञा पुं. एक अर्थालंकार।

विशेषज्ञ—वि. [सं.] विशेष ज्ञान रखनेवाला।

विशेषण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विशेषता उत्पन्न करने या बतानेवाला। (२) वह विकारी शब्द जो किसी संज्ञा की विशेषता सूचित करे।

विशेषता—संज्ञा स्त्री. [सं.] खासियत, विशेष गुण।

विशेषी—वि. [सं. विशेषिन्] विशेषतायुक्त।

विशेष्य—संज्ञा पुं. [सं.] वह संज्ञा (शब्द) जिसकी विशेषता सूचित की जाय।

विश्रांत—वि. [सं] जिसने विश्राम कर लिया हो।

विश्रांति—संज्ञा स्त्री. [सं.] आराम, विश्राम।

विश्राम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रम मिटाना, आराम करना। उ.— सूर प्रभु कियो विश्राम सब निशि तहाँ—२५७०। (२) चैन, सुख। (३) ठहरने का स्थान।

विश्रामिनि, विश्रामिनी—वि. स्त्री. [सं. विश्राम] सुख देनेवाली। उ.—रूप-निधान स्यामसुंदर घन-आनँद मन विश्रामिनि—पृ. ३४४ (३४)।

विश्रुत—वि. [सं.] (१) जाना या सुना हुआ। (२) प्रसिद्ध, विख्यात।

विश्रुति—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रसिद्धि, ख्याति।

विश्लेषण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संयोजक तत्वों को अलग करना। (२) विवेचन, मीमांसा।

विश्वंभर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विश्व का भरण-पोषण करने वाला, ईश्वर। (२) विष्णु।

विश्वंभरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी।

विश्व—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चौदहों भुवनों का समूह, संपूर्ण ब्रह्मांड। (२) संसार।

विश्वकर्ता—संज्ञा पुं. [सं. विश्वकर्तृ] परमेश्वर।

विश्वकर्मा—संज्ञा पुं. [सं. विश्वकर्म्मन्] (१) संसार का रचयिता, ईश्वर। उ.— ज्ञान तुही कर्म तुही विश्वकर्मा तुही अनंत शक्ति प्रभु असुर-शालक—१०. उ. —३५। (२) एक पौराणिक आचार्य जो शिल्पशास्त्र के आविष्कर्त्ता और सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता माने जाते हैं। उ. —विश्वकर्मा को आज्ञा दीनी रची द्वारका आय—सारा. ६०३।

विश्वकोश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह भांडार जिसमें संसार के सब पदार्थ हों। (२) वह महाग्रंथ जिसमें संसार के सब विषयों का प्रामाणिक परिचय हो।

विश्वजित—वि. [सं.] संसार को जीतनेवाला।

विश्वनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव। (२) काशी का एक प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग।

विश्वभरन वि. [सं. विश्वंभर] विश्व का भरण-पोषण करनेवाले। उ.—सूरदास प्रभु विश्वभरन ए चोर भए ब्रज तनक दही के—२३८५।

विश्वमोहन—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु।

विश्वविद्यालय—संज्ञा पुं. [सं.] वह संस्था जहाँ सभी विषयों की उच्चकोटि की शिक्षा दी जाती हो।

विश्वव्यापी—वि. [सं.] जो सारे विश्व में व्याप्त हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्रवा—संज्ञा पुं. [सं. विश्रवस्] एक मुनि जो रावण आदि के पिता थे।

विश्वसनीय—वि. [सं.] विश्वास करने योग्य।

विश्वस्त—वि. [सं.] जिसका विश्वास किया जाय।

विश्वात्मा—संज्ञा पुं. [सं. विश्वात्मन्] (१) विष्णु। (२) शिव। (३) ब्रह्मा।

विश्वामित्र—संज्ञा पुं. [सं.] महाराज गाधि के पुत्र जो क्षत्रिय होते हुए भी ब्रह्मर्षि कहलाए। मेनका अप्सरा से उत्पन्न शकुंतला इन्हीं की पुत्री थी।

विश्वास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यकीन, एतबार। (२) आस्था। (३) अनुमान पर आधारित निश्चय।

विश्वासकारक—वि. [सं.] विश्वास उत्पन्न करनेवाला।

विश्वासघात—संज्ञा पुं. [सं.] विश्वास के प्रतिकूल या विरुद्ध कार्य।

विश्वासघातक—वि. [सं.] विश्वास करनेवाले को, प्रतिकूल कार्य करके, धोखा देनेवाला।

विश्वासघाती—वि. [सं.] विश्वास करनेवाले का अपकार करने या उसको धोखा देनेवाला। उ.—पुनि वह बधिक विश्वासघाती हनत विषम शर तानि —३२३८।

विश्वासपात्र—वि. [सं.] विश्वास करने के योग्य।

विश्वासी—वि. [सं. विश्वासिन्] (१) विश्वास करनेवाला। (२) जिसका विश्वास किया जाय।

विष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जहर, गरल। (२) वह जो सुख-शांति में बाधक हो।

मुहा०—विष की गाँठ—झगड़ा, उपद्रव आदि करानेवाला।

विषकंठ—संज्ञा पुं. [सं.] शिव, महादेव।

विषकन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह कन्या जिसको जन्म से ही इस उद्देश्य से विष-पान कराया जाय कि उसके संपर्क में आनेवाला तुरंत मर जाय।

विषधर—संज्ञा पुं. [सं.] साँप, सर्प।

विषम—वि. [सं.] (१) जो सम या समान न हो। (२) जिस (संख्या) को दो से भाग देने पर एक शेष बचे। (३) जटिल, क्लिष्ट। (४) तेज, तीव्र। उ.—विषधर विषय विषम विष बाँचौं—१-८३। (५) विकट, भीषण, भयंकर। उ.—(क) भीजत ग्वाल गाइ गोसुत सब विषम बूँद लागत जनु सायक—९५४। (ख) जे वै लता लगत तनु सीतल अब भई विषम अनल की पुंजें—२ २१। (ग) पुनि वह बधिक विश्वासघाती हनत विषम सर तानि—३२३८।

संज्ञा पुं. संकट, विपत्ति।

विषमता—संज्ञा स्त्री. [सं] (१) विषम होने का भाव, असमानता। उ.—आपु विषमता तजि दोऊ सम भै बानक ललित त्रिभंग—३३२७। (२) वैर, द्रोह।

विषमायुध—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

विषयक—वि. [सं.] विषय का, विषय-संबंधी।

विषयपति—संज्ञा पुं. [सं.] जनपद का शासक।

विषयासक्त—वि. [सं.] विलासी, कामी।

विषयासक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] विलासिता।

विषयी—वि. [सं. विषयिन्] भोग विलास में लिप्त रहनेवाला, विलासी, कामी। उ.—(क) अपत उतार अभागो कामी विषयी निपट कुकर्मी—१-१८६। (ख) महामूढ़ विषयी भयौ चित आकर्ष्यो काम—१-३२५।

विषलाडू—संज्ञा पुं. [सं. विष + हिं. लड्डू] लड्डू जिसमें विष मिला हो। उ.—फंदा फाँसि धनुष विष-लाडू सूर स्याम नहिं हमहिं बतायो—११६१।

विषहर—वि. [सं.] जो (औषध, मंत्र आदि) विष का प्रभाव दूर करे।

संज्ञा पुं. [सं. विषधर] साँप, सर्प। उ.—लागे हैं विषारे बान स्याम बिनु युग याम घायल ज्यों घूमैं मनो विषहर खाई है—२८२७।

विषांगना—संज्ञा स्त्री. [सं.] विषकन्या।

विषाक्त—वि. [सं.] जहरीला विषयुक्त।

विषाण—संज्ञा पुं [सं.] (१) सींग। (२) दाँत।

विषाद—संज्ञा पु. [सं.] खेद, दुख। उ.—जा चरनारबिंद के रस को सुर-मुनि करत विषाद—१०-६४।

विषान—संज्ञा पुं. [सं. विषाण] सींग या सिंगी बाजा। उ.—मुद्रा भस्म विषान त्वचा मृग ब्रज युवतिनि मन भाए—२९९१।

विषानन—संज्ञा पुं. [सं.] साँप, सर्प।

विषारो—वि. [सं. विष + हिं. आरो] विषभरा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषैला। उ.—अंग कारो-मुख विषारो दृष्टि परैं तोहिं लागिहै—५७७।

विषुवरेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह कल्पित रेखा जो पृथ्वीतल पर, दोनों मेरुओं के ठीक मध्य में मानी जाती है।

विषै—संज्ञा पुं. [सं. विषय] भोग-विलास। उ.—कह्यो तुमको ब्रह्म ध्यावो छाँड़ि विषै विकार—२३६५।

विष्कंभ, विषकंभक—संज्ञा पुं. [सं.] नाटक का वह अंक जिसमें मध्यम पात्रों द्वारा पूर्व की अथवा होनेवाली कथा की सूचना दी जाती है।

विष्ठा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मैला, मल।

विष्णु—संज्ञा पुं. [सं.] हिंदुओं के एक प्रधान देवता जो सृष्टि का भरण-पोषण करनेवाले माने जाते हैं। इनके चौबीस अवतारों में दस प्रमुख माने जाते हैं। लक्ष्मी इनकी पत्नी है। इनके चार हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म रहते हैं। गरुड़ इनका वाहन है। गंगा इनके चरणों से निकली कही गयी है।

विष्णुपुरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वैकुंठ।

विष्वक्सेन—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु का एक नाम।

विसम—वि. [सं. विषम] (१) जो सम न हो। (२) क्लिष्ट। (३) तेज, तीव्र। (४) भीषण।

विसमता—संज्ञा स्त्री. [सं. विषमता] असमानता।

विसर्ग—संज्ञा पु. [सं.] (१) त्याग। (२) वह वर्ण जिसके आगे दो बिंदु ऊपर-नीचे होते है और जिसका उच्चारण प्रायः अर्द्ध 'ह' जैसा होता है।

विसर्जन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परित्याग। (२) समाप्ति।

विसर्पी—वि. [सं. विसर्पिन्] (१) फैलनेवाला, प्रसरणशील। (२) तेज चलनेवाला।

विसूरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दुख। (२) चिंता।

विसूरति—क्रि. अ. [हिं. विसूरना] शोक करती है। उ.—बार-बार सिर धुनति विसूरति—२७६६।

विसूरना, विसूरनो—क्रि. अ. [सं. विसूरण] बहुत दुख या शोक करना।

विस्तर—वि. [सं.] अधिक, विशेष।

विस्तरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अधिक होने का भाव।

विस्तरना, विस्तरनो—क्रि. स. [सं. विस्तर] विस्तार देना, फैलाना, बढ़ाना।

विस्तरो, विस्तरौ—क्रि. स. [हिं. विस्तरना] विस्तार करो। उ.—शुक्र कह्यो, तुम जग विस्तरौ—१११२।

विस्तार—संज्ञा पुं. [सं.] फैलाव।

विस्तारन—संज्ञा पुं. [सं. विस्तार] फैलाने का कार्य। उ.—करुनाकर जलनिधि तें प्रगटे सुधा-कलस लै हाथ। आयुर्वेद विस्तारन कारण सब ब्रह्माण्ड के नाथ—सारा. १३८।

विस्तारना विस्तारनो—क्रि. स. [सं. विस्तार] विस्तार देना, फैलाना, बढ़ाना।

विस्तारी—वि. [सं. विस्तारिन्] अधिक विस्तारवाला।

विस्तारे—क्रि. स. [हिं. विस्तारना] फैलाया, प्रचलित किया। उ.—उहाँ दासी रति की कीरति कै इहाँ योग विस्तारे—३०५५।

विस्तीर्ण—वि. [सं.] (१) फैला हुआ, विस्तृत। (२) बहुत बड़ा, विशाल। (३) बहुत अधिक।

विस्तृत—वि. [सं.] (१) खूब फैला हुआ। (२) पर्याप्त विवरण के साथ। (३) बहुत बड़ा, विशाल।

विस्फार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फैलाव, विस्तार। (२) विकास। (३) काँपना।

विस्फारित—वि. [सं.] (१) अच्छी तरह खोला या फैलाया हुआ। (२) फाड़ा हुआ।

विस्फोट—संज्ञा पुं. [सं.] फूट पड़ना।

विस्मय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आश्चर्य। (२) अद्भुत रस का स्थायी भाव जो अलौकिक या अद्भुत कार्यों से मन में उत्पन्न होता है।

विस्मरण—संज्ञा पुं. [सं.] स्मरण न रहना।

विस्मित—वि. [सं.] चकित।

विस्मृत—वि. [सं.] जो स्मरण न हो।

विस्मृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] भूल जाना, विस्मरण।

विस्राम—संज्ञा पुं. [सं. विश्राम] आराम, सुख।

विहंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पक्षी, विहग। (२) तीर, बाण। (३) रवि सूर्य।

विहंगम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पक्षी। (२) सूर्य।

विहंगराज—संज्ञा पुं. [सं.] गरुड़।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विहंगी—संज्ञा पुं. [सं. पक्षी] पक्षी ।

विहग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पक्षी । (२) सूर्य ।

विहरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चलना-फिरना, घूमना । (२) वियोग ।

विहरना, विहरनो—क्रि. अ. [सं. विहरण] घूमना, चलना-फिरना ।

विहरै—क्रि. अ. [हिं. विहरना] घूमता-फिरता या विचरण करता हूं । उ.—यमुना के तीर ग्वाल संगहि विहरै री—२४२३ ।

विहसित—संज्ञा पुं. [सं.] मधुर हास ।

विहान—संज्ञा पुं. [सं. वि + अह्नि] सबेरा, प्रभात ।

विहार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) घूमना-फिरना । (२) रति-क्रीड़ा । (३) बौद्ध श्रमणों का मठ ।

विहारी—वि. [सं.] (१) विहार करनेवाला । (२) विहार करनेवाले (श्रीकृष्ण) । उ.—बोले सुभट, हँसि मन जिनि करौ वन विहारी—२५८४ ।

संज्ञा पुं. श्रीकृष्ण ।

विहित—वि. [सं.] (१) जिसका विधान हो, जिसके लिए अनुमति हो । (२) किया हुआ ।

विहीन—वि. [सं.] बिना, रहित ।

विहून—वि. [सं. विहीन] बिना, रहित ।

विह्वल—वि. [सं.] व्याकुल, विकल । उ.—सूर स्याम रतिपति विह्वल करि नागरि रहि मुरझाइ—२०७७ ।

विह्वलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्याकुलता, घबराहट ।

वीक्षण—संज्ञा पुं. [सं.] देखने का कार्य ।

वीचि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लहर, तरंग । (२) चमक प्रभा, दीप्ति ।

वीचिमाली—संज्ञा पुं. [सं.] सागर, समुद्र ।

वीची—संज्ञा स्त्री. [सं.] लहर, तरंग ।

वीज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मूल कारण । (२) वीर्य । (३) तेज । (४) बीज । (५) एक प्रकार का मंत्र ।

वीजमार्गी—संज्ञा पुं. [सं. वीजमार्गिन्] वह वैष्णव जो निर्गुणोपासक होता है ।

वीणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक प्रसिद्ध बाजा ।

वीणापाणि—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती ।

वीत—वि. [सं.] (१) त्यागा हुआ । (२) मुक्त । (३) समाप्त । (४) निवृत्त, विरक्त ।

वीतराग—वि. [सं.] जिसमें आसक्ति न हो ।

वीतशोक—वि. [सं.] जिसने शोक त्याग दिया हो ।

वीथिका वीथी—संज्ञा स्त्री. [सं. वीथी] (१) रूपक के २७ भेदों में एक । (२) मार्ग । (३) सूर्य का मार्ग ।

वीप्सा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) व्याप्त होने की इच्छा । (२) व्याप्ति । (३) एक काव्यालंकार ।

वीर—वि. [सं.] (१) बहादुर शूर. साहसी । उ.—परम निसंक समर सरिता तट क्रीड़त यादव वीर—१० उ.-२ । (२) जो किसी काम में दूसरों से बहुत बढ़-चढ़ कर हो ।

संज्ञा पुं. (१) सैनिक । (२) भाई । (३) एक रस जिसमें उत्साह, वीरता आदि का वर्णन होता है । उत्साह इसका स्थायी भाव है ।

वीरगति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वीरों को प्राप्त उत्तम गति । (२) स्वर्ग ।

वीरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] बहादुरी, शूरता ।

वीरभद्र—संज्ञा पुं. [सं.] शिव का एक गण ।

वीरललित—वि. [सं.] वीरों जैसा, परन्तु कोमल (स्वभाव) ।

वीरव्रत—वि. [सं.] निश्चय पर दृढ़ रहनेवाला ।

वीरशय्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] रणभूमि ।

वीरसू—संज्ञा स्त्री. [सं.] वीर की जननी ।

वीराचारी—संज्ञा पुं. [सं. वीराचारिन्] वे वाममार्गी या शैव जो वीर भाव से उपासना करते हैं ।

वीरान—वि. [फ़ा.] (१) उजड़ा हुआ । (२) श्रीहीन ।

वीराना—संज्ञा पुं. [फ़ा.] उजाड़ स्थान ।

वीरासन—संज्ञा पुं. [सं.] एक आसन जिसमें बायें पैर और टखने पर दाहिनी जांघ रख कर बैठते हैं ।

वीरुध—संज्ञा पुं. [सं.] वृक्ष, लता, वनस्पति ।

वीरेश, वीरेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] शिव, महादेव ।

वीर्य—संज्ञा पुं. [सं. वीर्य्य] (१) शरीर की सात धातुओं में अंतिम जिससे शरीर में बल और तेज आता है । यही संतान-जन्म का मूल है । (२) सार, तत्व । (३) बल, शक्ति ।

वृंत—संज्ञा पुं. [सं. वृंत] (१) कच्चा फल । (२) बौंड़ी । (३) पतला डंठल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृंद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) समूह। उ.—सखा वृंद लै तहाँ गए—२५७५। (२) सौ करोड़ की संख्या। (१) एक मुहूर्त।

वृंदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) तुलसी। (२) राधा के सोलह नामों में एक। (३) राधा की एक सखी।

वृंदारक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) देवता। (२) श्रेष्ठ व्यक्ति।

वृंदारण्य—संज्ञा पुं. [सं.] वृन्दावन।

वृंदावन—संज्ञा पुं. [सं.] मथुरा जिले का एक प्रसिद्ध तीर्थ जहाँ श्रीकृष्ण ने अनेक बाल-लीलाएँ की थीं।

वृक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भेड़िया। (२) गीदड़। (३) कौआ। (४) क्षत्रिय। (५) चोर।

वृकोदर—संज्ञा पुं. [सं.] भीमसेन जिनके पेट में 'वृक' नाम्मी अग्नि थी।

वृक्क, वृक्कक—संज्ञा पुं. [सं.] गुरदा।

वृक्का—संज्ञा पुं. [सं.] हृदय।

वृक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेड़, द्रुम, विटप। (२) वृक्ष से मिलती-जुलती वह आकृति जिसमें मूल, शाखा, प्रशाखाएँ आदि दिखायी गयी हों।

वृजि—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्रजभूमि।

वृजिन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पाप। (२) दुख।
वि. (१) टेढ़ा, कुटिल। (२) पापी।

वृत—वि. [सं.] (१) नियुक्त। (२) स्वीकृत।
संज्ञा पुं. [सं. वृत्त] (१) चरित्र। (२) वृत्तांत।

वृत्त—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चरित्र। (२) समाचार।

वृत्तांत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) समाचार, घटना का विवरण। उ.—मुनि जरासंध वृत्तांत अस सुता से युद्ध हित कटक अपनो हँकारचो—११ उ.-१। (२) आख्यान।

वृत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जीविका। (२) सहायतार्थ दिया जाने वाला धन, उपजीविका। (३) व्याख्या। (४) विवरण, वृत्तांत। (५) वर्णन की शैली। (६) चित की अवस्था-विशेष। (७) स्वभाव, प्रकृति। (८) एक शस्त्र।

वृत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) त्वष्टासुर का पुत्र जिसे इंद्र ने वज्र से मारा था। (२) मेघ। (३) अंधकार।

वृत्रहा—संज्ञा पुं. [सं.] वृत्रासुर को मारनेवाला इंद्र।

वृत्रासुर—संज्ञा पुं. [सं.] त्वष्टा का पुत्र जिसे इंद्र ने वज्र से मारा था।

वृथा—वि. [सं.] बिना मतलब का, व्यर्थ का।
क्रि. वि. बिना मतलब के, व्यर्थ।

वृद्ध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बूढ़ा प्राणी। (२) वृद्धावस्था।

वृद्धता—संज्ञा स्त्री. [सं.] बुढ़ापा, वृद्धावस्था।

वृद्धा—वि. स्त्री. [सं.] बूढ़ी।

वृद्धि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बढ़ने की क्रिया, बढ़ती। (२) समृद्धि, आढ्यता।

वृश्चिक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बिच्छू। (२) बारह राशियों में आठवीं। (३) अगहन मास।

वृष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बैल, साँड़। उ.—तेली के वृष लौं नित भरमत—१-१०२। (२) बारह राशियों में दूसरी। (३) बारह लग्नों में दूसरी।

वृषक—संज्ञा पुं. [सं.] साँड़, बैल।

वृषकेतन, वृषकेतु—संज्ञा पुं. [सं.] शिव, महादेव।

वृषभ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बैल, साँड़। (२) श्रीकृष्ण के एक सखा का नाम।

वृषभान, वृषभानु—संज्ञा पुं. [सं.] राधिका के पिता का नाम।

वृषभानुनंदिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] राधा। उ.—ता दिन तें वृषभानुनंदिनी अनत जान नहिं दीन्हें—२१८५।

वृषभानुपुरा—संज्ञा पुं. [सं.] वृषभानु के रहने का स्थान। उ.—प्यारी गयी वृषभानुपुरा तन श्याम जात नँदधाम—२०८१।

वृषभानुसुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राधा।

वृषभासुर—संज्ञा पुं. [सं.] कंस का अनुचर एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ.- केसी तृनावर्त वृषभासुर हती पूतना जब बारे री—२५६८।

वृषल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शूद्र। (२) चंद्रगुप्त मौर्य का एक नाम।

वृषली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) शूद्र जाति की स्त्री। (२) पर-पुरुष से प्रेम करनवाली नारी।

वृषवासी—संज्ञा पुं. [सं. वृषवासिन्] केरल देश के वृष पर्वत पर बसनेवाले शिव जी।

वृष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जल बरसना, वर्षा। (२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर से किसी चीज का बहुत बड़ी संख्या में एक साथ गिरना या गिराया जाना। उ.—(क) अमृत की वृष्टि रन-खेत उपर करौ—६-३६३। (ख) देव दुंदुभी पुहुप बृष्टि जै ध्वनि करै—२६१८। (३) किसी क्रिया का कुछ समय तक बराबर होते रहना।

वृष्णि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेघ, बादल। (२) यदुकुल, यादववंश। (३) श्रीकृष्ण।

वृहत्—वि. [सं. वृहत्] बड़ा, महान।

वृहन्नला—संज्ञा स्त्री. [सं.] अर्जुन का उस समय का नाम जब वे अज्ञातवासकाल में राजा विराट की पुत्री उत्तरा को नृत्य-गान सिखाते थे।

वे—सर्व. [हिं. वह] 'वह' का बहु. रूप।

वेइ, वेई—सर्व. [हिं. वे+ही] वे ही। उ.—(क) तुमकौं लैहैं वेइ बचाइ—९-५। (ख) कालिहिंहिं तैं वेइ सबै ल्यावैं गाइ चराइ—४३७।

वेक्षण—संज्ञा पुं. [सं.] भली भाँति देखना-भालना।

वेग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बहाव, प्रवाह। (२) तेजी। (३) शीघ्रता। (४) झुकाव, प्रवृत्ति।

वेणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] बालों की गूथी हुई चोटी।

वेणु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बाँस। (२) बाँसुरी, वंशी।

वेतन—संज्ञा पुं. [सं.] तनखाह, पारिश्रमिक।

वेतनभोगी—वि. [सं.] वेतन पर काम करनेवाला।

वेत्ता—वि. [सं.] जाननेवाला, ज्ञाता।

वेत्र—संज्ञा पुं. [सं.] बेंत।

वेत्रवती—संज्ञा स्त्री. [सं.] बेतवा नदी।

वेत्रासुर—संज्ञा पुं. [सं.] एक असुर जिसे इंद्र ने मारा था।

वेद—संज्ञा पुं. [सं.] भारतीय आर्यों के सर्वप्रधान धार्मिक ग्रंथ जिनकी संख्या चार है—ऋग्वेद, यजुः, साम और अथर्व। इनकी रचना ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व होना माना जाता है।

वेदज्ञ—वि. [सं.] (१) वेदों का ज्ञाता। (२) ब्रह्मज्ञानी।

वेदन—संज्ञा पुं. स्त्री. [सं. वेदना] पीड़ा, कष्ट। उ.—(क) सूरदास वै आपु स्वार्थी पर-वेदन नहिं जान्यो—१४१७। (ख) सूर नंद बिछुरे की वेदन मोपै कहिय न जाइ—२६५०। (ग) प्राणनाथ बिछुरे की वेदन और न जानै कोई—२८८१।

वेदना—संज्ञा स्त्री. [सं.] पीड़ा, कष्ट।

वेदनिंदक—वि. [सं.] (१) वेदों की बुराई या निंदा करनेवाला। (२) नास्तिक। (३) वाममार्गी।

वेदमाता—संज्ञा स्त्री. [सं.] गायत्री, सावित्री।

वेदवाक्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वेदों का कथन। (२) सर्वथा प्रामाणिक कथन।

वेदविद्—वि. [सं.] वेदों का ज्ञाता, वेदज्ञ।

वेदव्यास—संज्ञा पुं. [सं.] पराशर-पुत्र श्रीकृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों का संग्रह-संपादन किया था।

वेदांग—संज्ञा पुं. [सं.] वेदों के छह अंग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद।

वेदांत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रह्मविद्या, अध्यात्म। (२) छह दर्शनों में वह प्रधान दर्शन जिसमें ब्रह्म को ही एकमात्र पारमार्थिक सत्ता स्वीकार किया गया है, अद्वैतवाद।

वेदांती - वि. [सं.] वेदांत का ज्ञाता, ब्रह्मवादी।
वि. [सं. वि+हिं. दाँत] जिसके दाँत हों।

वेदी—संज्ञा स्त्री. [सं. वेदिन्] (१) शुभ कार्य या अनुष्ठान के लिए तैयार की गयी भूमि। उ.—देत भाँवरि कुंज मंडल पुलिन में वेदी रची—पृ. ३४८ (४)। (२) सरस्वती।

वेध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नोक से छेदना, बेधना। (२) ग्रहों, नक्षत्रों आदि को देखना।

वेधशाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह स्थान जहाँ ग्रहों, नक्षत्रों आदि का अध्ययन करने के यंत्र हों।

वेधा—संज्ञा पुं. [सं. वेधस्] (१) ब्रह्मा। (२) विष्णु।

वेधित—वि. [सं.] जो बेधा या छेदा गया हो।

वेधी—वि. [सं.] (१) बेधने या छेदनेवाला। (२) जिससे वेध किया जाय।

वेला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) समय, काल। (२) दिन-रात का चौबीसवाँ या दिन का आठवाँ भाग। (३) मर्यादा। (४) समुद्र का किनारा। (५) समुद्र की लहर।

वेल्लि, वेल्ली—संज्ञा स्त्री. [सं. वेल्लि] लता, बेल।

वेश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वस्त्राभूषण से अपने को सजाना। (२) वस्त्राभूषण पहनने की रीति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुहा०—किसी का वेश धारण करना—किसी के रूप, रंग, पहनावे, चाल-ढाल आदि की नकल करना।

(३) पहनने के वस्त्र, पोशाक।

यौ०—वेश-भूषा—पहनने के कपड़े, पोशाक।

वेशधारी—वि. [सं.] जिसने किसी का वेश धारण किया हो, छद्मवेशी।

वेशी—वि. [सं.] वेश धारण करनेवाला।

वेश्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] गणिका, वारवनिता।

वेष्टन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) लपेटने की क्रिया या भाव। (२) लपेटने की वस्तु, बेठन।

वेष्ठित—वि. [सं.] लिपटी या लपेटी हुई। उ.—अति हित बेनी उर परसाए वेष्टित भुजा अमोचन—पृ. ३१८ (७२)।

वै—सर्व. [हिं. वे] वे। उ.—(क) सुबल श्रीदामा सुदामा, वै भए इक ओर—१०-२४४। (ख) सूरदास वै आपु स्वारथी—१४१७।

प्रत्य. [सं. व] (१) भी। (२) ही।

संज्ञा पुं. [सं. वय] अवस्था।

वैकल्पिक—वि. [सं.] (१) एकांगी। (२) संदिग्ध। (३) जो इच्छानुसार ग्रहण किया जा सके।

वैकुंठ—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु का धाम।

वैखरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कंठ से उत्पन्न स्वर का विशिष्ट रूप। (२) वाक्शक्ति। (३) वाग्देवी।

वैखानस—वि. [सं.] (१) जो वानप्रस्थ आश्रम में हो। (२) वनवासी (ब्रह्मचारी या तपस्वी)।

वैचित्र्य—संज्ञा पुं. [सं.] विलक्षणता।

वैजयंती—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पताका। (२) श्रीकृष्ण की पँचरंगिणी माला जो घुटनों तक रहती थी।

वैज्ञानिक—वि. [सं.] विज्ञान-संबंधी।

संज्ञा पुं. विज्ञान का अच्छा ज्ञाता।

वैतनिक—वि. [सं.] (१) वेतन लेकर काम करनेवाला। (२) वेतन-संबंधी।

वैतरणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] यमलोक के बाहर बहनेवाली एक नदी जिसे पार करके ही प्राणी उस लोक पहुंच पाता है। इसका जल बहुत गरम है और इसमें लहू, हड्डियाँ आदि भरी हैं। पापियों को इसके पार करने में बड़ा कष्ट होता है। मृत्यु के पूर्व 'गो-दान' करनेवाले सहज ही इसके पार उतर जाते हैं।

वैताल, वैतालिक—संज्ञा पुं. [सं.] स्तुति-पाठक।

वैद—संज्ञा पुं. [सं. वैद्य] चिकित्सक। उ.—सूर वैद ब्रजनाथ मधुपुरी काहि पठाऊँ लैन—२७६५।

वैदग्ध, वैदग्ध्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पांडित्य। (२) कौशल, पटुता। (३) चतुरता।

वैदर्भी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) काव्य की वह रीति जिसमें मधुर वर्णों के द्वारा मधुर रचना की जाती है। (२) दमयंती। (३) रुक्मिणी।

वैदिक—वि. [सं.] (१) जो वेदों में कहा गया है। (२) वेद-संबंधी, वेद का।

वैदूर्य—संज्ञा पुं. [सं.] लहसुनिया रत्न।

वैदेशिक—वि. [सं.] विदेश-संबंधी।

वैदेही—संज्ञा स्त्री. [सं.] विदेह-सुता, सीता।

वैद्य—संज्ञा पुं. [सं.] चिकित्सक।

वैद्यक—संज्ञा पुं. [सं.] चिकित्सा-शास्त्र।

वैद्यनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] बंगाल का एक शिव तीर्थ।

वैध—वि. [सं.] जो विधि के अनुकूल हो, ठीक।

वैधव्य—संज्ञा पुं. [सं.] विधवापन, रँड़ापा।

वैनतेय—संज्ञा पुं. [सं.] विनिता-पुत्र, गरुड़। उ.—वैनतेय संपुट सनकादिक चतुरानन जय-विजय सखाइ—२५५५।

वैभव—संज्ञा पुं. [सं.] धन-संपत्ति, ऐश्वर्य।

वैभवशाली—वि. [सं.] ऐश्वर्य-संपन्न।

वैभाषिक—वि. [सं.] विभाषा-संबंधी।

वैमनस्य—संज्ञा पुं. [सं.] वैर, द्वेष।

वैमात—वि. [सं.] विमाता से उत्पन्न, सौतेला।

वैया—अव्य [सं. वान्] करनेवाला।

वैयाकरण—संज्ञा पुं. [सं.] व्याकरण का पंडित।

वैर—संज्ञा पुं. [सं.] द्वेष, शत्रुता। उ.—(क) गरजि-गरजि घन बरसन लागे मनो सुरपति निज वैर सँभार्‍यो—२८३२। (ख) हमारे माई मोरवा वैर परे—२८४१।

वैराग—संज्ञा पुं. [सं. वैराग्य] विरक्ति।

वैरागी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विरक्त व्यक्ति। (२) रामानुज के अनुयायी उदासीन वैष्णव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैराग्य—संज्ञा पुं. [सं.] विरक्ति ।

वैराज्य—संज्ञा पुं. [सं.] एक ही देश में, एक ही काल में दो राजाओं का शासन ।

वैरूप्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विरूपता । (२) विकृति ।

वैरोचन, वैरोचनि—संज्ञा पुं. [सं.] राजा बलि ।

वैवस्वत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक मनु जिनसे आज का मन्वंतर माना जाता है । (२) वर्तमान मन्वंतर ।

वैवाहिक—वि. [सं.] विवाह-संबंधी ।

वैशंपायन—संज्ञा पुं. [सं.] एक ऋषि जो वेदव्यास के शिष्य थे और जिन्होंने जनमेजय को महाभारत की कथा सुनायी थी ।

वैशाख—संज्ञा पुं. [सं.] चैत के बाद का महीना । उ.—ऐसो सुनियत द्वै वैशाख—३३२१ ।

वैशाखी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वैशाख की पूर्णिमा ।

वैशाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] बौद्ध काल की एक नगरी ।

वैशेषिक—संज्ञा पुं. [सं.] छह दर्शनों में एक जो महर्षि कणाद-कृत है और जिसमें पदार्थ विचार तथा द्रव्य-निरूपण है, पदार्थ-विद्या ।

वैश्य—संज्ञा पुं. [सं.] चार वर्णों में तीसरा ।

वैश्वानर—संज्ञा पुं. [सं.] अग्नि ।

वैषम्य—संज्ञा पुं. [सं.] विषमता ।

वैषयिक—वि. [सं.] (१) विषय-संबंधी । (२) विषयी ।

वैष्णव—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु का उपासक ।

वि. विष्णु-संबंधी, विष्णु का ।

वैष्णवत्व—संज्ञा पुं. [सं.] वैष्णव होने का भाव ।

वैष्णवी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विष्णु की उपासिका । (२) विष्णु की शक्ति ।

वैसंधि—संज्ञा स्त्री. [सं. वयःसंधि] बाल्यावस्था और यौवनावस्था के बीच की स्थिति । उ.—कहत न बनै सुनतहुँ न आवै वैसँधि वर्णत कविन कठोर—२१३१ ।

वैस—संज्ञा पुं. [हिं. वयस] अवस्था । उ.—और वैस को कहै वरणि—३०३१ ।

वैसा—वि. [हिं. वह+सा] उस तरह का ।

वैसी—वि. स्त्री. [हिं. वैसा] उस तरह की । उ.—वैसी आपदा तैं राख्यौ—१-७७ ।

वैसे—क्रि. वि. [हिं. वैसा] उस तरह ।

मुहा०—वैसे तो—किसी और अथवा दूसरी दशा में ।

वैसेहिं—वि. [हिं. वैसा+ही] वैसे ही । उ.—वाही भाँति बरन वपु वैसेहि सिसु सब रचे नंद-सुत आन—४३८ ।

वोइ—सर्व. [हिं. वह+ही] वह ही, वही । उ.—कितिक बार अवतार लियो व्रज ऐहै ऐसे वोइ—१००४ ।

वोउ—सर्व. [हिं. वह+ऊ] वह भी । उ.—दरसन नीके देत न वोउ—१४२८ ।

वोक—संज्ञा पुं. [अनु. ओक या लोक] (१) दिशा ओर । उ.-सूरस्याम काली उर निरतति आए व्रज की वोक । (२) घर, स्थान । उ.—जरासंध को जीति सूर प्रभु आये अपने वोक—१० उ.-२ ।

वोछी—वि. [हिं. ओछी] तुच्छ, साधारण । उ.—वोछी पूँजी हरै ज्यों तस्कर रंक मरै पछिताइ—३२०३ ।

वोछे—वि. [हिं. ओछा] तुच्छ, साधारण, हीन । उ.—डारत खात देत नहिं काहू वोछे घर निधि आइ—पृ. ३२२ (९) ।

वोछो—वि. [हिं. ओछा] तुच्छ, हीन । उ.—तुमहिं दोष नहिं लाडिले वोछो गुन क्यों जाइ—११३५ ।

वोट—संज्ञा स्त्री. [हिं. ओट] आड़ । उ.—पलक वोट निमि पर अनखाती यह दुख कहाँ समाइ—३४४४ ।

वोढ़नहार—वि. [हिं. ओढ़नहार] ओढ़नेवाला । उ.—ढीठ गुवाल दही के माते वोढ़नहार कमरि को—१०५३ ।

वोढ़नी—संज्ञा स्त्री. [हिं. ओढ़नी] ओढ़नी । उ.—पीतांबर वोढ़नी शीश पै राधा को मनरंजत है—पृ. ३११ (८) ।

वोढ़ाय—क्रि. स. [हिं. ओढ़ाना] ओढ़ाकर । उ.—लिये वोढ़ाय कामरी मोहन—३३८२ ।

वोढ़ैं—क्रि. स. [हिं. ओढ़ना] ओढ़ लें ।

मुहा०—वोढ़ैं कि बिछावैं-न ओढ़ने के काम आ सकती है और न बिछाने के; अतएव सर्वथा व्यर्थ और अनुपयोगी है (खीझकर कहा गया वाक्य) उ.—इत योग कथा वोढ़ैं कि बिछावैं—३४१२ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वोढ़ैया—वि. [हिं. ओढ़ैया] ओढ़नेवाला । उ.—कंस पास ह्वै आइए कामरी वोढ़ैया—२५७५ ।

वोद्र—संज्ञा पुं. [सं. उदर] पेट ।

वोर—संज्ञा स्त्री. [हिं. ओर] दिशा, तरफ । उ.—(क) अनजानत कल बैन स्रवन सुनि चितै रहत उत उनकी वोर—पृ. ३३५ (४०) । (ख) कोउ आवत ओहिं वोर जहाँ नँद सुवन पधारे—३४४३ ।

वोस—संज्ञा स्त्री. [हिं. ओस] ओस । उ.—तौ इह तृषा जाइ क्यों सूरज आनि वोस के नीर—२७७१ ।

वोहित—संज्ञा पुं. [सं. वोहित्थ] बड़ी नाव, जहाज । उ.—भटक परयो वोहित के खग ज्यों फिरि हरि ही पै आयो—३३८५ ।

व्यंग, व्यंग्य—संज्ञा पुं. [सं. व्यंग्य] (१) गूढ़ अर्थ । (२) लगती हुई बात, ताना ।

व्यंजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रकट या व्यक्त करने की क्रिया । (२) पका हुआ भोजन । (३) वह वर्ण जो बिना स्वर की सहायता के न बोला जा सके; जैसे देवनागरी वर्णमाला के 'क' से 'ह' तक वर्ण ।

व्यंजना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रकट या व्यक्त करने की क्रिया । (२) शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा साधारण अर्थ को छोड़कर विशेष अर्थ सूचित हो ।

व्यक्त—वि. [सं.] (१) प्रकट । (२) स्पष्ट ।

व्यक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रकट होने की क्रिया या भाव ।

संज्ञा पुं. (१) समूह या समाज का अंग, व्यष्टि । (२) आदमी, मनुष्य ।

व्यक्तिगत—वि. [सं.] व्यक्ति-विशेष से संबंध रखनेवाला, वैयक्तिक ।

व्यक्तित्व—संज्ञा पुं. [सं.] वह विशेष गुण जिससे व्यक्ति की स्वतंत्र सत्ता सूचित हो ।

व्यग्र—वि. [सं.] (१) व्याकुल । (२) भयभीत ।

व्यग्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्याकुलता ।

व्यजन—संज्ञा पुं. [सं.] (हवा करने का) पंखा ।

व्यतिक्रम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) क्रम का उलट-फेर या विपर्यय । (२) बाधा, विघ्न ।

व्यतिपात—संज्ञा पुं. [सं.] उत्पात, उपद्रव ।

व्यतिरेक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अभाव । (२) भिन्नता । (३) अतिक्रम । (४) एक अर्थालंकार ।

व्यतीत—वि. [सं.] बीता हुआ, गत ।

व्यथा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पीड़ा । (२) क्लेश ।

व्यथित—संज्ञा स्त्री. [सं.] पीड़ित, दुखी ।

व्यभिचार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बुरा या दूषित आचार । (२) पर-स्त्री या पर-पुरुष का संबंध ।

व्यभिचारि, व्यभिचारिणी, व्यभिचारिणी, व्यभिचारिनि, व्यभिचारिनी—वि. स्त्री. [सं. व्यभिचार] व्यभिचार करनेवाली । उ.—ज्यों व्यभिचारि भवन नहिं आवति औरहिं पुरुष रई—पृ. ३३४ (३९) ।

व्यभिचारी—वि. [सं. व्यभिचारिन्] (१) जिसका चाल-चलन अच्छा न हो । (२) पर-स्त्री से संबंध रखनेवाला ।

व्यय—संज्ञा पुं. [सं.] खर्च ।

व्ययी—वि. [सं.] बहुत खर्चीला ।

व्यर्थ—वि. [सं.] (१) निरर्थक, बेमतलब । (२) जिसमें कोई अर्थ न हो । (३) जिससे लाभ न हो ।

क्रि. वि. बिना किसी मतलब के ।

व्यर्थता—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्यर्थ होने का भाव ।

व्यलीक—वि. [सं.] (१) अप्रिय । (२) कष्टदायक ।

व्यवधान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परदा । (२) अंतर । (३) विभाग । (४) अलग होना । (५) समाप्ति ।

व्यवसाय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कार्य जिससे जीविका-निर्वाह हो । (२) व्यापार । (३) उद्यम ।

व्यवसायी—वि. [सं. व्यवसायिन्] (१) व्यवसाय या रोजगार करनेवाला । (२) उद्यमी ।

व्यवस्था—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) शास्त्रीय विधान । (२) क्रमानुसार सजाना । (३) प्रबंध ।

व्यवस्थापक—वि. [सं.] (१) शास्त्रीय व्यवस्था बतानेवाला । (२) प्रबंध करनेवाला ।

व्यवस्थित—वि. [सं.] नियमानुसार ।

व्यवहार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) काम, कार्य । (२) बरताव । उ.—सूरदास जाके जिय जैसी हरि कीने तैसो व्यवहार—१० उ.-७ । (३) व्यापार । (४) लेन-देन का काम । उ.—सूरदास-सिर देत सूरमा सोइ जानै व्यवहार—२७१३ । (५) स्थिति ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवहारतः—क्रि. वि. [सं.] (१) व्यवहार की दृष्टि से। (२) व्यवहार के रूप में।

व्याज—संज्ञा पुं. [सं.] कपट जिसमें कहा कुछ और किया कुछ जाय। (२) बाधा, विघ्न। (३) विलंब।

व्याजनिंदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) ऐसी निंदा जो स्पष्ट निंदा न जान पड़े। (२) एक शब्दालंकार।

व्याजस्तुति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) ऐसी स्तुति जो स्पष्ट प्रशंसा न जान पड़े। (२) एक शब्दालंकार।

व्याजोक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) छल-कपट की बात। (२) एक अर्थालंकार।

व्याध—संज्ञा पुं. [सं.] शिकारी।

व्याधि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रोग। (२) आपत्ति।

व्यापक—वि. [सं.] (१) चारो ओर फैलनेवाला या व्याप्त। (२) चारो ओर से घेरनेवाला।

व्यापकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] व्यापक होने का भाव। उ.—जोवै गुन अतीत व्यापकता, तौ हम काहे न्यारी —३२७०।

व्यापना—क्रि. अ. [सं. व्यापन] व्याप्त होना।

व्यापार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) काम, कार्य। (२) रोजगार, व्यवसाय। उ.—यह व्यापार वहाँ जो समातो हुती बड़ी नगरी—३१०४।

व्यापारी—वि. [सं.] (१) रोजगारी, व्यवसायी। (२) व्यापार-संबंधी।

व्यापि—क्रि. अ. [हिं. व्यापना] व्याप्त होकर।

प्र०—व्यापि गई—(मन में) व्याप्त हो गयी। उ.—जबहिं मन न्यारो हठि कीन्हो गोपनि मन इह व्यापि गई—२६४६।

व्याप्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) व्याप्त होने की क्रिया या भाव। (२) आठ सिद्धियों में एक।

व्यामोह—संज्ञा पुं. [सं.] अज्ञान, मोह।

वि. मोह या अज्ञान के वशीभूत। उ.—असुरनि को व्यामोह कियो हरि धरो मोहिनी रूप—सारा. ३२२।

व्यायाम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रम। (२) कसरत।

व्यायोग—संज्ञा पुं. [सं.] रूपक के दस प्रकारों में एक प्रकार।

व्याल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) साँप। (२) हाथी।

व्यालू—संज्ञा स्त्री. [सं. वेला] रात का भोजन।

व्यावहारिक—वि. [सं.] व्यवहार-संबंधी।

व्यास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पराशर के पुत्र श्रीकृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों का संग्रह-संपादन किया था। (२) कथावाचक। (३) गोल वृत्त के एक स्थान से सीधी दूसरे स्थान तक पहुँचनेवाली रेखा।

व्याहत—वि. [सं.] (१) वर्जित। (२) व्यर्थ।

व्याहृत—वि. [सं.] कहा हुआ, कथित।

व्याहृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] कथन, उक्ति।

व्युत्पत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उत्पत्ति-स्थान। (२) शब्द का मूल रूप। (३) विशिष्ट ज्ञान।

व्युत्पन्न—वि. [सं.] (१) जिसका संस्कार हो चुका हो। (२) विशिष्ट ज्ञानवाला।

व्यूह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) समूह। (२) निर्माण। (३) युद्ध-काल में सेना खड़ी करने की योजना। (४) शक्ति, स्वरूप। उ.—तीनों व्यूह संग लै प्रगटे पुरुषोत्तम श्रीराम—सारा. १५८।

व्योम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आकाश। (२) मेघ।

व्योमासुर—संज्ञा पुं. [सं.] एकअसुर जिसेश्रीकृष्णने मारा था। उ.—व्योमासुर केसी सब मारे—सारा. ४८४।

व्योसाइ—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] काम, काज, संबंध। उ.—सूरदास दिगंबरपुर तें रजक कहा व्योसाइ—३३३४।

व्रज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जाना, गमन। (२) समूह। (३) मथुरा और वृंदावन का निकटवर्ती प्रदेश जो श्रीकृष्ण की लीला-भूमि रही थी। पुराणों में मथुरा के चारो ओर चौरासी कोस की भूमि 'व्रजभूमि' कही गयी है जिसकी प्रदक्षिणा का बहुत माहात्म्य है।

व्रजन—संज्ञा पुं. [सं.] जाना, गमन।

व्रजनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रजपति—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रजभाषा—संज्ञा पुं. [सं.] शौरसेनी प्राकृत से उत्पन्न वह भाषा जो मथुरा, आगरा, इटावा आदि के निकटवर्ती प्रदेशों में बोली जाती है और जिसका प्राचीन साहित्य अत्यंत समृद्ध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्रजमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] मथुरा के चारों ओर चौरासी कोस की भूमि।

व्रजमोहन—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रजराइ, व्रजराई, व्रजराज, व्रजराजा, व्रजराय, व्रजराया—संज्ञा पुं. [सं. व्रजराज] श्रीकृष्ण।

व्रजलाल, व्रजलाला—संज्ञा पुं. [सं. व्रजलाल] श्रीकृष्ण।

व्रजवल्लभ—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रजेंद्र—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रजेश, व्रजेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

व्रज्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) घूमना-फिरना। (२) जाना, गमन। (३) चढ़ाई, आक्रमण।

व्रण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फोड़ा। (२) घाव।

व्रत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उपवास। उ.—सत संजम तीरथ व्रत कीन्हें तब यह संपति पाई—१०-१६। (२) दृढ़ निश्चय या संकल्प।

व्रतचर्या—संज्ञा स्त्री. [सं. व्रतचर्य्या] व्रत रखना।

व्रतचारी—वि. [सं.] व्रत रखनेवाला।

व्रती—वि. [सं.] व्रत रखनेवाला।

व्राचड़—संज्ञा स्त्री. [अप.] (१) सिंध में प्रचलित एक प्राचीन अपभ्रंश भाषा। (२) पैशाची भाषा का एक भेद।

व्रात्य—वि. [सं.] व्रत-संबंधी।

संज्ञा पुं (१) वह व्यक्ति जिसके दस संस्कार न हुए हों। (२) वह व्यक्ति जिसका यज्ञोपवीत न हुआ हो।

व्रीड़ा—संज्ञा स्त्री. [सं.] शरम, लज्जा।

व्रीहि—संज्ञा पुं. [सं.] धान, चावल।

श

श—देवनागरी वर्णमाला का तीसवाँ व्यंजन जिसे, प्रधानतया तालू की सहायता से उच्चरित होने के कारण, 'तालव्य' कहते हैं। उच्चारण में घर्षण-विशेष होने से यह 'ऊष्म' भी कहलाता है।

शंक—संज्ञा स्त्री. [सं.] भय, आशंका। उ.—(क) हौं सकुचनि बोलो नहीं, लोक-लाज की शंक करी— (ख) करत ओघ प्रजा लोग सब नृपति की शंक न मानी—२५४५।

शंकना—क्रि. अ. [सं. शंका] भय या शंका करना।

शंकर—वि. [सं.] (१) शुभ। (२) मंगलकारी।

संज्ञा पुं. (१) शिव। (२) शंकराचार्य।

शंकरशैल—संज्ञा पुं. [सं.] कैलास।

शंकराचार्य—संज्ञा पुं. [सं. शंकराचार्य्य] प्रसिद्ध शैवाचार्य (सन् ७८८-८२०) जिनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का सुभद्रा था। आठ वर्ष की अवस्था में इन्होंने संन्यास लिया था। इन्होंने शास्त्रार्थ में मंडन मिश्र को सपत्नीक परास्त किया था। तदनंतर सारे भारत में भ्रमण करके वैदिक धर्म का पुनरुत्थान किया था। उपनिषद और वेदांत सूत्र पर इन्होंने अत्यंत विद्वत्तापूर्ण टीकाएँ लिखी थीं। इनके स्थापित चार मठों—बद्रिकाश्रम, करवीरपीठ, द्वारकापीठ और शारदापीठ—की गद्दी के अधिकारी आज भी शंकराचार्य कहे जाते हैं।

शंकरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पार्वती, शिवा।

वि. मंगल या कल्याण करनेवाली।

शंका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) डर, भय। उ.—शशि शंका निसि जालनि के मग बसन बनाइ किए—३४५९। (२) संदेह, संशय। (३) एक संचारी भाव।

शंकाना—क्रि. अ. [सं. शंका] भय या आशंका करना।

शंकानो—क्रि. अ. [हिं. शंकाना] भयभीत या शंकित हुआ। उ.—वहि क्रम बिनु द्वै सुत अहीर के रे कातर कत मन शंकानो—३३७८।

शंकि—वि. [सं. शंका] भयभीत, शंकित। उ.—देखत ही शंकि गए काल गुण बिहाल भए कंस डरन घेरि लिए दोउ मन मुसकाए—२६००।

शंकित—वि. [सं.] (१) डरा हुआ। उ.—(क) सूरदास सुरपति शंकित ह्वै सुरन लिए सँग आयो—१०००। (ख) शंकित नंद निरस बानी सुनि बिलम करत कहा क्यों न चले—२६४७। (२) जिसे संदेह हुआ हो। (२) अनिश्चित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शंकु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नुकीली चीज जैसे मेख, खूंटी । (२) भाला । (३) एक बाजा । (४) उग्रसेन के एक पुत्र का नाम ।

शंके—क्रि. अ. [सं. शंका] भयभीत या शंकित हुए । उ.–(क) महाराज झझके कहा सपने कह शंके—२४७० । (ख) मारचो कंस सुनत सब शंके—२६४३ ।

शंख—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक तरह का बड़ा घोंघा जो देव-पूजा और युद्ध के समय बजाया जाता है । उ.–पंचानन ज शंख तहँ लीन्हों मारि असुर अति नीच—सारा. ५४० ।

मुहा०—शंख बजना—विजय प्राप्त होना । शंख बजाना—किसी की हानि या अपमान देखकर आनंद मनाना ।

(२) एक लाख करोड़ (संख्या) । (३) एक दैत्य जो वेदों को चुरा ले गया था और जिसे मारकर वेदों का उद्धार करने के लिए भगवान ने मत्स्यावतार धारण किया था । (४) नौ निधियों में एक । (५) राजा विराट् का एक पुत्र ।

शंखचूड़—संज्ञा पुं. [सं.] कंस का अनुचर एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था । उ.—(क) शंखचूड़ चाणूर सँहारन—९८२ । (ख) धेनुक अरु प्रलंब सँहारे शंखचूड़ बध कीन्हों—सारा. ४७९ ।

शंखधर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रीकृष्ण । उ.—गिरिधर वज्रधर धरनीधर पीतांबरधर मुकुटधर गोपधर शंख-धर सारँगधर चक्रधर रस धरें अधर सुधाधर । (२) विष्णु ।

शंखपाणि—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु ।

शंखासुर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक दैत्य जो वेद चुराकर समुद्र में जा छिपा था और जिसको मारने के लिए विष्णु ने मत्स्यावतार लिया था । उ.– चार बेद लै गयो संखासुर जल में रह्यो छुपाय । धरि हयग्रीव रूप हरि मारचो लीन्हें वेद छुड़ाय—सारा. ९० । (२) मुर दैत्य का पिता ।

शंखिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चार प्रकार की स्त्रियों में एक जो सलोम शरीरवाली, लज्जा और शंका रहित, सुंदर, अत्यंत रतिप्रिय आदि होती है । (२) मुँह की नाड़ी-विशेष ।

शंठ—वि. [सं.] (१) अविवाहित । (२) मूर्ख ।

शंड—वि. [सं.] (१) नपुंसक । (२) उन्मत्त । (३) साँड ।

शंडामर्क—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शंड और मर्क नाम के दो दैत्य । (२) प्रह्लाद के शिक्षागुरु । उ.—शडामर्क (संडामर्क) रहे पचि हारि । राजनीति कहि बारंबार —७-२ ।

शंतनु—संज्ञा पुं. [सं. शांतनु] राजा शांतनु ।

शंतनु-सुत—संज्ञा पुं. [सं. शांतनु+सुत] भीष्म ।

शंपा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बिजली । (२) कमर ।

शंबर—संज्ञा पुं. [सं.] एक दैत्य जिसे इंद्र ने मारा था । (२) एक दैत्य जो कामदेव का शत्रु था और जिसे श्रीकृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न ने मारा था । उ.—पहिलो पुत्र रुक्मिनी जायो प्रदुमन नाम धरायो । कामदेव प्रगटे हरि के गृह पहिले रुद्र जरायो । नारद जाय कही शंबर सों तव रिपु वपु धरि आयो…… महाबली बलराम कृष्ण-सुत कीन्हों असुर सँहार—सारा. ६८९-९०-९६ ।

वि. (१) श्रेष्ठ । (२) भाग्यशाली । (३) सुखी ।

शंबरसूदन—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव ।

शंबरारि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामदेव । (२) प्रद्युम्न ।

शंबुक—संज्ञा पुं. [सं.] घोंघा ।

शंभु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव । (२) स्वायंभुव (मनु) ।

श—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव । ( ) कल्याण ।

शऊर—संज्ञा पुं. [अ.] (१) ढग । (२) बुद्धि ।

शक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन जाति जिसने ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व भारत के कुछ भागों पर अधिकार करके लगभग दो सौ वर्ष तक राज्य किया । कनिष्क शक जातीय राजा था । (२) राजा शालि-वाहन का चलाया हुआ संवत् जो ईसा के ७८ वर्ष पश्चात् आरंभ हुआ था ।

संज्ञा पुं. [अ.] (१) शका । (२) कमी, अपूर्णता । उ.—कहिवे में न कछू शक राखी – ३४६९ ।

शकट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छकड़ा, बैलगाड़ी । (२) शकटासुर नामक दैत्य जो कंस का अनुचर था और जिसे श्रीकृष्ण ने शैशवावस्था में ही मारा था । उ.—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन हति शकट प्रलंब तृणावृत इंद्र प्रतिज्ञा टाली —२५६७।

शकटव्यूह—संज्ञा पुं. [सं.] सेना की शकटाकार रचना।

शकटारि—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

शकटासुर—संज्ञा पुं. [सं.] एक असुर जो कंस का अनुचर था और जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

शकठ—संज्ञा पुं. [सं.] मचान।

शकर—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] शक्कर, चीनी, शर्करा।

शकरकंद—संज्ञा पुं. [हिं. शकर+सं. कंद] एक कंद।

शकरपारा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) एक पकवान। (२) शकरपारे के आकार की सिलाई।

शकल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चमड़ा, छाल। (२) खंड।
संज्ञा स्त्री. [अ. शक्ल] (१) (मुख की) आकृति। (२) मुख का भाव या चेष्टा। (३) बनावट, ढांचा, गढ़न। (४) स्वरूप, आकार। (५) तरकीब, उपाय। (६) मूर्ति।

शकाब्द—संज्ञा पुं. [सं.] शक संवत् जो राजा शालिवाहन द्वारा ईसा के ७८ वर्ष पश्चात् चलाया गया था।

शकारि—संज्ञा पुं. [सं.] शक-विजेता विक्रमादित्य।

शकील—वि. [फ़ा. शक्ल] सुंदर।

शकुंत—संज्ञा पुं. [सं.] चिड़िया, पक्षी।

शकुंतला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) अप्सरा मेनका के गर्भ से उत्पन्न विश्वामित्र की पुत्री जिसका, शकुंतों द्वारा रक्षा की जाने के कारण 'शकुंतला' नाम पड़ा। इसका लालन-पालन कण्व ऋषि ने किया था। यह दुष्यंत को ब्याही थी और इसके पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम 'भारत' पड़ा। (२) कालिदास का एक नाटक जिसमें शकुंतला की कथा है।

शकुन-संज्ञा पुं. [सं.] (१) किसी कार्यारंभ के समय दिखायी देनेवाले शुभ या अशुभ लक्षण। सामान्यतया 'शकुन' से तात्पर्य शुभ लक्षणों से ही लिया जाता है। (२) शुभ मुहूर्त में किया जानेवाला कार्य। (३) मंगल अवसर पर गाये जानेवाले गीत।

शकुनि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गांधारी का भाई जो कौरवों का मामा था और जिसे दुर्योधन ने मंत्री बना लिया था। इसके कपट से ही पांडवों की जुए में हार हुई थी। इसे सहदेव ने मारा था। (२) पाजी या दुष्ट आदमी।

शकुनी—वि. [सं. शकुन+ई] शकुन-फल बतानेवाला।

शक्कर—संज्ञा स्त्री. [सं. शर्करा] चीनी, शकर।

शक्की—वि. [अ. शक़+ई] हमेशा शक करनेवाला।

शक्त—वि. [सं.] शक्तिवाला, समर्थ।

शक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बल, पराक्रम। (२) किसी प्रकार का बल। (३) प्रभाव डालनेवाला बल। (४) वश, अधिकार। (५) ईश्वर की माया, प्रकृति। (६) देव-बल। (७) किसी पीठ की अधिष्ठात्री देवी। (८) दुर्गा, भगवती। (९) गौरी। (१०) लक्ष्मी। (११) 'सांग' नामक शस्त्र। (१२) तलवार।

शक्तिधर—संज्ञा पुं. [सं.] स्कंद, कार्तिकेय।

शक्तिपूजक—वि. [सं.] शक्ति का उपासक, शाक्त।

शक्तिमत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] शक्तिमानता।

शक्तिमान—वि. [सं. शक्तिमान्] बली।

शक्तिशाली—वि. [सं. शक्तिशालिन्] बलवान।

शक्ति-संपन्न—वि. [सं.] शक्ति से युक्त, बली।

शक्तिहीन—वि. [सं.] (१) बलहीन। (२) नपुंसक।

शक्य—वि. [सं.] (१) जो संभव या किया जाने योग्य हो। (२) जिसमें शक्ति हो।

शक्र—संज्ञा पुं. [सं.] (दैत्य-नाशक) इंद्र।

शक्रचाप—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्रधनुष।

शक्रजित—संज्ञा पुं. [सं. शक्रजित] मेघनाद।

शक्रदिश, शक्रदिशा—संज्ञा स्त्री. [सं. शक्रदिश] पूर्व दिशा जिसका स्वामी इंद्र है।

शक्रधनु, शक्रधनुष—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्रधनुष।

शक्रनन्दन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बालि। (२) अर्जुन।

शक्राणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] इंद्र-पत्नी, इंद्राणी।

शक्ल—संज्ञा स्त्री. [अ. शक्ल] (१) चेहरा, मुखाकृति। (२) मुख का भाव, चेष्टा। (३) बनावट, ढांचा। (४) स्वरूप। (५) उपाय। (६) मूर्ति।

शख्स, शख्श—संज्ञा पुं. [अ. शख्स] मनुष्य।

शगल—संज्ञा पुं. [अ. शग़ल] (१) कामधंधा। (२) मनोविनोद का साधन या कार्य।

शगुन, शगून—संज्ञा पुं. [सं. शकुन, हिं. शगुन] (१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभाशुभ लक्षण या विचार। (२) शुभ लक्षण या विचार। (३) विवाह के पूर्व वर के तिलक या टीके की रीति जिसमें संबंध पक्का किया जाता है। (४) नजराना, भेंट।

शगुनियाँ, शगूनियाँ—वि. [हिं. शगुन, शगुनियां] शगुन बतानेवाला।

शगूफा—संज्ञा पुं. [फ़ा. सगूफ़ा] (१) कली। (२) फूल। (३) नयी और विलक्षण घटना।

मुहा०—शगूफा खिलना—(१) नयी बात होना। (२) झगड़ा होना। शगूफा खिलाना या छोड़ना—(१) नयी बात कर बैठना। (२) कोई बात कहकर झगड़ा करा देना।

शचि, शची—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) इंद्र की पत्नी इंद्राणी जो दानवराज पुलोमा की पुत्री थी।। उ.—उमा रमा अरु शची अरुंधती दिनप्रति देखन आवैं—पृ० ३४५ (४१)। (२) बुद्धि, प्रज्ञा।

शचीपति—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र।

शजरा—संज्ञा पुं. [अ. शजरा] वंशावली। (२) वृक्ष।

शठ—वि. [सं.] (१) धूर्त, चालाक। (२) दुष्ट।

संज्ञा पुं. पाँच प्रकार के नायकों में एक जो छल-पूर्वक अपना अपराध छिपाने में चतुर हो और दूसरी स्त्री से प्रेम करते हुए भी अपनी पत्नी से प्रेम प्रदर्शित करने में कुशल हो।

शठगी—संज्ञा स्त्री. [सं. शठ] दुष्टता, धूर्तता।

उ.—बहुत प्रकार निमेष लगाए छूटि नहीं शठगी—२७९०।

शठता—संज्ञा स्त्री. [सं.] धूर्तता, दुष्टता।

शत—वि. [सं.] सौ (संख्या)।

संज्ञा पुं. सौ की संख्या।

शतक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सौ का समूह। (२) सौ चीजों का संग्रह। (३) सौ वर्ष, शताब्दी।

शतकोटि, शतकोटी—संज्ञा पुं. [सं.शतकोटि] सौ करोड़ की संख्या। उ.—शतकोटी रामायण कीनो तऊ न लीन्हों पार—सारा. १५५।

शतदल—संज्ञा पुं. [सं.] कमल, पद्म।

शतद्रु—संज्ञा स्त्री. [सं.] सतलज नदी।

शतधन्वा—संज्ञा पुं. [सं. शतधन्वन्] एक योद्धा जिसने सत्राजित को मारा था और इस अपराध के कारण जिसे श्रीकृष्ण ने मार डाला था—१० उ.-२७।

शतधा—अव्य. [सं.] (१) सैकड़ों बार। (२) सैकड़ों प्रकार से। (३) सैकड़ों टुकड़ों या धाराओं में।

शतपत्र—संज्ञा पुं. [सं.] कमल, पद्म।

शतपथ—वि. [सं.] अनेक शाखाओंवाला।

शतभिषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] सत्ताइस नक्षत्रों में चौबीसवां नक्षत्र।

शतरंज—संज्ञा पुं. [फा.] एक प्रसिद्ध खेल।

शतरुद्र—संज्ञा स्त्री. [सं. शतद्रु] सतलज नदी।

उ.—पुनि शतरुद्र और चंद्रभागा गंगा व्यास न्हवाये—सारा. ८२८।

संज्ञा पुं. सौ मुखवाला रुद्र।

शतरूपा—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्रह्मा की मानसी कन्या जो स्वयंभुवमनु की पत्नी थी। उ.—स्वयंभुवमनु अरु शतरूपा तुरत भूमि पर आए—सारा. ३८।

शतशः—वि. [सं.] (१) सैकड़ों। (२) सौ गुना। (३) बहुत अधिक।

शतांश—संज्ञा पुं. [सं.] सौवां भाग।

शतानन्द—संज्ञा पुं. [सं.] जनक के पुरोहित।

शताब्दी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सौ वर्ष का समय।

शतायु—वि. [सं. शतायुस्] सौ वर्ष की आयुवाला।

शती—संज्ञा स्त्री. [सं.] सौ का समूह, सैकड़ा।

शत्रुंजय—वि. [सं.] शत्रुओं को जीतनेवाला।

शत्रु—संज्ञा पुं. [सं.] दुश्मन, रिपु, अरि।

शत्रुघ्न—वि. [सं.] शत्रु का नाश करनेवाला।

संज्ञा पुं. लक्ष्मण का छोटा भाई।

शत्रुता, शत्रुताई—संज्ञा स्त्री. [सं. शत्रुता] दुश्मनी।

शत्रुहा—संज्ञा पुं. [सं.] शत्रुघ्न।

शनि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नौ ग्रहों में सातवां ग्रह। (२) अभाग्य, दुर्भाग्य।

शनिवार—संज्ञा पुं. [सं.] शुक्रवार और रविवार के बीच का दिन या वार।

शनिश्चर—संज्ञा पुं. [सं.] शनि ग्रह।

शनैः—अव्य. [सं.] धीरे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शपथ—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कसम, सौगंध। (२) प्रतिज्ञा, संकल्प, दृढ़ निश्चय। उ.—मन-बच क्रम शपथ सुनि ऊधो संगहि चलौ लिवाई—३१३४।

शफरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक छोटी मछली।

शफा—संज्ञा स्त्री. [अ. शफ़ा] नीरोगता।

शफ़ाखाना—संज्ञा पुं. [अ. शफ़ा+फा. खाना] चिकित्सालय।

शब—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] रात, रात्रि।

शबनम—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] ओस, तुषार।

शबर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन अनार्य जाति। (२) शूद्र। (३) भील।

शबरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] 'शबर' नामक अनार्य जाति की एक भक्तिन जिसने वन में श्रीराम को जूठे बेर खिलाये थे।

शबल—वि. [सं.] (१) रंग-बिरंगा। (२) चितकबरा।

शबाब—संज्ञा पुं. [अ.] (१) जवानी। (२) सुंदरता।

शबीह—संज्ञा स्त्री. [अ.] तसवीर, चित्र।

शब्द—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आवाज, ध्वनि। उ.—(क) किंकिणि शब्द चलत ध्वनि रुनु-झुन—२५४९। (ख) घर-घर इहै शब्द परचो—२९५४। (२) वह स्वतंत्र सार्थक ध्वनि जो एक या अधिक वर्णों के संयोग से उत्पन्न हो और किसी कार्य, भाव या वस्तु की बोधक हो। (३) 'ओ३म्' जो परमात्मा का मुख्य नाम है। (४) साधु-महात्मा के पद या गीत।

शब्दकोश—संज्ञा पुं. [सं.] वह (कोश) ग्रंथ जिसमें बहुत से शब्द अर्थसहित दिये गये हों।

शब्दचित्र—संज्ञा पुं. [सं.] शब्दों द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति या दृश्य आदि का ऐसा स्पष्ट वर्णन कि उसका पूरा चित्र सामने आ जाय।

शब्दजाल—संज्ञा पुं [सं. शब्द+हिं. जाल] बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा आडंबरपूर्ण प्रयोग जिसमें अर्थ या भाव विशेष न हो।

शब्द-प्रमाण—संज्ञा पुं. [सं.] ऐसा प्रमाण जो किसी के कथन पर आधारित हो।

शब्दवेधी—संज्ञा पुं. [सं. शब्दवेधिन्] वह मनुष्य जो केवल शब्द सुनकर, बिना देखे ही, लक्ष्य को बाण से वेध सकता हो।

शब्दशक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा विशेष भाव सूचित हो। यह शक्ति तीन प्रकार की होती है—अभिधा, लक्षण और व्यंजना। इनसे प्रकट अर्थ क्रमशः वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य तथा इन्हें प्रकट करनेवाले शब्द क्रमशः वाचक, लक्षक और व्यंजक कहलाते हैं।

शब्दाडंबर—संज्ञा पुं. [सं.] बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग जिसमें अर्थ या भाव विशेष न हो।

शब्दानुशासन—संज्ञा पुं. [सं.] व्याकरण।

शब्दालंकार—संज्ञा पुं. [सं.] वह अलंकार जिससे भाषा में लालित्य या सौंदर्य लाया जाय।

शब्दावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) शब्द-समूह। (२) विषय या कार्य-विशेष की शब्द-सूची। (३) किसी वाक्य या प्रश्न के शब्दों का क्रम या प्रकार।

शम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अंतःकरण एवं अंतरेंद्रिय-निग्रह। (२) शांत रस का स्थायी भाव। (३) क्षमा।

शमन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हिंसा। (२) शांति। (३) दमन। (४) यम। (५) रात, रात्रि।

शमशेर—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] तलवार।

शमा—संज्ञा स्त्री. [अ. शमअ] (१) मोम। (२) मोमबत्ती।

शमादान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] वह आधार जिसमें मोमबत्ती जलायी जाती है।

शमित—वि. [सं.] (१) जिसका शमन या दमन किया गया हो। (२) ठहरा हुआ, शांत।

शमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सफेद कीकर का वृक्ष जिसकी पूजा विजयादशमी को की जाती है।

शमीक—संज्ञा पुं. [सं.] एक क्षमाशील ऋषि जिनके गले में परीक्षित ने मरा हुआ सांप डाल दिया था और जिनके पुत्र ने उनको सातवें दिन तक्षक नाग द्वारा डसे जाने का शाप दिया था।

शयन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सोने या निद्रित होने की क्रिया। (२) बिछौना, शैया।

शयनकक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] सोने का कमरा, शयनागार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शयनआरती—संज्ञा स्त्री. [सं. शयन+हिं. आरती] वह आरती जो रात्रि में देवता के शयन के पूर्व की जाती है।

शयनबोधिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] अगहन कृष्णा एकादशी।

शयनमंदिर—संज्ञा पुं. [सं.] सोने का स्थान या कमरा।

शयनागार—संज्ञा पुं. [सं.] सोने का स्थान या कमरा।

शयनैकादशी—संज्ञा स्त्री. [सं.] आषाढ़ शुक्ला एकादशी जबसे विष्णु का शयनारंभ माना जाता है।

शय्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बिछौना। (२) पलँग।

शर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तीर, वाण। (२) भाले का फल। (३) चिता। (४) पाँच की संख्या।

शरण—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रक्षा, आश्रय। (२) रक्षा या आश्रय का स्थान।

शरणागत—वि. [सं.] शरण में आया हुआ।

शरणार्थी—वि. [सं. शरणार्थिन्] शरण माँगनेवाला।

शरणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] मार्ग, पथ।

वि. शरण या आश्रय देनेवाली।

शरण्य—वि. [सं.] शरणागत का रक्षक।

शरत्, शरद्—संज्ञा स्त्री. [सं. शरत्] (१) वह ऋतु जो आश्विन और कार्तिक मास में होती है। (२) साल, वर्ष।

शरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] तीर चलाने की कला या विद्या।

शरद्पूर्णिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कुआँर की पूर्णिमा।

शरदेंदु—संज्ञा पुं. [सं.] शरत ऋतु का चन्द्र।

शरनाई—संज्ञा स्त्री [सं. शरण+हिं. आई] शरण। उ.—हमतो हैं तुम्हारी शरनाई—८०४।

शरनी—वि. [सं. शरणी] शरण देनेवाली। उ.—अशरन शरनी भव भय हरनी वेद पुरान बखानी—पृ. ३४६ (४०)।

शरपट्टा—संज्ञा पुं. [सं. शर+हिं. पट्टा] एक शस्त्र।

शरबत—संज्ञा पुं. [अ.] (१) गुण या शकर का घोल। (२) चीनी के घोल में पका हुआ अर्क। (३) सगाई की एक रीति।

शरबती—वि. [हिं. शरबत] (१) ललाई लिये हुए हल्के पीले रंग का। (२) रस से भरा हुआ।

शरभंग—संज्ञा पुं. [सं.] एक महर्षि जिनके दर्शन श्रीराम ने किये थे। उ.—वंदन करि शरभंग महामुनि अपने दोष निवारे—सारा. २५५।

शरभ—संज्ञा पुं. [सं.] राम का एक बानर-सेनानायक।

शरम—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. शर्म] (१) लज्जा। उ.—रिसन उठी झहराइ झटकि भुज छुवत कहा पिय शरम नहीं—२१४२। (२) लिहाज, संकोच। (३) इज्जत, मर्यादा, प्रतिष्ठा।

शरमाऊँ—क्रि. अ. [हिं. शरमाना] लज्जित होता हूँ। उ.—यह वाणी भजन स्रवन बिन सुनत बहुत शरमाऊँ—१८५८।

शरमाऊ—वि. [हिं. शरम+आऊ] लज्जित होनेवाला।

शरमाति—क्रि. अ. [हिं. शरमाना] लज्जित होती है। उ.—सूर श्याम लोचन अपार छवि उपमा सुनि शरमाति—१३४९।

शरमाना—क्रि. अ. [हिं. शरम+आना] लजाना, लाज करना, लज्जित होना।

क्रि. स. (दूसरे को) लज्जित करना।

शरमाने—क्रि. अ. [हिं. शरमाना] लजाये, लज्जित हुए। उ.—काहे को इतनो शरमाने, रैनि रहे फिरि जाहु तहाँ—१९९३।

शरमानो—क्रि. अ. [हिं. शरम+आनो] लजाना।

क्रि. स. (दूसरे को) लज्जित करना।

शरमाशरमी—क्रि. वि. [हिं. शरम] लाज के कारण, संकोच से।

शरमिंदा—वि. [फ़ा.] लज्जित।

शरमीला—वि. [हिं. शरम+ईला] शरमानेवाला।

शरवाणि—संज्ञा स्त्री. [सं.] तीर का फल।

शराध—संज्ञा पुं. [सं. श्राद्ध] मृतक का श्राद्ध।

शराप—संज्ञा पुं. [सं. शाप] शाप। उ.—ता शराप ते भए श्याम तन तउ न गहत डर जी को—३०४०।

शरापना—क्रि. अ. [सं. शाप] (१) शाप देना। (२) कोसना।

संज्ञा स्त्री. पीड़ित की हाय।

शराफत—संज्ञा स्त्री. [अ. शराफ़त] भलमनसी, सज्जनता।

शराब—संज्ञा स्त्री. [अ.] सुरा, मदिरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शराबी—वि. [हिं. शराब] जिसे शराब पीने की लत या उसका व्यसन हो ।

शराबोर—वि. [फ़ा.] पानी से बहुत भीगा हुआ ।

शरारत—संज्ञा स्त्री. [अ.] पाजीपन, दुष्टता ।

शराव—संज्ञा पुं. [सं.] मिट्टी का पुरवा, कुल्हड़ ।

शरासन—संज्ञा पुं. [सं.] कमान, चाप, धनुष ।

शरीक—वि. [अ. शरीक़] मिला हुआ, सम्मिलित । संज्ञा पुं. (१) साथी, सहायक । (२) साझीदार ।

शरीफ—वि. [अ. शरीफ़] (१) कुलीन । (२) सभ्य । (३) पवित्र । (४) सकुशल ।

शरीफा—संज्ञा पुं. [सं. श्रीफल] एक वृक्ष या उसका मीठा फल जिसके बीज काले होते हैं ।

शरीर—संज्ञा पुं. [सं.] तन, बदन, देह । वि. [अ.] नटखट, पाजी, दुष्ट ।

शरीरांत—संज्ञा पुं. [सं.] मौत, देहांत ।

शरीरी—संज्ञा पुं. [सं. शरीरिन्] (१) शरीरधारी । (२) आत्मा, जीव । (३) प्राणी ।

शरेष्ठ—वि. [सं. श्रेष्ठ] उत्तम ।

शर्करा—संज्ञा स्त्री. [सं.] चीनी, खांड़, शक्कर ।

शर्त—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) बाजी, बदान, दाँव । (२) बदी हुई बात, प्रतिबंध ।

शर्तिया—क्रि. वि. [अ.] निश्चय ही । वि. निश्चित, अचूक ।

शर्बत—संज्ञा पुं. [हिं. शरबत] शरबत ।

शर्बती—वि. [हिं. शरबत] शरबत के रंग का ।

शर्म—संज्ञा स्त्री. [फा.] लाज, संकोच ।

शर्मद—वि. [सं. शर्म्मद] सुखदायी ।

शर्मा—संज्ञा पुं. [सं. शर्म्मन्] ब्राह्मणों की उपाधि ।

शर्मिष्ठा—संज्ञा स्त्री. [सं.] दैत्यराज वृषपर्वा की पुत्री जो देवयानी की दासी बनकर राजा ययाति के यहाँ गयी थी और रानी के अनजाने में उनसे संभोग करके जिसने तीन पुत्र जने थे ।

शर्मीला—वि. [फ़ा. शर्म] लजानेवाला ।

शर्याति—संज्ञा पुं. [सं.] एक राजा जिनकी पुत्री सुकन्या च्यवन ऋषि को ब्याही थी ।

शर्व—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव । (२) विष्णु ।

शर्वरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रात । (२) साँझ ।

शर्वरीश—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा ।

शर्वाणी—संज्ञा स्त्री. [सं. शर्व्वाणी] (१) पार्वती । (२) दुर्गा ।

शल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कंस का एक मल्ल । उ.—और मल्ल मारे शल तोशल बहुत गए सब भाग—सारा. ५२३ । (२) कंस का एक अमात्य । (३) धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

शलगम, शलजम—संज्ञा पुं. [फा. शलजम] एक कंद ।

शलभ—संज्ञा पुं. [सं.] पतंगा ।

शलाका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लोहे की सलाई या सलाख । उ.—अलि आली गुरु ज्ञान शलाका क्यों सहि सकति तुम्हारी—३०३९ । (२) सुरमा लगाने की सलाई ।

शल्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मद्र देश का एक राजा जिसकी बहन माद्री पांडु को ब्याही थी । महाभारत के युद्ध में शल्य दुर्योधन की ओर से लड़ा था और युद्ध के अंतिम दिन सेनापति बनाये जाने पर अर्जुन के हाथ से मारा गया था । (२) अस्त्र-चिकित्सा । (३) एक प्रकार का वाण ।

शल्यकी—संज्ञा स्त्री. [सं. शल्लकी] साही नामक जंतु ।

शल्यक्रिया—संज्ञा स्त्री. [सं.] चीर-फाड़ का इलाज ।

शल्ल—वि. [सं.] सुन्न, शिथिल ।

शव—संज्ञा पुं. [सं.] (मानव का) मृत शरीर ।

शवता—संज्ञा स्त्री. [सं.] निर्जीवता ।

शवदाह—संज्ञा पुं. [सं.] मृत शरीर को जलाना ।

शवभस्म—संज्ञा स्त्री. [सं.] चिता की भस्म ।

शवमंदिर—संज्ञा पुं. [सं.] मरघट, श्मशान ।

शवयान—संज्ञा पुं. [सं.] मुर्दे की अरथी, टिकठी ।

शवर—संज्ञा पुं. [सं.] एक जंगली पहाड़ी जाति ।

शवरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) शवर जाति की स्त्री । (२) शवर जाति की श्रमणा नाम्नी तपस्विनी जिसने, सीता को ढूँढ़ते हुए राम के अपने आश्रम में पहुँचने पर उनको जूठे बेर समर्पित करके उनकी अभ्यर्थना की थी और उन्हीं के सामने अपने को चिता में भस्म कर दिया था । उ.—शवरी परम भक्त रघुपति की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत दिननि की दासी। ताके फल आरोगे रघुपति पूरन भक्ति प्रकासी—सारा. २७२।

शश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खरहा, खरगोश। (२) चंद्रमा का कलंक। (३) मनुष्य के चार (प्रकारों) में एक; सुशील, कोमलांग और गुण-निधान व्यक्ति।

शशक—संज्ञा पुं. [सं.] खरहा, खरगोश।

शशधर—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

शशलांछन—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

शशशृंग—संज्ञा पुं. [सं.] (खरगोश के सींग जैसी) असंभव और अनहोनी बात।

शशांक—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा।

शशा—संज्ञा पुं. [सं. शश] खरहा, खरगोश।

शशि—संसा पुं. [सं. शशिन्] (१) चंद्रमा। उ. श्वेत छत्र मनो शशि प्राची दिशि उदय कियो निशि राका —८५६६।

शशिकर—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा की किरण।

शशिकला—संज्ञा स्त्री. [सं.] चंद्रमा की कला।

शशिकुल—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रवंश।

शशिज—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा का पुत्र बुध।

शशितिथि—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूर्णिमा।

शशिधर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव। (२) एक प्राचीन नगर।

शशिप्रभा—संज्ञा स्त्री. [सं.] चांदनी, ज्योत्सना।

शशिप्रिय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कुमुद। (२) मोती।

शशिभूषण—संज्ञा पं. [सं.] शिव, महादेव।

शशिमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा का घेरा। उ.—सब नक्षत्र को राजा दीन्हों शशिमंडल में छाप।

शशिमुख—वि. [सं.] चंद्र-सा सुंदर मुखवाला।

शशिरेखा, शशिलेखा—संसा स्त्री. [सं.] चंद्र-कला।

शशिशाला—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. शीशा+सं. शाला] शीशों का महल, शीशमहल।

शशिशेखर—संज्ञा पुं. [सं.] शिव, महादेव।

शशिसुत—संज्ञा पुं. [सं.] चंद्रमा का पुत्र बुध ग्रह।

शशिहीरा—सज्ञा पुं. [स. शशि+हिं. हीरा] चंद्रकांत मणि।

शशी—संज्ञा पुं. [सं. शशि] चंद्रमा।

शशीकर—संज्ञा पुं. [सं. शशिकर] चंद्र-किरण।

शस्त—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शरीर। (२) कल्याण। वि. (१) श्रेष्ठ। (२) प्रशस्त। (३) जो मार डाला गया हो। (४) कल्याणयुक्त।

शस्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] स्तुति, प्रशंसा।

शस्त्र—संज्ञा पुं. [सं.] हथियार जिसे हाथ में पकड़े रहकर वार किया जाय।

शस्त्रजीवी—संज्ञा पुं. [सं. शस्त्रजीविन्] योद्धा।

शस्त्रधर—संज्ञा पुं. [सं.] योद्धा, सैनिक।

शस्त्रधारी—वि. [सं. शस्त्रधारिन्] शस्त्र बांधनेवाला।

शस्त्रागार—संज्ञा पुं. [सं.] शस्त्र रखने का स्थान।

शस्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नयी घास या तृण। (२) फसल, खेती। (३) अन्न, धान्य।

शहंशाह—संज्ञा पुं. [फ़ा. शाहंशाह] महाराजाधिराज।

शह—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) महाराज। (२) दूल्हा। संज्ञा स्त्री. (१) शतरंज की किश्त। (२) भड़काने या उत्तेजित करने की क्रिया या भाव।

शहज़ादा—संज्ञा पुं. [फ़ा. शाहज़ादा] राजकुमार।

शहजोर—वि. [फ़ा. शहज़ोर] बली, बलवान।

शहजोरी—वि. [फा. शहज़ोरी] ताकत, बल।

शहतीर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] बड़ा लट्ठा।

शहतूत—संज्ञा पुं. [फ़ा.] तूत का पेड़ या फल।

शहद संज्ञा पुं. [अ.] मधु।

मुहा०—शहद लगाकर चाटना—किसी उपयोगी पदार्थ का सदुपयोग न करने पर किया जानेवाला व्यंग्य। शहद लगाकर अलग हो जाना या होना—झगड़ा कराकर अलग हो जाना।

शहनाई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] नफीरी बाजा।

शहबाला—संज्ञा पुं. [फ़ा.] वह बालक जो दूल्हे के साथ घोड़े पर या पालकी में बैठता है।

शहर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] बड़ी बस्ती, नगर। उ.—चले जात सब घोष शहर को—१०३६।

शहरपनाह—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] शहर की चारदीवारी, नगरकोटा, प्राचीर।

शहरी—वि. [फ़ा.] (१) शहर से संबंधित। (२) शहर में रहने बसनेवाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहसवार—वि. [फ़ा.] घुड़सवारी में कुशल।

शहादत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) गवाही, साक्ष। (२) सबूत, प्रमाण।

शहिजदा—संज्ञा पुं. [हिं. शाहज़ादा] राजकुमार।

शहीद—वि. [अ.] धर्म या देश की रक्षा अथवा ऐसे ही शुभ कार्य के लिए प्राण देनेवाला।

शांडिल्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक मुनि। (२) एक गोत्र।

शांत—वि. [सं.](१) जिसमें वेग, क्षोभ या क्रिया न हो। (२) (रोग आदि) मिटा हुआ। (३) क्रोधरहित, प्रकृतिस्थ। (४) मरा हुआ, मृत। (५) गंभीर, सौम्य। (६) चुप, मौन। (७) मनोविकाररहित। (८) उत्साहहीन। (९) हारा-थका, श्रांत। (१०) बुझा हुआ। (११) बिघ्न-बाधारहित। (१२) स्वस्थ चित्त। (१३) अप्रभावित।

संज्ञा पुं. नौ रसों में एक जिसका स्थायी भाव निर्वेद (काम-क्रोध आदि का शमन) है।

शांतनु—संज्ञा पुं. [सं.] प्रतीप के पुत्र एक चंद्रवंशी राजा जिनके, गंगादेवी से देवव्रत भीष्म का जन्म हुआ था और धीवर कन्या सत्यवती से विचित्रवीर्य और चित्रांगद का।

शांता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा दशरथ की पुत्री जो महर्षि ऋष्यश्रृंग की पत्नी थी।

शांति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वेग, क्षोभ या क्रिया का अभाव, स्थिरता। (२) सन्नाटा, नीरवता। (३) चित्त की स्वस्थता। (४) रोग, पीड़ा आदि का न रह जाना। (५) मरण, मृत्यु। (६) गंभीरता, धीरता, सौम्यता। (७) वासना से मुक्ति, विरक्ति। (८) अमंगल दूर करने का उपचार। (९) राधा की सखी एक गोपी का नाम।

शांतिकर—वि. [सं.] शांति देनेवाला।

शांतिदायी—वि. [सं. शांतिदायिन्] शांति देनेवाला।

शांतिप्रद—वि. [सं.] शांति देनेवाला।

शांतिमय—वि. [सं.] शांति से पूर्ण।

शांबरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जादू। (२) जादूगरनी।

शांभर—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजपूताने की एक भील जिसमें 'सांभर' नमक होता है।

शाइस्तगी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] भलमनसाहत, शिष्टता।

शाइस्ता—वि. [फ़ा. शाइस्तः] शिष्ट, विनम्र।

शाकंभरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

शाक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) साग-भाजी, तरकारी। (२) सात द्वीपों में एक। उ.—सातों द्वीप कहे शुक मुनि ने सोइ कहत अब सूर। जंबू प्लक्ष क्रौंच, शाक, सालमलि कुश पुष्कर भरपूर—सारा. ३४।

शाकल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खंड। (२) हवन-सामग्री।

शाकाहार—संज्ञा पुं. [सं.] निरामिष भोजन।

शाकाहारी—वि. [सं. शाकाहारिन्] केवल अनाज और साग-भाजी खानेवाला।

शाकुनि—संज्ञा पुं. [सं.] बहेलिया।

शाक्त—वि. [सं.] शक्ति-संबंधी।

संज्ञा पुं. शक्ति का उपासक।

शाक्य—संज्ञा पुं. [सं.] नैपाल की तराई की एक क्षत्रिय जाति जिसमें गौतमबुद्ध उत्पन्न हुए थे।

शाक्यमुनि—संज्ञा पुं. [सं.] गौतमबुद्ध।

शाख—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. शाख] (१) टहनी, डाली। (२) नदी की बड़ी धारा से निकली छोटी धारा।

शाखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) टहनी, डाल। (२) मूल वस्तु के भेद-उपभेद। (३) विभाग। (४) अवयव, अंग।

शाखामृग—संज्ञा पुं. [सं.] बंदर, वानर।

शाखोच्चार—संज्ञा पु. [सं.] विवाह में वंशावली का कथन।

शागिर्द—संज्ञा पुं. [फ़ा.] चेला, शिष्य।

शागिर्दी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) शिष्टता। (२) सेवा।

शाटक—संज्ञा पु. [सं.] वस्त्र, पट।

शाटिका, शाटी—संज्ञा स्त्री. [सं.] धोती, साड़ी।

शाठ्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छल-कपट। (२) दुष्टता।

शाण—संज्ञा पुं. [सं.] धार तेज करने का पत्थर।

शाणित—वि. [सं.] (१) तेज धारवाला। (२) कसौटी पर कसा हुआ।

शातिर—वि. [अ.] काइयाँ, घुटा हुआ, पक्का।

शाद—वि. [फ़ा.] (१) प्रसन्न। (२) भरा-पुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

~~९३५ VIII~~ ९.३
२५ VIII

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार

पुस्तक लौटाने की तिथि अन्त में अङ्कित है। इस तिथि को पुस्तक न लौटाने पर छै नये पैसे प्रति पुस्तक अतिरिक्त दिनों का अर्थदण्ड लगेगा।

१००००.६.५६।

३६२१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लखनऊ विश्वविद्यालय के कुछ महत्वपूर्ण हिन्दी-प्रकाशन

१. हिन्दी-काव्यशास्त्र का इतिहास—(संशोधित-परिवर्धित संस्करण)—ले० डा० भगीरथ मिश्र पी. एच. डी.

इस ग्रंथ में हिन्दी-काव्यशास्त्र के इतिहास के साथ-साथ संस्कृत और पाश्चात्य काव्यशास्त्र की पृष्ठभूमि पर हिन्दी में काव्यशास्त्र-विषयक ग्रन्थों का मूल्यांकन है। हिन्दी कवियों के काव्यादर्शों तथा आधुनिक काव्यशास्त्र की समस्याओं का भी इसमें अध्ययन है। इस संस्करण में बहुत से नये लेखकों और ग्रंथों को प्रकाश में लाया गया है।

२. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि—ले० डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल।

इस ग्रंथ में अनेक दुष्प्राप्य प्रकाशित तथा हस्तलिखित ग्रंथों का अध्ययन करके अकबर के दरबार से सम्बन्ध रखने वाले कवियों का सर्वांगीण अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रंथ के द्वारा हिंदी-साहित्य की बहुत सी अज्ञात सामग्री प्रकाश में आ रही है। मूल्य—९)

३. आचार्य भिखारीदास—ले० डा० नारायणदास खन्ना।

रीतिकाल के प्रतिष्ठित कवि और आचार्य भिखारीदास की जीवनी तथा कृतियों का आलोचनात्मक अध्ययन। मूल्य—१०)

४. महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग—ले० डा० उदय भानु सिंह।

इसमें पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके समकालीन लेखकों की बिखरी हुई सामग्री को बड़े परिश्रम से एकत्र करके, गम्भीर विवेचन युक्त, व्यवस्थित और मौलिक निबन्ध-रूप में प्रस्तुत किया गया है। मूल्य—१०)

५. आचार्य केशवदास—ले० डा० हीरालाल दीक्षित।

इसमें आचार्य केशवदास की जीवनी, उनकी रचनाओं की विस्तृत समीक्षा, उनके काव्यशास्त्र-सम्बन्धी विचारों की व्याख्यात्मक विवेचना और उनकी कृतियों में प्राप्त ऐतिहासिक विवरणों की आलोचनात्मक परीक्षा है। इस प्रकार यह केशवदास की रचनाओं का काव्य, शास्त्र, दर्शन, इतिहास आदि सभी दृष्टियों से प्रस्तुत किया हुआ सर्वांगीण विवेचन है। मूल्य—९)

६. जायसी के परवर्ती सूफी हिन्दी कवि और उनका काव्य—ले० श्रीमती डा० सरला शुक्ल।

इस ग्रंथ में जायसी के बाद की सूफी प्रेमाख्यान परम्परा का विस्तार से अध्ययन किया गया है। इसमें अनेक ज्ञात और अज्ञात कवियों और उनकी रचनाओं का परिचय और विवेचन प्रस्तुत किया गया है। मूल्य १२)

७. आधुनिक हिंदी काव्य में छंद-योजना—ले० डा० पुत्तूलाल शुक्ल।

इस प्रबन्ध में भारतीय छन्दशास्त्र का परिचय, स्वरूप और इतिहास देने के साथ-साथ आधुनिक हिन्दी में प्राप्त काव्य सम्बन्धी विभिन्न प्रयोगों का अध्ययन किया गया है। मूल्य १२।।)

८. तुलसी की भाषा—ले० डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव।

इस ग्रन्थ में गोस्वामी तुलसीदास की कृतियों में प्राप्त भाषा का व्याकरण, भाषाविज्ञान, काव्यशास्त्र, इतिहास आदि के दृष्टि से अध्ययन किया गया है। कवि-विशेष की भाषा के अध्ययन का यह प्रथम प्रयास है। मूल्य—

९. अवध के हिंदी कवि—डा० व्रजकिशोर मिश्र। विषय नाम से ही स्पष्ट है। मूल्य ११)

१०. व्रजभाषा सूर-कोश—निर्देशक – डा० दीनदयालु, गुप्त। संपादक—डा० प्रेमनारायण टंडन।

प्रस्तुत कोश में सूरदास के समस्त प्रामाणिक ग्रंथों में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ और अर्थ की पुष्टि तथा स्पष्टता के लिए अपेक्षित उदाहरणों के साथ-साथ व्रजभाषा, अवधी और खड़ीबोली के कवियों के भी विशिष्ट प्रयोग दिये गये हैं। पूरा कोश खंडों में प्रकाशित होगा; आठ खंड छप चुके हैं जिनकी पृष्ठ संख्या १६०२, शब्द संख्या ४६३८५ और मूल्य—२७।।)

विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन, हिन्दी विभाग, विश्वविद्यालय, लखनऊ

मुद्रकः—नवभारत प्रेस, लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

STOCK VERIFY
2020
S.R.V. Library

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar